प्रवचन

यह ग्रंथ मेरे दस वर्ष के कठिन परिश्रम का फल है। इसे सर्वसाधारण को प्रदान करके मैं अत्यंत सुखी हुआ हूँ, और इसके निर्विघ्न समाप्त होने पर मैं सर्वशक्तिमान परमेश्वर को बारबार धन्यवाद देता हूँ।

इस ग्रंथ में मेरा कितना-सा अध्ययन, मनन और अनुभव केंद्रीभूत है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि सभी स्त्री-पुरुष, युवा-वृद्ध, सदृस्थ इससे काफी लाभ उठायेंगे।

इस ग्रंथ को छपाने और प्रकाशित करने में पूरा एक वर्ष का समय लगा है, जिसमें मुझे निरंतर ६ से ८ घंटे तक काम करना पड़ा है। [illegible] ग्रंथ-लेखन के परिश्रम से कम है। कठिन और [illegible] विषयों को सरल और [illegible] रीति से पेश करने का श्रेय मैं [illegible] नहीं रख सकता है। इसका मुझे [illegible] है कि पाठक [illegible] से ग्रंथ के सभी [illegible] और [illegible] लाभ उठायेंगे।

पूज्य पिताश्री

के

चरण-कमलों में

प्रस्तावना

श्रीनाखियर्यैरचतुरैर्निबद्धं गाम्भीर्यसौष्ठवगुणैरुपेतम् ।
'आरोग्यशास्त्रं' परमोपयोगि लोकस्य कल्याणकरं चभूयात् ॥

आदौ स्वास्थ्यस्य विज्ञानं शारीरं ततः परम् ।
शारीरयन्त्र विस्तारो गर्भाधानादिकं ततः ॥
शिशुपालन रीतिश्च स्नानपद्धति वर्णनम् ।
भोजनस्य विधि रुक्तः फलाहारोपयोगिता ॥
विषभोजन दोषश्च रोगकीटाणुवर्णनम् ।
काथौषधि प्रकरणं मुष्टियोगस्ततः परम् ॥
औषधानां विधानंच सामान्येनविशेषतः ।
धातुभस्म प्रकरणं मारणमिश्र विधानकम् ॥
रोगिसेवा प्रकारश्च एकरोगनिवारणम् ।
महामारीप्रकरणं 'प्लेग' रोगनिवारणम् ॥
महारोग प्रकरणं स्वाभाविक चिकित्सनम् ।
युवावस्था स्वरूपंच औषधूनि विधानकम् ॥
मारीरशास्त्र विधानच सौंदर्यस्य च रक्षणम् ।
दाम्पत्युश्च प्रकरणं सूतिकानां च पालनम् ॥
[illegible] विधानं विधानकरणम् ।
एतेषु प्रकरणं [illegible] ॥
मनोहरणं [illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible]

महामहोपाध्याय, डा०) श्रीगंगानाथ झा शर्मा
([illegible])

अध्याय पाँचवाँ

शिशु-पालन

अध्याय छठा

स्नान-पद्धति

अध्याय सातवाँ

भोजन

अध्याय आठवाँ

[illegible]

अध्याय बारहवाँ

मुष्टि-योग

[illegible]

अध्याय सत्रहवाँ

रोगी की सेवा

अध्याय अठारहवाँ

तपेदिक

अध्याय उन्नीसवाँ

[illegible]

अध्याय बाईसवाँ

स्वाभाविक चिकित्साएँ

अध्याय तेईसवाँ

[illegible]

अध्याय चौबीसवाँ

व्यभिचार

साढ़े चित्रों की सूची

सादे चित्रों की सूची

आरोग्य-शास्त्र

अध्याय पहला

स्वास्थ्य-विज्ञान

प्रकरण १

स्वास्थ्य-रक्षा का महत्त्व

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

प्रकरण २

स्वास्थ्य और सौंदर्य

आरोग्य ही सच्चा सौंदर्य है। वास्तव मे आरोग्य और सौंद
इनमे जहाँ भेद किया कि दोनो ही हाथ से गए। बहुत-से
आरोग्य का अर्थ है 'रोग का अभाव'। परतु रोग क्या है, यह
जानते है, सर्वसाधारण की तो बात ही क्या।

एक विद्वान् डॉक्टर का कथन है—"To define heal
cult than to define disease." अर्थात् "स्वास्थ्य की व्या
करने से कुछ सरल नही है।"

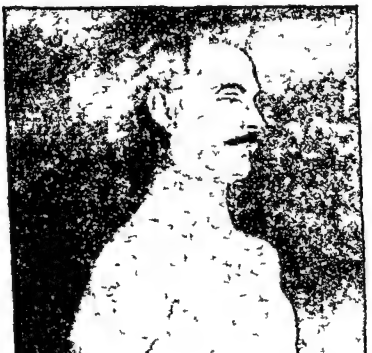

स्वस्थ पुरुष

एक विद्वान्
'शरीर के प्रत्येक
परतु अंग की
अस्वाभाविक क्रि
असाधारण बात

आरोग्य ही
भी मनुष्यो का

'सौंदर्य की
पडते ही मन मे
खडा हो जाता है
कि स्त्री-जाति ने
है ? आप संसार
से देखिए, तो आ
होगा कि प्रत्येक
वर्ग ही अत्यत
अपेक्षा चिडा, ग
और कुतिया की

स्वस्थ पुरुष के शरीर की गठन

इस प्रकार जगत के तमाम
को देखिए, तब पता मालूम
तिये ही यह नियम उत्पन्न
गया है। यह एक साधारण
कि जिस व्यक्ति में जिस वस्तु
कमी होती है, वह उसकी
सदा चिन्ता करता है। हम देखते
कि स्त्रियां सदा शृंगार करती रहती
अपने सौन्दर्य का सदा ध्यान
रहती हैं।

इसी लिए पुरुष पर स्त्रियां
इस कदर मोहित हैं कि
प्रमाण हुआ की आवश्यकता नहीं।
पुरुषों पर स्त्रियों प्रकृति की तरह मानो और उनको आकर्षित करने में धीरे तक प्रयत्न
है। इस बात से प्रमाणित होता है कि स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष ही अधिक सुन्दर है। पर
उनके रूप पर मोहित होना प्राणी का स्वभाव नहीं। जैसे मुर्गी को पर कोई भी मोहित नहीं
होती, उसी प्रकार सुन्दर पुरुष पर पुरुष मोहित नहीं होते। इसी लिए [illegible]
रहती है, स्त्री का सौन्दर्य पर-
मानो पुरुषों को सदा [illegible]
जाता है, परन्तु पुरुष [illegible]
[illegible] सुन्दर रहते हैं। [illegible]
[illegible] है कि [illegible]
[illegible] है। [illegible]
[illegible] है, [illegible]
[illegible] पुरुष
[illegible]

पुरुष अधिक-से-अधिक कर सकता है, आम तौर पर उसको सुंदर कहकर पुकारा जाता है।

सौंदर्य की इस झूठी परख से स्त्रीत्व के लाक्षणिक तत्त्वों में अस्वाभाविक रीति से वृद्धि करने का हानिकर प्रयत्न अनेक जातियों में शताब्दियों से चला आता है। स्वाभाविक रीति से एक तंदुरुस्त व्यक्ति के पेट का घेरा छाती के घेरे की अपेक्षा कम होना चाहिए, इसी धारणा पर कृत्रिम रीति से कमर पतली करने के अनेक प्रकार के कमरबंद, कार्सेट आदि का उपयोग योरप में पीढ़ियों से जारी रहा है। इसके फल-स्वरूप ऐसी चेष्टा करनेवाली स्त्रियों की संतान अत्यंत अस्वस्थ हुई हैं। बड़े पैरों की अपेक्षा छोटे पैर सुंदर होते हैं, इस विश्वास पर चीनियों ने स्त्रियों को जन्मते ही लोहे का जूता पहनाकर लूला बना दिया। वहाँ बड़े घर की स्त्रियाँ पग-सौंदर्य की बदौलत बिना सहारे टट्टी-पेशाब को भी नहीं जा सकतीं। इसी प्रकार उभरी हुई छाती अच्छी मालूम होती है, इस विश्वास पर योरप की स्त्रियाँ तो लकड़ी की छातियाँ पहनने लगी थीं, और आस्ट्रेलिया और आफ्रिका में तो यह विश्वास फैल गया कि जो स्त्री अपने स्तनों को कृत्रिम रीति से इतना लंबा बनावे कि बालक को पीठ पर बाँधकर और कंधे पर बैठाकर दूध पिला सके, वही सर्वाधिक रूपवती है। भारतवर्ष में भी कठोर और उभरे हुए स्तन दिखाने के लिये कसकर बाँधी हुई बारीक मलमल की चोली और कमर पतली दिखाने को खूब कसी हुई घाँघरी तथा मुख का सौंदर्य बढ़ाने के लिये गोदना गुदवाने का रिवाज है। गुजरात में दाँतों को लाल रँगना सौंदर्य का चिह्न माना जाता है। वहाँ स्त्रियाँ दाँतों को रँगने के लिये गढ़े मजीठ आदि को बाँधकर मोती के समान दाँतों को लाल कर लेती हैं। ये सब प्रक्रियाएँ स्वास्थ्य-नाशक हैं, स्वास्थ्य-वर्धक नहीं।

स्वस्थ शरीर की बाहरी गठन

वास्तविक बात तो यह है कि ठीक-ठीक तंदुरुस्त मनुष्य १ करोड़ में एक भी मिलना

कठिन है। ये असंख्य डॉक्टर, ऊँट वैद्य, हकीम, अत्तार और अगणित रोगी इसका प्रमाण हैं। इस दशा में अंगोपांग के स्वाभाविक आरोग्य-दर्शक परिमाण और शरीरसंगत अनेक अंगों की क्रियाओं के स्वाभाविक रूप, स्नान, पान, शयन और व्यायाम आदि की ठीक-ठीक मात्रा, अकृत्रिम, सरल और निष्पाप जीवन, इन सब बातों की समस्या बड़ी दुरूह है।

ग्रीक के प्राचीन इतिहास से पता लगता है कि यह सुंदर जाति किस तरह ऐश-आराम और व्यसनों में फँसकर अपने आरोग्य और सौंदर्य को खो बैठी। वह प्राचीन आर्य-संस्कृति, जिसका सौंदर्य अपूर्व था, आज पतित, काले जंतुओं की अधमी जाति बन गई है।

शरीर एक बहती हुई नदी के समान है, जिसमें एक तरफ से तो सूक्ष्म और स्थूल पदार्थ प्रवेश करते और दूसरी तरफ से निकलते हैं। इस प्रवाह का समतोलपना जहाँ नहीं रहता, वहाँ सुंदर परमाणु शरीर में इकट्ठे होने लगते और शरीर के आरोग्य में विघ्न करते हैं। ये मलिन परमाणु ज्यों-ज्यों शरीर में जमा होते रहते हैं, त्यों-त्यों शरीर की विविध सौंदर्य-दर्शक रेखाएँ चर्बी के समान पदार्थ से भरती जाती हैं, और शरीर मोटा और बेढ़ौल होता जाता है। इस प्रकार सौंदर्य घटने के साथ ही आरोग्य भी घटता जाता है। फिर साधारण कारण होते ही रोग का आक्रमण हो जाता है।

यहाँ हम एक मिसाल देते हैं, जिसमें एक पूर्ण स्वस्थ शरीर के अंग-प्रत्यंगों की माप है

नैसर्गिक शरीर की स्वास्थ्यदर्शक माप

शरीर का भाग	सीधे खड़े होकर खड़े हो जाने पर पूरी ऊँचाई की तुलना	
	पुरुष	स्त्री
सिर बाल की जड़ों से ठोड़ी तक	[illegible]	[illegible]
एक कान के छेद से दूसरे कान के छेद तक	[illegible]	[illegible]
गर्दन	[illegible]	[illegible]
कंधे से कुहनी तक लम्बाई का घेरा	[illegible]	-
कंधे से कुहनी के आगे हथेली का घेरा	[illegible]	[illegible]
कंधे से कुहनी के आगे का घेरा	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	
[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]

नितंब के आगे का घेरा	५६१	
दाहनी जाँघ के बीच का घेरा . .	३१७	३१०
दाहने पैर की पिंडली का घेरा	२२०	२१०
दाहने कंधे और कुहनी के बीच का घेरा	१५६	१७३
बाईं कुहनी के नीचे के हाथ का ज़्यादा-से-ज़्यादा घेरा	१४१	१५६
बाएँ पैर की पिंडली का घेरा .	२२३	२०८
बाईं जाँघ के बीच का घेरा .	३११	२८५

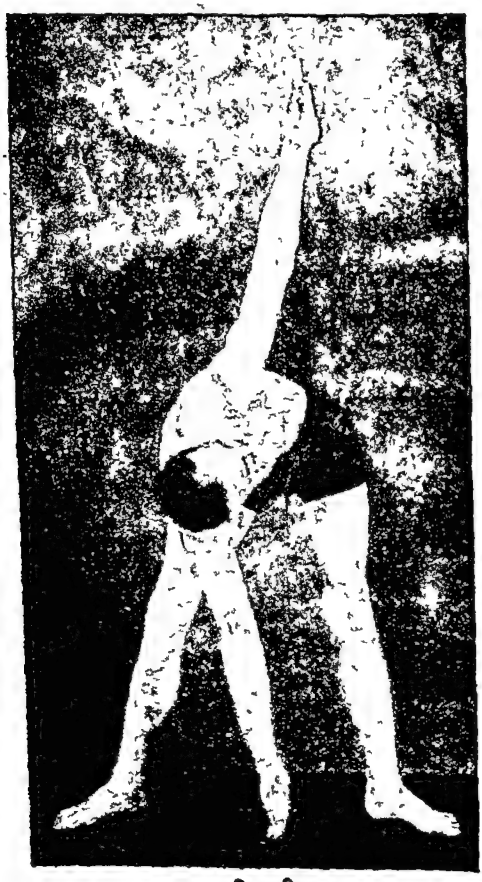

स्वस्थ शरीर की दृढ़ता

ऊपर बताए हुए परिमाण के शरीर में शरीर-क्रियाएँ किस तरह होती हैं, यह आगे बतलाते हैं—

क्षुधा—भोजन के प्राकृतिक रूप से यथासंभव कम विकृति करके भोजन करने की रुचि हो। स्वाद-पूर्वक खा सके। ख़बर भी न पड़े, इस तरह पच जाय। शरीर को योग्य परिमाण में पुष्टि प्राप्त हो, उतना ही आहार लेने की नियमित इच्छा उत्पन्न हो। मिर्च-मसाले से रहित सादा फल-मूल ही खाने की विशेष इच्छा हो।

प्यास—जो सिर्फ़ निर्मल जल या फलों के रस से ही तृप्त हो जाय। चा, काफी, शराब आदि उत्तेजक पेयों की रुचि ही न हो।

दाँत—स्वच्छ, निर्मल हो और जीवन-पर्यंत गिरें नहीं।

मूत्र—स्वच्छ, दुर्गंध-रहित, रख देने पर भी उसमें गाद नहीं जमे, उज्ज्वल सुनहरी रंग-युक्त।

दस्त—पीला, बादामी रंग का, बँधा हुआ। उसका कोई भाग गुदा

में चिपका न रहे। दिन में जितनी बार भरपेट भोजन किया जाय, उतनी ही बार शौच होना चाहिए।

पसीना—गंध-रहित।

चमड़ी—चिकनी और नर्म, स्थितिस्थापक, कुछ गोलाई, कपाल और [illegible] के नीचे के स्थानों में चुटकी से पकड़ी जा सकने योग्य हो, क्योंकि इन स्थानों पर चमड़ी और हाड़ के बीच में चर्बी की तह नहीं होती। शरीर के किसी भी भाग पर उँगली का पोरवा दबाकर उठाते ही तत्काल गड्ढा भर जाय।

नाखून—किसी प्रकार की लकीरें या दाग न हों। उनका गुलाबी रंग हो।

चेहरा—न पीला, न बहुत लाल, उस पर दाग, झाईं, मुँहासे या मस्से न होने चाहिए। चमड़ी में चमक हो, पर [illegible] न हो, न अस्वाभाविक रंग की हो।

बाल—पूरे भरावदार, स्वाभाविक रंगवाले हों, गंज न हो।

दाँत—पालिशदार और निर्मल।

घ्राणेंद्रिय—अति तीव्र या मंद न हो, किंतु स्वाभाविक और सतेज हो।

श्वास-प्रश्वास—बिना आवाज़ और बिना कष्ट के चलें, [illegible], और उसमें किसी तरह की गंध न हो।

नींद—गहरी, [illegible] और नींद में न [illegible] हो।

[illegible]—लगी हुई और बिना [illegible]

[illegible]—[illegible]

[illegible]—शरीर की [illegible]

शरीर के दोनों भाग—समान पुष्ट और [illegible]

दोनों [illegible]—[illegible]

शरीर के [illegible]—[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

स्वस्थ लडके-लड़कियों का कद और वज़न अनुमान से

लड़के			लड़की		
आयु	उँचाई	वज़न	आयु	उँचाई	वज़न
५ वर्ष	४१। इंच	२० सेर ४ छ०	५ वर्ष	४१ इंच	१९ सेर १२ छ०
६ ,,	४४ ,,	२२ ,, ७ ,,	६ ,,	४३। ,,	२१ ,, २ ,,
७ ,,	४५॥ ,,	२५ ,,	७ ,,	४५ ,,	२४ ,,
८ ,,	४७॥ ,,	२७ ,, ६ ,,	८ ,,	४७ ,,	२६ ,, १ ,,
९ ,,	४९॥ ,,	३० ,,	९ ,,		२८ ,, ९ ,,
१० ,,	५१॥। ,,	३३ ,, ४ ,,	१० ,,	५१ ,,	३१ ,, ४ ,,
११ ,,	५३॥ ,,	३५ ,, ९ ,,	११ ,,	५३। ,,	३४ ,, ८ ,,
१२ ,,	५५ ,,	३९ ,, ४ ,,	१२ ,,	५५॥। ,,	४० ,, ,, ,,
१३ ,,	५७ ,,	४२ ,, १ ,,	१३ ,,	५८ ,,	४४ ,, ,, ,,
१४ ,,	५९॥ ,,	४८ ,,	१४ ,,	६० ,,	५० ,, ,, ,,
१५ ,,	६२। ,,	५३ ,,	१५ ,,	६१ ,,	५४ ,, ,, ,,

पाठक इस सारिणी को यदि गौर से देखेंगे, तो मालूम होगा कि लडकियों का क़द और वज़न भी ११ वर्ष की आयु तक लडकों से कम रहता है, पर १२वाँ वर्ष लगते ही उनका क़द और वज़न लडकों से बढ़ जाता है।

स्वस्थ पुरुषों का वज़न और कद

आयु	फ़ु० इं० ५—०	फ़ु० इं० ५—२	फ़ु० इं० ५—४	फ़ु० इं० ५—६	फ़ु० इं० ५—९	फ़ु० इं० ५—१०	फ़ु० इं० ६—०
	म० से०	म० से०	म० से०	म० से०	म० से०	म० से०	म० से०
१६	१ ९	१ ११॥	१ १५	१ १९	१ २३	१ २७	१ ३२
२०	१ १३।	१ १६	१ १९	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३५
२५	१ १७	१ १९	१ २३	१ २७	१ ३०	१ ३४	१ ३८
३०	१ १९	१ २०	१ २४	१ २८	१ ३२	१ ३५	२ १
३५	१ २०	१ २२	१ २६	१ ३०	१ ३२	२ ०	२ ४
४०	१ २१	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३३	२ २	४ ४
४५	१ २१	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३३	२ २	२ ५
५०	१ २१	१ २३	१ २७	१ ३१	१ ३३	२ ०	२ ५

४० वर्ष की आयु के पीछे पुरुषों का वज़न कदाचित् ही बढ़ता है।

स्वस्थ स्त्रियों का वजन और कद

आयु	फु० ४	इं० ८	फु० ५	इं० ०	फु० ५	इं० ४	फु० ५	इं० ६	फु० ५	इं० ८	फु० ५	इं० १०
वर्ष	मा०	से०	मा०	से०	मा०	से०	मा०	से०	मा०	से०	मा०	से०
१६	१	८	१	१०	१	१०॥	१	१३।	१	१७॥	१	२०
२०	१	१०	१	१४	१	१६॥	१	२०	१	२७	१	३१
२५	१	१२	१	१६	१	२१	१	२४	१	२८	१	३२
३०	१	१३	१	१७	१	२२	१	२५	१	३०	१	३५
३५	१	१५	१	१६	१	२४	१	२६	१	३२	१	३६
४०	१	१६	१	२०	१	२५	१	२७	१	३३	१	३७
४५	१	१७	१	२१	१	२६	१	२८	१	३३	१	३८
५०	१	१८	१	२२	१	२७	१	२८	१	३४	१	३९

पाठक नोट करें कि स्त्रियों का वजन ५० वर्ष की आयु तक निरंतर कम-कम बढ़ता रहा है।

प्रकरण ३

स्वास्थ्य-रक्षा के नियम

वाग्भट का कथन

नित्य हिताहारविहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः ;
दाता समः सत्यपरः क्षमावान्, आप्तोपसेवी च भवत्यरोगः ।

(१) नित्य हितकारी आहार और विहार करनेवाला ।
(२) देख-भाल और सोच-समझकर काम करनेवाला ।
(३) विषयों में असक्त पुरुष ।
(४) दाता ।
(५) समदर्शी ।
(६) सत्यवक्ता ।
(७) क्षमा करनेवाला ।
(८) बुद्धिमानों की संगति करनेवाला ।

इन आठ गुणों को नित्य धारण करनेवाला पुरुष पूर्ण आरोग्य रहता है । इन आठो गुण की नीचे हम संक्षेप से व्याख्या करते है—

१—अपने शरीर, प्रकृति, आयु, ऋतु, काल, देश, इन सब बातो पर विचार करके अनुकूल और लाभदायक खाने-पीने की वस्तुओं का सेवन करे । तथा इसी प्रकार स्नान व्यायाम, चलना-फिरना, जागरण, शयन, परिश्रम आदि विहार करे । वह मनुष्य स्वस्थ रहेगा।

२—जो मनुष्य प्रत्येक कार्य सोच-विचारकर करेगा, जोश और झोंक मे न पड़ेगा, वह बहुत-से शारीरिक और मानसिक कष्टों से बच सकेगा, जिसका स्वास्थ्य पर बडा भारी प्रभाव पडता है । जो लोग सोच-विचारकर काम नही करते, वे सदा चिंताओं और दुःख मे डूबे रहते हैं, और इस तरह स्वास्थ्य नष्ट कर बैठते है ।

३—दान देनेवाला मनुष्य दाता कहाता है । जो दाता है, उसका हृदय आनंद और उदारता से परिपूर्ण रहेगा । उसके सब परिजन, नौकर-चाकर, प्रसन्न रहेंगे और ठीक कार्य करेंगे । यश मिलेगा । कंटक और कंजूस की स्त्री भी निंदा करती है ।

४—समदर्शी वह पुरुष है, जो हर्ष मे आपे से बाहर न हो जाय और शोक मे पागल हो जाय । जो शत्रु-मित्र सबको बराबर समझे । ऐसा पुरुष बहुत शात और सबका प्रिय रहेगा ।

५—सत्यवक्ता आदमी सदा निष्पाप और निर्भय रहता है। वह निश्चिंत सोता है, और निर्भय विचरण करता है।

६—क्षमावान् को कभी क्रोध नहीं आता। और क्रोध के बराबर मनुष्य का घातक दूसरा शत्रु नहीं है।

७—बुद्धिमानों और सज्जनों की संगति से अच्छे कर्म सीखे जाते हैं, इससे मन में गम्भीरता, स्थैर्य और विवेक बढ़ता है।

महर्षि वाग्भट का उपर्युक्त श्लोक प्रत्येक पुरुष को अपने कमरे में लगाना और उसका मनन करना चाहिए।

स्वास्थ्य रक्षा के ६ वैज्ञानिक नियम

शरीर की रक्षा के लिये नीचे लिखी ६ बातों पर पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए—

(१) शरीर के पोषण के लिये उचित अन्न-जल।

(२) प्रकाश और शुद्ध वायु।

(३) मल, मूत्र, पसीना आदि का यथानियम निकालना।

(४) सर्दी और गर्मी से शरीर की रक्षा।

(५) उचित स्नानाभ्यास, परिश्रम और विश्राम।

(६) विषाक्त द्रव्यों और कीटाणुओं से बचना।

इन नियमों का यदि पालन किया जायगा, तो नीरोगता की प्राप्ति होगी। इनका विस्तार इस पुस्तक में आगे किया जायगा।

अन्न

शास्त्र में लिखा है "अन्नों से प्राण" अर्थात् अन्न ही प्राण है। [illegible] है। अन्न से ही शरीर और मन की पुष्टि होती है। मनुष्य को चाहिए कि वह [illegible] अन्न खाय, जिससे उसका शरीर और मस्तिष्क [illegible] हो। अन्न [illegible] हो, [illegible] हो। [illegible] हो। [illegible] हो। [illegible] है। [illegible] में कहा है—

'[illegible] मनुष्य [illegible] है।'

'[illegible] है।'

'[illegible] है।'

जल

जल को शास्त्रकार अमृत कहते हैं। यह जल प्राणी के लिये परमेश्वर की अद्भुत देन है। ससार में $\frac{3}{4}$ भाग जल और $\frac{1}{4}$ भाग पृथ्वी है। मानव-शरीर में $\frac{7}{10}$ भाग जल है। यदि शरीर का वज़न १०० सेर है, तो उसमें ७० सेर जल और शेष ३० सेर अन्य वस्तु, हड्डी, मांस आदि है। ऐसी दशा मे आप सहज में ही समझ सकते हैं कि जल शरीर के लिये वास्तव मे कितना आवश्यक है। यह तो सभी जानते है कि विना जल के प्राणी जीवित नहीं रह सकते। परंतु जल पीने मे कितनी सावधानी की आवश्यकता है, और जल के साथ कितने भयानक रोग जतु शरीर मे पहुँच जाते है, यह बात सब लोग नही जानते।

भोजन जल ही के सहारे घुलकर शरीर का पोषण करता है।

नदियों का जल, जो निरंतर बहता रहता है, शुद्ध और पीने के योग्य होता है परतु नगरों की गंदी नालियाँ इन नदियों मे डाल दी जाती हैं और लोग मुर्दे डालते एवं और रीति से भी नदियो को गंदा करते हैं। इस कारण कभी-कभी नदियों का जल दूषित हो जाता है, इन सब बातों के लिये प्रतिबंध नियत करने की आवश्यकता है। कुओं का जल प्राय सर्वत्र ही पिया जाता है। पर गहरे कुएँ का जल अधिक उत्तम होता है किन्तु यदि आस-पास भी ज़मीन अच्छी हो, तो उथले कुएँ का पानी भी उत्तम होता है। यदि कुओ के पास तालाब-चहबच्चे या दलदल हों, तो उनका असर कुएँ पर पहुँचकर उसके जल को ख़राब कर देता है। बहुधा कुओं पर इस बात का प्रबध नहीं होता कि गदा पानी उनमे न जाय। नहाने, तथा वस्त्र और बर्तन धोने का गंदा पानी कुएँ में जाता रहता है, इससे उसके जल मे काले मुँहवाले लाल कीडे हो जाते हैं। बहुत लोग मिट्टी से माँजकर मिट्टी-सहित बर्तन कुओ मे डाल देते हैं। बहुत लोग रोटी, पूरी, चावल आदि कुओ में डाल देते हैं। इन सबसे उनका पानी ख़राब हो जाता है। वृक्षों के पत्तो के गिरकर सड़ने से भी कुओ का पानी ख़राब हो जाता है। इसलिये कुओं के ऊपर वृक्ष का होना अच्छा नही है। यदि हो, तो उस पर छतरी लगवा रखनी चाहिए। उनकी जगत भी ऊँची होनी चाहिए, जिससे बाहर का गदा पानी उनके भीतर न जाने पावे। हर हालत में कुएँ के पानी की उतनी ही सफाई रखनी चाहिए, जितनी कि पीने के पानी के घडे की रक्खी जाती है। कुआँ बनाने की सरल और उत्तम रीति यह है कि कुएँ का गोला बहुत उम्दा पक्की ईंटों का बनवाया जाय और गोले और मिट्टी के बीच दो फुट कंकरीट कुटवा दी जाय। इससे जल बहुत शुद्ध मिलता है।

आजकल बडे बडे शहरो में प्राय नल के द्वारा पानी पहुँचाया जाता है। यह जल बहुधा नदियों से लिया जाता है। नदी का पानी एंजिन द्वारा खींचकर बडे-बडे पक्के चहबच्चो मे भर लिया जाता है। जिनमें रेत आदि जल शुद्ध करने की वस्तु भरी रहती हैं। वहाँ से वह भाप उठाकर शुद्ध करके तब नलो द्वारा पीने के लिये पहुँचाया जाता है। ये नल लोहे के होते हैं, और उन पर जस्त की क्लई की हुई होती है। पुराने होने पर यह क़लई गल

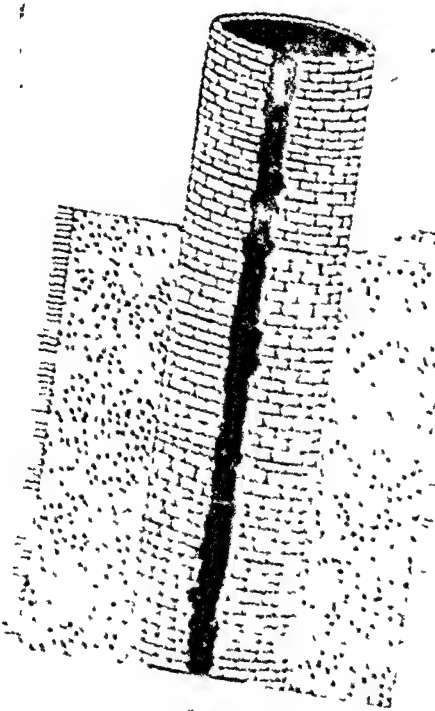

[illegible] जाती है। और लोहा निकल जाता है। यह लोहा पानी में घुलने लगता है, तो यह स्वास्थ्य के लिये हानिकर होता है। हाल में ही कई नगरों के [illegible] में ऐसा गया, तो मालूम हुआ कि नल घुलने की [illegible] से [illegible] वाष्पादक के [illegible] का प्रभाव हो गया है और नगर के [illegible] बनाया [illegible] में [illegible] गया है।

[illegible]

[illegible]

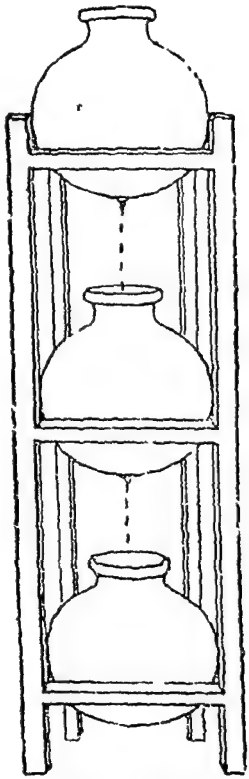

जल को घरेलू रीति से शुद्ध करने की रीति

रहती है। धातु के बर्तनों को भली भाँति माँज-धोकर तब जल भरना चाहिए।

सुराही जो, छोटा मुँह होने के कारण भीतर मे धोई नहीं जा सकती, प्रति सप्ताह अवश्य बदल देनी चाहिए।

वायु और प्रकाश

यह संभव है कि प्राणी अन्न और जल के बिना कु दिन जीवित रह सके। परंतु वह बिना वायु के तो क्षण-भ भी जीवित नहीं रह सकता। अन्न और जल दिन-भर ५-७ बार लेना पड़ता होगा, पर वायु तो प्रति मिन १५-२० बार श्वास द्वारा लेना पड़ता है। इसलिये वा की हमें अत्यंत आवश्यकता है।

वायु बहुत बड़ी संख्या में सदा हमारे चारो तरफ रह है। इस वायु में और भी बहुत-सी वस्तु मिली रहती है १०० भाग वायु में ७९ ०२ भाग नत्रजन, २० ९४ ओ जन और ०४ कर्बनद्विओपित होती है। इनके सि भाप, धूल और कुछ सूक्ष्म कीटाणु भी होते हैं।

नत्रजन सबसे अधिक होती है। प्रत्यक्ष में मान शरीर के लिये इसकी कुछ भी आवश्यकता नहीं, प इसके द्वारा ओपजन जैसी तीक्ष्ण हवा हलकी जाती है।

ओपजन के बिना कोई प्राणी जीवित नहीं रह सकत शरीर की गूढ़ अग्नि इसी के जलती, और इसी से भो पचता है। वायु किस भाँति फेफड़ों में श्वास-नाली के द्व पहुँचकर शरीर के रक्त को शुद्ध करती है, यह हम आगे शरीर-यंत्र के अध्याय में खुल करके बतावेंगे। कर्बनद्विओपित मनुष्य और पशुओं के शरीर में पैदा होती है। अग्नि लैंप के जलने से भी उत्पन्न होती है। इसकी प्राणियों के शरीर को ज़रा भी आवश्य नहीं है। वे इसे श्वास द्वारा बाहर फेंक देते हैं। परंतु वनस्पति और वृक्ष आदि के लिये वायु जीवन-मूल है। जिस प्रकार वायु में से ओपजन को प्राणी ग्रहण करके ज धारण करते हैं, उसी प्रकार वायु में से कर्बनद्विओपित को ग्रहण कर वनस्पति फल फूलती हैं। यह ईश्वर की विचित्र माया है। यदि वृक्ष इस वायु को न चूसें, समस्त वायु-मंडल ज़हरीला हो जाय। वृक्ष आदि इस वायु को सूर्य की किरण

ही घूम सकते हैं। परंतु गमले आदि जो अँधेरी जगहों में रखे रहते हैं, प्रायः सूख जाते हैं।

यह अंदाज़ लगाया गया है कि आराम से बैठा हुआ मनुष्य प्रति घंटे ० ६ घनफुट कार्बनडाइऑक्साइड अपने श्वास से बाहर निकालता है। यदि बाहर से ताज़ी हवा का आना रोक दिया जाय तो इस हवा का ज़हरीला प्रभाव शीघ्र मालूम हो जायगा। इसके विषैले प्रभाव को नष्ट कर ताज़ा हवा में साँस लेने के लिये मनुष्य को प्रति घंटा ३ ००० घनफुट स्वच्छ वायु की आवश्यकता है। खेद है कि इस विषय पर बहुत कम मनुष्य ध्यान देते हैं और तंग गलियों और तंग घरों में रहकर आयु को नष्ट करते हैं। बड़े-बड़े शहरों में तो साफ़ और से स्वच्छ हवादार मकान मिलना कठिन होता है। दुःख की बात है कि धन के अभाव से बहुत छोटे-बड़े सभी लोग बड़े शहरों में अति घृणित रीति से रहते और जीवन भार वहते हैं।

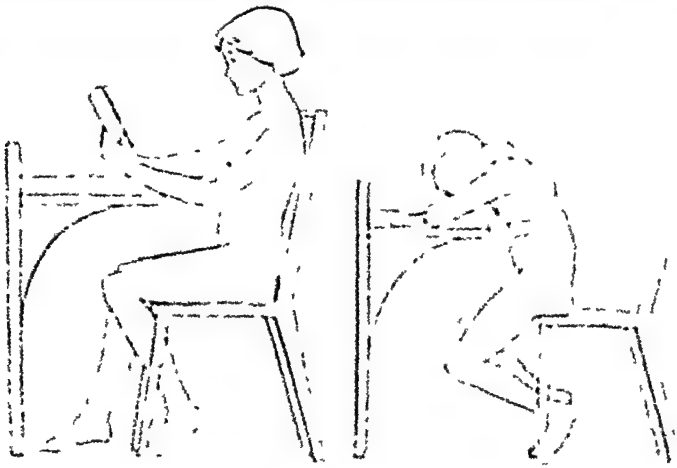

[illegible]

है। साधारणतया एक मनुष्य के लिये १००० घनफुट स्थान काफी है, यदि उसकी वायु प्रति घंटा तीन बार बदली जा सके। हम आगे एक अध्याय मे विस्तार से यह बतावेंगे कि किस प्रकार मकानों का निर्माण किया जाय, जिससे कमरे हवादार और उजाले से सयुक्त रहें।

मुँह ढाँपकर सोना भयानक भूल है। बहुत लोग अच्छे मकानो तथा शुद्ध हवादार स्थानों पर तो रहते हैं, पर सदा मुँह ढाँपकर सोया करते है। यह बडी गंदी और आत्मघाती आदत है। शुद्ध वायु इतना काम करती है—

१—शुद्ध वायु रक्त शुद्ध रखती है।

२—हरियाली वायु को शुद्ध रखती है।

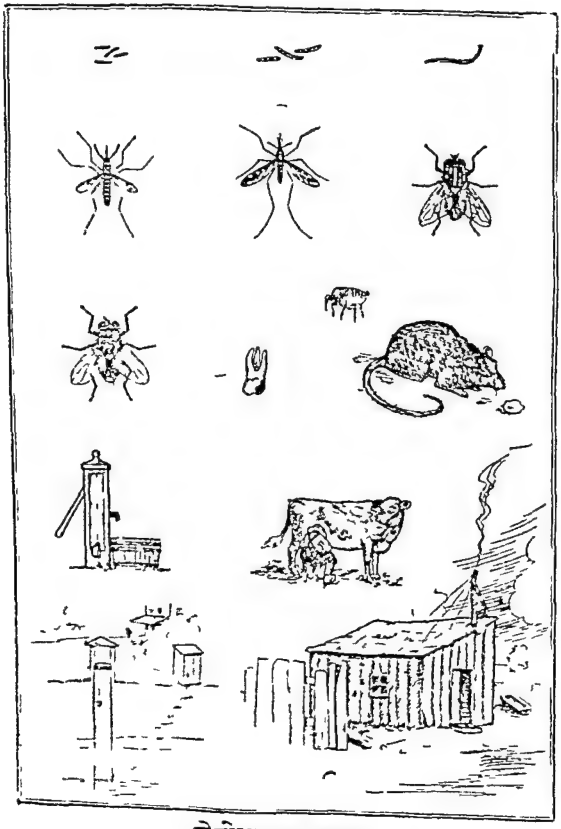

रोगोत्पादक साधान

३—हवा अपनी वाहक शक्ति से अच्छे और बुरे परमाणुओं को शरीर में प्रवेश करती है। ऋतु की वनस्पति तथा पौष्टिक द्रव्यों द्वारा हवन करने से वायु शुद्धि मे बहुत लाभ होता है।

प्रकाश

जहाँ अंधकार है, वहाँ मृत्यु है। जहाँ प्रकाश है, वहाँ जीवन है। सूर्य की सुनहरी किरणें जिस घर पर प्रभात ही मे पडकर आनंद प्रदान करती है, वही घर सुख, धन, धान्य और लक्ष्मी का वास-स्थान होता है। प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि वह अपने घरों मे प्रकाश का पूर्ण प्रबंध करे।

मक्खी, मच्छर, चूहे, झींगर, पशुओ की गंदगी, कीचड, सील, और कूडा-कर्कट रोगोत्पादक साधन है।

मल-मूत्रादि त्याग का नियत काल

हम इसी अध्याय में आगे चलकर बतावेंगे कि मल-मूत्रादि के ठीक-ठीक समय पर त्याग न करने से कितने रोग पैदा हो जाते हैं।

सर्दी-गर्मी से रक्षा

सर्दी-गर्मी से शरीर की रक्षा करने के लिये आवश्यक है कि ऋतु के अनुकूल वस्त्रों को धारण किया जाय। वस्त्र धारण करने के दो अभिप्राय हैं—प्रथम, बाहरी शीत और उष्णता से शरीर की रक्षा की जाय। दूसरे, भीतरी उष्णता को सुरक्षित रक्खा जाय। शरीर सुन्दर प्रतीत हो, यह वस्त्रों का एक गौण उपयोग भी है। वस्त्र प्रायः तीन प्रकार के होते हैं—ऊनी, सूती और रेशमी।

ऊन भेड़ों और बकरों के बालों की बनाई जाती है। ऊन के बारे में यह प्रसिद्ध है कि इसमें गर्मी का कम प्रवेश होता है। और इसके होते हुए शरीर की गर्मी नष्ट नहीं होती। यह हवा की गर्मी को ग्रहण लेती है, तथा शरीर को उससे बचाती है। ऊनी वस्त्र शरीर से लिपटा रहे, तभी उससे यह लाभ होता है।

रेशम भी गर्मी को बहुत रोकता है। और सर्दी में गर्मी को बहुत प्रवेश करता है। इस लिये शरीर की गर्मी को नष्ट करता है। इसमें विलायती का प्रवेश नहीं होता।

सूती वस्त्रों में गर्मी की [illegible] होती है, जो [illegible] की होती है। जिन के कपड़ों में गर्मी की अधिक होती है, जिससे [illegible] होते हैं। इसी से जिन के वस्त्रों को [illegible] भाँति [illegible] में [illegible]। सूती वस्त्रों में [illegible] यह गुण यह है कि वे [illegible] से [illegible] हैं परन्तु वे [illegible] और [illegible] शरीर का गर्मी को [illegible] करते हैं।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

३—यथासंभव कम हों।

सदैव सिर को ठंडा रखना और पैरों को गर्म रखना आवश्यक है। सर्दी में प्राय सभी मोज़ा पहनते है, पर उन्हे स्वच्छ शायद ही कोई रखता होगा। जूते ज्यादा कसकर न पहने जायँ, जिससे पैर विकृत हो जायँ। यह आवश्यक है कि मोजा २४ घंटा पहनने के बाद में धो डाला जाय। भीतर की गजी भी प्रतिदिन धोना आवश्यक है।

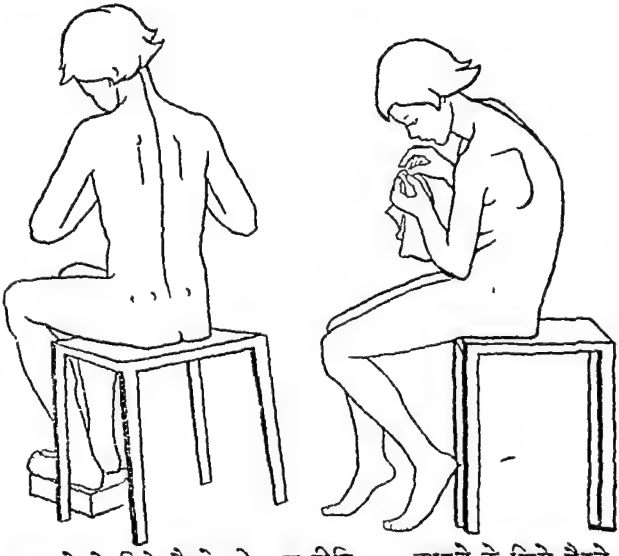

काढ़ने के लिये बैठने की शुद्ध रीति काढने के लिये बैठने की गलत रीति

स्वास्थ्य-रक्षा के संबंध मे स्त्रियाँ बहुत पिछड़ी हुई हैं। यद्यपि उनको पुरुषों से अधिक स्वस्थ होना चाहिए, क्योंकि उन्हें बच्चे उत्पन्न करना है पर खेद है, वे सदा मैले वस्त्र पहनने की अभ्यासी तथा कच्चा पक्का, बासी-कूसी अन्न खाने की शौकीन होती है। हम आगे व्यायाम के अध्याय में बतावेंगे कि स्त्रियों को भी व्यायाम की कितनी आवश्यकता है। यहाँ सिर्फ यह कहना है कि पुरुषो की भाँति उन्हें भी नियमित समय पर, नियमित रीति से नित्यकर्म करना। और खुली हवा मे घूमना चाहिए। प्राय. आजकल की विदुषी युवतियाँ घर के परिश्रम के कामो से दूर रहती है, इससे उनका शरीर नाजुक तथा रोग का घर बन जाता है। पर याद रखने की बात है कि स्त्रियों को प्रसव करना पड़ता है, और यह साधारण काम नहीं। वही स्त्री आसानी से, बेतकलीफ़ प्रसव कर सकती है, जो ख़ूब परिश्रमशील और हृष्ट-पुष्ट हो।

परदा स्त्रियों का पाप है। प्रत्येक पुरुष-स्त्री का कर्तव्य है कि इसका नाश करे। और स्त्रियों को स्वतंत्र रीति से, मित्र की भाँति, रक्खे।

स्वास्थ्य के संबंध मे बहुत-सी बातें ऐसी है, जिनके विषय मे लोगो का ख़याल बहुत कम जाता है, पर जो वास्तव मे बहुत महत्त्व-पूर्ण हैं। जैसे पढ़ने के लिये झुककर बैठना शरीर को बेडौल बनाता है। चलने मे तिरछे पैर डालना भी शरीर को कुडौल बनाता है। सीने-पिरोने

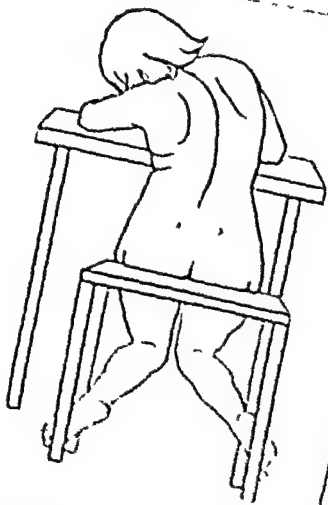

के लिये बैठने की गलत रीति

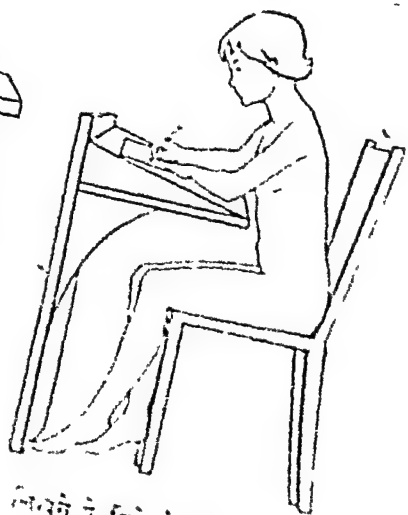

लिखने के लिये बैठने का गलत रीति

के लिये प्राय स्त्रियाँ झुककर बैठी रहती है। ऐसा बैठना ठीक नहीं। कुर्सी पर बैठने के लिये भी शरीर को आराम के साथ रखना चाहिए। पत्थर की मूर्ति की भाँति अकड़कर बैठना ठीक नहीं।

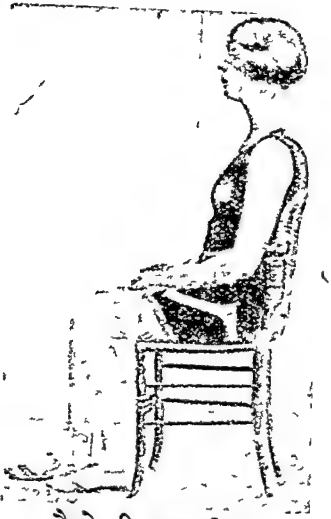

बैठने की गलत रीति

बैठने की शुद्ध रीति

प्रकरण ४

दिनचर्या

तंदुरुस्त मनुष्य को इस प्रकार अपने नित्यकर्म की दिनचर्या बनानी चाहिए—

प्रातःकाल जागना

उसे उचित है कि वह प्रातःकाल, सूर्य निकलने से प्रथम, उठे। अपनी मंगल कामना तथा आरोग्यता के लिये सर्वशक्तिमान परमात्मा का स्मरण करे।

मलत्याग

सोकर उठने के बाद प्रथम कर्म मलत्याग है। बहुत-से लोग तत्काल सोकर, बहुत से प्रातः [illegible] और बहुतसे कुछ रात सोकर मलत्याग करते हैं—यह बुरी आदत है। यदि [illegible] हो, तो मलत्याग को बाहर, दूर मैदान में, जाए। यदि पाखानों में जाना है, तो वे साफ़ [illegible] चाहिए। "मिताक्षरा" ग्रंथ का मत है कि "पाखाने [illegible] की भाँति [illegible] चाहिए।" यह लेख में इसी वचन को प्रमाणित करने के लिये सीधा का पाठ पाखाने में [illegible] करते हैं। [illegible] और दुर्गंधित पाखाने [illegible], [illegible] और [illegible] रोगों को उत्पन्न करते हैं। दिन में दो बार से अधिक दस्त आना भी रोग है।

मलत्याग के लिये देर तक बैठे रहने की आदत [illegible] चाहिए। [illegible] सीना भी बुरी आदत है। यदि मलत्याग में देर लगे, तो [illegible] में [illegible] परिवर्तन करे। [illegible] अतीसार, [illegible], [illegible] आदि रोगों के [illegible] होते हैं, [illegible] रोग देर में और [illegible] होता। [illegible] [illegible] करते हैं। यह बुरी बात है। [illegible] और एक ही बार में [illegible] होता है। [illegible] और [illegible] को उत्पन्न करते हैं। [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

पूर्ण रहता है। और ये जंतु मुख और दाँतों की जड़ में जमकर बैठ जाते हैं तथा इनमे जो भयानक रोग होते हैं, उनका बयान आप दाँतो के अध्याय मे पढ़िए।

मुख धोने मे नेत्रो का धोना भी अत्यंत सावधानी से होना चाहिए, वरना नेत्रो का सारा सौंदर्य ही नष्ट हो जायगा। क्योंकि रात्रि मे बहुत-सा मैल नेत्रो मे जमकर सूख जाता है। दाँत और जीभ को भी अच्छी तरह साफ करना चाहिए, और जमा हुआ कफ निकाल डालना चाहिए। और इसके बाद अच्छी तरह बार-बार कुल्ला करना चाहिए।

दाँतन या मंजन

दाँत शुद्ध करने को यदि ताजा दाँतन मिल सके, तो वह सबसे उत्तम है। रोग-जंतु मारने के लिये नीम की दाँतन अद्वितीय है। परंतु दाँतो को दृढ़ करने के लिये बबूल की उत्तम है। और भी कई वृक्षों की दाँतन की जा सकती है। दाँतन १२ अंगुल लंबी और कनिष्ठिका उँगली के समान मोटी तथा नरम रहनी चाहिए। आक, बड़, खैर, करंज, अर्जुन आदि की दाँतन भी उत्तम होती है।

अजीर्ण के रोगी को या जिसे उल्टी आ रही हो, श्वास और कास के रोगी को तथा नवीन ज्वरवाले को या जिसे प्यास लगी हो या जिसका मुख पक रहा हो या जिसे हृदय, नेत्र, सिर, कान आदि की बीमारी हो, उन्हें दाँतन नही करना चाहिए।

क्षौर

प्रतिदिन या प्रति दूसरे दिन क्षौर करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के लिये हमारी दृढ़ सम्मति है कि वह स्वयं यह क्रिया करने का अभ्यास करे। इसमे एक तो फ़ज़ूल-ख़र्ची बचती है; दूसरे, दूसरों की पराधीनता नही रहती। तीसरे, अशुद्ध और असंख्य रोग-जंतुओं से परिपूर्ण नाई के गंदे वस्त्र, हाथ और उस्तरे आदि से जान बचती है।

संध्या-वंदन

संध्या-वंदन—ज्यों-ज्यों पाश्चात्य शिक्षा हमारे घर मे प्रवेश करती जाती है, हमसे छूटती जाती है, यह बड़े लज्जा और दुःख का विषय है। मुसलमान भाई नमाज़ के कितने पाबंद है। योरपियन लोग भोजन और शयन के समय परमेश्वर को स्मरण करते है। प्रत्येक समझदार स्त्री, पुरुष और बालक को स्नान के बाद कुछ समय परमेश्वर का स्मरण, अपनी रुचि, शिक्षा एवं ज्ञान के अनुसार, अवश्य करना चाहिए। यह इसलिये नहीं कि परमेश्वर ख़ुशामद से प्रसन्न होगा, प्रत्युत इसलिये कि इससे आपके विचार और भावना शुद्ध होंगे।

सुगंध-धारण

चंदन-केसर-कस्तूरी-लेपन, सुगंध-द्रव्य जलाकर धूप मे वस्त्रो को बसाना तथा पुष्प-माला, गुलदस्ता अथवा इत्र-फुलेल और सेंट आदि से वस्त्र, शरीर और घर को सुवासित करना उत्तम है। ये सब कार्य ऋतु के अनुकूल होना चाहिए। देशी इत्रों मे गर्मी में गुलाब, वर्षा में ख़स और शीत में हिना उत्तम है।

वायु-सेवन

सायं-प्रातः स्वच्छ वायु का सेवन करना स्वास्थ्य के लिये लाभदायक है, पर साधारण जिस प्रकार रईस लोग मोटर, गाड़ियों में बैठकर वायु-सेवन करते हैं, उससे वह लाभ नहीं है। धूल-रहित स्थान में, जहाँ चारों तरफ हरियाली हो, तथा फूलों की सुगन्ध भर रही हो, धीरे-धीरे टहलकर वायु-सेवन करे। मुँह बंद करके नाक से सदैव श्वास ले। यदि मित्र साथ हों, तो साधारण प्रमोद के विषय पर बातचीत करे।

ग्रीष्म, वसंत और शरद्-ऋतु में नियम से वायु-सेवन खास तौर से करे।

वायु के गुण

पूर्वी वायु—भारी, गरम और चिकनी होती है। रक्तपित्त, गठिया, बवासीर, विष विकार, कृमिरोगी, ज्वर, सन्निपात, श्वास, [illegible] ([illegible]) इन रोगों के रोगियों को इससे बचना चाहिए। यह वायु खारे पदार्थों में स्वाद उत्पन्न करती है, पर [illegible] का स्वाद बिगाड़ देती है। तथा [illegible] को [illegible] करती है।

पश्चिम वायु—तेज़, शीतल, बल-हरण करनेवाली और रूखी है। [illegible] और [illegible] को सुखाती है। चर्बी को दूर करती है।

उत्तर वायु—शीतल, चिकनी, भारी और [illegible] है।

दक्षिण वायु—मन प्रसन्न करनेवाली, पित्त और रुधिर के विकारों को शान्त करनेवाली, हल्की, ठंडी, बलकारक और नेत्रों को लाभदायक है।

इन गुणों का ध्यान करके वायु-सेवन करे। वायु के [illegible] उत्तर और दक्षिण [illegible] के लिये ठीक-ठीक हैं।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

पूर्ण रहता है। और ये जंतु मुख और दाँतों की जड़ में जमकर बैठ जाते हैं तथा इनमें जो भयानक रोग होते हैं, उनका बयान आप दाँतों के अध्याय में पढ़िए।

मुख धोने में नेत्रों का धोना भी अत्यंत सावधानी से होना चाहिए, वरना नेत्रों का सारा सौंदर्य ही नष्ट हो जायगा। क्योंकि रात्रि में बहुत-सा मैल नेत्रों में जमकर सूख जाता है। दाँत और जीभ को भी अच्छी तरह साफ करना चाहिए, और जमा हुआ कफ निकाल डालना चाहिए। और इसके बाद अच्छी तरह बार-बार कुल्ला करना चाहिए।

दाँतन या मंजन

दाँत शुद्ध करने को यदि ताजा दाँतन मिल सके, तो वह सबसे उत्तम है। रोग-जंतु मारने के लिये नीम की दाँतन अद्वितीय है। परंतु दाँतों को दृढ़ करने के लिये बबूल की उत्तम है। और भी कई वृक्षों की दाँतन की जा सकती है। दाँतन १२ अंगुल लंबी और कनिष्ठिका उँगली के समान मोटी तथा नरम रहनी चाहिए। आक, बड़, खैर, करंज, अर्जुन आदि की दाँतन भी उत्तम होती हैं।

अजीर्ण के रोगी को या जिसे उल्टी आ रही हो, श्वास और कास के रोगी को तथा नवीन ज्वरवाले को या जिसे प्यास लगी हो या जिसका मुख पक रहा हो या जिसे हृदय, नेत्र, सिर, कान आदि की बीमारी हो, उन्हें दाँतन नहीं करना चाहिए।

क्षौर

प्रतिदिन या प्रति दूसरे दिन क्षौर करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के लिये हमारी दृढ़ सम्मति है कि वह स्वयं यह क्रिया करने का अभ्यास करे। इससे एक तो फ़ज़ूल-ख़र्ची बचती है, दूसरे, दूसरों की पराधीनता नहीं रहती। तीसरे, अशुद्ध और असंख्य रोग-जंतुओं से परिपूर्ण नाई के गंदे वस्त्र, हाथ और उस्तरे आदि से जान बचती है।

संध्या-वंदन

संध्या-वंदन—ज्यों-ज्यों पाश्चात्य शिक्षा हमारे घर में प्रवेश करती जाती है, हमसे छूटती जाती है, यह बड़े लज्जा और दुःख का विषय है। मुसलमान भाई नमाज़ के कितने पाबंद हैं। योरपियन लोग भोजन और शयन के समय परमेश्वर को स्मरण करते हैं। प्रत्येक समझदार स्त्री, पुरुष और बालक को स्नान के बाद कुछ समय परमेश्वर का स्मरण, अपनी रुचि, शिक्षा एवं ज्ञान के अनुसार, अवश्य करना चाहिए। यह इसलिये नहीं कि परमेश्वर ख़ुशामद से प्रसन्न होगा, प्रत्युत इसलिये कि इससे आपके विचार और भावना शुद्ध होंगे।

सुगंध-धारण

चंदन-केसर-कस्तूरी-लेपन, सुगंध-द्रव्य जलाकर धूप में वस्त्रों को बसाना तथा पुष्प-माला, गुलदस्ता अथवा इत्र-फुलेल और सेंट आदि से वस्त्र, शरीर और घर को सुवासित करना उत्तम है। ये सब कार्य ऋतु के अनुकूल होना चाहिए। देशी इत्रों में गर्मी में गुलाब, वर्षा में ख़स और शीत में हिना उत्तम है।

वायु-सेवन

सायं-प्रातः स्वच्छ वायु का सेवन करना स्वास्थ्य के लिये [illegible] है, पर [illegible] जिस प्रकार [illegible] लोग मोटर, गाड़ियों में बैठकर वायु सेवन करते हैं, उससे कुछ लाभ नहीं है। धूल-रहित स्थान में, जहाँ घासों तरह हरियाली हो, तथा फूलों की सुगंध भर रही हो, धीरे-धीरे टहलकर वायु-सेवन करें। मुख बंद करके नाक से गहरे श्वास लें। यदि [illegible] हो, तो साधारण प्रमोद के विषय पर वार्तालाप करें।

ग्रीष्म, वसंत और शरद्-ऋतु में नियम से वायु-सेवन खास तौर से करें।

वायु के गुण

पूर्वी वायु—भारी, गरम और चिकनी होती है। रक्तपित्त, गठिया, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], ज्वर, सन्निपात, श्वास, [illegible] (फोड़े-फुंसी) इन रोगों के रोगियों को इससे बचना चाहिए। यह वायु खाद्य पदार्थों में स्वाद उत्पन्न करती है, पर [illegible] का स्वाद बिगाड़ देती है। तथा रोम-कूपों को बंद करती है।

पश्चिम वायु—तेज, शीतल, [illegible] करनेवाली और [illegible] है। [illegible] और [illegible] को सुखाती है। घावों को [illegible] करती है।

उत्तर वायु—शीतल, चिकनी, [illegible] और [illegible] है।

दक्षिण वायु—[illegible] प्रसन्न करनेवाली, [illegible] और [illegible] के [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible] को [illegible] है।

इन गुणों का ध्यान करके वायु-सेवन करें। वायु के [illegible] के लिये ठीक-ठीक है।

पूर्ण रहता है।
भयानक रोग
मुख धोने
सारा सौंदर्य
है। दाँत और
डालना चाहि

दाँत शु
के लिये नीम
और भी कई
उँगली के स
दाँतन भी उ
अजीर्ण
नवीन ज्वर
नेत्र, सिर,

प्रतिं
सम्मति
बचती है,
से परिपूर्ण

स
जाती है
योरपिय
स्त्री, पुर
ज्ञान के
होगा,

गुलद
है।
और

(१२) आँसू रोकने से पीनस, शोथ, सिर, हृदय में दर्द, मन्दाग्नि, अरुचि और भ्रम हो जाता है।

(१३) उल्टी रोकने से विसर्प, दद्रोदे, कोढ़, आँख में खाज, पाण्डुरोग, ज्वर, श्वास, श्वास, सूजन, ये रोग हो जाते हैं।

(१४) वीर्य का वेग रोकने से पीड़ा-स्राव, मूत्रेन्द्रिय में दर्द, मूत्रत का ज्वर उत्पन्न हो जाता है।

इनके उपाय

(१) अपान वायु रोकने से यदि कोई उपद्रव हो जाय, तो मूत्र में गोमूत्र की धारा लगावे, एनीमा दे। गर्म, चिकना और हलका भोजन करे।

(२) हस्त रोकने पर भी उपर्युक्त क्रिया करनी चाहिए। तथा नेत्र चुलाव देना चाहिए।

(३) पेशाब रोकने की तकलीफ में रबाड़ा पूरा डालकर भाप लगावे। तथा पेड़ू को गर्म जल की बोतल से सेंक-सेंक करे।

(४) डकार रोकने पर कोई उपद्रव हो, तो चिकित्सा के समान चारा करे।

(५) छींक रोकने पर धनी, मन्द स्वादि से सिर सींच डाले।

(६) प्यास रोकने पर दही पिला करे। अर्थात् स्वादि पिए।

(७) भूख रोकने पर हलका और स्निग्ध भोजन करे।

(८) नींद रोकने पर सोये तथा शरीर को मर्दन करावे, अभ्यंगादि।

(९) खाँसी के रोकने पर उसकी उपयोगी चिकित्सा करे।

(१०) श्वास (हचकी) रोकने पर वात की चिकित्सा करे।

(११) जम्हाई का हलाहल रोक की भाँति करे।

(१२) आँसू रोकने से उपद्रव होने पर [illegible]।

(१३) वमन रोकने पर [illegible] करे।

(१४) वीर्यावेग रुकने पर, [illegible], [illegible] करे।

हीरे से भ्रम और नेत्र रोग, मानिक से दाह, विष और क्षय, मोती से दाह, विष और नेत्र-रोग, मूँगा से पाडु रोग और प्रदर, मरकत (पन्ना) से उल्टी, अम्लपित्त, बवासीर और कुष्ठ, नीलम से श्वास, बवासीर और विषम ज्वर, गोमेद से वात-व्याधि और वैडूर्य (लहसनिया) से कफ के रोग दूर होते हैं।

इन रत्नो को पीसकर वैद्य की सम्मति से उपयुक्त मात्रा और विधि से, खाने से उक्त रोगो मे लाभ करते हैं।

वेगों को रोकने से हानि

अपान वायु, दस्त, मूत्र, छींक, प्यास, भूख, नींद, खाँसी, हफनी, श्वास, जँभाई, आँसू, वमन और वीर्य, इनका वेग कभी न रोके। इससे भयानक रोगो के होने का भय है।

(१) अपान वायु को रोकने से वायुगोला, अफारा, शूल और बेचैनी होने का भय है। तथा दस्त-पेशाब मे बध लग जाने का भी भय है। इससे दृष्टि और अग्नि भी नष्ट हो जाती है।

(२) दस्त को रोकने से पिंडलियाँ कटने लगती हैं। जुकाम हो जाता है, तथा सिर दर्द हो जाता है, वायु ऊपर घुमंडे लेने लगती है, पेट मे कैंची से कतरने-जैसी पीडा होती है। मुख से कभी-कभी विष्ठा की वमन भी होती है। तथा अपान वायु के रोकने से जो रोग होते है, वे उत्पन्न हो जाते है।

(३) पेशाब रोकने से अंग-भग, पथरी, वस्ति, लिंग, वंक्षण मे दर्द तथा पूर्वोक्त रोग हो जाते है।

(४) डकार के रोकने से अरुचि, कप, छाती का जकड जाना, पेट फूलना, हिचकी, खाँसी आदि उपद्रव हो जाते है।

(५) छींक को रोकने से सिर मे दर्द, जबाडे का जकड जाना तथा लकवा मारने का भय हो जाता है।

(६) प्यास को रोकने से अंग सूखने लगता है, बदन टूटता है, बहरापन हो जाता है, मोह, भ्रम और हृदय की बीमारी हो जाती है।

(७) भूख को रोकने से अग-भंग, अरुचि, ग्लानि, दुर्बलता, शूल, भ्रम आदि रोग होते हैं।

(८) नींद को रोकने से मोह, मूर्च्छा, आँखों का भारीपन, सिर-दर्द, जँभाई, आलस्य, हडफूटन आदि रोग होते है।

(९) खाँसी के रोकने से खाँसी की वृद्धि, श्वास, अरुचि, हृद्रोग, शोष, हिचकी आदि रोग होते है।

(१०) हफनी के श्वास को रोकने से गुल्म, हृद्रोग, मोह आदि रोग उत्पन्न होते है।

(११) जँभाई के रोकने से छींक रोकने के समान रोग होते है।

(१२) आँसू रोकने से पागल, आँख, सिर, हृदय में दर्द, सन्निपात, अरुचि और भ्रम हो जाता है।

(१३) उल्टी रोकने से विसर्प, फोड़े, कोढ़, आँख में खाज, पाण्डुरोग, ज्वर, खाँसी, श्वास, सूजन, ये रोग हो जाते हैं।

(१४) वीर्य का वेग रोकने से वीर्य-स्राव, मूत्रेन्द्रिय में दर्द, सूजन या ज्वर उत्पन्न हो जाता है।

इनके उपाय

(१) अपान वायु रोकने से यदि कोई उपद्रव हो जाय, तो गुदा में स्नेहसार का बत्ती लगावे, एनीमा दे। गर्म, चिकना और हलका भोजन करे।

(२) मूत्र रोकने पर भी उपर्युक्त क्रिया करनी चाहिए। साथ ही पुलटिस देना चाहिए।

(३) देशाद रोकने की सरकोत्र में ज्यादा पूरा डालकर भाप लगावे। साथ ही पेडू को गर्म जल की बोतल से सेंक-सेंक सेंके।

(४) डकार रोकने पर कोई उपद्रव हो, तो लिखकर। सलाह जरूर करे।

(५) छींक रोकने पर गर्दन, मस्तक आदि में शिर दर्द आवे।

(६) श्वास रोकने पर उसी क्रिया करे। अफीम आदि दिए।

(७) भूख रोकने पर हलका और चिकना भोजन करे।

(८) नींद रोकने पर सोने वाले को जगाने की कोशिश करनी चाहिए।

(९) जम्हाई के रोकने पर उपद्रव होने पर सेंकना करे।

(१०) डकार (ढकार) रोकने पर पान की क्रिया करे।

(११) [illegible] की [illegible] करे।

(१२) आँसू रोकने से उपद्रव होने पर [illegible]।

(१३) वमन रोकने पर शिर [illegible] करे।

(१४) वीर्यवेग [illegible] हो, तो [illegible]

प्रकरण ५

ऋतुचर्या-विज्ञान

काल भगवान् है, स्वयभू है, अप्रतिहत-गति है, जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय काल के ही हाथ में है। कालानुसार न करने से कोई कार्य भी सिद्ध नहीं हो सकता, फिर काल (ऋतु) के अनुकूल आहार-विहार न होने से स्वास्थ्य तो कैसे स्थिर रह सकता है? इसलिये यहाँ पर ऋतुचर्या-विज्ञान का वर्णन करते है।

यहाँ, भारतवर्ष में, छ ऋतुएँ होती हैं—

चैत्र-वैशाख = वसंत, ज्येष्ठ-आषाढ़ = ग्रीष्म, श्रावण-भाद्रपद = वर्षा, आश्विन-कार्त्तिक = शरत्, मार्गशीर्ष-पौष = हेमंत और माघ-फाल्गुन = शिशिर।

भारत के जिन प्रांतों मे चार मास तक वर्षा होती है (आषाढ़-श्रावण, भाद्रपद और आश्विन में), वहाँ वर्षा के दो भेद होते है—एक प्रावृट्, दूसरा वर्षा।

इस दशा मे ऋतुओ का क्रम यो होता है—

आषाढ़-श्रावण = प्रावृट्, भाद्रपद-आश्विन = वर्षा, कार्त्तिक-मार्गशीर्ष = शरत्, पौष-माघ = हेमंत, फाल्गुन-चैत्र = वसंत और वैशाख-ज्येष्ठ = ग्रीष्म। इस क्रम से शिशिर ऋतु छूट जाती है। गुणों में प्रावृट् बराबर है वर्षा के, और शिशिर बराबर है हेमंत के।

एक वर्ष में दो अयन होते है—उत्तरायन और दक्षिणायन। मकर की संक्रांति से कर्क की संक्रांति तक छ मास का समय उत्तरायन और कर्क की सक्रांति से मकर की संक्रांति तक छ मास का समय दक्षिणायन कहलाता है। ऋतु-विभाग से शिशिर, वसंत और ग्रीष्म ऋतु उत्तरायन मे और वर्षा, शरद् और हेमंत ऋतु दक्षिणायन में गिनी जाती है। वैद्यक-परिभाषा में उत्तरायन को आदान काल और दक्षिणायन को विसर्ग काल कहते है।

उत्तरायन (आदान काल) मे भगवान् सूर्य बलवान् होते है। वे अपनी प्रखर किरणों को चारो तरफ फेंककर जगत् की चिकनाई और तरी को सोख लेते हैं। वायु तीव्र, रूक्ष हो जाता है। सब प्राणी, यहाँ तक कि ओषधि और अन्न भी बल-हीन हो जाते है। जठराग्नि मंद हो जाती है। सिर्फ़ कटु, तिक्त और कषाय ये तीन रस (जो स्वभाव से रूक्ष है) बलवान् हो जाते हैं।

दक्षिणायन (विसर्ग काल) में सूर्य देवता मेघ, वायु और वर्षा मे हतप्रताप हो जाते है, वर्षा मे पृथ्वीतल का सताप नष्ट हो जाता है, और भगवान् चंद्रमा बलवान् होकर सोम की

वर्षा करते हैं, इससे ओषधि, अन्न और प्राणियों में बल का संचार होता है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है और मधुर अम्ल और लवण से तीनों (रूक्ष) रस बलवान् हो जाते हैं।

सब ऋतुओं में प्राणियों में बलाबल का क्रम इस प्रकार रहता है--विसर्ग काल के आदि और आदान काल के अन्त (वर्षा और ग्रीष्म) में प्राणी हीनबल होते हैं।

विसर्ग और आदान के मध्य (शरद् और वसन्त) में प्राणी मध्यबल होते हैं। एवं विसर्ग काल के अन्त और आदान काल के आदि (हेमन्त और शिशिर) में प्राणी विशेष बलवान् होते हैं ।

अब इन प्रत्येक ऋतु का क्रम से वर्णन करते हैं -

वसंत-ऋतु-लक्षण

वसंत-ऋतु में दिशाएँ निर्मल होती हैं, पलाश, कमल, मालतियाँ और आम्रादि वृक्ष पुष्पित हैं, वन उपवनों की शोभा विचित्र होती है, शीतल, मंद, सुगंधित पवन बहती है, वृक्षों में कोमल और नवीन पत्ते निकलते हैं।

गुण

वसंत ऋतु मधुर और स्निग्ध है, हेमन्त और शिशिर ऋतु में मधुर स्निग्ध और गरिष्ठ पदार्थों के सेवन करने से जो कफ शरीर में संचित हो गया था, उस कफ को सूर्य का ताप किरणों से पिघल पिघलकर वृद्धि होता है, इसी से कोठों को [illegible] (वमन), खाँसी और कफ के रोग हो जाया करते हैं।

पथ्यादि

इस कफ को दूर करने के लिये [illegible] मसूरी में [illegible] शहद, [illegible] चावल, [illegible] तीखे, [illegible] और [illegible] [illegible] है। [illegible]

[illegible]

[illegible]

अध्याय दूसरा

शरीर-विज्ञान

प्रकरण १

जीवन-कार्य

चौबीस तत्त्व

पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि, वायु, ये पाँच महाभूत कहाते हैं। गंध, रस, शब्द, रूप और स्पर्श ये इनके क्रमश गुण हैं। ये ही इंद्रियार्थ कहाते हैं। नाक, जीभ, कान, नेत्र और त्वचा ये पांच ज्ञानेंद्रिय हैं और उपर्युक्त पाचो इंद्रियार्थ क्रमश इनमें निवास करते हैं। हाथ, पैर, लिंग, गुदा और वागेंद्रिय ये पाँच कर्मेंद्रिय कहाती है। ये सब बीस तत्त्व हुए, इन सब पर हुक्म चलानेवाला मन, मन पर अधिकार रखनेवाली बुद्धि, बुद्धि पर शासन करनेवाला अहंकार और उसका अधिष्ठाता जीवात्मा। इस प्रकार सब मिलकर २४ तत्त्व हुए। स्थूल शरीर इन्ही चौबीस तत्त्वों के सयोग से बनता है।

जीव क्या है ?

जीव एक अनादि, अनंत सत्त्व है, उसमे इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दु ख और ज्ञान है, वह शरीर में रहकर नाना प्रकार के शुभ-अशुभ कर्मों को करता है। और मृत्यु के बाद भी वह नष्ट नहीं होता। वह ईश्वर की प्रेरणा से अपने किए शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ही फिर असंख्य योनियों में से किसी भी योनि में जन्म धारण करता है। वह प्रत्येक शरीर मे व्यापक है, और प्रत्येक शरीर मे भिन्न-भिन्न है।

जीव-कोष

विज्ञान के पडितों ने बहुत खोजकर निश्चय किया है कि प्राणी-मात्र के शरीर मे असंख्य कोषो (cell) का एक समूह है। यह कोष अति सूक्ष्म रीति से जीवन-शक्ति का एक-एक आधार है। वे अति सूक्ष्म हैं। उनका व्यास १ इंच का ६०००वाँ भाग हो सकता है। उनकी आकृति भी भिन्न-भिन्न है। शरीर के सभी उपादान—अस्थि, मज्जा, मांस आदि—इसी कोष से निर्मित तथा परिवर्द्धित होते हैं। जो अति सूक्ष्म जीवाणु वीर्य-बिंदु द्वारा माता के गर्भ में जाकर जन्म धारण करता है, वह भी उक्त प्रकार का एक कोष-मात्र है। यदि

अत्युत्तम सूक्ष्म यंत्र में उसे देखा जाय, तो उस कोष में अति स्वच्छ [illegible] तरल पदार्थ भरा रहता है। प्राणों की अणुप्राणनी शक्ति इसी में है।

प्राण क्या है ?

यह महा कठिन प्रश्न है। अब तक तत्त्वज्ञानी पुरुषों ने जो कुछ [illegible] के मस्तिष्क-हृदय और श्वास-यंत्र की अप्रतिहत स्वाभाविक [illegible] तथा प्राणों का मुख्य अधिष्ठान हृदय और फुफ्फुस (श्वास-यंत्र) है। [illegible] यह देखा गया है कि मस्तिष्क के आघात से कभी मृत्यु नहीं होती [illegible] के आघात से होती है।

जीवन क्या है ?

मस्तिष्क-हृदय और श्वास-यंत्र की अप्रतिहत स्वाभाविक [illegible] प्राणों का संचार ही जीवन है।

मृत्यु क्या है ?

इनके विपरीत होना ही मृत्यु है। [illegible] सार्वत्रिक। स्थानिक मृत्यु शरीर में प्रतिक्षण होती [illegible] में सर्वदा [illegible] होती है। सार्वत्रिक मृत्यु हृदय, मस्तिष्क [illegible] और यही शरीर का निधन कहाता है।

प्रकरण २

त्रिदोष

वायु, पित्त, कफ ये त्रिदोष कहाते है। ये समस्त शरीर मे व्याप्त है, परंतु वायु का मुख्य स्थान पक्वाशय, पित्त का पित्ताशय और कफ का आमाशय है। पित्त मे सूर्य का, कफ मे चद्र का और वायु मे वायु-तत्त्व का गुण सन्निवेशित है। जिस प्रकार सूर्य, चंद्र और वायु तमाम जड जगत् वनस्पति आदि की उत्पत्ति और पालन करते हैं, उसी प्रकार शरीर मे वात-पित्त-कफ करते हैं।

वायु

वायु ५ प्रकार का है—

(१) प्राण-वायु मूर्धा (शिर मे) मे स्थित रहता है। छाती और कठ मे विचरत है। बुद्धि, हृदय, इद्रिय और चित्त को धारण करता है। थूकना, छींक, डकार, श्वास-प्रश्वास अन्न का निगलना उसी से होता है।

(२) उदान—इसका स्थान छाती है। नाक, नाभि और कंठ इनमे विचरण करता है वाणी, चेष्टा, बल, वर्ण, स्मृति आदि क्रियाएँ इसी से होती हैं।

(३) व्यान—इसका स्थान हृदय है। यह अति तीव्र वेगवाला है और समस्त शरी मे विचरण करता है। चलना-फिरना, हाथ पैर मारना, पलक मारना सब इसी से होता है शरीर की समस्त क्रियाएँ इसी के द्वारा होती है।

(४) समान—कोष्ठ मे रहता है। अन्न को ग्रहण करता और पकाकर उसके स अवयवों को पृथक्-पृथक् करने में मदद देता है।

(५) अपान—गुदा-द्वार में रहता है। वस्तिस्थान, जननेंद्रिय, जघा आदि मे विचर करता है। वीर्य, आर्तव, दस्त, पेशाब, गर्भ आदि को बाहर यही निकालता है।

वायु के रूप

प्रायः सब प्रकार का वायु रूक्ष, लघु, सूक्ष्म, शीतल, गतिशील, आशुकारी, ख मृदु और योगवाही है। उपर्युक्त गुण-वर्धक आहार-विहार करने से वायु कुपित होता कुपित होकर शरीर मे संधि-पीडा, शूल, सुई चुभाने के समान दर्द, अंग को सुन्न क देना, मल-मूत्र को रोक देना, अंग जकड देना, रोमाच, कंप, कर्कशता आदि ८० प्रक के रोग पैदा कर देता है। ताकतवर के साथ कुश्ती करने से, अधिक व्यायाम करने अधिक मैथुन करने से, बहुत पढ़ने से, ऊंचे से गिरने से, तेज़ चलने से, चोट लगने

लंघन और रात्रि-जागरण करने, बोझ ढोने, मल-मूत्र, वायु, छींक, डकार, थूक, खांसी, खाँसी रोकने से, कड़ुआ, चरपरा, रूखा-सूखा खाने आदि-आदि कारणों से वायु दूषित हो जाता है तथा घृत-तेल आदि खाना, तेल मालिश करना, विरेचन देना, शोक, गुस्सा, गर्म भोजन करना आदि-आदि से वायु का प्रशमन होता है।

पित्त

पित्त भी ५ प्रकार का है—

(१) पाचक—यह आमाशय और पक्वाशय के बीच में रहता है। यह अग्निस्थान है। यही भोजन को पचाता है। सार और विट् को पृथक् करता है। अन्य पित्तों को उनके कार्य में सहायता देता है। शक्ति भी देता है।

(२) रंजक - पित्त आमाशय में स्थित है। यह रस, धातु को रंगकर लाल बनाता है, इसीलिये इसका नाम रंजक है।

(३) साधक—हृदय में स्थित है, यह मेधा, धृति, अभिमान आदि का साधक है।

(४) आलोचक—नेत्रों में स्थित है, इससे रूप देखने की शक्ति है।

(५) भ्राजक—यह त्वचा में रहता है। यह लेप-मालिश आदि का शोषण करता है।

पित्त के रूप

पित्त स्वभावतः द्रव, सस्नेह, पीला (नीला), गन्धा (कच्चा), उष्ण, कटु और अम्ल (खट्टा होने पर) तथा अस्थायी है।

[illegible] विदाह, दाह, रस, पीतु, कालुष्य, ये पित्त के कुपित होने के कार्य हैं।

[illegible] विष, सांप, अग्नि, धूप, [illegible] करने से, क्रोध, शोक, [illegible] विरुद्ध भोजन, कुल्थी, सरसों, [illegible] दही [illegible] विकृत [illegible] कुपित होता है। तथा [illegible] विदाह, [illegible] विकार, [illegible] वायु [illegible] आदि से प्रशमन होता है।

तथा खारी (दूषित होने पर) होता है। कुपित होने पर भारीपन, खाज, स्रोतों का अवरोध, सूजन, मंदाग्नि, कुपच, अति निद्रा आदि रोगों को उत्पन्न करता है।

दिन में सोने, अधिक भोजन, अजीर्ण मे भोजन, अधिक मीठा खाने, ठडा बासी खाने, उर्द, गेहूँ, दही, खिचडी, सिघाडा, केला आदि अधिक खाने से कुपित होता है।

तीक्ष्ण वमन और विरेचन, व्यायाम, रूखा, गर्म खाना, इससे शमन होता है।

प्रकृति

गर्भ धारण के समय, माता-पिता का रज-वीर्य, खान-पान ऋतु आदि किसी भी कारण से जिस दोष के प्रभाव मे होता है—बच्चे की वही प्रकृति बन जाती है। तीनों दोष समान होने पर सम और दो दोष मिलने पर दोनो दोषो के लक्षणवाली प्रकृति होती है।

वात-प्रकृति के मनुष्य

जिसका शरीर रूखा, रोम-कूप फटे हुए, दुबले-पतले, कभी-कभी शरीर का कोई अंग टूटा-फूटा या एकाध अंग हीन, चपल, गभीरता-रहित स्वर, अधिक जागनेवाला, तेज़ चलने और बोलनेवाला, जल्दी-जल्दी काम करनेवाला, बहुत बकवादी, शरीर पर उभरी हुई बहुत-सी नसें हो, जिसे जल्दी क्रोध आवे, जो जल्दी डर जाय या विरक्त हो जाय या प्रसन्न हो जाय, ठड न सह सके, शरीर ठस हो, बाल कडे हों, भूछों के बाल टेढ़े और असुंदर हो, दंत, नाखून और अग सख्त हों, चलती बार जोड चट्-चट् चटखे। और जो वारंवार पलक मारे। वह वात-प्रकृति का पुरुष है। यह पुरुष बहुधा भाग्यहीन, अल्पायु और अविश्वासी होगा। चालाक और खटपट मे पडनेवाला होगा।

पित्त-प्रकृति के मनुष्य

जो गर्मी सहन न कर सके, जिसका गोरा और नाज़ुक शरीर हो, भूरे बाल और आँखें हों, रोम बहुत कम हो। अग्नि और पराक्रम तेज हो। अधिक भोजन का अभ्यासी हो, कष्ट न सहन कर सकता हो, जिसमें द्वेष-भाव बहुत हो, अल्प-वीर्य, अल्प-रति और अल्प संतानवाला हो, जिसके मुँह, आँख, मस्तक और अन्य अंगों मे भी गंध रहती हो। सर्वांग मे तिल, मस्सा, खुजली आदि होती हो। बाल जल्द पक जायँ या उड जायँ। वह पित्त-प्रकृति का मनुष्य है। यह पुरुष बहुधा मध्यायु, मध्यबल, क्रोधी और दुःखी रहेगा।

कफ-प्रकृति के मनुष्य

जिसकी प्रकृति शांत हो, अंग चिकने और सुडौल, रंग गोरा, आँखे बडी-बडी, शरीर सुकुमार, अग पुष्ट, धीरे-धीरे काम करनेवाला, प्रसन्न-मुख, प्रसन्न-इंद्रिय, प्रसन्न-दृष्टि, मधुरभाषी, बलवान्, तेजस्वी, दीर्घजीवी और अल्प भोजनवाला हो। जिसकी चाल हाथी के समान, नींद अधिक तथा जो वैर को देर तक छिपाकर रखनेवाला हो, वह कफ-प्रकृति का मनुष्य है। इसके सतान अधिक होती है। यह विश्वासी, धैर्यवान् और श्रेष्ठ होता है।

प्रकरण ३

त्वचा

शरीर के ऊपरी हिस्से को त्वचा कहते हैं। त्वचा के द्वारा शरीर के भीतरी हिस्से की रक्षा होती है। बाहर से मांस के ऊपर तक क्रमशः सात त्वचा होती हैं। बाहर की पहली त्वचा एक धान्य के १८ भाग के एक भाग के बराबर पतली है। इसी में शरीर का रंग होता है, और सफेद कोढ़ आदि रोग इसी में होते हैं। जलने से इसी में फफोला पड़ता है।

दूसरी त्वचा धान्य के १६वें भाग के समान है। लहसुनिया चित्र, झाई आदि रोग इसी में होते हैं।

तीसरी त्वचा धान्य के १२वें भाग के समान है। मस्सा, चमेठा आदि रोग इसी में होते हैं।

चौथी त्वचा धान्य के ८वें भाग के बराबर है। फोड़ आदि की पहली इसी में होती है।

पांचवीं त्वचा धान्य के ४वें भाग के बराबर है। फोड़ और चित्रवर्ण रोग इसी में होता है।

छठी त्वचा धान्य के समान मोटी है, गाँठ, रसौली, अर्बुद, कोढ़ और कण्डू रोग इसी में पैदा होता है।

सातवीं त्वचा दो धान्य की बराबर मोटी है। भगंदर, विद्रधि और बवासीर आदि रोग इसी में होते हैं।

त्वचा का यह परिमाण साधारण है, पर [illegible] ऐसी आदि [illegible] है।

त्वचा के [illegible] छोटी छोटी [illegible] होती हैं। इनके [illegible] एक [illegible] होता है, [illegible] त्वचा के [illegible] है। [illegible] है, तो [illegible] के [illegible] में [illegible] होता है। [illegible] है, इसलिए [illegible] के समान है। [illegible] के [illegible] है।

अच्छी तरह पसीना निकलने पर त्वचा के ऊपर एक पतली नमक की तह जम जाती है। यह पसीने के साथ बाहर आई है। इसमे और भी विषैले तत्त्व मिले हैं। इसे शरीर पर से दूर करने लिये प्रतिदिन स्नान करना आवश्यक है। स्नान का सूक्ष्म विवेचन हम आगे करेंगे।

त्वचा की भीतरी बनावट

स्पर्शेंद्रिय

स्पर्शेंद्रिय त्वचा मे है। त्वचा मे असख्य ज्ञान ततु फैले हुए हैं। और किसी भी शरीर के अवयव का संबंध जब किसी वस्तु से होता है, तभी स्पर्श-ज्ञान होता है, जिसका तारतम्य मस्तिष्क से होता है, जो उन तमाम ज्ञान-ततुओ का मूल केंद्र है।

केश और त्वचा

केश और रोम त्वचा पर ही उत्पन्न होते है। प्रत्येक बाल की जड पर एक छोटी-सी गाँठ होती है, जिसमे से तेल निकलता रहता है। यह तेल त्वचा के ऊपर निकलता है और उसे चिकना और निरतर कोमल रहता है। तथा बालो को भी चिकना रखता है। सिर के बालों को चिकना और सुंदर रखने का उत्तम उपाय यह है कि प्रतिदिन उसको कूची से या ब्रुश से ज़ोर-ज़ोर से झाडा जाय, और समय-समय पर गर्म पानी और साबुन से सिर धोते रहे। साबुन कदापि घटिया न लेना चाहिए।

गजापन

त्वचा के तेल की गाँठों में एक प्रकार का कीडा हो जाता है, जो बाल की जड को खा जाता है, जिससे बाल उड जाते है। यह रोग पराई कंघी और ब्रुश काम में लाने से बहुधा फैलता है। इसलिये प्रत्येक आदमी को अपनी कंघी, ब्रुश पृथक्-पृथक् रखना चाहिए। सदैव टोपी या भारी चीज पहने रहने से भी गज हो जाता है। स्त्रियाँ बहुतायत से तेल बालों मे लगाती है, इससे भी गंज हो जाता है, या बाल झड जाते है। प्रतिदिन अच्छी तरह कंघा-ब्रुश करने से बाल अच्छे रहते हैं।

प्रकरण ४

हड्डियाँ

[illegible]

यदि मनुष्य के शरीर से मांस, रक्त, [illegible] वस्तुएं हटा दी जायें, तो हड्डियों का [illegible] रहेगा। इस [illegible] को देखने से कारीगर की कारीगरी का [illegible] है। [illegible] हैं कि [illegible]! [illegible] जोड़ों, [illegible] बनाई हैं, [illegible] इस प्रकार [illegible] हैं, [illegible] हड्डियां [illegible] होता है।

[illegible]

[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

हड्डियों की जाति

हड्डियों की जाति ५ प्रकार की है—

(१) तरुण—नाक, कान, आँख, लिंग आदि मे।

(२) कपाल—जानु-चूतड, कंधा, गाल के ऊपर, तालु, कनपटी मे।

(३) वलय—हाथ-पैर, पसली, पीठ, छाती आदि मे।

(४) नलक—यही जिनमे छेद है।

(५) रुचक—दाँतो में।

हड्डियों के जोड़

हड्डियों के २१० जोड है। इन जगहों पर एक पतला कफ भरा रहता है, जिससे वह स्थान चिकना और रपटनेवाला बना रहता है।

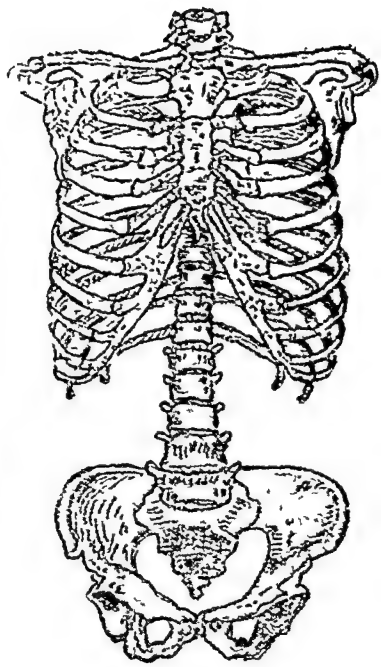

वक्षगह्वर और वस्ति

प्रकरण ५

मांस-पेशी

मांस की पोटियों को मांस-पेशी कहते हैं। शरीर में ये ४०० हैं। ध्यान से देखने पर यह लाल रंग का तन्तुमय पदार्थ-सा है। शरीर पर इसी का लेप है। इसी से शरीर पुष्ट रहता है। इनमें कुछ चलनेवाली हैं और कुछ अचल।

जब हम घूमते फिरते हैं, तभी पेशी अपना काम करती है। जब हम सीधे खड़े होते हैं, तब बहुतसी स्नायुओं को निरंतर संकुचित होना पड़ता है। बहुतसे लोग खड़े होने के समय मांस-पेशियों को ढीला छोड़ देते हैं। इसका परिणाम यह निकलता है कि

हाथ की मांस-पेशियों की बनावट

उनका बदन निकल आता है। ये लोग [illegible] हो जाते हैं। [illegible] निकल आता है, और [illegible] मांस [illegible] हो जाता है।

[illegible]

[illegible]

प्रकरण ६

स्नायु

पेशियों के द्वारा शरीर का संचालन होता है। परंतु वास्तव में पेशियों को यह शक्ति स्नायु के द्वारा मिलती है। अर्थात् स्नायु के सहारे से ही सब पेशी काम करती हैं। चलना-फिरना, दौड़ना सब स्नायु द्वारा होता है। भूख-प्यास, काम-क्रोध सब इसी से होता है। देखना, सुनना, सूँघना, छूना सब इसी से होता है। शरीर के सभी यंत्र इन्हीं से प्रेरित होकर कार्य करते हैं। सोचना-विचारना भी इन्हीं से होता है।

इनका मुख्य संबंध दो भागों से है। एक मस्तिष्क और दूसरा पीठ का बाँस, जिसके ऊपरी भाग को सुषुम्नाकाड कहते हैं। मस्तिष्क खोपड़ी में रहता है, जिसका ज़िक्र आगे करेंगे। पीठ का बाँस एक मोटी बटी हुई रस्सी के समान है, जो कनिष्ठिका उँगली के बराबर मोटा है। यह बाँस 'भेजा' के नीचे के हिस्से से जुड़ा हुआ है, और खोपड़ी से एक बड़े छेद के द्वारा बाहर निकला है। यह बाँस बाहरी चोट से ख़ास तौर पर सुरक्षित रहे, इसका विचार किया गया है। इसके ऊपर २४ हड्डियों के छल्ले, जिन्हें कशेरुका कहते हैं, नीचे तक चले गए हैं। इस पृष्ठ-वंश से असंख्य महीन रेशम के समान तागे सारे शरीर में फैल गए हैं। यह एक घना जाल बन गया है, और वह बारीक रेशमी मलमल से भी घना है, यहाँ तक कि यदि आप एक सुई कहीं भी ज़रा चुभो दें, तो किसी-न-किसी तंतु में ज़रूर छिद जायगी।

चेतना-गाँठ

हम यह बता चुके हैं कि ये असंख्य अति महीन धागों से बने हैं। प्रत्येक धागों के छोर पर एक गाँठ-सी है, यह चेतना-गाँठ या अणु कहाती है। ये सब छोटे-छोटे चेतना अणु मस्तिष्क और पीठ के बाँस में हैं। ये चेतना अणु मस्तिष्क से संबंध रखते हैं, जिन पर ज्ञान की धारा दौड़ती है। इसी से शरीर के सब भागों की गति का प्रबंध होता है। ठीक जैसे दूर देशस्थ बिजली के पंखे और बत्तियों को तार द्वारा एक केंद्र से शक्ति मिलती है।

शिरा और धमनी

जिन नालियों के द्वारा रक्त हृदय से सारे शरीर में संचालित होता है, उसे 'धमनी' कहते हैं।

शरीर की सब धमनियाँ दो प्रधान धमनी की शाखा-प्रशाखाएँ हैं। इनमें एक का नाम आदि-कंडरा है। यह हृदय के बाएँ उदर से उत्पन्न हुई है, इसके उत्पत्ति-स्थान के पास से धमनी की ३ शाखाएँ फैलकर दो मस्तिष्क, ग्रीवा और ऊपर के अंगों में चली गई हैं। इसके बाद आदि-

कंठ छाती और पेट में चली गई है। पेट में उसकी दो शाखाएँ दोनों जाँघों तक पैर में गई है। इसी से जाँघों का पोषण होता है।

दूसरी सबसे बड़ी धमनी का नाम फुफ्फुस धमनी है। यह हृदय के दक्षिण उदर से निकलती है। यह प्राय दो इंच लंबी है। इसी से दूषित रक्त हृदय से फुफ्फुस में जाता है। आगे चलकर यह दो भागों में विभक्त हो गई है।

धमनी सर्वदा शुद्ध रक्त से परिपूर्ण रहती है और इसी से सारे शरीर का पोषण होता है। इसका मूल पृथक् होने पर भी परस्पर मिला हुआ है। ये धमनियाँ शरीर के गंभीर प्रदेश में सुरक्षित रहती हैं और एकाएक चोट का उन पर प्रभाव नहीं पड़ता। सबकी गति सीधी और परस्पर मिली हुई है।

धमनी शिराओं से अशुद्ध रक्त लेती है। शिरा अशुद्ध रक्त शरीर से लौटकर ले जाती है। ये सब शिराएँ वैनिक नाड़ी से ढकी हुई हैं और उसी के द्वारा धमनी से उसका संबंध है।

कंठनाल

आदि कंठनाल ही धमनी की जड़ है। इसका मुख सीधा छाती गह्वर में और कनु उदर-गह्वर में है। इसी से सिर तक जाता है।

प्रकरण ७

मर्मस्थल

शरीर में १०७ मर्मस्थल है। शिरा, स्नायु, हड्डी, मास-पेशी आदि जहाँ मिलती है, वह स्थान मर्म कहाता है। यहाँ प्राण विशेष रूप से ठहरते हैं। इनमे से कुछ मर्म ऐसे है, जहाँ चोट लगने से मृत्यु होती है, और कुछ ऐसे हैं, जहाँ चोट लगने से हमेशा वह स्थान दर्द करता रहता है। कुछ मर्मस्थलो का हम यहाँ पर वर्णन करेंगे—

(१) सिर पर बाल जहाँ चक्कर खाते हैं, उस स्थान से ज़रा पीछे हटकर गुद्दी है। वह चार अंगुल का एक शिरा-मर्म है। इस स्थान पर आँख, कान, नाक और जिह्वा के ज्ञान-तंतु एकत्रित होते है। यहाँ चोट लगने से आदमी तत्काल मर जाता है।

(२) मस्तिष्क के बीचोबीच मे जहाँ कपाल की चारो हड्डियाँ मिलती है, एक संधि-मर्म आध अंगुल का है, इसे ब्रह्मरंध्र कहते है। यहाँ चोट लगने पर भी तत्काल मृत्यु होती है।

(३) कान और ललाट के बीच मे डेढ़ अंगुल का एक हड्डी का मर्म है। यह कनपटी में है। यहाँ चोट लगने पर भी तत्काल मृत्यु होती है।

(४) गुह्य द्वार के भीतर गुह्य नाडी मे चार अंगुल का एक मर्म है। वह भी तत्काल मारक है। यह मांस-मर्म है।

(५) दोनो स्तनों के बीच, बाई ओर, सातवी पसली के नीचे हृदय एक नाज़ुक मर्म है। उसमें चार अंगुल का शिरा-मर्म है, जहाँ चोट लगने से तत्काल मृत्यु होती है।

(६) नाभि, पीठ, कमर, गुह्य, वंक्षण और लिंग के बीच मे वस्ति-स्थान है। उसमे एक शिरा-मर्म है। यहाँ चोट लगने से भी तत्काल मृत्यु होती है।

(७) दोनो स्तनो के दो अगुल नीचे और ऊपर मर्मस्थल है। और दोनो कधों के सिरों के नीचे पसवाडे के आधा अंगुल ऊपर दो मर्म हैं। यहाँ चोट लगने से कुछ दिन में मृत्यु होनी है।

(८) मस्तिष्क में जो मर्म बताए हैं, यदि उनमें कम चोट लगे या प्रात भाग मे लगे, तो मृत्यु न होकर उन्माद, भय, भ्रम आदि रोग हो जाते हैं।

(९) बीच की उँगली के ठीक पीछे तलवे में एक मर्म है, वहाँ चोट लगने से अत्यत दर्द बना रहता है।

(१०) अँगूठा और तर्जनी उँगली के बीच में एक शिरा-मर्म है। यहाँ चोट लगने से आक्षेप रोग होकर कालांतर मे मृत्यु हो जाती है।

(११) प्रकोष्ठ और जंघा के बीच दो अंगुल का मर्म है। यहाँ चोट लगने से रक्त-क्षय होकर तत्काल मृत्यु हो जाती है।

(१२) मेरु-दंड के नीचे चूतड़ के सन्धि-स्थल के दोनों ओर आधे अंगुल के बराबर दो सन्धि-मर्म हैं। इनमें चोट लगने से रक्त-क्षय होकर रोगी को पक्षाघात हो जाता है।

(१३) चूतड़ के दोनों तरफ आधे अंगुल बराबर दो सन्धि-मर्म हैं, इनमें चोट लगने से कमर से पैर के तलुवे तक शर्यान में शोथ और दुर्बलता हो जाती है।

(१४) कंधे के नीचे बगल के पास आधे अंगुल का एक शिरा-मर्म है। इनमें चोट लगने से पक्षाघात-रोग हो जाता है।

(१५) दोनों घुटनों से तीन अंगुल ऊपर आधे अंगुल का एक स्नायु मर्म है। इनमें चोट लगने से सूजन होती है तथा पैर मारे जाते हैं।

(१६) जंघा और ऊरु की सन्धि में दो अंगुल का एक सन्धि-मर्म है। इनमें चोट लगने से मनुष्य लूला हो जाता है।

(१७) दोनों जंघों के बीच और कोहनी से बगल तक चौड़ाई में एक अंगुल का शिरा-मर्म है। इनमें चोट लगने से दोनों हाथ-पैर सूख जाते हैं।

(१८) पेडू और वंक्षण के बीच आधे स्थान के दोनों तरफ एक अंगुल का एक एक स्नायु मर्म है। इनमें चोट लगने से मनुष्य नपुंसक हो जाता है।

(१९) दोनों कोहनियों में दो अंगुल के दो सन्धि मर्म हैं। इनमें चोट लगने से हाथ गिर जाता है।

लगने से मनुष्य गूँगा और विकृत-स्वरवाला हो जाता है। तथा जिह्वा की स्वाद ग्रहण करने की शक्ति का लोप हो जाता है।

(२७) नाक के छेद के भीतर आधे अंगुल के दो शिरा-मर्म हैं। इनमें चोट लगने से घ्राण-शक्ति नष्ट हो जाती है।

(२८) भौं के ऊपर और नीचे आधे अंगुल के दो संधि-मर्म हैं। इनमें चोट लगने से मनुष्य अंधा हो जाता है।

इसी प्रकार और भी अनेक मर्मस्थल हैं। बुद्धिमान् पुरुष को इनकी रक्षा का ध्यान रखना चाहिए।

शरीर के मुख्य संस्थान

१—अस्थि-संस्थान—हड्डियाँ।

२—संधि-संस्थान—हड्डियों के जोड़।

३—मांस-संस्थान—मांस की पेशियाँ।

४—रक्त और रक्त-वाहक संस्थान—रक्त और हृदय तथा रक्त-वाहक नालियाँ।

५—श्वासोच्छ्वास-संस्थान—नाक, टेटुआ, फेफड़े आदि।

६—पोषण-संस्थान—आमाशय, अंत्र, यकृत।

७—मूत्र-वाहक संस्थान—वृक्क, मूत्राशय आदि।

८—वात-नाडी-संस्थान—मस्तिष्क, सुषुम्ना और नाडी-वात, सूत्र आदि।

९—ज्ञानेंद्रिय—आँख, नाक, कान, जिह्वा और त्वचा।

१०—उत्पादन-संस्थान—अंड, शिश्न, योनि, गर्भाशय आदि।

अध्याय तीसरा

शरीर-यंत्र

प्रकरण १

शरीर के तीन मुख्य विभाग

शरीर के मुख्य तीन विभाग हैं— (१) सिर (२) धड़ (३) हाथ और पैर।

सिर और उसके यंत्र

सिर के भीतर महत्त्व की खोपड़ी में इतने यंत्र सुरक्षित हैं [illegible], [illegible] और [illegible]। ये तीनों निखिल सत्ता और चेष्टा [illegible] हैं। [illegible] ये [illegible] सुरक्षित [illegible] हैं। यही समस्त पैतृक तत्त्व का [illegible] है। [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] में हैं। इन सबका [illegible] वर्णन [illegible] देखिए।

[illegible] और उसके यंत्र

[illegible] में दो प्रधान यंत्र हैं—

(१) [illegible] (२) उदर-प्रदेश।

[illegible] में तीनों [illegible] हैं। इनमें [illegible] यंत्रों में [illegible] हैं। तीनों यंत्रों [illegible] के दो भागों में [illegible] हैं, [illegible] [illegible] हैं। [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] करते हैं। [illegible] [illegible] है [illegible] और [illegible] [illegible] है।

[illegible] [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible]

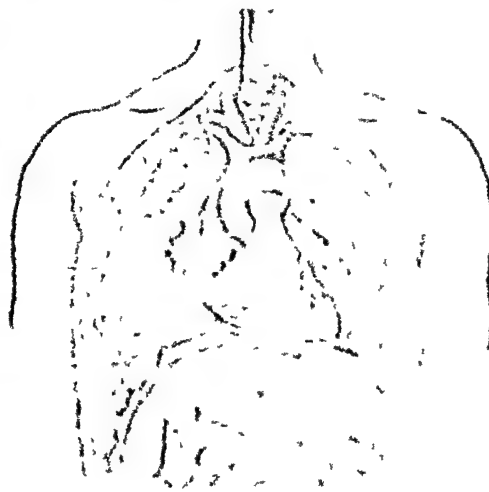

[illegible]

अग्न्याशय वा क्लोम और मूत्रोत्पादक महाशिवी बीजाकार दोनो गुर्दे हैं। ये कमर के पार्श्व मे हैं।

नीचे मूत्र-बस्ति है, जो नाभि के नीचे है। यही गर्भाशय भी है। इसके दोनो ओर बीज-कोश हैं, जो नाली द्वारा गर्भाशय से संलग्न है।

हाथ-पैरो के अंग प्रत्यक्ष है।

प्रकरण २

फुफ्फुस या फेफड़ा और श्वास-प्रश्वास-क्रिया

फेफड़े दो हैं एक दाहना और एक बायाँ। दोनों फुफ्फुस स्पंज की तरह छोटे-छोटे छेदोंवाले होते हैं। और ये पसलियों के नीचे तमाम छाती को घेरे हुए हैं। ये फेफड़े एक तरह की पतली झिल्ली से लिपटे हुए हैं। देखने में ये फेफड़े भूरे से आकार के प्रतीत होते हैं।

वजन और आकृति

बायाँ फुफ्फुस की अपेक्षा दाहने की लंबाई कम है। पर यह चौड़ाई में अधिक तथा वजन में भारी है। दोनों फेफड़ों का वजन साधारणतः ढाई पौंड (सवासेर) से कुछ अधिक है। स्त्रियों का फेफड़ा पुरुषों की अपेक्षा वजन में चौथाई कम होता है। सगर्भा स्त्रियों का फेफड़ा गहरा लाल, नवजात का गुलाबी और प्रौढ़ का कुछ नीलापन लिए होता है।

श्वास-नली या टेटुआ

मुँह के भीतर पीछे की ओर यह नली है। इसमें से एक से होकर श्वास हवा कण्ठनालियों में जाता है, उसे श्वासनली कहते हैं। और दूसरी से वायु फेफड़ों में जाता है। इसे श्वासनलियाँ कहते हैं।

टेटुआ

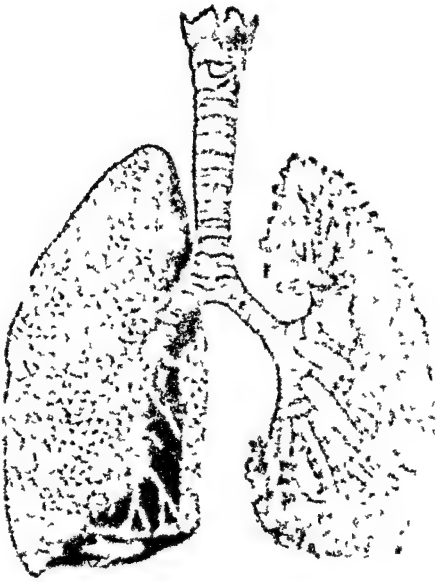

फुफ्फुस या फेफड़ा

इस श्वास नली के दोनों ओर एक [illegible] होता है। [illegible]

होकर गर्दन के भीतर से होती हुई श्वास-नाली छाती में घुस गई है। गले के सामने हाथ लगाने से श्वास-नाली साफ मालूम होती है। छाती मे यह दोनो फेफडों मे दो भागो मे विभक्त होकर घुस गई है। वहाँ से उसमें से असंख्य शाखाएँ तमाम फेफडों मे फैल गई है। ज्यों-ज्यो यह पतली होती गई है, नरम हड्डी के स्थान पर पेशी ने काम दिया है। इसके ऊपरी अंश की परिधि प्राय. १ इंच और नीचे जाकर १ इंच का चालीसवाँ भाग रह गई है।

श्वास-क्रिया

जवान आदमी १ मिनट में १४ से १८ दफे श्वास लेता है। प्रत्येक श्वास मे वह ३० घन इच वायु ग्रहण करता है। इस प्रकार तमाम दिन-रात मे अर्थात् २४ घंटे में वह ५,८६,००० घन इच वायु फेफडा मे पहुँचाता और निकालता है। प्रत्येक घंटे मे १,५८४ घन इंच वायु ग्रहण और १,३८६ इंच घन वायु हदम्ल अगार वायु का परित्याग करता है। परिश्रम और आहार के बाद श्वास कुछ तेज हो जाता है।

श्वास की विशेषता

मनुष्य कई हफ़्तो तक भोजन और जल के विना रह सकता है। परतु श्वास के बद हो जाने पर कुछ मिनट में ही मर जाता है। इससे यह परिणाम निकलता है कि लगातार ताज़ी हवा का मिलते रहना परम आवश्यक है। आग भी विना वायु के नही जी सकती। यदि आप एक मोमबत्ती जलाकर इस प्रकार ढक दें कि हवा न जाय, तो वह अवश्य बुझ जायगी। आग जलाने के लिये जैसे वायु आवश्यक है, वैसे ही जीवन के लिये भी वह आवश्यक है। हम श्वास द्वारा स्वच्छ वायु अपने फेफडो में खींचते हैं। इसमें से फेफडे प्राण-वायु (आक्सिजन) ग्रहण कर लेते है। प्राण-वायु अदृश्य है। वह उस हवा मे से जो श्वास द्वारा फेफड़ों मे पहुँचा दी गई हो, पृथक् होकर रक्त को शुद्ध करती है। इससे शरीर मे गर्मी, उत्साह और जीवन उत्पन्न होता है। जो वायु शरीर से प्रश्वास के द्वारा निकलती है, उसमें अनेक दूषित तत्त्व मिले रहते है, और वह फिर श्वास लेने के योग्य नही रहती।

जो वायु प्रश्वास के द्वारा बाहर निकलती है, उसमें एक ख़ास विष मिला रहता है, जो दूषित रक्त मे उसमें मिल जाता है। यदि आप एक बंद या छोटे-से कमरे मे बहुत-से मनुष्यों की भीड में बैठेंगे, तो आपको इस वायु की दुर्गंधि तत्काल मालूम हो जायगी। बहुतो को सिर-दर्द हो जायगा। संभव है, कोई-कोई बेहोश भी हो जायँ।

यदि आप ऐसी छोटी कोठरियों में सदा रहते है, जहाँ सील है, वायु और प्रकाश का ठीक-ठीक आवागमन नहीं है, तो उस दूषित वायु में श्वास लेने के कारण आपको तपेदिक और निमोनिया रोग तथा सर्दी-जुकाम के होने का भय है।

घर के प्रत्येक कमरे में ऊँचाई पर खिडकियाँ और रोशनदान होने चाहिए, जिनसे स्वच्छ वायु का आरपार प्रवाह वहाँ बना रहे। खिडकियों के सामने कपड़े और चिक डाल देने से चमक और धूल से रक्षा होगी, जिससे नेत्रों को बहुत लाभ होगा।

मनुष्य की भाँति प्रत्येक चराचर जंतु और वनस्पतियाँ भी श्वास लेती हैं। पौधा श्वास [illegible] पत्तियों द्वारा श्वास लेता है। मेंढक और कई जंतु अपनी त्वचा के रोम-कूपों द्वारा श्वास [illegible] है। मछली गलफड़ों के द्वारा श्वास लेती है। प्राणी चाहे सोये, चाहे जागे, वह निरंतर श्वास लेता रहेगा। श्वास और हृदय की धड़कन ही चेतना का लक्षण है। यह ईश्वर की सत्ता है कि वह यथावत् चलता रहता है।

यदि हम यह कहें कि श्वास लेना एक स्वाभाविक गति है, तो यह पता चलता नहीं। चेतना-यंत्र किस भाँति हृदय और श्वास की गति को [illegible] रखता है? यह गति प्रारंभ ही किस भाँति हुई, और किसकी आज्ञा से कब तक चलती रहेगी? इन सब बातों पर विचार करने से हमें मानना पड़ेगा कि एक सर्वोपरि शक्ति है, जो मनुष्य के शरीर से भी [illegible] है, उस सबसे भिन्न और सबसे श्रेष्ठ है, उसी का श्वास सारे जीवन पर [illegible] अधिकार है। वही शक्ति परमेश्वर के नाम से वर्णित है।

श्वास और प्रश्वास द्वारा जो पदार्थ बाहर निकलते तथा भीतर जाते हैं, वे इस प्रकार हैं—

[illegible]	श्वास वायु [illegible]	प्रश्वास वायु [illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]
[illegible]	[illegible]	[illegible]

फेफड़े इन दो भिन्न गुणवाली गैसों से रक्त को शुद्ध करते हैं। आप कल्पना कीजिए कि दो कोठरियाँ है एक 'अ' दूसरी 'ब'।

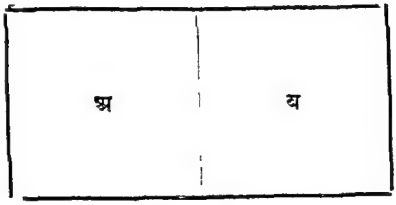

इनमें से एक मे ओषजन गैस भरी है, दूसरी मे कर्बनद्विओषित। दोनो कोठरियों के बीच एक ऐसा छेद है, जिनमें से वायु गुज़र सकती है। ऐसी दशा मे आप देखेंगे कि दोनो कोठरियों की वायु कुछ मिल गई है। अर्थात् न एक मे स्वच्छ ओषजन है, न दूसरी मे स्वच्छ कर्बनद्विओषित। दोनो गैसो का यह स्वभाव है कि वे इधर-उधर फैलना चाहती हैं। इस प्रकार वे 'क' से 'ख' में और 'ख' से 'क' मे चली गई है। इन गैसो मे एक गुण यह भी है कि जहाँ वे कम मात्रा में हों, वहाँ वे स्वयं चली जाती है, यदि उन्हे बाधा न पहुँचाई जाय।

अब आप यह समझिए कि फेफडो मे दो कोठरियाँ (वायु-कोष्ठ) है—एक मे वायु भरी है, दूसरी में रक्त। दोनो के बीच एक परदा है। उस परदे मे से गैसे आ-जा सकती हैं। रक्त जो केशिका मे भर गया है, उसमे ओषजन और कर्बनद्विओषित दोनो गैस है—उधर वायु-कोष्ठ में भी जो वायु है, उसमे भी दोनो गैस है। अंतर सिर्फ़ इतना है कि वायु-कोष्ठ में ओषजन अधिक है और रक्त मे कर्बनद्विओषित। अब गैसों के स्वाभाविक गुणों के अनुसार ओषजन वायु-कोष्ठ मे से रक्त में प्रवेश करती है, और कर्बनद्विओषित रक्त से निकलकर वायु-कोष्ठ मे आ जाती है। इस प्रकार अदला-बदली हो जाती है। यह अदला-बदली सिर्फ़ ऊपर के बताए गुणो पर ही निर्भर नही है। कोष्ठो के सेलों मे भी यह स्वाभाविक शक्ति है कि वे रक्त में कर्बनद्विओषित को खींचकर वायु में फेक देती है और ओषजन को खींचकर रक्त में पहुँचा देती है। इन दोनो कारणों से रक्त मे कर्बनद्विओषित बहुत कम हो जाता है और ओषजन अधिक हो जाता है। इसी को रक्त का शुद्धिकरण कहते हैं। अब आप विचार कर देख लें कि शुद्ध वायु मे श्वास लेने की कितनी आवश्यकता है।

सीधे बैठना और खडे होना

बैठने और खडे होने के समय हमें सीधे रहना चाहिए, ताकि प्रत्येक बार जब हम श्वास लें, तो फेफडों को फैलने की काफी गुंजाइश मिल सके। इस रीति से शरीर को ताज़ा वायु का अधिकांश मिलता है। जब हम सीधे बैठते और खडे होते हैं, तो न केवल सुंदर दीखते हैं, बल्कि उससे स्वस्थ होने में हमें सहायता मिलती है। झुककर चलना या बैठना अंत में क्षय, कूबड़ और अन्य कई रोग पैदा कर देता है।

घर के भीतर काम करनेवाली स्त्रियों को और उन लोगों को, जिन्हें अधिकतर एक स्थान पर बैठकर ही अधिक काम करना पड़ता है, इस बात का अभ्यास प्रातः और सायं करना चाहिए कि दिन में कई बार सीधे खड़े होकर लंबी श्वास लें, ताकि फेफड़ों में ताजी वायु भरे और विषाक्त वायु बाहर निकल जाय।

मुख से श्वास लेना

मुख से श्वास लेना अत्यंत बुरा है। श्वास लेने का यथार्थ मार्ग नाक और मुख का मुख है। नाक के अंदर अनेक सूक्ष्म रेशे होते हैं, जिनसे छनकर वायु भीतर जाती है, और धूल तथा कीटाणु रुक जाते हैं। इससे सिर का सीलन और गर्मी भी दूर हो जाती है। जब मुंह द्वारा श्वास लेते हैं, तब वायु न गर्म और न नरम ही होती है। और श्वासनली में सूखा ही चली जाती है, इसी से अधिक कफ निकलता है। इसी कारण सर्दी और खाँसी बढ़ जाती है। जब नाक से श्वास नहीं लेते, तो यह बंद हो जाती है। और उसमें मवाद निकल आते हैं, टेंटुए फूल जाते हैं। इसीलिये मुंह से श्वास लेना अति हानिकारक है, और ऐसा कदापि न करना चाहिए।

यदि कोई बालक मुंह से साँस लेता हो, तो उसे डॉक्टर के पास ले जाकर उसका गला और नाक दिखा दो। यदि कोई मवाद उत्पन्न हुए हों, तो उनको निकलवा डालो, नहीं तो ऐसा बालक कदापि स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट न होगा।

धूल और श्वास

वायु के साथ जो धूल-कण उड़ती है, और जो प्रायः [illegible] रहती है, जिसे धूल ही नहीं है, उसमें अत्यधिक [illegible] भरी है। [illegible] वायु के साथ यह धूल हमारे श्वास में प्रवेश करती है, तो यह फेफड़ों में [illegible] रह जाती है। और इससे [illegible], निमोनिया, खाँसी, जुकाम आदि रोग हो जाते हैं। इसलिए [illegible] सड़कों पर छिड़काव करना चाहिए और सड़कों पर न थूकना चाहिए। [illegible] और [illegible] के [illegible] का मुख [illegible] होता है। [illegible] श्वास और [illegible] में नहीं थूकना चाहिए।

यहाँ की [illegible] सड़क [illegible] निरंतर [illegible] है, [illegible] खड़े [illegible]।

श्वास के [illegible] नियम

(१) [illegible]

(२) [illegible]

(३) [illegible]

(४) [illegible]

(५) जब भी श्वास लो, पूरी हवा फेफड़ों में भर लो। श्वास लेने के समय सीधे खड़े रहो। कंधों को पीछे झुकाओ, छाती उभार लो और उसे गले से न लगने दो।

(६) धूल के स्थान से बचो।

(७) तंबाकू, हुक्का, बीड़ी, सिगरेट और शराब आदि न पिओ।

(८) कमर में पट्टी आदि कसकर न बाँधो।

(९) प्रतिदिन कुछ-न-कुछ प्राणायाम करो।

घर कैसे हों ?

ऐसे घरों में जो ऐसी नीची भूमि में बने हों कि जहाँ जब पानी गिरे, इकट्ठा हो जाय, तो उनमें मच्छर अवश्य पैदा हो जाते हैं तथा घर में रहनेवालों को मलेरिया-ज्वर आने लगता है। इसके सिवा पानी में जो कुछ पड़ता है, वह सड़ने लगता है, जिससे स्वास्थ्य को भारी धक्का पहुँचता है।

मुर्गी, सुअर, कुत्ते तथा ढोर घर में या घर के नीचे के खंड में न रखने चाहिए, उनका मैला घर को दुर्गंध-पूर्ण कर देता है। तथा इनके शरीर में पिस्सू आदि जंतु होते हैं, जो भयानक रोगों के कीटाणु साथ में रखते हैं।

फर्श इतना पक्का और साफ होना चाहिए कि चूहा, चुहिया आदि बिल न कर सकते हों।

पालतू जानवर

बहुत लोग जो कुत्तों को पालने के शौकीन होते हैं, वे कुत्तों को साथ खिलाते, साथ सुलाते और साथ ही रखते भी हैं। स्मरण रखना चाहिए कि एक तो हिंदुस्तानी लोग कुत्तों को ठीक-ठीक शुद्ध रख ही नहीं सकते, दूसरे कितना भी शुद्ध रखने पर कुत्ते में कीटाणु-संबंधी बहुत-से ख़तरे होते हैं। कुत्ता स्वाभाविक रीति पर एक गंदी आदत का जानवर है, उसके प्रेम और अन्य कई गुण होते हुए भी स्वास्थ्य के ख़याल से उसे घर से पृथक् रखना तथा भोजन के पात्रों और शयन के वस्त्रों से दूर रखना चाहिए।

तोता-मैना पक्षी आदि के पालनेवाले भी सफाई का ध्यान नहीं करते। फलतः ये बेचारे जानवर तो अनेक कीटाणु-संबंधी रोगों के कारण शीघ्र मर ही जाते हैं—इस पर वे अनेक रोगों की सृष्टि भी करते हैं। हमारी सम्मति में जिन सज्जनों को जानवरों के पालने का शौक है, वे चिड़ियाघरों में उनके पालने के नियमों को जाकर सीखें। इस ग्रंथ में भी हमने इस विषय में अन्यत्र थोड़ा-सा लिखा है।

प्रकरण ३

हृदय और रुधिराभिसरण

अनंत काल से कवियों ने हृदय की बड़ी-बड़ी महिमाएं गाई हैं। इस हृदय ने न जाने कब
[illegible] करोड़ों प्राणियों के रक्त बहाए हैं। यह हृदय ही संसार की बड़ी-बड़ी भयानक और [illegible]
घटनाओं का केंद्र है। इसने बड़े बड़े साम्राज्यों को हिला डाला है।

यही हृदय शरीर-विज्ञान की दृष्टि से एक मुख्य मांसमय है।

यह एक पोला पैशिक यंत्र है। यह बाएं फेफड़े के मध्य में [illegible]
है। इसका आकार एक बंद कमल के फूल के समान है।

इसकी लंबाई प्रायः ५ इंच और चौड़ाई ३½ इंच और मोटाई २ इंच है। [illegible]
का औसत ९ से १० औंस भारी होता है। प्रौढ़ावस्था तक इसका [illegible]
और पुरुषों से कम होता शुरू होता है।

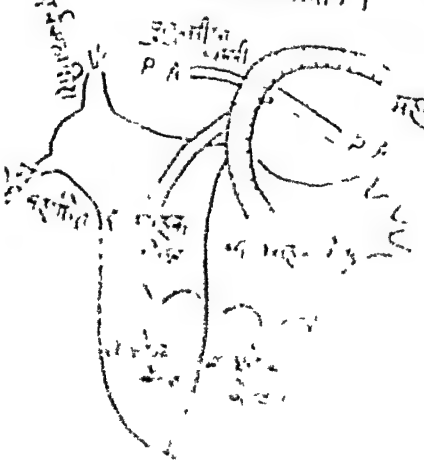

हृदय का [illegible] चित्र
[illegible]

[illegible]

२१ भाग सूखा, कठिन द्रव्य है। मोटे हिसाब से ४ आना कठिन द्रव्य और १२ आना केवल पानी है। इस २१ भाग कठिन द्रव्य मे १२ भाग सफेद और लाल कण तथा बाकी ९ भाग मे ६ भाग एलब्यूमेन-नामक पदार्थ और ३ भाग नमक, चर्बी और शकर है। इनके सिवा शरीर की शक्ति क्षय होने पर जो पदार्थ शरीर के बाहर निकलते है, उसका कुछ अंश और फाईब्रिन-नामक एक प्रकार का तंतु-सदृश पदार्थ का कुछ अंश रक्त मे दिखाई देता है।

वायव्य पदार्थ

रक्त का आधा हिस्सा वायव्य पदार्थ इसमे मिला है। अर्थात् प्रति १०० इंच गाढ़े रक्त मे कुछ कम ५० इंच गाढ़ा वायव्य पदार्थ है। इस पदार्थ को अंगाराम्ल, अम्लजन और जवाखारजन कहते है। यह पदार्थ बाहरी हवा मे भी है। रक्त मे प्राय १० आना अंगाराम्ल और कुछ कम ६ आना अम्लजन और बहुत कम जवाखारजन है।

आयु, आहार, धातु, प्रकृति और स्त्री-पुरुष मे भेद के कारण इस परिमाण मे परिवर्तन भी हो जाता है। स्त्री की अपेक्षा पुरुष के रक्त में लाल कण अधिक रहते है। इस लिये स्त्री से पुरुष वज़नी होता है। इसके सिवा गर्भिणी स्त्री के रक्त मे से लाल कण और भी कम हो जाते हैं।

नवजात शिशु के शरीर मे दो मास पर्यंत लाल कण अधिक रहते है। बालक अवस्था मे वे नीचे बैठ जाते है, यौवन काल में वे फिर ऊपर को उठ आते है। तथा बुढ़ौती में फिर कम हो जाते हैं।

तामसिक प्रकृति के मनुष्य के रक्त में भी लाल कण अधिक होते हैं। शाकाहारी की अपेक्षा मांसाहारी के शरीर में भी वे अधिक परिमाण मे होते हैं। फ़स्त लेने से इन लाल कणो का परिमाण कम हो जाता है।

वर्ण-भेद

शरीर के सब स्थानों के रक्त का रंग एक-सा नही है। शिरा का रक्त अम्लजन कम होने से नीला तथा धमनी का लाल होता है। धमनी का रक्त जल्द जम जाता है। फेफडे, जिगर और तिल्ली की रक्त-शिराओं का रक्त शिराओ के रक्त की अपेक्षा भिन्न रंग का होता है।

रक्त का परिमाण

शरीर में रक्त का परिमाण क्या है, यह जानना बहुत कठिन है। परंतु बहुधा वह शरीर के बोझ के १२वे या १४वें भाग के बराबर होता है।

उपादान

रक्त के चार प्रधान उपादान है—(१) रस (२) कस (३) कणिका (४) तंतु।

रक्त के पतले अंश में जो कण तैरते हैं, वह 'रस' कहाता है। रक्त से जो गाढ़ा भाग निकालकर मैला, पतला द्रव बचता है, वह कस कहाता है। कणिका दो प्रकार की है। श्वेतवर्ण-हीन और लाल। स्वस्थ शरीर में सफ़ेद कणिका की अपेक्षा लाल कणिका अधिक रहती है। कारण, वही

कणिका रक्त का सार पदार्थ है। इसी की सत्ता से रक्त का रंग लाल होता है। ये कणिकाएँ तिल्ली से उत्पन्न होती हैं। और सफेद कणिकाएँ ही समय पर लाल कणिकाएँ बन जाती हैं।

रक्त की क्रिया

रक्त जैसे जीव का प्रधान साधन है, वैसा ही यह शरीर के सारी और भीतरी सब यंत्रों का जीवन-स्वरूप है। कारण, इसमें सब क्रिया की सफलता साधित होती है। [illegible] में जो चिकना गूदा है, वह रक्त के ही सार भाग से बनता है। रक्त से ही [illegible] हड्डी की झिल्ली और मज्जा, पेशी, स्नायु, पाचकाग्नि, मुख की लार, [illegible] का [illegible], [illegible] का [illegible], [illegible] का [illegible], [illegible] के केश और उँगलियों के नाखूनों को [illegible] र सबको पुष्ट करता है।

रक्त की गति

रक्त रगों में निरंतर चला करता है। यदि शरीर की रचना और रक्त की गति की [illegible] ली, तो हम देखते कि इन नसों के भीतर रक्त की ओर से दूसरे की ओर रक्त [illegible] होता रहता है।

रक्त का प्रधान आधार हृदय है। रक्त हृदय से धमनी और धमनी से [illegible] है। यहाँ से फिर फेफड़ों में होते हुए हृदय में लौट आता है। [illegible] धमनी में चला जाता है। इसी तरह यह [illegible] ही रहती है। इस [illegible] में कोई विघ्न या रुकावट आकर उपस्थित हो जाए, तो [illegible] उपस्थित कर देता है।

हृदय के दाहनी ओर की [illegible] धमनी से रक्त फुफ्फुस में प्रवाहित होता है। [illegible] फुफ्फुस के [illegible] नाड़ी और [illegible] से [illegible] सार जाहिर है कि रक्त दो रास्तों से प्रवाहित होता है। [illegible] हृदय के बाईं ओर से प्रवाहित होकर रक्त सारे शरीर में फुफ्फुस [illegible] जाता है। यह [illegible] फुफ्फुस के भीतर से प्रवाहित होता है।

इस प्रकार रक्त [illegible]

[illegible]

की अपेक्षा प्रति मिनट ८-१० बार और शीघ्र चलता है। बालक का इससे भी अधिक चलता है। १ वर्ष के बालक का हृदय एक मिनट में ९० से १०० बार तक धडकता है।

रक्त में जीवन है

यदि एक उँगली मे डोरी कसकर बाँध दी जाय और उसे कुछ समय तक यों ही छोड दिया जाय, तो प्रथम वह सुन्न हो जायगी; फिर वह काली पड जायगी और यदि उसे दो दिन इसी दशा मे रक्खा जाय, तो वह सड जायगी। यह रक्त के प्रवाह को रोक देने से हुआ।

यह हृदय जो रक्त की गति और जीवन का मूल-कारण है, गर्भ के चौथे या पाँचवे मास मे धडकना प्रारंभ होता है, और तब से ८०-९० वर्ष की आयु तक एक क्षण को भी नहीं रुकता। वह एक अद्भुत इंजन की भाँति चलता ही रहता है।

जब शरीर के किसी भाग मे चोट लगती है, तब केवल रक्त ही उसे अच्छा करता है। जब रोग के कीटाणु शरीर में प्रवेश करते है, तब रक्त-जल ही उसे नष्ट कर डालता है। पर जब इसी की शक्ति किसी कारण वश क्षीण हो जाती है, तब वह निर्बल पड जाता है।

यदि उत्तम खुर्दबीन से देखा जाय, तो ये अणु रोग के कीटाणुओ को पकडकर नष्ट करते हुए दीख पडेंगे।

हमें रक्त की बहुमूल्यता को समझना चाहिए और सदैव उसे शुद्ध और उत्तम बनाए रखना चाहिए।

प्रकरण ४

आहार-नालिका—पाचन-यंत्र और पचन-क्रिया

भोजन किस तरह शरीर का पालन करता है

आहार-नालिका

हम जो कुछ खाते हैं, वह इसी नालिका द्वारा पेट में पहुँचता है। [illegible] लंबी होती है। इसका एक सिरा मुख से लगा होता है, दूसरा गुदा से। यह नली सब जगह, आदि से अंत तक, एक-सी नहीं है। कहीं पर थैली जैसी हो गई है, कहीं पतली और तंग है। [illegible] तक तो यह सीधी गई है और पेट में आंत की तरह टेढ़ी-मेढ़ी चली गई है। इस नली के सब भाग भिन्न-भिन्न काम करते हैं, और इनके नाम भी भिन्न-भिन्न हैं।

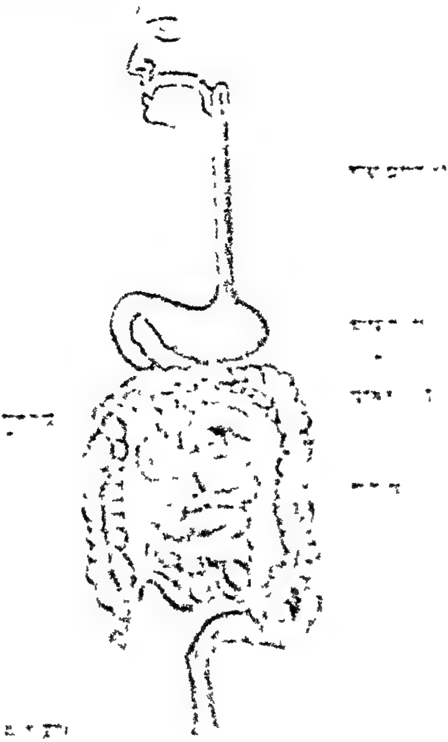

पहला भाग

इसका मुख है। यहाँ [illegible]

ईश्वर की माया है, न खायँ, तो बढ़ें कैसे ? भोजन जितना चबाया जायगा, उतनी ही लार निकलेगी। इसलिये भोजन ख़ूब चबाकर खाना चाहिए। इतना दाँतों से पीसना चाहिए कि भोजन का मुँह में पानी हो जाय और उसमें स्वाद न रहे। अर्थात् तब तक चबाए जाना चाहिए। पुरानी कहावत है कि दाँतो का काम आँतो से नहीं लेना चाहिए।

दूसरा भाग

गला या कंठ है। वास्तव मे नली शुरू यहीं से होती है। इसे अन्न-प्रणाली कहते हैं। यह भाग करीब १० इंच लंबा होगा। इसमे होकर ख़ुराक गले और छाती मे होती हुई तीसरे भाग मे पहुँचती है। यह स्थान नाज़ुक और तंग है। सख्त चीज़ खाने से इसमें अटक जाती है। बिना पानी लिए भोजन करने से भोजन इसमें अटक जाता है, जिससे दम घुटकर प्राण तक निकलने का भय रहता है। कभी-कभी असावधानी से पानी पीने से वह इस नली में आ जाता है, जिससे फंदा लग जाता है। इससे भोजन को नरम करके धीरे-धीरे सावधानी से थोड़ा-थोड़ा गले से उतारना चाहिए।

तीसरा भाग

थैली के समान है। इसे मेदा या आमाशय कहते हैं। यहाँ भोजन पचने के लिये कुछ देर ठहरता है। इसकी लंबाई अंदाज़न १३ इंच होती है और चौड़ाई कोई ४ इंच। इस छोटे से भाग को मज़ेदार पुतलीघर कहना चाहिए। ज्यों ही लार से मिला हुआ भोजन वहाँ पहुँचता है, तो तुरंत वहाँ चहल-पहल मच जाती है। और एक तरह का खट्टा रस बनना शुरू हो जाता है, इस काम में कोई आधा घंटा लग जाता है। तब तक लार का रस भोजन को गलाता रहता है, पर ज्यों ही आमाशय का रस भोजन से मिला, त्यों ही लार का असर दूर हो जाता है, क्योंकि यह रस खट्टा होता है। आमाशय की सूरत कुछ मशक-जैसी होती है। उसके दाहने और बएँ दो किनारे होते हैं। दाहना फूला हुआ और लंबा होता है और बायाँ चिपका हुआ और छोटा। तो उस खट्टे रस से मिल-मिलकर थोड़ा-थोड़ा भोजन बाएँ तंग भाग में जाने लगता है। यह भाग भंडार का काम देता है, अर्थात् यहाँ भोजन पड़ा ही रहता है। एक बात ध्यान में रखने योग्य है कि आमाशय का खट्टा रस एकाएक सब भोजन से नहीं मिल जाता, थोड़े-थोड़े मे मिलता है। शेष में वही लार का रस अपनी कारस्तानी करता रहता है।

अब बीच के भाग में लहरें उठने लगती हैं। इससे मांस के संकोच से इस भागकी शक्ति घट जाती है और भोजन पर दबाव पड़ता है और भोजन दक्षिणांश मे जाने लगता है। यहाँ वह ख़ूब मथा जाता है और भरपूर आमाशय का रस मिलकर वह पतला हो जाता है। जब तक भोजन पतला नहीं बन जाता और उसके मोटे-मोटे टुकड़े नहीं पिस जाते, तब तक दक्षिणांश में बराबर हलचल होती रहती है। अच्छा, यहाँ पर इस कारख़ाने का अंत होता है। दूसरे कारख़ाने में ख़ुराक भेजनी होती है। इस जगह एक छेद होता है, जो मांस के एक टुकड़े से बंद होता है। ज्यों ही रस बन-बनाकर माल तैयार हो जाता है, तब दक्षिणांश उस पतले

भोजन को बड़े वेग से पक्वाशय में ढकेल देता है। इसके बाद मध्यभाग से और भोजन आता है। वह भी इसी प्रकार आगे जाकर नीचे ढकेल दिया जाता है। इस तरह धीरे-धीरे सब भोजन पक्वाशय में ढकेल दिया जाता है।

मामूली भोजन आमाशय में 3-4 घंटे ठहरता है। पर जो भोजन दाँतों द्वारा नहीं चबाया गया, वह आमाशय में दो घंटे तक ठहरता है, क्योंकि आगे बंद होता है, आमाशय किसी सख्त चीज़ को आँतों में नहीं उतरने देता।

आमाशय के खट्टे रस के कारण दूध वहाँ जाकर फट जाता है। मकड़ी का दूध खराब बदलता है। पर यह सभी में नहीं होता। घृत, तैल आदि स्नेह पिघल जाते हैं, और कोई अंतर नहीं पड़ता। जल और लवण ज्यों-के-त्यों रहते हैं।

चौथा भाग

इसका नाम क्षुद्रांत्र है, और इसे पक्वाशय भी कहते हैं। यह नली कोई 22 फुट की है, चौड़ाई 1½ या 2½ इंच होती है। इसका नीचे का सिरा बृहदंत्र से जुड़ा रहता है, जिसे मलाशय भी कहते हैं। क्षुद्रांत्र सर्प की तरह लेटकर सारे पेट में रहती है। आमाशय से ढकेला जाकर जो खट्टा-मिट्ठा रस इस अंत्र में आता है, वह इसका रस चूसकर और मिलता है। पर यह रस खारा होता है। इस अंत्र में एक-सी दशा रहती है, कभी वहाँ रह सिकुड़ती है, कभी फूलती है। खाने के पहले और पीछे की सिकुड़ती, फैलने देता होता, वह यही दशा इसकी होती है। इस क्रिया का प्रभाव बड़ा भारी पड़ता है, इससे भोजन आगे और पीछे की सिमटता जाता है और उसमें सारे पदार्थ सावधान [illegible] द्वारा [illegible] [illegible] प्रकार की [illegible]) में घुसकर रस में पहुँच जाता है। आहार-रस तक पहुँचता है, तब तक इस अंत्र के और तक बहुत-सा थोड़ा रस में मिल जाता है।

पाँचवाँ भाग

बृहदंत्र है, जिसे मलाशय भी कहते हैं। [illegible] रस के लिए [illegible] है, उसको छोड़कर शेष [illegible] रस [illegible] जाता है। यह [illegible] अधिक चौड़ी होती है। इसकी लंबाई [illegible] है, [illegible] है, [illegible] है। यह [illegible] है कि [illegible] रस तो बृहदंत्र में [illegible] है, किंतु [illegible] [illegible] है। [illegible] होकर [illegible] है। [illegible] है, [illegible] में। इसके [illegible] रस [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है। [illegible] है।

बाहरी सहायता

आमाशय, क्षुद्रान्त्र और बृहदन्त्र मे जो भोजन पचता है, उसमे उसे कुछ बाहरी सहायता भी मिलती है। यह सहायता ख़ासकर दो स्थाना मे मिलती है . एक जिगर या यकृत और दूसरी क्लोम—या पिपासा-स्थान से जिगर शरीर मे सबसे बडी गाँठ है, इसका वज़न कोई दो सेर का होता है। यह पेट के ऊपर दाहनी तरफ़ पसलियों के नीचे छिपा रहता है, बीमारी की दशा मे बढ़कर बाहर निकल आता है। रस मे एक प्रकार का पाचक रस बनता है, जिसे पित्त कहते है। यह पित्तपीले-हरे रग का कडुवा, पतला और गर्म रस है सडने पर खट्टा हो जाता है। जिगर में पित्त की एक अलग थैली लटकी रहती है, जिसकी सूरत नासपाती के समान होती है, इसी मे पित्त भरा रहता है। जब भोजन पक्वाशय या क्षुद्रान्त्र मे होता है, तब यह भी उससे जाकर मिल जाता है। क्षुद्रान्त्रों मे आमाशय के खट्टे रस के साथ घुला हुआ खाद्य आता है। और अंत्र के खारी रस से मिलकर उसकी खटाई नष्ट होने लगती है। पित्त भी उसमें मदद देकर उसकी खटाई को नष्ट करता है। ख़ासकर स्नेह का पचाने मे पित्त की मदद की बहुत ज़रूरत पडती है। जब पित्त कम बनता है या किसी कारण से अन्त्र में नही पहुँच सकता, तब स्नेह बहुत कम पचता है और उसका अधिक भाग मल के द्वारा शरीर से बाहर निकल जाता है। यंत्र मे पित्त के रहने से उसमे सडाव कम होने पाता है जब यन्त्र मे पित्त नही पहुँच पाता, तब सडाव अधिक होता है, और विष्ठा दुर्गंधित और लसदार आती है, क्योंकि स्नेह कच्चा निकल रहा है। दूसरी वस्तु है क्लोम। यह वह गाँठ है, जहाँ प्यास लगा करती है। इसकी शकल पिस्तौल-जैसी है। यह पेट में पीछे की ओर लगी रहती है। इसमें भी एक प्रकार का पाचक रस बनता है, जिसे क्लोम-रस कहते है। यह बिलकुल साफ़, पतला, खारा रस होता है। इसका काम भोजन मे से भिन्न मूल अवयवो का विश्लेषण करना है। यह क्षुद्रांत्रीय रस और क्लोम से मिलकर अपना काम करता है। बल्कि क्षुद्रान्त्र के रस मे कुछ ऐसी विशेषता है कि इसके मिलने से क्लोम के रस का बल बहुत बढ जाता है।

धन्य है उस विश्वकर्ता कारीगर को, जिसने यह शरीर रूपी गोरख-धंधा बनाया है।

भोजन पचने मे कितनी देर लगती है ?

इसका परिमाण भिन्न-भिन्न खाद्य का भिन्न-भिन्न है। कोई भोजन देर मे पचता है, कोई जल्दी। साधारणतया इस प्रकार है—

आमाशय में ४ से ५ घंटे तक ठहरता है।
क्षुद्रान्त्र में ४ से ५ ,, ,,
ऊर्ध्वगत बृहदन्त्र मे २ से ३ ,, ,,
अधोगामी में २ से ३ ,, ,,
मलाशय मे ५ से ६ ,, ,,

इस प्रकार साधारणतया भोजन को पचने में कोई १८ घंटे या १६ घंटे लगते हैं।

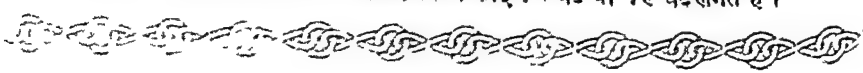

विष्ठा

सार-रहित पदार्थ जब मलाशय में पहुँच जाता है, तब हमें शौच की हाजत मालूम होती है। मल-द्वार पर एक मांस का टुकड़ा लटका रहता है, जो बिना इच्छा मल को बाहर नहीं निकलने देता।

[illegible] बार हम गहरा साँस लेते हैं, जिससे छाती और पेट के बीच के पर्दे सिकुड़कर पेट की ओर उतरते हैं, इससे पेट सिकुड़कर अन्त्र पर दबाव डालता है। [illegible] भाग में एकदम दबाव पड़ता है और द्वार की मांस-पेशी हट जाती है और मल बाहर निकल जाता है।

विष्ठा में क्या होता है?

भोजन की सब वस्तुएँ शरीर में नहीं पचतीं। [illegible] जो रह जाती हैं, वे सब मल द्वारा निकल जाती हैं। उनमें से पदार्थ हैं — जल, भोजन का बचा अंश, [illegible] फलों के छिलके, बीज, गुठलियाँ, [illegible] के बीज और कई प्रकार के [illegible]।

इसके सिवा कई प्रकार की [illegible] जो [illegible] में हो जाते हैं। [illegible] के भीतर-बाहर कीड़े, [illegible] के सिरे [illegible]। [illegible]

मल [illegible] क्यों होता है?

भोजन चाहे जितना सुगन्धित खाया जाय, मल दुर्गन्धित होता है। इसका कारण यह है कि दोनों अन्त्रों में [illegible] के सूक्ष्म जीवाणु [illegible] रहते हैं, जो [illegible] भोजन पर निर्वाह करते हैं। [illegible]

[illegible]

प्रकरण ५

गुर्दे (मूत्र-यंत्र)

कार्य

आपने देखा होगा कि भाफ का एंजिन कोयले जलाकर चलाया जाता है। कोयलों के जलने मे जो राख उत्पन्न होती है, वह साफ़ करनी भी उतनी ही आवश्यक है, जितनी कि कोयले झोंकना।

ठीक शरीर भी इसी प्रकार का एक एंजिन है और वह खाने और पीने से पुष्ट होकर चलता है। पर जल और खाद्य द्रव्यों मे जो फ़ुज़ले का भाग है, वह शरीर मे रह जाय, तो शरीर का नाश ही हो जाय।

हमने बताया है कि विपाक्त वस्तु को पसीने और श्वास के साथ किस प्रकार फेफडे और त्वचा निकालती है। अब हम गुर्दों का वर्णन करते है, जो इसी प्रकार की बहुमूल्य सेवा शरीर की करते है।

आकृति

ये दो होते है, और इनका आकार बड़े सेम के बीज की भाँति होता है। यह कमर के भीतर रीढ़ की हड्डी के अंत में दोनो तरफ़ लगे हुए हैं। हरएक गुर्दे के पीछे बारहवीं पसली लगी हुई है। इनका रंग गुलाबी, लंबाई ४ इंच, चौडाई २½ इंच और मोटाई १½ इंच है। पुरुष के गुर्दे का वज़न प्राय. ४ औंस तथा स्त्री के गुर्दे का वज़न कुछ कम होता है।

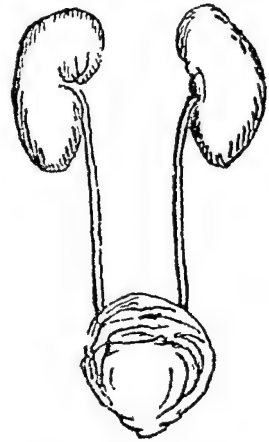

गुर्दे और मूत्र-वस्ती

क्रिया

ये मूत्र उत्पादक यंत्र है। ये इस कौशल से बने होते है कि रक्त का दूषित जलीय अंश छन-छनकर इनमें संचित होता रहता है और फिर मूत्राशय में जाता है। जब मूत्राशय मूत्र से परिपूर्ण हो जाता है, तभी मूत्र की हाजत होती है। मूत्राशय का गुर्दों से एक नली के द्वारा संबंध है।

गुर्दे रक्त की शुद्धि किस भाँति करते हैं ?

वृहत् धमनी की दो शाखाओं द्वारा रक्त दोनों गुर्दों में पहुँचता है। भीतर इन धमनियों की छोटी-छोटी बहुत-सी शाखाएँ हो जाती हैं। एक-एक शाखा प्रत्येक नली के फूले हुए भाग में जाती है, इसी से रक्त केशिका के गुच्छे में पहुँचता है। केशिका की शाखाओं में से कुछ जलीय अंश रक्त में से चूकर नली की दीवारों में से होकर उसके भीतर पहुँच जाता है। नली का फूला हुआ सिरा छलनी का काम देता है। यह लोहित रक्त इस जलीय अंश को बिलकुल छान देता है।

रक्त में पोषक तत्त्व और शर्करा मिली होती है, पर इस दशा में नहीं। पर से द्रव्य शरीर में इस ढंग से एकत्र रहा है कि नली का छेद खुला रहे, जिससे रक्त का प्रवाह भी उसमें खुला रहता है। नली की मोटी-मोटी नसें उस लसीका में से दूषित, दूषित अन्य अनेक पदार्थों को खींच लेती हैं। और फिर उसे नली में पहुँचा देती हैं। और यहाँ से सब दूषित द्रव्य उस जल में मिल जाते हैं। यह जल फिर पतली नलियों में बहता हुआ बड़ी-बड़ी नलियों में पहुँचता है, जो पिरामिडों में रहता है। यहाँ के पिरामिडों के सिरों में से निकलकर यह तरल मूत्र-प्रणाली के प्रारंभिक चौड़े भाग में पहुँचता है। यहाँ तक सब शरीर में गत है।

मूत्र प्रणालियाँ दो हैं। प्रत्येक के भीतरी पृष्ठों पर श्लेष्मिक झिल्ली लगी होती है। प्रत्येक नली की लंबाई १० से १२ इंच तक होती है। यह प्रणाली दो भिन्न है। उदर पर अलग एक से जुदा रहता है। इसी मूत्र-प्रणाली में पथरी बन होती है।

इन मूत्र प्रणालियों द्वारा रक्त गुर्दों से मूत्राशय में पहुँचता है, मूत्राशय [illegible] के विशेष संधि के नीचे रहता है। पुरुषों के शरीर में उसके [illegible] दो [illegible] रहते हैं। और इनके नीचे [illegible] भाग [illegible] रहता है। [illegible] के मूत्र रक्त के नीचे मलाशय और [illegible] के नीचे [illegible] रहता है।

मूत्राशय का आकार [illegible] है। [illegible] रक्त से [illegible] है, [illegible] करता है। [illegible] के [illegible] मूत्राशय है।

इसके सबसे [illegible] भाग में [illegible] है, [illegible] है। [illegible] अवस्थाओं में [illegible] होता है। [illegible] रहता है। [illegible] होता है। [illegible] मूत्र [illegible] रहता है।

मूत्र का परिमाण

सारे दिन-रात में एक बलवान् मनुष्य आधा सेर से १½ सेर तक मूत्र निकालता है। इसमें २३ छटाक जल और १ छटाक रासायनिक पदार्थ होते हैं। जब वह नीरोग है, यथेष्ट पानी पीता है, तो मूत्र का रंग हल्का पीला होगा। और जल के समान साफ़ होगा। पर यदि वह लाल या भूरा हो, तो यह अवश्य कम जल पीने का चिह्न है। शीतकाल में पसीना कम आने से मूत्र का परिमाण बढ़ जाता है। ग्रीष्म काल में पसीना आने से कम हो जाता है।

ज्वर चढ़ने की दशा में गुर्दों का काम बढ़ जाता है। इसलिये रोगी को उचित है कि यथेष्ट जल पीवे। इससे पसीना और पेशाब यथेष्ट होगा।

शराब, तम्बाकू, गर्म मसाला, सालन, अदरक आदि पदार्थ गुर्दे के लिये हानिकर हैं, इसलिये इन्हें कम खाय। रक्त में से किसी भी विजातीय वस्तु को बाहर कर देना गुर्दे का काम है। इसलिये गुर्दों में कोई दोष न उत्पन्न होने दे।

प्रकरण ६

प्लीहा (तिल्ली) और यकृत (जिगर)

वजन और आकार

प्लीहा एक बंद यंत्र है। यह पेट में बाईं ओर है। उसका [illegible] आकार है। इसका आकार पिष्टकाकार, रंग गहरा बैंगनी है। आकार जिससे एकदम [illegible] रंग की [illegible] वेशी से आकार भी घटता-बढ़ता रहता है। साधारणतः इसकी लम्बाई ४ इंच, [illegible] ३ इंच और मोटाई १½ इंच तथा वजन ६ औंस होता। कुछ अवस्था में इसका [illegible] और वजन बढ़ जाता है। मलेरिया में यह कई गुना बढ़ जाता है। इसका [illegible] और लाल कण बनते हैं।

यकृत

यकृत एक गोंददार यंत्र है। यह [illegible] से घिरा है, [illegible] का अधिकांश ढंके हुए है। इसका [illegible], [illegible] में [illegible], [illegible] और [illegible] से [illegible] है।

यकृत १०-१२ इंच चौड़ा होता है। इसका [illegible] है, [illegible] से ३½ इंच तक है। [illegible] इसके [illegible] को [illegible] और [illegible] करते हैं। [illegible] इसके सामने और पीछे [illegible], [illegible] के [illegible] में [illegible]।

पित्त-कोष अमरूद के फल की भाँति यकृत के नीचे लगा हुआ है। यह सामने और पीछे तिरछा रक्खा है, तथा इसका चौडा अश सामने—नीचे और दाहनी ओर है। तथा संकीर्ण अश अर्थात् ग्रीवा नीचेवाली नली मे मिल गई है। इसकी लबाई ३-४ इंच और चौडाई १½ इच है। इसमें प्राय. २½ औंस पित्त तैयार रहता है।

उपवास के समय को छोडकर निरतर यकृत से पित्त निकलता रहता है। दिन-रात में इतना पित्त निकलता है, जितना यकृत का वज़न है। पित्त-कोष मे पथरी पैदा होने से यदि पित्त न बने, तो रक्त सूख जाता तथा पाडुरोग हो जाता है।

पित्त का प्रधान कार्य अन्न पचाना है। यह हम अन्न-परिपाक के प्रकरण मे कहेंगे।

इसके सिवा अन्य कार्य इस प्रकार है—

१—पित्त बनाना।

२—रक्त मे अधिक शर्करा जाने देने से रोकना। यह काम वह शर्कराजन बनाकर करता है। यह शर्कराजन यकृत की सेलो मे संचित रहती है, जब आवश्यकता होती है, तब फिर शर्करा भी इसीसे बन जाती है। इस प्रकार एक तौर से यकृत शर्करा के आय-व्यय का हिसाब-खाता भी रखता है।

३—मूत्र में जो यूरिया या यूरिक एसिड निकलते हैं, वे भी यकृत में बनते हैं।

क्लोम

यह ग्रंथि उदर की पिछली दीवार से लगी रहती है। इसकी आकृति पिस्तौल के समान है। इसका दाहना भाग मोटा होता है तथा सिर कहलाता है। बायाँ भाग पतला होता है और पुच्छ कहलाता है। सिर और पुच्छ के बीच का भाग शरीर है। सिर पक्वाशय के घेरे मे रहता है और पुच्छ का सिरा प्लीहा से मिला रहता है। क्लोम के सामने अनुप्रस्थ बृहत् अंत्र और आमाशय रहते हैं। इस ग्रंथि का भार ६० से १०० माशे तक होता है और लंबाई ५ से ६ इंच तक।

इसमें जो पाचक रस बनता है, उसे क्लोम रस कहते है। यह पतला, स्वच्छ, क्षारीय द्रव है। यह रस क्षुद्रान्त्रीय रस और पित्त से मिलकर अपनी क्रिया और भी प्रबलता से करता है।

प्रकरण ७

मस्तिष्क

एक हड्डी के मजबूत डब्बे में, जिसे खोपड़ी कहते हैं, यह अद्भुत वस्तु सुरक्षित रक्खी हुई है। इसकी आकृति ठीक अखरोट के गूदे की भाँति है। इसके चार विभाग हैं —

(१) गुरु मस्तिष्क।

(२) क्षुद्र मस्तिष्क।

(३) सीता या सफेद रेशे की रस्सी।

(४) मेरुदण्ड मूलाधार।

इसके सिवा इसमें ३ झिल्लियाँ हैं, जिनसे यह चारों तरफ आच्छादित रहता है।

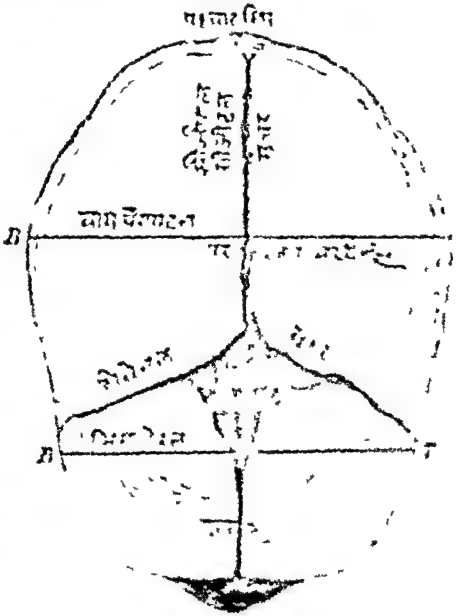

वजन

पूरे आयु के आदमी का मस्तिष्क साढ़े तीन सेर वजन का होता है। औरत का मस्तिष्क हलका और छोटा मनुष्य से विस्तार लोगों के मस्तिष्क भी हलके होता है। पुरुष और स्त्री के मस्तिष्क में कुछ वजन का अन्तर होता है।

[illegible]

इसके चार [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

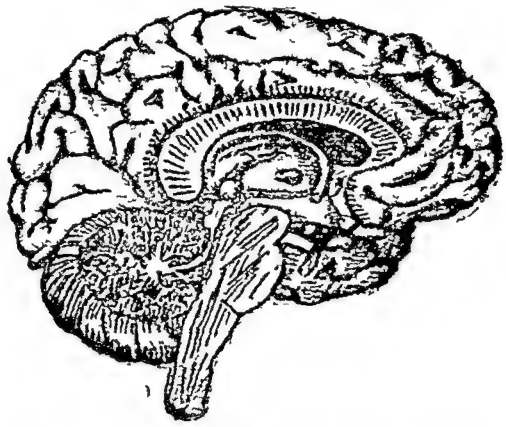

मस्तिष्क

स्नायु निकली हैं। यह जिस-जिस कशेरुका के पास है, उस कशेरुका का वही-वही नाम है।

हम पीछे स्नायु के प्रकरण में बता चुके हैं कि स्नायु किस प्रकार तारबर्की की भाँति फैले हुए हैं। मस्तिष्क में केवल भिन्न-भिन्न भागों से संदेश ही नहीं आता, वह आज्ञाएँ भी बाहर भेजता है। इसी से स्नायु में गति उत्पन्न होती है। यही सब इंद्रियों को आज्ञा देता है कि वे क्या करें। यदि किसी अंग से मस्तिष्क के ये तार कट जायँ, तो वह अंग शून्य हो जायगा। प्राय मदिरा पीने से तथा गर्मी की बीमारी में अर्धांग हो जाता है, क्योंकि इसका विष ज्ञान-तंतुओं को नष्ट करता है।

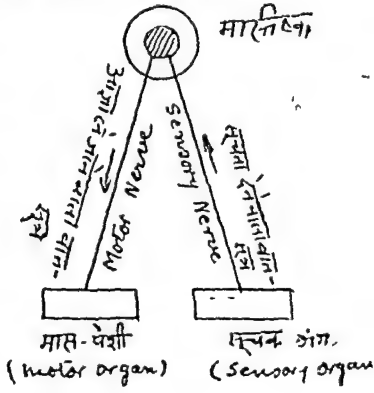

मस्तिष्क की कार्य-प्रणाली

सुषुम्ना और पिंगला नाड़ी-मंडल

कपाल के महाछिद्र से संलग्न है। इसकी लंबाई पुरुषों में १८ इंच और स्त्रियों में उस कोई ½ इंच कम होती है। इसका वजन ½ छटाक समझिए। इसका रंग बाहर से सफ़ेद होता है और भीतर से मटमैला। मस्तिष्क की भाँति इस पर भी झिल्ली के तीन आवरण हैं। सुषुम्ना में नाड़ियों के ३१ जोड़े होते हैं। प्रत्येक नाड़ी सुषुम्ना से दो भागों द्वारा जुड़ी रहती है। प्रत्येक सुषुम्ना नाड़ी का पिंगला नाड़ी-मंडल से संबंध रहता है।

[illegible] सामने या उसके इधर-उधर दो डोरियाँ-सी चली जाती हैं। प्रत्येक डोरी में थोड़ी-थोड़ी दूर पर छोटे या बड़े गाँठ-जैसे उभार होते हैं, जिनके कारण यह डोरी माला के समान दीख पड़ती है। ये उभार माला के दाने हैं। इन्हें नाड़ी-गाँठ कहते हैं। ये कुछ पिंगल वर्ण की होती हैं। इन्हीं गाँठ-शृंखला से जो नाड़ियाँ [illegible] को या [illegible] संबंधी ग्रंथियों को जाती हैं, [illegible] नाड़ियाँ कहलाती हैं।

ये गाँठ संयुक्त नाड़ियों से तारों-सूतों द्वारा संबंध रखती हैं। गाँठें परस्पर भी एक दूसरे से तारों द्वारा संबंधित हैं। इन गाँठों और तारों से जाल बन गए हैं। शरीर में तीन ऐसे विशद नाड़ी-जाल हैं। एक वक्ष में, जिसमें से निकली हुई नाड़ियाँ फुप्फुस, हृदय, रक्तवाहिनियों को जाती हैं। दूसरा उदर के ऊपर के भाग में। इसकी शाखाएँ आमाशय, यकृत, [illegible], प्लीहा, [illegible] इत्यादि को जाती हैं। तीसरा उदर के नीचे के भाग में, जो वस्ति-गह्वर के [illegible] [illegible], [illegible] आदि की ओर जाती हैं।

ये नाड़ियाँ संयुक्त तार जो विभिन्न नाड़ियों में [illegible] में होकर जाते [illegible], [illegible] हैं। शेष चेतना मार्ग।

ये सब तार बिजली के तार के समान काम करते हैं। मस्तिष्क इन्हीं के द्वारा सब शरीर पर शासन करता है। ये गति की दृष्टि से दो प्रकार के हैं। एक [illegible], जो मस्तिष्क से आरंभ होकर अंगों को जाते हैं। दूसरे [illegible] जो [illegible] से आरंभ होकर मस्तिष्क और सुषुम्ना को जाते हैं। [illegible] द्वारा भी मस्तिष्क [illegible] है। यदि हमें हाथ उठाना होगा, तो मस्तिष्क [illegible] इन्हीं तारों द्वारा [illegible] मस्तिष्क तक पहुँचती है। [illegible] जाएगा, तो यह सूचना [illegible]।

मस्तिष्क की रक्षा

मस्तिष्क की रक्षा [illegible], इसके लिए [illegible] है। [illegible] [illegible] करते हैं [illegible]।

[illegible]

मनुष्य के लिये मस्तिष्क ईश्वर की अलभ्य देन है। बचपन से अच्छे विचारों का अभ्यास करने से मस्तिष्क शुद्ध रहता है।

मन

मन क्या है, इस विषय में बड़े-बड़े लोगों के भिन्न-भिन्न विचार हैं। पर वही एक वस्तु है, जिसका शरीर पर असाध्य अधिकार है और उसका अधिष्ठान मस्तिष्क है। कोई-कोई अंतःकरण को ही मन कहते और उसका अधिष्ठान हृदय को मानते हैं।

जो कुछ भी हो। मन एक गुप्त शक्ति-पूर्ण शक्ति-केंद्र है। मनुष्य की उन्नति, अवनति, सुख-दुःख, मंगल, अमंगल का कारण मन है। मन की यह गुप्त शक्ति ही विचार या संस्कार के द्वारा बुद्धि को अधीन करती और शरीर को प्रेरणा करती है। परंतु यदि हमारा मन दृढ़ है, तो उसमें सदैव उत्तम विचारों का प्रभाव होगा। यदि वह दुर्बल है, तो ख़राब विचार आते रहेंगे।

यह बात भी विचारने के योग्य है कि मानसिक विचारों के कारण भी शरीर रोगी हो जाता है। चिंता, भय, क्रोध, क्षोभ, वेदना, शोक, क्रोध आदि से प्रमेह, मंदाग्नि, कामला, रक्त की कमी, चर्म-रोग, मृगी, उन्माद आदि रोग हो जाते हैं। वेद में इसीलिये मन को सदा शुभ संकल्पवाला होने की प्रार्थना की है।

गीता में भी श्रीकृष्ण ने मन को दुर्निग्रह कहा है। हम मन के संबंध में आगे मनोविज्ञान-नामक प्रकरण में कुछ लिखेंगे।

नेत्र और [illegible]

नेत्र एक महत्त्व-पूर्ण अवयव है। यह अवयव अपने आप में अद्भुत भी है। प्रत्येक मनुष्य की आँखें मशिनरी से सीधना इसका काम है। उनमें थोड़े भी व्यापार से अवसाद हो सकता है। इसलिये ये खोपड़ी के सामने के दो गड्ढों में, और पलकों के द्वारा सुरक्षित हैं। इसका उजाला भी पर मेरवर की कारीगरी का एक नमूना समझना चाहिए। ये नेत्र सदी की गर्मी और एक दोहरी के लिये सावधानी से रक्खे गए हैं कि सम्मुख भाग को छोड़ और किसी भी ओर से उन पर चोट आघात नहीं हो सकता। सामने पलकें हैं, जो [illegible] हैं। ये बाल और धूल मिट्टी को पलकों के बाल रोकते हैं। [illegible] ये पसीने को भी ये बाल और [illegible] हैं। [illegible]

[illegible] की बनावट विचित्र कोठों सीढ़ों के एक [illegible] है। [illegible] कोठरी है, इसमें एक ओर एक छेद रहता है, जिससे एक [illegible] रहता है। इसी ओर बीच का एक मसाला लगा हुआ रहता है। [illegible] के सामने [illegible] को बाल में होकर जाता है, [illegible] है। नाक के सामने [illegible] कोठरी को भी [illegible] कोठरी एक अधिक [illegible] जा सकता है। कोठरी को भी [illegible] है। यहाँ [illegible] की बनावट [illegible]

[illegible] कोठरी है, जिसके सामने के [illegible] कर कोठरी [illegible] की ओर [illegible] नाक की [illegible] के लिये नाक के [illegible] [illegible] कोठरी के [illegible] [illegible]

[illegible]

आँखें तभी तक अच्छा देख सकती हैं, जब तक कि उनके [illegible] और [illegible] स्वस्थ हों। कनीनिका, [illegible] द्रव, [illegible] और [illegible] के पीछे रहनेवाले [illegible] में से [illegible] भी अस्वस्थ हो, तो देखने में फर्क आ जायगा। इसलिये आँखों की [illegible] को सदा [illegible] से स्वस्थ रक्खो।

यदि आप विचार-पूर्वक किसी [illegible] को देखें, तो आप [illegible] उस पर [illegible] यह सूरज, यह धूप, यह सुंदर जगत सब कुछ उसके लिये एक [illegible] से [illegible] है। उसकी बराबर दुःखी जगत में कौन है? यदि आपको विचार से [illegible] में [illegible] दिया जाय, जहाँ सदैव ही अमावस की अँधियारी छा रही हो और कभी [illegible] उसका [illegible] न हो तो आप क्या सोचेंगे? और अपने दुर्भाग्य को क्या कहेंगे? फिर वे [illegible] जिन्हें [illegible] भी उपार्जन करना पड़ता है, कैसे दुःख में हैं!

नेत्रों की रक्षा

इसलिये बचपन से ही नेत्रों की रक्षा करनी चाहिए। [illegible] नेत्रों की [illegible] रक्षा करना उचित है। [illegible] होने का [illegible] से [illegible] और [illegible]। जैसा कि हमने प्रसव के प्रकरण में कहा है। जब बच्चा [illegible] हो, तो उसे [illegible] से [illegible], [illegible] मक्खियाँ उसकी आँख पर न बैठने पाये और उसे [illegible] न [illegible] पाये। [illegible] देखो, बच्चों की आँख [illegible] दुःखती है और वे उसे [illegible] में [illegible] करते हैं। मक्खियाँ उस पर बैठकर गंदगी को स्थापित करती हैं और कुछ [illegible] बच्चों की आँखों पर [illegible] बैठती हैं, और उनकी [illegible] आँखें [illegible] इस प्रकार [illegible] देखने की दुःखती हुई आँखों से 100 में 100 बच्चों [illegible] आँखें [illegible]।

बच्चों के [illegible] [illegible] न [illegible] हो कि उनके [illegible] रखी हों कि [illegible] [illegible] होने पर [illegible] [illegible]

दर्शी है और पिछला भाग मटमैला है। पिछला भाग केमरे की अँधेरी कोठरी के समान है। और अगला भाग उसकी तरह है, जिसमें होकर प्रकाश भीतर प्रवेश करता है। यह आँख का गोला तीन तहों से बना हुआ है। तीनो तहों या पटलो का रंग जुदा-जुदा है। सबसे बाहरी पटल सफ़ेद है। बीच का काला। और भीतर का नीला-लाल। आँख के गोले के पिछले हिस्से में तीनों पटल मिले रहते है।

आँख का अगला भाग काला या नीला दीखता है, पर यह काली चीज़ वास्तव मे ऊपर नहीं है। वह एक कॉच-जैसी स्वच्छ चीज़ मे से चमकती हुई दिखाई देती है। यह वही बाहरी सफ़ेद पटल है, जो आँख के अगले हिस्से मे आकर कॉच की भाँति पारदर्शी हो गया है।

इस स्वच्छ पर्दे के भीतर जो काला या नीला पर्दा दिखाई देता है, वह मध्य पटल का अगला भाग है। इसके बीचोबीच एक गोल छेद है, जो फैल और सिकुड सकता है। यही छेद पुतली या तारा कहाता है। आँख के पिछले भाग मे यह पटल भी पहले से मिल जाता है। जिस पर्दे मे यह छेद है, उसे उपतारा कहते है।

तीसरा पटल जो भीतरी है, वह आगे आकर अत्यंत पतला हो गया है, जो तारे के पीछे झिल्ली की भाँति चिपका हुआ है। उपतारा के पीछे आँख का ताल रहता है, जिसका काम वही है, जो केमरे के ताल या लेंस का है। यह वृद्धावस्था मे धुँधला हो जाता है। इसी को मोतियाबिंद कहते है। जिस प्रकार धुँधले शीशे मे प्रतिबिंब साफ़ नहीं दीखता, उसी प्रकार ताल धुँधला हो जाने पर मनुष्यों को भी कम दीखने लगता है। यह ताल मसूर के दाने की आकृति का होता है। और इसका वज़न दो रत्ती के लगभग होता है। इसके ऊपर एक गिलाफ चढ़ा रहता है। और वह एक बंधन से उपतारा-मंडल से बँधा रहता है। ताल के पीछे आँख का बड़ा कोष्ठ है। इसमें एक गाढ़ा कुछ लसदार स्वच्छ अर्ध-तरल द्रव्य भरा रहता है, जो बिल्लौर के समान है। इसका काम आँख की आकृति को ठीक रखना है।

आँख के तीनो पटल बहुत बारीक रेशों से बनाए गए है, और इस अंग मे बड़ी कारीगरी विधाता ने खर्च की है। दृष्टि-नाड़ी जिसमें लगभग ५ लाख बारीक तार होते हैं, आँख के पिछले भाग में होकर कपाल के भीतर पहुँचती है। और बृहन्मस्तिष्क के पिछले खंडों में, जहाँ दृष्टि-केंद्र है, उनका अंत होता है।

देखना

हमारी आँख से २० फ़ुट या इससे अधिक दूरी पर की चीज़ें साफ़-साफ़ दिखाई दे जाती है। इस दूरी के लिये ताल को प्रदलबदल नहीं पड़ता। परंतु नज़दीक की चीज़ों को देखने के लिये सामने के परदों उपतारा-मंडल को सिकुड़ना पड़ता है।

कुछ लोगों की दृष्टि ऐसी होती है कि २० फ़ुट से अधिक दूर की वस्तु वे नहीं देख सकते। कुछ लोग दूर की वस्तु देख सकते है, पर निकट की नहीं देख सकते। आँख का यह दोष चश्मे से दूर हो जाता है। यदि चश्मा तत्काल ही न लगाया जाय, तो रोग बढ़ जाता है।

आँखें तभी तक अच्छा देख सकती हैं, जब तक कि उनके सब अवयव और मांसपेशियाँ स्वस्थ हों। कनीनिका, जलीय द्रव, लाल और काले के बीच रहनेवाले पदार्थों में से कोई भी अस्वस्थ हो, तो देखने में फर्क आ जायगा। इसलिये आँख-जैसी नाजुक चीज को सावधानी से स्वस्थ रखनी।

यदि आप विचार-पूर्वक किसी फूल को देखें तो आप अवश्य ही उस पर मुग्ध हो जायँ। यह सृष्टि, यह धूप, यह सुंदर जगत सब कुछ उसके लिये एक ओर अवसर में हुए हैं। उसकी बराबर दुःखी जगत में कौन है? यदि आपको किसी ऐसे प्रदेश में छोड़ दिया जाय जहाँ सदैव ही अमावस की अँधियारी छा रही हो और कभी चाँदनी उसका उजाला न हो, तो आप क्या सोचेंगे? और अपने दुर्भाग्य को क्या कहेंगे? फिर वे लोग जिन्हें अपना सर्वस्व भी उपार्जन करना पड़ता है, कैसे दुःख में हैं!

नेत्रों की रक्षा

आँख मे मैल या धूल का कण गिर जाय, तो कुछ बूँद बोरिक एसिड के डालकर स्वच्छ कर लो, या स्वच्छ पानी से धो डालो।

तंबाकू और शराब आँखो के लिये अत्यधिक हानि पहुँचाते है। प्राय. तंबाकू पीनेवाले की आँखें पीली और शराब पीनेवाले की लाल रहती हैं। इन्हे ठीक-ठीक दिखाई भी नही देता है।

नेत्रो की ज्योति कायम रखने के लिये नीचे-लिखे नियम काम मे लो —

१—जहाँ काफी प्रकाश न हो, वहाँ पढने को मत बैठो। बारीक काम भी न करो।

२—पढ़ते समय रोशनी पीठ पीछे रक्खो।

३—जब देर तक पढो या ज्यादा गौर का काम करो, तो कुछ समय तक आँखो को बीच-बीच मे बंद कर लो, या खिड़की और हरियाली की ओर कुछ समय देखते रहो।

४—धूल आदि पडने पर उन्हें मलो मत, बोरिक लोशन से या साफ जल से उन्हे धो दो।

५—तौलिया-साबुन चिलमची, मुँह पोछने के कपडे न दूसरो के स्वय काम मे लो, न किसी को दो। खासकर जिनकी आँखें आई हो, उनको।

६—धुएँ से बचो। यह आँख का प्रबल शत्रु है। घर मे थोडे ही खर्च मे रसोई-घर मे चिमनियाँ बन सकती है, जो घर को धुएँ से सुरक्षित रक्खेगी।

७—यह सुर्मा बनाकर सदैव काम में लाते रहो। सुर्मा काला १ सेर, मूँगे की शाख ५ तोले, समदर-झाग ५ तोले, छोटी इलायची के दाने १ तोला, कपूर २ तोले। पिपरमेंट खुश्क एक तोला नीम के पत्तों के रस मे एक सप्ताह घोटो, सूखने पर पिपरमेंट और कपूर मिलाकर काम में लो।

कान

कान के चित्र को देखकर आप जानेंगे कि कान के तीन विभाग है—एक वह विभाग, जो बाहर दीखता है। दूसरा वह, जो बाहरी छेद है। वह केवल बीच के कान मे जाने का मार्ग है। तीसरे वह, जो भीतरी कान में शब्द जाने का मार्ग है। मध्य कान मे एक नली है, जिसका एक सिरा गले से लगा है। यदि यह नली बंद हो जाय, तो मनुष्य बहरा हो जाय। जब किसी को सर्दी होती है और नाक और गला कफ से भरा होता है, तो गला और यह नली जो कान और गले मे लगी है, फूल जाती और बंद हो जाती है। यही बहरेपन का कारण है।

जब कान और गले के मध्य की नली बिगड जाती है, तो श्रवण के भीतरी भाग में भी बिगाड हो जाता है। जब मध्य-श्रवण मे मवाद होता है, तब श्रवण-पीडा होने लगती है। जब वह बढ जाता है, तो कान की झिल्ली को दबाता और फिर छेद करके बाहर निकल आता है। इसका उपचार अन्यत्र वर्णित है।

कान की बनावट

कान की बनावट सर्प के समान है। इसमे बहुत-से उभार और दबाव है। कान के

नीचे का नरम भाग जिसे लोग कहते हैं, संतुलन और चर्बी से बना है, शेष भाग [illegible] से। इस बीच से जो गड्ढा भीतर को जाता है, वह कोई एक इंच लंबी नली है, जो भीतर [illegible] की बनी है। पर भीतर तक नली चर्म से मढ़ी हुई है, और उसमें बहुत-सी छोटी छोटी [illegible] हैं, इन्हीं में वीर्य का मैल बनता है। यह नली टेढ़ी मेढ़ी है, यदि आप की लोगों को ऊपर और पीछे की ओर खींचकर देखो, तो लगभग भीतर [illegible] देख सकता है। [illegible] समाप्त होती है, वहाँ एक सफेद रंग का पर्दा लगा रहता है। वीर्य को सींच [illegible] देने तथा कलेजी पर समाचार आदि लगने से इस पर्दे के [illegible] का [illegible] है। यह पर्दा तिरछा लगा हुआ है। इस पर्दे के पीछे [illegible] है। यह [illegible] सी कोठरी है, जो [illegible] के भीतर रहती है। इसकी [illegible] इंच और [illegible] इंच से कुछ अधिक है। इसकी भीतरी [illegible] में [illegible] एक [illegible], [illegible] यहीं पर वह छिद्र है, जहाँ से एक नली [illegible] जाती है।

आप यदि आज से [illegible] और [illegible] कर [illegible] तो आप देखेंगे कि [illegible] में [illegible] भर गया है। यह वायु है, जो [illegible] भर गई है। इसके बाद भीतरी [illegible] का भाग है। इसका [illegible] है। इसकी सभी [illegible] हड्डी से [illegible] हैं। इसकी [illegible] इसके [illegible] हैं। [illegible] है कि इसमें १० हजार से [illegible] हुई हैं। इस [illegible] है, उनमें सूक्ष्म नलियाँ [illegible] जाती हैं। [illegible] नसों से सूक्ष्म [illegible] हैं। इन [illegible] होकर सूक्ष्म की ओर जाता है, [illegible] है। [illegible] वैज्ञानिक है। [illegible] है।

शब्द की टक्कर ने हमारे कान की वायु मे लहर उत्पन्न की। कान के पर्दे मे उससे कंपन उत्पन्न हुआ। उससे मध्य कर्ण की तीनो हड्डियाँ हिलने लगी। कर्ण-कुटी मे एक तरल पदार्थ भी रहता है। उसमे अब आदोलन होने लगा। इस तरल के हिलने से सेलों पर एक विचित्र प्रभाव पडता है, जिसकी सूचना श्रावणी नाडियो द्वारा मस्तिष्क के श्रावण केंद्रों को हो जाती है। और शब्द का ज्ञान हमे हो जाता है।

ध्यान मे रखने की बात यह है कि शब्द तभी सुनाई देगा, जब कि कपन कोकले तक पहुँचे। यदि बाह्य कर्ण और मध्य कर्ण ख़राब हो गए है, तो एक घडी माथे से लगाकर या दाँतों मे दबाकर कोकले तक उसका कंपन पहुँचाया जा सकता है। दाँत या माथे की हड्डियाँ ठोस होने के कारण शब्द को अच्छी तरह पहुँचावेगी। पर यदि कोकला भी ख़राब हो जायगा, तो सुनाई कुछ न देगा।

कर्णाजलि मे मैल इकट्ठा होने से या कर्ण-पट फ़ट जाने से, या मध्य कर्ण मे पीप आदि पट जाने से या सधियाँ ढीली पड जाने से जो वृद्धावस्था मे होता है, मनुष्य को ऊँचा सुनाई देने लगत है।

कान की रक्षा

इन वर्णनों से यह स्पष्ट होता है कि कान एक अति कोमल अंग है, और उसकी रक्षा के लिये निम्न-लिखित उपाय काने उचित है—

(१) कान का मैल अति कड़ुवा है, इससे कोई कीड़ा इसमे न जायगा। अकस्मात पड जाय, तो बात दूसरी है।

कान के मैल को खुर्चकर न निकालो। यदि वह कड़ा पड जाय, और सुनने मे बाधा दे, तो ख़ास उपचार करो।

(२) कान के बाल धूल से कान को सुरक्षित रखते है। इन्हे नाई से साफ़ न कराओ।

(३) यदि कान मे कोई कीड़ा पड जाय, तो जरा-सा गर्म कडुवा तेल डालो। इससे वह या तो मर जायगा, या निकल आवेगा। तब गर्म पानी की पिचकारी दे दो।

(४) जोर से नाक न छिड़को। इससे नाक और गले के कीटे कान और गले की नसों के द्वारा कान मे प्रवेश करेंगे, जिससे बहरापन हो जायगा।

(५) बच्चों के कान पर न मारो, न कान पकडकर खींचो। इससे उनके बहरे होने का भय है।

प्रकरण ६

नासिका और जिह्वा

नासिका के दो भाग हैं— एक वह जो बाहर से दिखाई देता है, [illegible] दिखाई देता है। नाक का अगला हिस्सा नरम है, [illegible] जाता है। [illegible] मस्तिष्क के निकट है, कड़ा होता है। यदि नथुना में [illegible] उधर एक एक नली दिखाई देती है। यही नासा गुहा है। इसके बीच में एक [illegible] रहता है, जो नाक दाएँ-बाएँ बुरा रहता है।

नाक का अगला छिद्र बड़ा सिकुड़ता है। उसमें बाल उगे रहते हैं, [illegible] है। श्वास के साथ जो वायु भीतर जाती है, वह धूल आदि साथ नहीं [illegible] की श्लैष्मिक कला में रक्त अधिक रहता है। सुगन्धि और बदबू के [illegible] गुलाब होने पर, उस श्लैष्मिक कला फूल जाती है, [illegible] में छिद्र [illegible] बन्द हो जाता है। श्लैष्मिक कला में अधिक रक्त रहने का कारण यह है कि [illegible] भीतर जाय, उस को गर्मी से गर्म होकर जाय। [illegible]

नासिका के दो बड़े कार्य हैं। [illegible] वायु नाक के [illegible] में प्रवेश करती है। [illegible] प्रवेश में पहुँचती है, वहाँ से [illegible] में जाती है। [illegible] बाहर आता है। [illegible] और [illegible] का [illegible]

शब्द की टक्कर ने हमारे कान की वायु मे लहर उत्पन्न की। कान के पर्दे मे उससे कपन उत्पन्न हुआ। उससे मध्य कर्ण की तीनो हड्डियाँ हिलने लगी। कर्ण-कुटी मे एक तरल पदार्थ भी रहता है। उसमे अब आदोलन होने लगा। इस तरल के हिलने से सेलों पर एक विचित्र प्रभाव पडता है, जिसकी सूचना श्रावणी नाडियो द्वारा मस्तिष्क के श्रावण केंद्रो को हो जाती है। और शब्द का ज्ञान हमे हो जाता है।

ध्यान मे रखने की बात यह है कि शब्द तभी सुनाई देगा, जब कि कपन कोकले तक पहुँचे। यदि बाह्य कर्ण और मध्य कर्ण ख़राब हो गए है, तो एक घडी माथे से लगाकर या दाँतो मे दबाकर कोकले तक उसका कपन पहुँचाया जा सकता है। दाँत या माथे की हड्डियाँ ठोस होने के कारण शब्द को अच्छी तरह पहुँचावेगी। पर यदि कोकला भी ख़राब हो जायगा, तो सुनाई कुछ न देगा।

कर्णाजलि मे मैल इकट्ठा होने से या कर्ण-पट फूट जाने से, या मध्य कर्ण मे पीप आदि पड जाने से या सधियाँ ढीली पड जाने से जो वृद्धावस्था मे होता है, मनुष्य को ऊँचा सुनाई देने लगता है।

कान की रक्षा

इन वर्णनों से यह स्पष्ट होता है कि कान एक अति कोमल अग है, और उसकी रक्षा के लिये निम्न-लिखित उपाय करने उचित है—

(१) कान का मैल अति कड़ुवा है, इससे कोई कीड़ा इसमें न जायगा। अकस्मात पड जाय, तो बात दूसरी है।

कान के मैल को सुर्चकर न निकालो। यदि वह कडा पड़ जाय, और सुनने मे बाधा दे, तो ख़ास उपचार करो।

(२) कान के बाल धूल से कान को सुरक्षित रखते है। इन्हे नाई से साफ न कराओ।

(३) यदि कान मे कोई कीड़ा पड जाय, तो जरा-सा गर्म कड़ुवा तेल डालो। इससे वह या तो मर जायगा, या निकल आवेगा। तब गर्म पानी की पिचकारी दे दो।

(४) जोर से नाक न छिड़को। इससे नाक और गले के कीटे कान और गले की नली के द्वारा कान मे प्रवेश करेंगे, जिससे बहरापन हो जायगा।

(५) बच्चों के कान पर न मारो, न कान पकड़कर खींचो। इससे उनके बहरे होने का भय है।

प्रकरण १०

दाँत और नाखून

दाँतों के संबंध में हमने बहुत-सी आवश्यक शिक्षाएँ बच्चों के पालन के संबंध में दी हैं, कुछ सौन्दर्य के प्रकरण में भी दी हैं। यहाँ हम इतना और बतला देते हैं कि यदि दाँतों की ठीक-ठीक रक्षा न की गई, तो वे समय से पूर्व ही गिर जायेंगे, और फिर उनका उगना [illegible] पड़ी रहेगी। इसका परिणाम यह होगा कि जो दाँत अब निकलेंगे, वे टेढ़े और कमजोर होंगे।

पूरे दाँत बत्तीस होते हैं। पाँचवें से आगे वाले दाँत सोलह-सत्रह वर्ष की अवस्था तक बराबर निकलते। और जीवनान्त तक रहते हैं। नाखूनों की भाँति दाँत भी शरीर के मुख्य आवरण हैं।

दाँतों का काम भोजन को चबाना है, अर्थात् उसका सूक्ष्म कणों में पीसकर पेट में पहुँचा देना। इससे पाचन क्रिया में बड़ी भारी सहायता मिलती है। इसके सिवा दाँत बोलने में भी भारी सहायता करते हैं। [illegible] दाँतों के [illegible] हो जाता है। मनुष्यों के लिये दाँत परम आवश्यक वस्तु हैं, और दाँतों की रक्षा पर भी आयु की रक्षा निर्भर है।

है। यहाँ दो प्रकार की सेलें होती हैं। एक साधारण, दूसरी गंधज्ञ। गंध का ज्ञान तभी हो सकता है, जब गंधवत द्रव्यों के अनुघ्राणांकुरों से स्पर्श करे। इससे घ्राण-सेलों पर प्रभाव पड़ता है, उसके द्वारा वह स्पर्शानुभव मस्तिष्क के घ्राण-केंद्र को जाता है, तब हमें गंध का बोध होता है।

जिह्वा

जो कुछ भी हम खाते हैं, उसका स्वाद तो जीभ ही द्वारा मिलता है। इसके सिवा जीभ के ही द्वारा हम बोलते-चालते भी हैं। भोजन को भली भाँति चबाने और गोला करने में भी उससे हमें बड़ी सहायता मिलती है। जब कोई चीज दाँतों में अड़ जाती है, तब वही उसे छुड़ाती है।

जीभ का अगला भाग पतला और नोकीला होता है तथा जड़ मोटी और चौड़ी। उसका रंग गुलाबी होता है। यदि शरीर में रक्त की कमी हो, तो रंग फीका रहेगा। यदि अजीर्ण होगा, तो वह मैली रहेगी, तथा मुँह से दुर्गंध आवेगी।

जीभ मांस से बनी है। मांस पर मोटी श्लैष्मिक कला चढ़ी है। वह कई पेशियों द्वारा अधोहन्वस्थि शिफा प्रवर्धन और कठास्थि से जुड़ी रहती है। वह जिस मांस से बनी है, वह संकोचशील है। इससे वह सिकुड़ तथा बड़ी-चौड़ी और पतली हो सकती है।

यदि आप जीभ को गौर से देखें, तो उस पर पतले-पतले दाने आपको देखने को मिलेंगे। ये दाने सौत्रिक तंतु, नाड़ी-सूत्र और रक्त-केशिकाओं के इकट्ठे होने से बने हैं। इन पर सेलों की कई तह हैं। जिह्वा की जड़ में ९-१० बड़े-बड़े दाने हैं, ये दो पंक्तियों में हैं, जो पीछे जाकर मिलकर एक बृहत् कोष बनाते हैं। प्रत्येक दाने के चारों ओर एक खाई होती है। इसकी दीवारों में दबे हुए छोटे-छोटे बहुत-से सेल-समूह होते हैं, ये ही स्वाद-कोष हैं। प्रत्येक अंकुर में कोई ढेढ़ सौ स्वाद-कोष हैं। दूसरे प्रकार के दाने जीभ के किनारों और अग्र भाग पर रहते हैं, इनमें भी स्वाद-कोष होते हैं। जीभ के अग्र भाग, मूल तथा किनारों पर स्वाद पहचानने की शक्ति अधिक होती है, शेष में स्पर्श-ज्ञान अधिक होता है।

किसी वस्तु का स्वाद तभी पहचाना जा सकता है, जब वह घुली हुई दशा में हो। मुँह में से बहुत-सी लार निकलकर आपके मुँह की वस्तु को घोल देती है। जब उसके अणु रसज्ञ सेलों से टकराते हैं, तब उसकी सूचना नाड़ी तारों द्वारा मस्तिष्क के स्वाद-केंद्र को पहुँचती है। जिह्वा के पिछले ⅓ भाग से ये तार जिह्वा कंठ नाड़ी द्वारा मस्तिष्क में पहुँचते हैं। अगले ⅔ भाग के तार गसनिक नाड़ी द्वारा मस्तिष्क को जाते हैं। दोनों नाड़ियों के तार स्वाद-केंद्र में पहुँचते हैं।

मीठा रस जीभ के अग्र भाग से, खट्टा किनारों से, चरपरा जिह्वा-मूल से अच्छी तरह जाना जाता है, शेष इन्हीं प्रत्येक भाग से जाने जाते हैं।

४—मुख या दाँतन से ज़रा-सा ख़ून भी निकले, तो चिंता न करो। इससे मसूढ़े मज़बूत होंगे। पर मसूढ़ों को अधिक अनादीपन से मत रगड़ो।

५—प्रतिदिन प्रातःकाल ज़रा-सा नमक और सरसों का तेल उँगली से दाँतों पर घिस लिया करो।

६—जब कोई दाँत खोखला होने लगे, तो उसे तुरन्त निकलवा डालो, या उसे भरवा लो।

७—तालाब आदि का कच्चा पानी दाँत साफ़ करने के लिये उपयुक्त नहीं, इससे भिन्न भिन्न रोगों के प्रभाव होने का भय है।

८—नीचे लिखा मंजन नित्य इस्तेमाल करने के लिये अति उत्तम है

सोंठ, गुलाब फिटकरी का चूर्ण, बादाम के छिलके का कोयला, सेंधा नमक इन सबको भुना हुआ जौंहा, इन्हें बारीक पीस-छानकर मंजन बनाया जा सकता है।

रोगी दाँत

जो लोग दाँतों को नित्य सावधानी से साफ़ नहीं करते, उन्हें उनका ज़रा-सा मैल खुर्च कर देखना चाहिए कि वह कितना दुर्गंधित है और इतनी दुर्गंधि को दाँतों में रखना कितना घृणास्पद है। बहुधा दाँत सड़ जाते हैं, हिलने लगते हैं, फिर भी उन्हें नहीं निकाला जाता। एक-एक सड़े दाँत में लाखों कीड़े उत्पन्न होते और वे भोजन खाने के समय उनमें मिलकर पेट में चले जाते हैं। वहाँ से ये आमाशय और आँत में चले जाते हैं। और रस को, जो भोजन का बना है, खट्टा कर देते हैं। फलतः अजीर्ण, संग्रहणी और मंदाग्नि के रोग हो जाते हैं।

ये कीड़े दाँत से गले की कौड़ियों में और नाक तथा कान एवं फेफड़े तक पहुँच जाते हैं और इन अंगों में भी रोग उत्पन्न कर देते हैं।

जब किसी के दाँत रोगी हो जाते हैं, तब श्वास के साथ दाँत से विषैली वायु मिल जाती है। और यह विषैली वायु फेफड़े में मिलकर न केवल उसमें रोग उत्पन्न करती है, परंतु रक्त में प्रविष्ट होकर संपूर्ण शरीर के लिये हानिकर हो जाती है।

क्षय और संग्रहणी में चिकित्सक का मुख्य काम यह है कि रोगी के दाँतों को उत्तम दशा में रक्खे, और सावधानी से साफ़ करावे। सड़े हुओं को निकाल दे। यदि यह नहीं किया जायगा, तो चाहे भी जैसा पुष्टिकर भोजन हो, रोगी को पुष्ट न कर सकेगा।

दाँत सड़ने का कारण

भोजन के जो कण चबाते समय रह जाते हैं, वे दाँतों में सड़कर दाँतों को ख़राब कर देते हैं। जब एक दाँत सड़ने लगता है, तो उसके निकटवर्ती दाँत भी कुछ दिन में सड़ने लगते हैं। जैसे आम जब एक सड़ता है, तो वह औरों को भी सड़ाता है।

ये भोजन के कण दाँतों के बीच मसूड़ों या दाँतों की सतह के छेदों में अटक जाते हैं और जैसे ही कीड़े मसूड़ों के किनारों में उत्पन्न होने लगते हैं, मसूड़े ढीले पड़ने लगते हैं, दाँतों की जड़ें खुलने लग जाती हैं। और कीड़े इनमें अपना मार्ग बना लेते और बढ़ते तथा पीब उत्पन्न करते हैं। यदि इस दशा में कोई ठंडी या गर्म चीज़ खाई जाय, तो दाँत दुखते हैं और अंत में धीरे-धीरे हिलने लगते और निकम्मे हो जाते हैं।

पान खाने से भी दाँतों का सत्यानाश हो जाता है। यह विषय हम पान के प्रकरण विस्तार से कहेंगे।

दाँतों की रक्षा कैसे की जाय ?

१—जितनी बार कुछ खाओ-पिओ, उतनी ही बार दाँतों को स्वच्छ करो।

२—प्रातःकाल और रात्रि को सोती बार ख़ास तौर पर मंजन, दाँतन और ब्रुश से जब सुभीता हो, अच्छी तरह शुद्ध करो।

३—यदि भोजन के कण दाँतों में अटक जायें, तो उन्हें अच्छे प्रकार निकाल दो। और यदि दाँतन काम करने की जरूरत हो, तो लकड़ी की चीरकर बना लो, धातु की न इस्तेमाल करो।

४—मुख या दाँतन से ज़रा-सा खून भी निकले, तो चिंता न करो। इससे मसूढ़े मज़बूत होंगे। पर मसूढ़ों को अधिक अनाड़ीपन से मत रगड़ो।

५—प्रतिदिन प्रातःकाल ज़रा-सा नमक और कड़ुआ तेल उँगली से दाँतों पर घिस लिया करो।

६—जब कोई दाँत खोखला होने लगे, तो उसे तकलीफ़ निकलवा डालो, या उसे भरवा लो।

७—तालाब आदि का कच्चा पानी दाँत साफ़ करने के लिये उपयुक्त नहीं, इससे भिन्न-भिन्न रोगों के प्रभाव होने का भय है।

८—नीचे लिखा मंजन नित्य इस्तेमाल करने के लिये अति उत्तम है—

आवाहल्दी, गलाबी फिटकरी का फूला, बादाम के छिलके का कोयला, सेंधा नमक और सफ़ेद भुना हुआ फीता, इन्हें बारीक पीस-छानकर मंजन बनाया जा सकता है।

रोगी दाँत

जो लोग दाँतों को नित्य सावधानी से साफ नहीं करते, उन्हें उनका ज़रा-सा मैल खुर्च कर देखना चाहिए कि वह कितना दुर्गंधित है और इतनी दुर्गंधि को दाँतों में रखना कितना घृणास्पद है। बहुधा दाँत सड़ जाते हैं, हिलने लगते हैं, फिर भी उन्हें नहीं निकाला जाता। एक-एक सड़े दाँत में लाखों कीड़े उत्पन्न होते और वे भोजन खाने के समय उनमें मिलकर पेट में चले जाते हैं। वहाँ से ये आमाशय और आँत में चले जाते हैं। और रस को, जो भोजन का बना है, खट्टा कर देते हैं। फलतः अजीर्ण, संग्रहणी और मंदाग्नि के रोग हो जाते हैं।

ये कीड़े दाँत से गले की कौड़ियों में और नाक तथा कान एवं फेफड़े तक पहुँच जाते हैं और इन अंगों में भी रोग उत्पन्न कर देते हैं।

जब किसी के दाँत रोगी हो जाते हैं, तब श्वास के साथ दाँत से विषैली वायु मिल जाती है। और यह विषैली वायु फेफड़े में मिलकर न केवल उसमें रोग उत्पन्न करती है, परंतु रक्त में प्रविष्ट होकर संपूर्ण शरीर के लिये हानिकर हो जाती है।

क्षय और संग्रहणी में चिकित्सक का मुख्य काम यह है कि रोगी के दाँतों को उत्तम दशा में रक्खे, और सावधानी से साफ करावे। सड़े हुओं को निकाल दे। यदि यह नहीं किया जायगा, तो चाहे भी जैसा पुष्टिकर भोजन हो, रोगी को पुष्ट न कर सकेगा।

दाँत सड़ने का कारण

भोजन के जो कण चबाते समय रह जाते हैं, वे दाँतों में सड़कर दाँतों को ख़राब कर देते हैं। जब एक दाँत सड़ने लगता है, तो उसके निकटवर्ती दाँत भी कुछ दिन में सड़ने लगते हैं। जैसे आम जब एक सड़ता है, तो वह औरों को भी सड़ाता है।

ये भोजन के कण दाँतों के बीच मसूड़ों या दाँतों की सतह के छेदों में अटक जाते हैं। और जैसे ही कीड़े मसूड़ों के किनारों में उत्पन्न होने लगते हैं, मसूड़े ढीले पड़ने लगते हैं। दाँतों की जड़ें खुलने लग जाती हैं। और कीड़े इनमें अपना मार्ग बना लेते और बढ़ते तथा पीब उत्पन्न करते हैं। यदि इस दशा में कोई ठंडी या गर्म चीज़ खाई जाय, तो दाँत दुखने हैं और अंत में धीरे-धीरे हिलने लगते और निकम्मे हो जाते हैं।

पान खाने से भी दाँतों का सत्यानाश हो जाता है। यह विषय हम पान के प्रकरण में विस्तार से कहेंगे।

दाँतों की रक्षा कैसे की जाय ?

१—जितनी बार कुछ खाओ-पिओ, उतनी ही बार दाँतों को स्वच्छ करो।

२—प्रातःकाल और रात्रि को सोती बार ख़ास तौर पर मंजन, दाँतन और ब्रुश से जैसा सुभीता हो, अच्छी तरह शुद्ध करो।

३—यदि भोजन के कण दाँतों में अटक जायें, तो उन्हें अच्छे प्रकार निकाल दो। और यदि कुछ दाँतन करने की जरूरत हो, तो लकड़ी की चीरकर बना लो, धातु का न इस्तेमाल करो।

४—ब्रुश या दाँतन से ज़रा-सा ख़ून भी निकले, तो चिंता न करो। इससे मसूढ़े मज़बूत होंगे। पर मसूढ़ों को अधिक अनावृत्त से मत रगड़ो।

५—प्रतिदिन प्रातःकाल ज़रा-सा नमक और कड़ुवा तेल उँगली से दाँतों पर घिस लिया करो।

६—जब कोई दाँत खोखला होने लगे, तो उसे तत्काल निकलवा डालो, या उसे भरवा लो।

७—तालाब आदि का कच्चा पानी दाँत साफ़ करने के लिये उपयुक्त नहीं, इससे भिन्न भिन्न रोगों के प्रभाव होने का भय है।

८—नीचे लिखा मंजन नित्य इस्तेमाल करने के लिये अति उत्तम है

सायाम्बी, गुलाबी फिटकरी का फला, बादाम के छिलके का कोयला, सेंधा नमक और सफ़ेद भुना हुआ जौ, इन्हें बारीक पीस छानकर मंजन बनाया जा सकता है।

प्रकरण ११

पुरुष-जननेंद्रिय और उसकी रक्षा

जननेंद्रिय की उपयोगिता

जननेंद्रिय के ही आधार पर प्राणी-जगत् का अथक प्रवाह जारी है। इसके दो विभाग हैं। एक स्त्री का एक पुरुष का। इस अध्याय मे हम पुरुष-जननेंद्रिय का वर्णन करते हैं।

यह कैसा अद्भुत और महान् यंत्र है कि जिसकी शक्ति मे ब्रह्माड के चराचर जीव अवश और मुग्ध की भाँति पाश-बद्ध है। इसकी बनावट भी ऐसी ही विचित्र है। इसी की बदौलत दया, प्रेम, द्वेष, क्षमा, शांति इस पृथ्वी-तल पर है। वनवासी मुनि, प्रतापी राजा, महलो मे निवास करने-वाली रानियाँ और कुटिया-वासी दरिद्र एवं क्षुद्र कीट-पतंग सभी इसके वश में न-जाने कितने करोड़ वर्षों से हैं।

परंतु खेद की बात है कि मनुष्य-जाति ने इस महत्त्व-पूर्ण इंद्रिय का ऐसी मूर्खता से उप-योग किया है कि वह इसके उप-योग के आनंद में साधारण प-शुओ तक से अत्यंत गिर गई है।

पुरुष-जननेंद्रिय की आकृति

वस्ति की दोनो अना-मिका जहाँ मिली है, उसके उपर के प्रशस्त अंश को जन-नेंद्रिय की भूमि कहते हैं। यहीं से जननेंद्रिय का प्रारंभ होता है। इसके तीन मुख्य विभाग हो सकते हैं। (१) मूल (२) देह (३) मुंड।

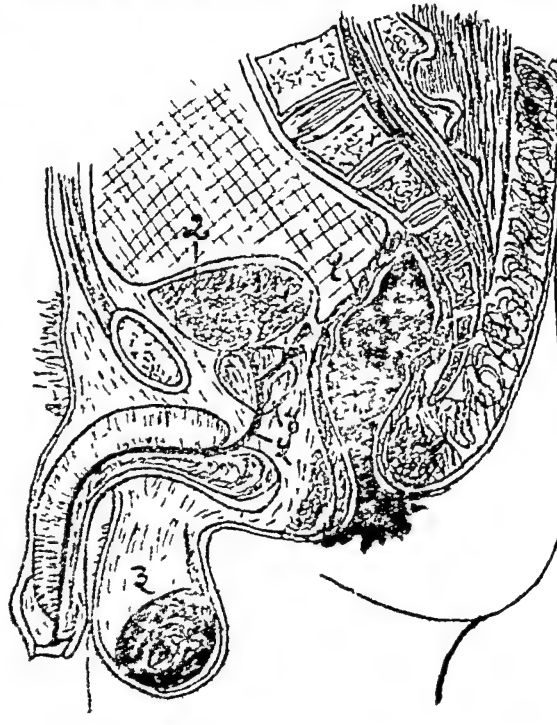

पुरुष-जननेंद्रिय

१ मलाशय, २. मूत्राशय, ३ अंडकोष, ४. अंडीला, ५. मूत्र-मार्ग।

मूल भाग दो प्रवर्द्धन से दोनों शाखा और एक संधनी से वस्ति के साथ संयुक्त है। ऊपरवाले भाग को लिंग-मुंड तथा बीच के भाग को देह के नाम से पुकारा गया है।

जननेंद्रिय अनेक उत्थानशील तंतुओं से बनी है। इन तंतुओं के भीतर अनेक छोटी-छोटी नली होती है। चैतन्य होते ही इन सब रक्त-नलियों में रक्त बड़े वेग से दौड़ने लगता है। इसी से जननेंद्रिय उत्तेजित हो जाती है। मुंड-भाग में जो छिद्र है, इसमें मूत्राशय से आकर मूत्र-नली प्रारंभ हो गई है। इसी बीच की नली के द्वारा वीर्य भी आगे में निकल हो जाता है। इन शिश्न की इंद्रिकाओं का लिंग-मुंड से कोई संबंध नहीं है। वह एक पृथक् वस्तु है। वे लिंग-मुंड की जड़ में समाप्त हो जाती है, और लिंग मुंड उन पर टोपी की भाँति चढ़ा हुआ है। मूत्र-इंद्रिका ही आगे आकर फूल जाती है और वही लिंग-मुंड बनाती है।

लिंग-मूल में आकर ये सीधी नलियाँ अलग अलग हो जाती है। इनके सिरे नोकीले होते है। यह नोकीला भाग पश्चिमी ओर की तिर्यक्दिशि से जुड़ा रहता है। इनके पिछले भाग पर शिश्न-ग्रंथियाँ पेशी लगी रहती है। इसी का यह काम है कि जो रक्त धमनी द्वारा लिंग-इंद्रिका में पहुँच गया—वह धीरे-धीरे पर लिंग द्वारा लौट नहीं सकता, वहीं रुका रहता है। मूत्र-इंद्रिका मूत्र वेग से ही रहती है। पर पानी का भाग अधिक सोख ही जाता है। इसी पर शिश्न-ग्रंथिका पेशी लगी रहती है। यह पेशी लगी रहने पर शिश्न-इंद्रिकाओं से रक्त और शिश्नावरण कला से भी रक्त रुका रहता है। इसी से संकोच से मूत्र-मार्ग रुक से खुला भरा नहीं रहता। जब संकोच होता है, तभी इस पेशी का संकोच होता है। इसके संकोच के पीछे शिश्न-कला पर पेशी लगी रहने से, तो इस पेशी का संकोच आकुल हो जाता है। इसी पेशी के संकोच से लिंग में दृढ़ता आती है।

तीनों दंडों की बनावट एक-जैसी है। ये सफ़ेद और पीले रंग के सूक्ष्म तंतुओं से बने हैं। इन्हीं तंतुओं में कुछ अनैच्छिक मास भी रहता है। इन दंडों के भीतर छोटे-छोटे आशय या कोष हैं, जिनकी दीवारें सूक्ष्म तंतुओं और मांस से बनी हैं। उत्तेजना के समय इन्हीं में रक्त भर जाता है। जिस प्रकार रबर की थैली पानी भर जाने पर ख़ूब सख्त हो जाती है, उसी प्रकार इन आशयों में रक्त बहने से शिश्न मोटा और दृढ हो जाता है। जब मैथुन-क्रिया समाप्त

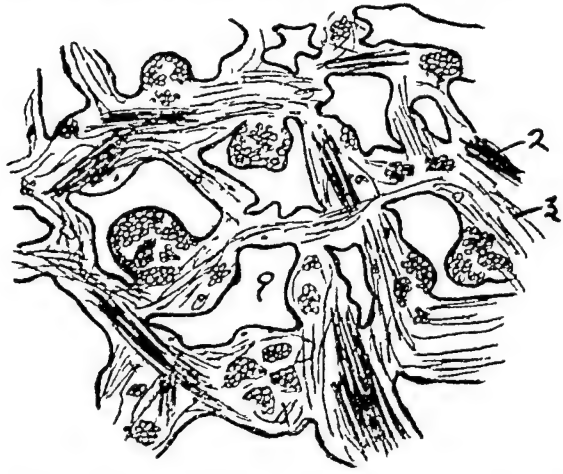

शिश्न-दंडिका की सूक्ष्म रचना सूक्ष्मदर्शक यंत्र द्वारा बढ़ाई हुई
१. आशय, २ मास, ३ सौत्रिक तंतु।

हो जाती है, तब रक्त शिरा द्वारा लौट जाता है। और ख़ाली रबर की थैली की भाँति शिश्न ढीला हो जाता है। यदि आप ताज़े वीर्य को एक काँच के गिलास में रख दें, तो उसकी दो तह आपको देखने को मिलेंगी। ऊपर की तह पतली, अपारदर्शी, दही के तोड के समान द्रव की तथा नीचे की तह गाढ़े सफ़ेद रंग की। वीर्य में जितने शुक्र-कीट थे, वे नीचे बैठ गए, ऊपर की तह में जल-तरल और टूटी-फूटी सेलें रह गई हैं। ये शुक्र-कीट जल में ज़िंदा नहीं रह सकते। अम्ल रस में भी तत्काल मर जाते हैं। ये कीट १५-१६ वर्ष की आयु में बालक में बनना प्रारंभ होते हैं और २५ वर्ष की आयु में ख़ूब पुष्ट हो जाते हैं।

अंडकोष

ये दो अंडिमय यंत्र हैं। इन्हीं से पुरुष का वीर्य बनता है। यह मुष्क-नामक दो चमड़े की थैली में रक्खे हैं। इनमें वस्ति से दो वीर्य-रज्जु आते हैं, इनमें अवलंबित हैं। साधारणतः प्रत्येक अंड १½ इंच बड़ा होता है। इसका सम्मुख पश्चात् भाग १½ इंच और अनुप्रस्थ अंश ३-४ से १ इंच तक होता है। वजन ३-४ से १ औंस तक। दोनों में एक ज़रा बड़ा होता है।

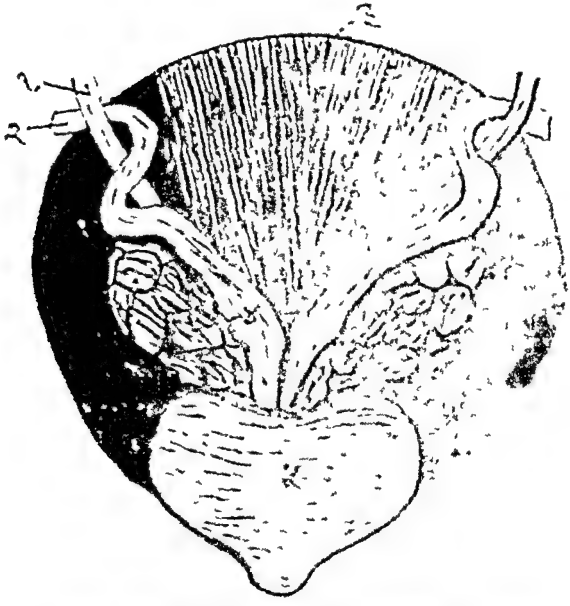

मूत्राशय का [illegible]

१ मूत्र प्रणाली।

२ मूत्र प्रणाली।

३ मूत्राशय।

४ मूत्राशय।

५ [illegible] (प्रोस्टेट)

[illegible]

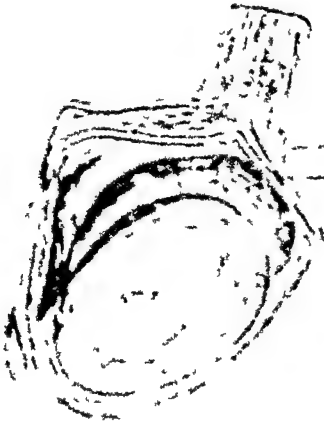

[illegible]

१ [illegible] २ [illegible]

३ [illegible]

हैं, प्रत्येक गोली के दो सिरे, दो किनारे और दो पार्श्व है। ये कुछ तिरछी लटकी रहती है। ऊपर का सिरा कुछ आगे को और बाहर की ओर, और नीचे का पीछे को मध्य रेखा की ओर होता है। इसके पीछे के किनारे से एक लंबा-पतला और चपटा पिंड लगा रहता है, इसे उपाड कहते हैं। अंड और उपांड एक झिल्ली द्वारा ढका रहता है। इस झिल्ली की दो तह होती हैं। इसके सामने का भाग चिकना होता है, और कुछ गीला रहता है। इन्हीं दो तहो के बीच जल एकत्र होने से अंड बडा मालूम देता है, जिसे कहते हैं कि पानी उतर आया है।

शुक्र-ग्रंथि मे लगभग ३०० छोटे-छोटे कोष होते हैं। इन कोषों में बाल-जैसी पतली नलियाँ रहती हैं। इन नलियों की सख्या ८००-९०० के लगभग है, जो सौत्रिक तंतु द्वारा मिली रहती है। ये सब नलियाँ मुड़ी हुई रहती है। यदि सबको सीधा किया जाय, तो लगभग पौन मील लंबी हो सकती हैं। ग्रंथि के अगले भाग से आरंभ होकर नलियाँ पिछले किनारे की ओर जाती हैं। ज्यों-ज्यों वे पीछे की ओर जाती हैं, एक दूसरे से जुडती रहती हैं, जिसके कारण ग्रंथि के पिछले भाग में एक जाल-सा बनता जाता है। इस जाल से कोई २०-२५ बडी-बड़ी नलियाँ आरंभ होती हैं, और ग्रंथि से बाहर निकलती है। ये बहुत मुडी होती हैं, इन्हीं से उपांड का शिरोभाग बनता है। उपांड के सिर पर इन नलियों से एक बडी नली बनती है, जिसको शुक्र-प्रनाली कहते हैं। यह बहुत मोड़ खाती हुई अंड के पिछले भाग तक पहुँची है। यदि इसे सीधा लंबा किया जाय, तो २० फ़ुट के लगभग लंबी होती है। शुक्र-ग्रंथि की नलियों में ही शुक्र बनता है।

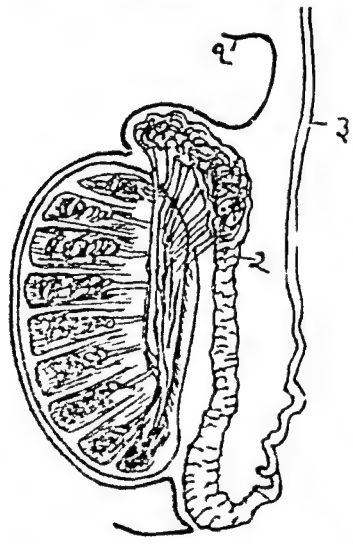

अंड और उपांड की रचना
१ अंड-वेष्ट, २ उपांड,
३ शुक्र-प्रनाली।

इसी शुक्र-प्रनाली, उसकी धमनी, अंड की धमनी तथा कई एक शिराओं की एक रस्सी के सहारे अंड लटका रहता है। शुक्र-प्रनाली, शिराएँ और लसीका-वाहिनियाँ अंड से आरंभ होकर उदर में चली जाती है। धमनियाँ और नाडियाँ उदर से अंड में आती हैं।

इस प्रनाली में जो वीर्य बनता है, वह शुक्र-कोष में एकत्रित होता है। ये दो थैलियाँ हैं, जो वस्ति-गह्वर में मूत्राशय के पिछले भाग में लगी रहती हैं। इनके पीछे मलाशय रहता है। शुक्र-कोष की लंबाई २-३ इंच होती तथा वह भिन्न-भिन्न पुरुषों में छोटा और बड़ा होता है। इसके अंत पार्श्व से शुक्र-प्रनाली लगी रहती है। जहाँ शुक्र-प्रनाली शुक्र-कोष में

जुड़ी है, वहीं से एक पतली नली का प्रारंभ होता है, इसे शुक्र-स्रोत कहते हैं। यही शुक्र-स्रोत प्रोस्टेट ग्रंथि के भीतर घुसकर मूत्र-मार्ग खोलता है।

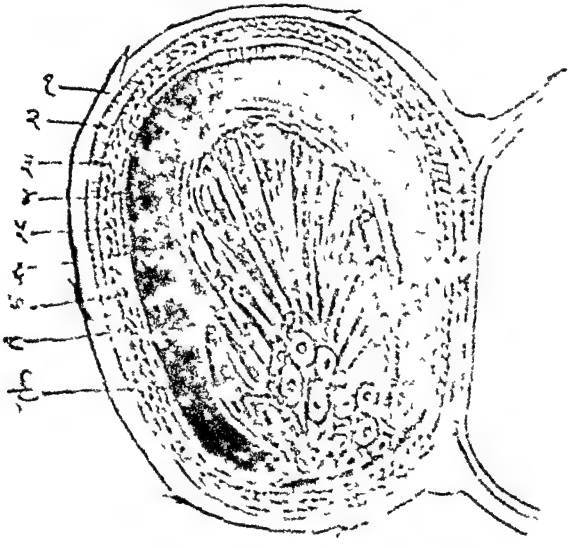

१ [illegible]।
२ [illegible]।
३-४-५ [illegible] वेसिका के [illegible]।
६ [illegible] का [illegible]।
७ [illegible] का [illegible]।
८ [illegible] का [illegible]।
९ [illegible]।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

है। उनका सिर मोटा तथा पूँछ पतली होती है। सिर की मोटाई एक इंच का ६ हज़ारवाँ भाग होता है।

ये शुक्र-कीट शुक्र-तरल में तैरते दीखते हैं। निर्बल कीट धीरे-धीरे और शक्तिवान् ख़ूब तेज़ी से। एक ही पुरुष के वीर्य में कभी ये कीट कम और कभी अधिक दीख पडते हैं। कई पुरुषों के वीर्य में ये कीट होते ही नहीं। वे पुरुष मैथुन कर सकते हैं, पर संतानोत्पादन नहीं कर सकते। एक बार मैथुन करने में जितना वीर्य निकलता है, उसमें २० करोड से अधिक ये जंतु होते देखे गए है।

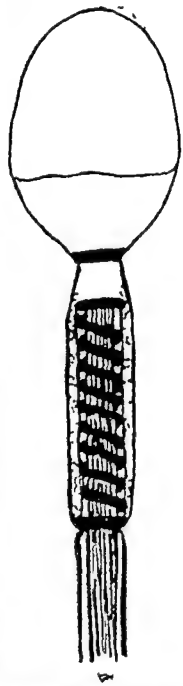

शुक्र कीट परिवर्धित

जननेंद्रिय की रक्षा

जब लडका १५-१६ साल की आयु का हो जाता है, तब उसके शरीर में परिवर्तन आरंभ होता है। परंतु इस आयु में यद्यपि उसने युवावस्था प्रारंभ की है, परंतु अभी पुरुषत्व को प्राप्त करने के लिये और ८ वर्ष की कमी है। ठीक पुरुषत्व तो २४ वर्ष की आयु में ही उसे प्राप्त होता है और वह पिता बनने के पूर्ण योग्य होता है।

यौवन का आगम

जब लडके यौवन में प्रवेश करते हैं, तब उनमें यह परिवर्तन होने लगता है कि बगल और पेडू पर बाल जमने लगते है, ध्वनि बदल जाती है। लिंगेंद्रिय बढ़ जाती है, अंडकोष में वीर्य उत्पन्न होने लगता है।

इस समय माता-पिता यदि लडके की सावधानी से रक्षा न करें, तो उसका चरित्र भ्रष्ट हो जाना बहुत संभव है। १६ से २५ वर्ष तक लड़के को सदैव परिश्रम और काम में लगाए रक्खें, कुसंगति से उसे बचावें। ईश्वर-चिंतन और प्राणायाम का अभ्यास करावें, उत्तम पुस्तकें पढ़ने को दें, एकांत में न रहने दें, वृद्धों की संगति करावें।

स्वप्न-स्राव

नवयुवक अविवाहित युवा पुरुष के शरीर में संचित वीर्य १०-१५ दिन के अंतर से रात्रि में सोते के समय निकल जाता है। कभी-कभी महीने में एक बार और कभी २-३ मास में एक बार भी ऐसा होता है। कभी कुछ स्वप्न भी दीखता है। यह स्वाभाविक घटना है, इससे चिंतित न होना चाहिए, न अखबारी विज्ञापनों की दवा खानी चाहिए। अलबत्ता यदि यह घटना १० दिन से पूर्व हो और दूसरे दिन सिरदर्द या थकावट प्रतीत हो, तो सुयोग्य वैद्य से सलाह लेनी चाहिए।

संयम से रहना और खराब आदतों से बचना वीर्य-रक्षा करने का साधन है।

कुटेव

बच्चों को नंगा रखने, उनकी जननेंद्रिय को साफ न करने आदि से बालक अपनी जननेंद्रिय से खेलने लगता है या मसलने लगता है। पीठ पर लेने या गोद में लेने से भी उसमें रगड़ लगती है, इससे बालक बड़ा होने पर हस्त-क्रिया की कुटेव सीख जाता है। घर व पाठशाला के बालक भी उसे यह कुकर्म सिखा देते हैं।

सावधानी से बच्चे की जननेंद्रिय को साफ रखो। यदि उसमें मैल जम जाता, तो वह अवश्य उसे मसलने या खुजाने लगेगा। यदि वह बारबार खुजाये या मसले, तो उचित है कि उसका खतना करा दिया जाय।

कुटेव होने से बालक जितना वीर्य नष्ट किया करता है, उतना वीर्य अपने शरीर का रक्त फाड़कर फेंकता है। कुटेव से एक बार में जितना वीर्य जाता है, उसका नाश ३ बार रक्त फाड़ने के बराबर है। यदि किसी में यह रक्त फट गई है, तो उससे उसे खुजाने का उत्तम रास्ता पकड़ देना है।

प्रकरण १२

स्त्री-जननेंद्रिय और उसकी रक्षा

स्त्री-जननेंद्रिय की विशेषता

आश्चर्य की बात तो यह है कि जननेंद्रिय की विचित्र क्रिया मे पुरुष और स्त्री दोनो समान भाग मे सहभागी होते है। पर मुख्य परिणाम स्त्री के ऊपर पडता है। स्त्री के ही उदर मे रक्षित होकर बालक का जीवन प्रारभ होता है। और स्त्री के ही शरीर मे २८० दिन तक वह रहता भी है। फिर १½-२ वर्ष तक वह माता ही पर दूध पीकर निर्भर रहता है। दूध छुट जाने पर भी वह कई वर्ष तक माता की रक्षा मे पोषित होता रहता है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि इस दृष्टि से माता का महत्त्व पुरुष की अपेक्षा अधिक है।

परतु हमें फिर खेद प्रकट करना पडता है कि घर के काम-काज, अविद्या, अज्ञान और अनेक प्रकार के प्रपचो मे रहकर स्त्रियो का शरीर और स्वास्थ्य सर्वथा नष्ट कर दिया जाता है। वे कदन्न खाती और अति गदी रहती तथा अल्पकाल मे ही वृद्धा हो जाती है।

स्त्री-जननेंद्रिय का आकार

स्त्री-जननेंद्रिय के अवयवो में दो मुख्य हैं। स्त्री-अंड-फल-कोष और दूसरा गर्भाशय। फल कोष दो छोटी-छोटी गोलाकार वस्तुएँ हैं। वे उदर के निचले भाग में है। फल-कोष में छोटे-छोटे दाने उत्पन्न होते है, जो १ इंच मे १२० समा जाते हैं।

फलवाहिनी नली ४-५ इच लबी होती है। और एक छोर पर गर्भाशय से जुडी रहती है। दूसरा इसका छोर फल-कोष तक गया है। इसी के द्वारा दाना फल-कोष से गर्भाशय में आता है। यह बात हम गर्भाधान-प्रकरण मे विस्तार से बताऐंगे।

स्त्री-जननेंद्रिय की बनावट

भग, भगांकुर, योनि, भगोष्ठ, जरायु, अंडाधार आदि सब मिलकर स्त्री-जननेंद्रिय कहाते है। यह अंत और बाह्य दो विभागो में विभक्त है। इसमे भग, भगांकुर, बृहदोष्ठद्वय, क्षुद्रोष्ठद्वय, कामाद्रि, प्रसवद्वार, सतीच्छद, योनि आदि बाह्य जननेंद्रिय तथा अंडाधार, डिंबवाही नली (दोनो) और जरायु ये तीन अंतर्जननेंद्रिय कहाती है। दोनो स्तनो का इससे घनिष्ट सबध है।

कामाद्रि

भग के ऊपरी अंश को कहते हैं। युवावस्था में यहाँ लोम उत्पन्न हो जाते हैं।

योनि

यह एक नलाकार गह्वर है, जो जरायु से भग तक फैला है। इसका नीचे का अंश

संकीर्ण और ऊर्ध्व प्रसारित है। योनि के सामने [illegible] और प्रस्रव-द्वार, पीछे [illegible] पेशि, दोनों तरफ प्रशस्त दो [illegible] और उपर [illegible] से संयुक्त है।

बृहदोष्ठद्वय

दोनों बृहदोष्ठ योनि-मुख के दोनों तरफ स्थित हैं। इसका बहिर्देश [illegible] और अन्यतर भाग [illegible] झिल्ली से आवृत है। बचपन में ये दोनों ओर भीतर से परस्पर मिले रहते हैं। पुरुषत्व से पृथक हो जाते हैं।

नारी-जननेन्द्रिय

क्षुद्रोष्ठद्वय

बृहदोष्ठद्वय के भीतर दोनों क्षुद्रोष्ठ हैं। दोनों तरफ के क्षुद्रोष्ठ भगनासा के पास आकर दो विभाग में विभक्त हो जाते हैं।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

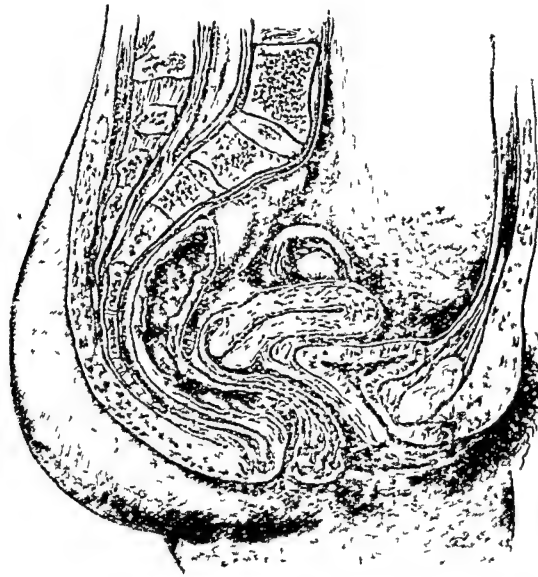

१ डिंब-प्रणाली
२ डिंब-ग्रंथि
३ गर्भाशय
४ मूत्राशय
५ कामांदि
६ भगनासा
७ मूत्रबहिर्द्वार
८ योनि-द्वार
९ मलद्वार
१० गर्भाशय व बहिर्मुख

गर्भाशय—लंबाई के रुख कटा हुआ

स्तन

यद्यपि दोनो स्तनों का प्रत्यक्ष जननेंद्रिय से कुछ भी संबंध नहीं दीखता है, परंतु वास्तव में स्तनों का जननेंद्रिय से गहरा संबंध है।

ये दो गिल्टियाँ छाती पर दोनो ओर होती है। मर्दों और छोटी लड़कियों की ये गिल्टियाँ बहुत छोटी होती हैं। मर्दों की तो बड़े होने पर वैसी ही रहती है, पर स्त्रियों की युवावस्था होने पर बढ़ जाती है। किन्हीं-किन्हीं स्त्रियों के स्तन बहुत ही बड़े होते हैं। प्रत्येक स्तन में १८-२० पृथक्-पृथक् गिल्टियाँ होती है। ये छोटी गिल्टियाँ महीन थैलियों की बनी होती हैं, जिनमें यह तासीर है कि वे खून का दूध बना देती हैं। इन थैलियों से बारीक नलियाँ पेंच और मुरेर खाकर एक दूसरे से मिल जाती हैं। अंत मे सब की एक नली हो जाती है, जिनमें दूध भरा रहता है। यह हौज़ ऊपर बंद हो जाता है, ऊपर की घुंडी मे बहुत-से महीन छेद फव्वारे की भाँति के होते है, जिनसे दूध निकलता है। गर्भ के दिनो में छातियाँ बढ़ जाती है। बाँझ स्त्रियों की छातियाँ नहीं बढ़तीं। प्रसव के बाद वे शिथिल हो जाती है।

स्त्री-जननेंद्रिय की रक्षा

१० से १४ वर्ष की अवस्था में स्त्रियों में यौवन का उदय होता है, और १८ वर्ष की आयु में वे स्त्री होने अर्थात् बच्चा पैदा करने के योग्य हो जाती हैं।

प्रत्येक माता को उचित है कि वह कन्या को जननेन्द्रिय के संबंध में साधारण बातें बता दे। बहुधा इस विषय में अज्ञान रहने से लड़कियाँ अनेक कुटेव कर बैठती हैं।

कन्या चाहे भी कितनी छोटी हो, उसके नाभि के नीचे के अंग अच्छी तरह धोकर स्वच्छ रखने चाहिए। नहीं तो उनमें मैल जम जायगा, और उनमें खाज उत्पन्न हो जायगी।

कन्याओं को नंगा कितने देना नीच काम है, ऐसा कदापि न करना चाहिए। न लड़के-लड़की को एक पलंग पर सोने देना चाहिए। न उन्हें ऐसे वस्त्र पहनावें कि नाभि से नीचे के अंग दीख पड़ें।

कन्याओं को जब प्रथम बार मासिक धर्म हो, तो माता को बताना चाहिए कि इस समय सर्दी शीघ्र लग जाती है। और उसे अपने स्वास्थ्य की रक्षा के लिये क्या करना चाहिए।

यौवन के प्रारंभ में कन्या अधिक परिश्रम न करे और ९-१० घंटे से अधिक न जागे।

अध्याय चौथा

गर्भाधान और प्रसव

प्रकरण १

गर्भाशय

गर्भाशय (Uterus) अर्थात् बच्चेदानी पेड़ू में पेशाब की थैली के पीछे और आँतो के आगे होती है। इसका आकार तिकोना होता है। चौड़ा भाग ऊपर को और पतला भाग, जिसे बच्चेदानी की गर्दन कहते हैं, नीचे को होता है। बच्चेदानी की गर्दन के नीचे की नोक पर एक छेद होता है, जिसे बच्चेदानी का मुख कहते हैं। बच्चेदानी के भीतर का भाग इसी छेद द्वारा योनि से मिला है। ऊपर के भाग में दाहने और बाएँ कोने में एक-एक छेद है, जिसमें से एक नली बच्चेदानी से दोनो ओर ओवेरी (Ovary) तक गई है। इस नली को अँगरेज़ी में फ़ेलोपियन ट्यूब

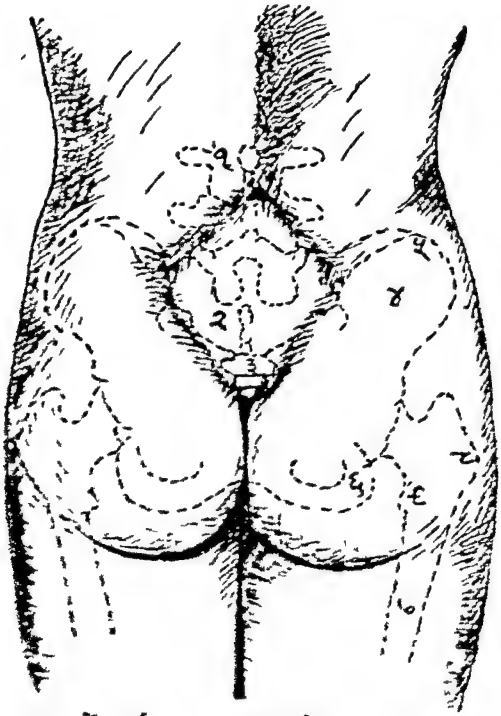

उदर में गर्भाशय का स्थान और उसके विभाग

१ कटि-शेरुका, २ त्रिकास्थि, ३ पुच्छास्थि, ४ अनामिकास्थि, ५. अनामिकास्थि का शिखर, ६ कुकुंदरास्थि की गाँठ, ७. ऊर्वस्थि, ८ ऊर्वस्थि का बड़ा उभार, ९. ऊर्वस्थि का छोटा उभार।

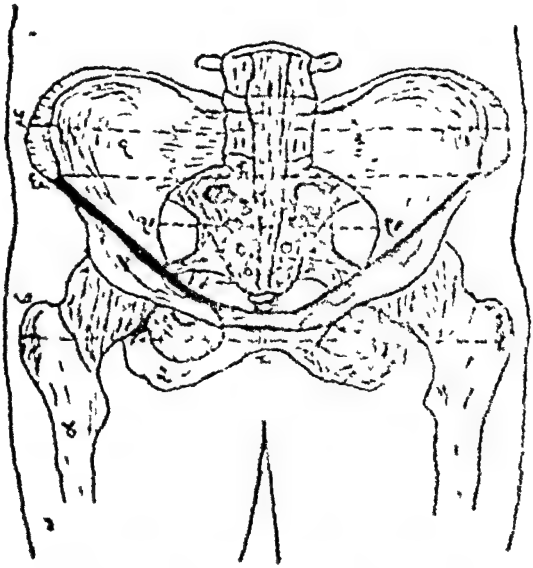

गर्भाशय के स्थान का [illegible]

१ [illegible], २ [illegible], ३ [illegible], ४ [illegible], ५ [illegible], ६ [illegible], ७ [illegible], ८ [illegible], ९ [illegible], १० [illegible]

[illegible]

१ [illegible], २ [illegible], ३ [illegible]

[illegible]

१ [illegible], २ [illegible], ३ [illegible], ४ [illegible]

बच्चेदानी बंदों के द्वारा अपनी जगह पर ठहरी है। गर्भ के दिनों में ये बंद लंबे हो जाते हैं, और प्रसव हो चुकने पर बच्चेदानी के सिकुड जाने पर ये भी सिकुड जाते है। यदि ये बंद न सिकुडें, तो बच्चेदानी अपने स्थान से हट जाती है, या तिरछी हो जाती है, जिसमे प्रसव के बाद में अनेक रोग होने की संभावना होती है। बच्चेदानी के दोनो ओर एक चौडा फैला हुआ बद चमगादड के पर की भाँति होता है, उसे अँगरेज़ी मे ब्राड लिगे मेंट (Broad ligament) अर्थात चौडा बंद कहते है। यह बच्चेदानी से लेकर पेड़ू के बगल तक होता है। इसकी दो तह होती है और दोनो तहो के बीच मे बच्चेदानी के सिवा 'ओवरी' और 'फेलोपियन ट्यूब' भी आ जाते है।

वस्ति-गुहा का अक्ष

'ओवेरी' (Ovary) यह बादामी आकार की दो गिल्टियाँ बच्चेदानी के दोनो ओर होती है। इसमे बहुत-सी थैलियाँ रस से भरी हुई अंडेके समान होती हैं। इसी रस में स्त्री का रज होता है और यह उन्ही 'फ़ेलोपियन ट्यूब' के द्वारा बच्चेदानी में आता है।

साधारण दिनो मे ये थैलियाँ बहुत छोटी होती है, परंतु मासिक धर्म के दिनों में इनके टूट जाने से रज उपर्युक्त ट्यूब के ज़रिए बच्चेदानी में आता है। और यदि गर्भ न ठहर जाय, तो मासिक स्राव के रूप में निकल जाता है। साधारण अवस्था में इन थैलियों के टूटने से जो घाव होता है, वह बहुत जल्द सूखकर सिर्फ़ एक चिह्न-मात्र रह जाता है, परंतु जब गर्भ रह जाता है, तब 'बच्चेदानी' और 'ओवेरी' में बहुत कुछ उलट-पुलट हो जाता है।

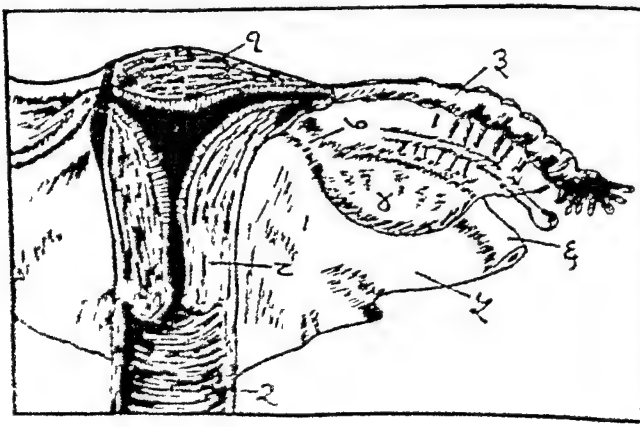

अंतरीय स्त्री-जननेंद्रिय

१ गर्भाशय-मुख, २ योनि, ३ डिंब, ४ डिंबज, ५ विस्तृत स्नायु, ६ गोल स्नायु, ७. डिंबग्रंथि स्नायु, ८ गर्भाशय-ग्रीवा।

प्रकरण २

ऋतुकाल

१२ वर्ष की अवस्था से लेकर ५० वर्ष की अवस्था तक प्रतिमास स्त्रियों की योनि से लाल रंग का एक दुर्गंधित पानी निकला करता है। [illegible] में कभी-कभी परिवर्तन हो जाया करता है। प्रायः एक महीना बंद होने और दूसरे के जारी होने में २८ दिन लग जाते हैं। और ३ से ६ या ७ दिन तक स्राव जारी रहता है। मासिक धर्म प्रारंभ होने पर ही कन्याओं में स्त्री-भाव आ जाता है।

मासिक धर्म प्रारंभ होने और समाप्त होने—दोनों ही [illegible] स्त्रियों के लिये [illegible] हैं। थोड़ी भी असावधानी से [illegible] रोग लग जाते हैं। [illegible] देशों में १-६ [illegible] और गर्म देशों में कुछ अधिक निकल जाता है। [illegible] में यह [illegible] होता है। 'फोलिकिल' की थैलियों में जो [illegible] पीले रंग का रस भरा रहता है वह [illegible] होता है जरायु में [illegible] पड़ता है।

प्रत्येक स्त्री ३६ बार ऋतुमती हो लेने के बाद वह [illegible] होती है। इस समय में पूर्ण सावधान रहने से संतान और स्त्री दोनों के [illegible] की [illegible] है। ऋतुमाला १२-१२ वर्ष की अवस्था में कन्याएँ प्रथम बार ऋतुमती होती हैं और १६ वर्ष की अवस्था तक गर्भाधान के योग्य [illegible] हैं।

ऋतु काल में सावधानी

प्रथम चार दिन—[illegible] होता है—[illegible] की [illegible] सावधानी से [illegible] करने चाहिए। [illegible] से [illegible] रहें, [illegible] न सोवें, [illegible] न [illegible] दें। [illegible] से या सवारी से [illegible]। [illegible] दूध, [illegible] दूध, [illegible] दूध हो। दिन में सोना, [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] की [illegible], [illegible], [illegible] करना, [illegible] दूध, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]।

[illegible]

[illegible]

ऋतुस्नाता

ऋतुमती स्त्री चौथे दिन स्नान कर सुंदर वस्त्र-आभूषण धारण कर, सुगंध लगाकर, पुष्पों को धारण करके पति के दर्शन करे। वह जैसे पुरुष को देखेगी या ध्यान करेगी, वैसी ही संतान उसके होगी।

गर्भाधान

पुरुष को उचित है कि गर्भाधान के लिये एक मास पूर्व से वह ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करे। जिस दिन गर्भाधान क्रिया करनी हो, घी, दूध, चावल, उर्द आदि भोजन करे। तैल मर्दन करावे। और पुत्र की कामना से जब परस्पर प्रीति-भाव हो, तब स्त्री से सहवास करे।

स्नान के दिन से २। ४। ६। ८। १०। १२। १४। १६वी रात्रियो मे गमन करने से पुत्र और ३। ५। ७। ९। ११। १५वी रात्रियो मे पुत्री होगी। १३वें दिन समागम न करे।

जवान, बलवान्, नीरोग, पवित्र, शुद्ध वस्त्र धारण करनेवाला पुरुष, व्याधिहीना, कामातुरा, प्रेम-युक्त और पुत्राभिलाषिणी स्त्री से रमण करे।

गर्भाधान का ठीक समय एक पहर रात्रि व्यतीत होने से एक पहर रात्रि शेष रहने पर्यंत तक है। जब वीर्य का गर्भाशय में प्रक्षेप का समय आवे, तब दोनो सीधा शरीर रक्खें। पुरुष अपने शरीर को शिथिल करे और स्त्री मूत्रेंद्रिय और योनि का संकोचन करे। इसके बाद स्त्री कुछ काल तक निश्चल पड़ी रहे। फिर दोनो स्त्री-पुरुष स्नान कर और केसर, कस्तूरी, जायफल, इलायची आदि डालकर पकाए दूध को ठंडा करके पीवें और अलग-अलग शयन करें।

प्रकरण ३

गर्भ

स्त्रियों के जीवन में गर्भ-धारण एक बड़ी [illegible], प्रिय और [illegible] घटना है। ईश्वर की इस रचना में पशु-पक्षी से लेकर [illegible] तक गर्भ-धारण करते हैं। इसलिये गर्भ के विषय में हम संक्षेप में लिखते हैं।

गर्भ स्त्री-पुरुष के रज और वीर्य के मेल से ठहरता है। पुरुष का वीर्य [illegible] में पैदा होता है और वहीं से नलियों में होकर जननेन्द्रिय की राह बाहर आता

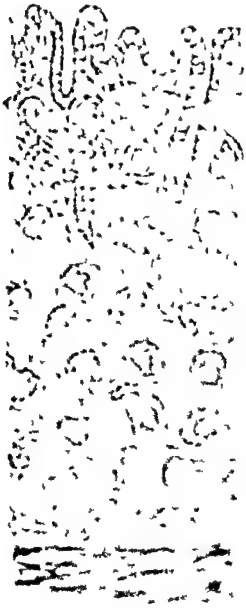

[illegible]

१ [illegible]

[illegible]

पर होता है, इस विषय में विद्वानों का मतभेद है। कुछ लोगों का मत है कि यह मेल 'ओवरी' में या 'फ्लोपियन ट्यूब' में होता है और मिलने के प्रायः १२ दिन बाद वे बच्चेदानी मे पहुँचते हैं। इसके बाद स्त्री के रज 'ओवम' (Ovem) में बहुत-सा घट-बढ़ होता है। स्त्री का रज 'ओवम' बच्चेदानी में पहुँचने के पहले बच्चेदानी की लुआबदार झिल्ली मोटी और लाल मखमल के समान हो जाती है। स्त्री का रज 'ओवम' (Ovem) इस झिल्ली में एक ओर चिपक जाता है। यह लुआबदार झिल्ली स्त्री के रज 'ओवम' को दोनो ओर ऊँची होकर घेर लेती है। ज्यों-ज्यों स्त्री का रज (Ovem)

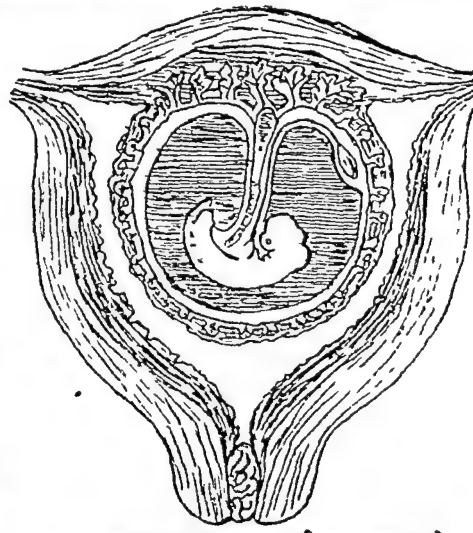

बच्चेदानी की झिल्ली गर्भ पर लिपटी है

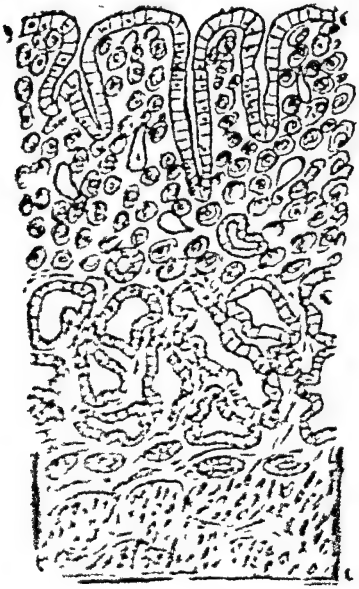

इस झिल्ली की बनावट

बढ़ता जाता है, उसी प्रकार यह झिल्ली फैलती जाती है, और गर्भ रहने से तीन मास के उपरांत बच्चेदानी की भीतरी चौरसाई में मिल जाती है। गर्भ के पूरे दिनों में फिर यही झिल्ली बच्चेदानी की दीवार से अलग हो जाती है। यह झिल्ली थैली के समान होती है और इसके भीतर पानी के समान एक रस भरा रहता है, और इसमें बच्चा तैरता रहता है। बालक होने के समय यही थैली बच्चेदानी के बार-बार सिकुड़ने और दबाव पड़ने से फट जाती है, और पानी बाहर निकल पड़ता है। इस पानी से बच्चा और बच्चेदानी दोनो बाहर की चोट-चपेट से बचे रहते हैं। बालक होने के समय बच्चेदानी का मुँह इस थैली के ज़ोर से धीरे-धीरे फैल जाता है। गर्भवती का पेट इसी पानी के कारण फूला देख

पड़ता है। जब पानी बहुत होता है, तो बहुत फूला जान पड़ता है, और बालक होने में कष्ट

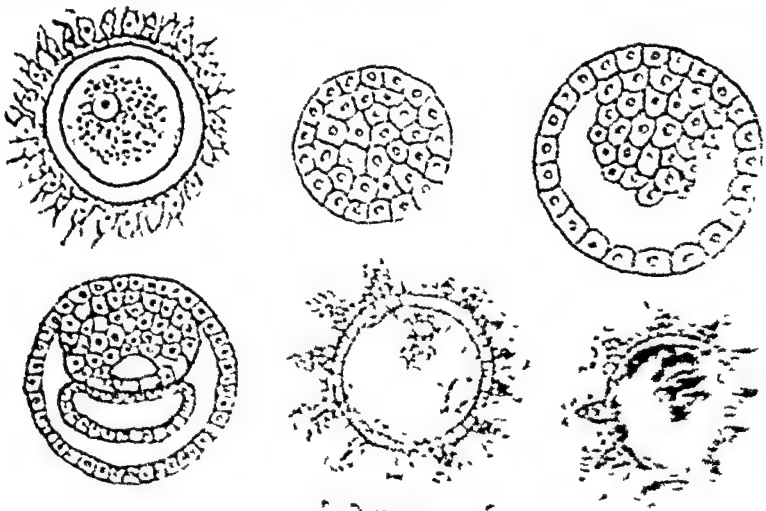

गर्भ की क्रमशः उन्नति

होता है। बच्चेदानी की दीवार का यह हिस्सा, जिस पर घोंसला (
है, मोटा होकर उसमें नए दूध की रगें है
होकर वहाँ पैदा जाती है। इसी को

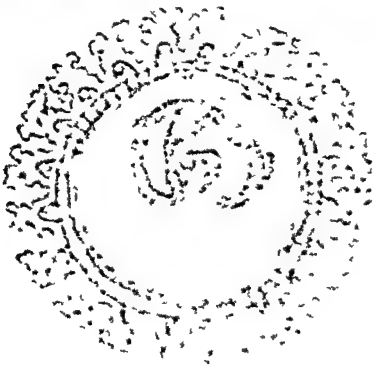

गर्भ की [illegible]
[illegible]

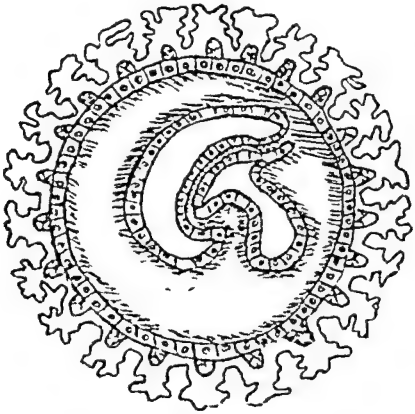

गर्भ की क्रमशः वृद्धि

यह आँवल बालक के शरीर में फेफड़े और पेट दोनो का काम देती है। मैला रक्त बच्चे के शरीर से नाल की रग में होकर आँवल में पहुँचता है। जहाँ माता का रक्त चलता-फिरता यहाँ से स्वच्छ रक्त जिसमें प्राण-वायु (Oxigen) और पोषणवाला आहार होता है। दो रगों के द्वारा बालक के देह में आता है।

साधारण अवस्था में बच्चेदानी ढाई इच लंबी और तोल में एक औंस (२½ तोला) होती है। परंतु जब गर्भ पूरे दिन का हो जाता है, तब १२ इंच लंबी और तोल में २४ औंस होती है। गर्भ-स्थिति होते ही बच्चेदानी बढ़ने लगती है। और बालक होने के समय तक बढ़ती ही रहती है। गर्भ के पहले तीन महीने बच्चेदानी पेड़ू में रहती है, हाथ के टटोलने से मालूम नहीं होती। गर्भ-स्थिर होने पर लंबाई से चौड़ाई अधिक बढ़ती है, इसलिये बच्चेदानी गोल हो जाती है।

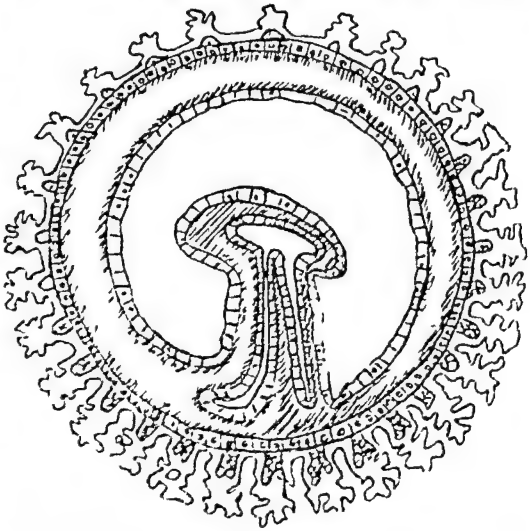

गर्भ की क्रमशः वृद्धि

तीसरे महीने के अंत और चौथे के प्रारंभ में बच्चेदानी पेड़ू से ऊपर बढ़ती है और टटोलने से कोई गेंद के समान मालूम देती है। इसके बाद लंबाई बढ़नी शुरू होती है, और बच्चे का चलना-फिरना माता को पेट में मालूम होने लगता है।

चौथे महीने के समाप्ति पर पेट की हड्डी के तीन अंगुल ऊपर तक पहुँचती है। पाँचवें महीने में पेड़ू और नाभि के बीच में बच्चेदानी के ऊपर का सिरा होता है और उस समय में

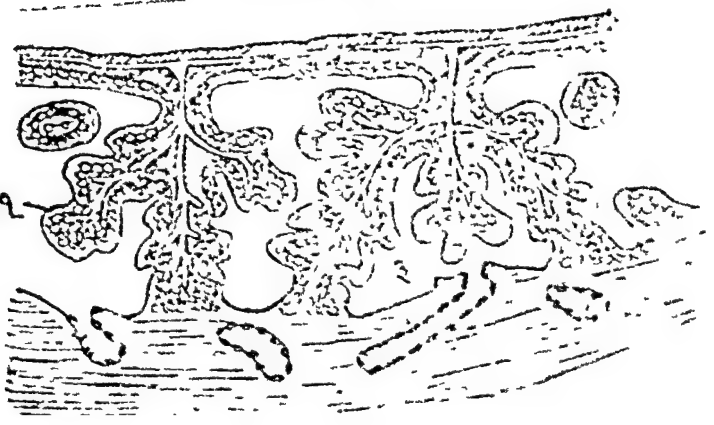
२

होता है। नौ मास के अंत में दो सेर से तीन सेर तक भारी होता है और प्रायः १८ इंच

पाँच सप्ताह का गर्भ

आठ सप्ताह का गर्भ

लंबा होता है। नवें महीने के बाद २८० दिनों में बालक पूर्ण होता है। इस समय उसका वज़न तीन से पाँच सेर तक रहता है, और प्राय. २० इंच लंबा होता है।

को ठंडे पानी मे भिगोकर बच्चेदानी पर रक्खा जाय, तो यह हिलना-डोलना साफ़ जान पड़ता है।

बच्चे के दिल की धडकन

(८) बच्चेदानी पर स्टेथस्कोप यंत्र रखकर सुना जाय, तो उसकी धडकन मालूम होती है। यह शब्द घड़ी की टिक-टिक जैसा सुन पड़ता है। पर चौथे और पाँचवें मास में सुन पड़ता है। यह एक मिनट मे १२० से १४० बार तक होता है। माता के दिल की धड़कन को आप साफ पहचान सकते हैं, क्योंकि वह सिर्फ़ ७५ बार प्रति मिनट मे होती है।

(९) आँवल और नाल से शब्द सुनाई पड़ता है, जो एक भिन्न प्रकार का होता है।

(१०) स्त्री का मूत्र किसी गहरे बर्तन में रख दो। इस बात का ख़याल रक्खो कि वायु और प्रकाश तो उस पर पड़े, पर धूल-गर्द न जाय। उसमें सात दिन के भीतर-भीतर एक वस्तु रुई के पतले फाहे के समान मूत्र के ऊपर पैदा हो जायगी। यह वस्तु इस प्रकार की होगी, जैसी कि जाड़े के दिनों में तरकारी के रसे के ऊपर घी की पतली तह जम जाती है। कुछ दिन बाद इसके कण बर्तन के नीचे जम जायँगे। यह बात मूत्र में गर्भ के दूसरे मास के बाद दीखती है और सात-आठ मास तक दीखती रहती है।

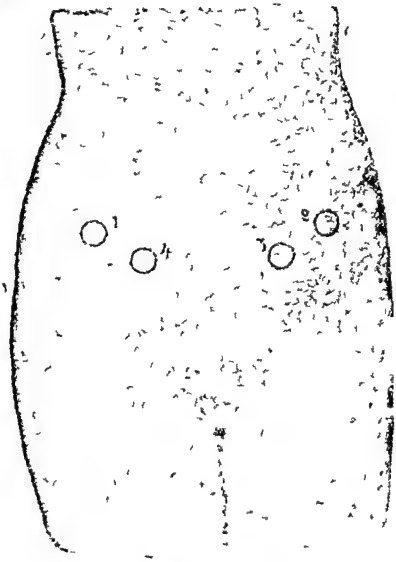

उदरस्थ गर्भ

चिह्नित स्थानों पर भिन्न-भिन्न स्थितियों का शब्द उदर के ऊपर सुना जा सकता है।

विशेष—बुद्धिमती स्त्रियाँ जिस दिन गर्भाधान हो, उसी दिन गर्भ रहने का ज्ञान प्राप्त कर लेती हैं। प्रातःकाल शरीर थकावट से चूर-चूर हो जाय, जाँघें जकड़ जायँ, दर्द करें, प्यास ज्यादा लगे, भूख न हो, गुप्तेंद्रिय में फड़कन हो और रज-वीर्य बाहर न निकलें, तो समझना चाहिए कि गर्भ रह गया।

गर्भ मे पुत्र-पुत्री का निर्णय

(१) जिस गर्भिणी स्त्री के दाहने स्तन में प्रथम दूध दिखाई दे, और दाहनी आँख कभी मालूम पड़े, तो चलती बार प्रथम दाहना पैर आगे बढ़ावे और जिसकी दाहनी आँख कभी-कभी मालूम पड़े, तो स्त्री चतुर्थ महीने में मिष्टान्न, अमरूद, नारियल आदि पुंलिंग फल

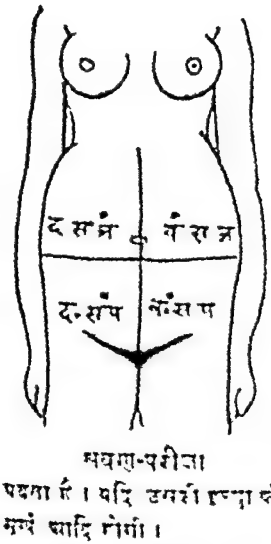

स्तन-परीक्षा

फूल आदि स्वप्न में देखे, और उन्हीं के खाने की इच्छा हो, तो जिसकी मुख-कान्ति खिली हुई हो, उसके पुत्र पैदा होगा। इसके विपरीत कन्या।

(२) हम पीछे बता चुके हैं कि गर्भस्थ शिशु के हृदय की धड़कन स्टेथस्कोप लगाकर सुननी चाहिए। यह धड़कन यदि एक मिनट में १४४ हुआ हो, तो लड़की और १२४ हुआ हो, तो लड़का जानना। सावधानी से यह परीक्षा करने पर कभी भूल न होगी।

दौहृद-लक्षण

गर्भ के चौथे मास में गर्भस्थ शिशु का हृदय बन जाता है और इसलिये गर्भिणी की दौहृद संज्ञा हो जाती है। इस समय स्त्री जिस वस्तु की इच्छा करे, वह उसको देनी चाहिए। उस वस्तु की प्राप्ति का यत्न न करने पर भारी हानि पड़ता है। यदि उसकी इच्छा की वस्तु न मिले, तो संतान लंगड़ी, लूली, गूंगी, बहरी, बौनी, मूर्ख आदि होगी।

उस समय यदि स्त्री राजा आदि बड़े बड़े व्यक्तियों को देखने की इच्छा करे, तो संतान महाभाग्यवान् हो। यदि वह सुंदर वेशभूषा वस्त्र और आभूषण चाहे, तो संतान सौन्दर्य होगी। यदि सौभाग्यवान और साधु-संतों के दर्शन की इच्छा हो, तो संतान भाग्यवान होगी। यदि उसकी इच्छा सर्प, सिंह आदि हिंसक जन्तुओं को देखने की हो, तो संतान निर्दयी और हिंसक होगी। इसी प्रकार स्त्री के स्वभाव चित्त का विचारकर निर्णय करना चाहिए।

इनमें से एक शाखा वस्ति-गह्वरस्थ अंगों का पोषण करती है और दूसरी उसमे च
है। छोटी-छोटी शाखाएँ यकृत मे घुस जाती है। इस प्रकार कुछ शुद्ध रक्त यकृत मे प
है, जो फिर अधोगा महाशिरा मे पहुँचता है।

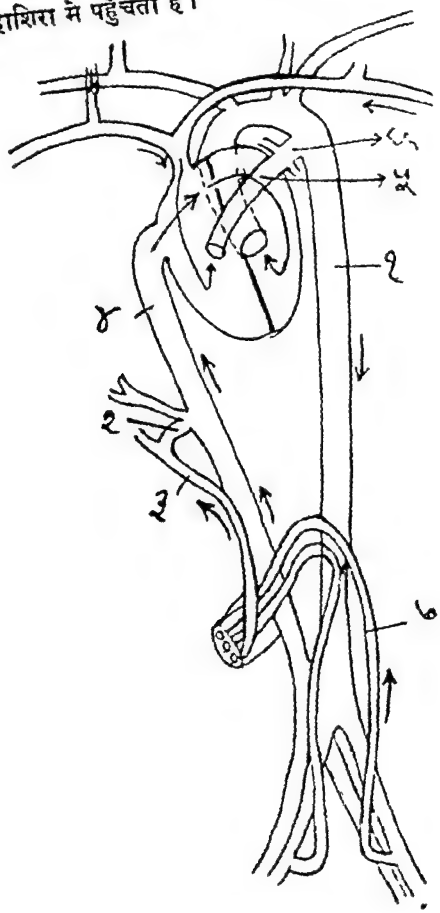

गर्भ का रक्त-संचार

१. महाधमनी, २. शिरा-संयोजक, ३ नाभि-
शिरा, ४ ऊर्ध्वगामिनी शिरा. ५. फुफ्फुस-धमनी
६ धमनी-संयोजक, ७ नाभि-धमनी।

प्रकरण ५

गर्भिणी के रोग और उसकी चिकित्सा

गर्भिणी स्त्री को ज्वर, सूजन, दस्त, उलटी, सिर घूमना, रक्त-स्राव, गर्भ [illegible] आदि अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उनका इलाज साधारण रीति से नहीं होता, इससे गर्भ के [illegible] को अनेक प्रकार की विपद की संभावना होती है। इसलिये उनकी [illegible] हम यहाँ लिखते हैं—

(१) ज्वर होने पर—मुलहठी, [illegible], [illegible], [illegible] का काढ़ा शहद मिलाकर पीना।

(२) पतले दस्त आने पर—[illegible] की [illegible] का [illegible] पीना।

(३) [illegible] में—दो [illegible] [illegible] का [illegible] [illegible] में पीना।

(४) सूजन में—[illegible] के [illegible] के [illegible] की [illegible] करना।

(५) वमन में—[illegible] में [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] वमन [illegible] होती है।

(६) रक्त-स्राव—यदि [illegible] में [illegible] हो, तो [illegible], [illegible] देवदारु इनको [illegible] में [illegible] पीना।

(७) [illegible] में [illegible], [illegible], [illegible]।

[illegible] में [illegible]।

[illegible] में—[illegible], [illegible], [illegible]।

[illegible] में—[illegible] [illegible] [illegible]।

[illegible] में—[illegible], [illegible]।

[illegible] में—[illegible], [illegible], [illegible]।

[illegible] में—[illegible], [illegible], [illegible], [illegible]।

[illegible] में—[illegible]।

प्रकरण ६

गर्भिणी के पालन-योग्य विशेष नियम

गर्भावस्था आजकल की सभ्यता में (?) देवियों के लिये एक अद्भुत कष्टकारक अवस्था हो गई है। वास्तव में यदि अप्राकृतिक रहन-सहन के ढंगों को छोड़ दिया जाय, तो गर्भावस्था में स्त्रियों को कोई कष्ट न हो, परंतु आजकल गर्भपात तो ऐसा रोग है कि १०० में से ९० स्त्रियों को होता है।

एक-दो दफ़ा गर्भपात होने से ही स्त्री बहुत कमज़ोर हो जाती है, बहुत-सी जापे के कष्टों में अपने नवजात बालकों को खो बैठती है। बाज़ ऊँचे घरानों में तो गर्भिणियों की इतनी हिफ़ाज़त की जाती है कि उनको हिलने-जुलने भी नहीं दिया जाता, और वे एक बीमार की भाँति बहुत ही हलके-हलके चलती-फिरती हैं, उसके विपरीत छोटे घरानों में गर्भिणी की साधारण देख-भाल भी नहीं होती। प्रथम तो इस विचार से कि उत्तम संतान हों, दूसरे असमय प्रसव या गर्भपात न हो, तीसरे इस विचार से कि कम-से-कम कष्ट से बालक पैदा हो। निम्न-लिखित नियम गर्भावस्था में अवश्य पालन करने चाहिए—

भोजन

प्राय इस विचार से कि गर्भावस्था में गर्भिणी को अधिक पुष्टिकारक भोजन की आवश्यकता होती है, गर्भिणी को भाँति-भाँति के भोजन खिलाए जाते हैं। घी व मसालों की बनी हुई पुष्टिकारक वस्तुएँ देर में पचती हैं और इस प्रकार लाभ की अपेक्षा हानि करती हैं। इसलिये शीघ्र पचनेवाले पुष्टिकारक पदार्थ खाने चाहिए। गेहूँ व जौ का दलिया, दूध, [illegible] हुए फल, सब्ज़ तरकारियाँ, जो अधिक भूनी न गई हों, गर्भिणी को अधिक [illegible] चाहिए। गरम मसाले, मिर्चें, अधिक गरम गुड़, तेल आदि के बने पदार्थ, [illegible] अचारों, चिटनी आदि के शाक न दें। भोजन एक समय में अधिक न करें। [illegible] समय थोड़ा-थोड़ा करें। गर्भावस्था में स्त्री की भिन्न-भिन्न [illegible] है, इच्छा को रोकना ठीक नहीं। उचित रूप में इच्छानुसार यदि कोई निष्ट हानिकारक पदार्थ खाने की इच्छा हो, तो [illegible] चाय, काफ़ी आदि इन दिनों में बिलकुल न लें।

वस्त्र

[illegible] वस्त्रों के संबंध में यह है कि धोती, [illegible] से कसकर कटारि न बाँधा जाय।

से १४ इंच तक बढ़ जाती है। ऐसी अवस्था में कमर अथवा पेट पर पेटी, साड़ी या धोती कसकर बाँधने से बच्चेदानी और फलतः बच्चे के बढ़ने में रुकावट पैदा होती है, जिससे न निश्ची की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, बदहज़मी हो जाती है, दिल धड़कने लगता है, खून की कमी, दस्त, कब्ज़, खाँसी आदि अनेक रोग केवल पेट (गर्भाशय) पर दबाव पड़ने से होते हैं।

छाती पर भी कसकर जाकट न पहननी चाहिए, क्योंकि छातियों भी बढ़ती हैं। छातियों के ऊपर दबाव पड़ने में जहाँ अनेक उपर्युक्त रोग होने का आशंका है, वहाँ साथ ही स्तन का कमी तथा कष्ट से उतरता है। अतः हीरा तुर्ता ही इन दिनों पहनना चाहिए।

जो स्त्रियाँ मोज़ें पहनती हों, वे कसा कर मोज़े न खेंचें। [illegible] पहननेवाली मोज़ीन स्त्रियाँ तुर्तों के तस्मे कसकर न बाँधें। इनके [illegible] ये नसें दबती हैं कि जिनका प्रभाव गर्भाशय पर पड़ता है।

साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि मौसम के [illegible] कपड़े आयें कि जिनसे पाँव तथा पेर को ठंड न लग जाय। [illegible] जुराब ही पहनें। [illegible] कमज़ोर हो जाता है और [illegible] होते हैं। [illegible] का ध्यान रखना चाहिए। सदा से [illegible] करना चाहिए। यदि साधारण [illegible] पहनें, लेकिन सदा से यदि पहनती आई हों, तो इस समय [illegible]।

[illegible] रंग के बजाय [illegible] रंग के [illegible] पहनना [illegible]।

काम-काज करती रहती है, उनको प्रसव में कम-से-कम कष्ट होता है। बात यह है कि कमर या शरीर के किसी भाग पर अचानक झटका लगने से गर्भपात होने की आशंका रहती है और झटका ज़रा झुकने या ऊँचा चढने या पाँव इधर-उधर पड जाने, ट्रंक उठाने आदि से लग सकता है, परतु आहिस्ता-आहिस्ता भारी बोझ उठाने पर भी नही लगता। जिस काम का अभ्यास न हो, उसे गर्भावस्था में न करें।

गर्भिणी के लिये सबसे उत्तम व्यायाम खुली हवा मे टहलना है, टहलना इतना ही चाहिए जिससे थकावट पैदा न हो। यदि साधारण अवस्था में न भी टहलती हों, तो भी गर्भावस्था मे टहलना गर्भिणी तथा गर्भस्थ बालक दोनो के लिये अत्यंत लाभदायक है। ताँगा, इक्का, डोली, घोडा, साइकिल आदि पर न चढना चाहिए तथा मोटर व गाडी मे बैठकर हवाख़ोरी करने से भी कोई इतना लाभ नहीं है।

हलके-हलके शुद्ध वायु में टहलना अच्छा है। यदि बाहर न जा सकें, तो घर में खुली छत पर ही टहलें और घर का साधारण काम-काज करते रहना ही गर्भिणी का सर्वोत्कृष्ट व्यायाम है।

शुद्ध वायु तथा धूप

मामूली पौधे यदि उनको धूप तथा वायु न मिले, तो पीले पड जाते है, तो यह मनुष्य, जिसका वायु ही जीवन है और प्रकाश अथवा धूप ही जिसका मुख्य आधार है, इनके बिना कैसे पुष्ट हो सकता है?

इन्हीं दोनो चीज़ो की कमियो के कारण आज भारत के बच्चे पीले पडे है, धूप और वायु पर परमात्मा ने कोई टैक्स नहीं लगाया। चाडाल की झोपडी और राजा की अटारी दोनो के लिये ये चीज़ें सामान्य रूप से सुलभ है। बडे-बडे नगरो के ऊँचे-ऊँचे महलों के नीचे की मंज़िलों मे रहनेवालो को जाकर देखिए। ऊँचे मकानो के बीच ३ फ़ीट चौड़ी गलियों को जाकर निहारिए, गंदी गलियों की बू, पाख़ानो की दुर्गंध, धुएँ से आच्छादित दीवारो की कलोस की कालिमा ही धूप और हवा के बदले उन गलियों व मकानो के अभागे रहनेवालो को मिलती है। बडे शहरो के ७० फ़ी सदी रहनेवाले इन्हीं काल-कोठरियों में रहते हैं। कभी बड़े शहरों में मज़दूरों के रहने की जगहों को जाकर देखिए, तो आप रो उठेंगे। इन गली और मकानों में कभी भूलकर भी धूप प्रवेश नहीं करती और वायु तो वहाँ पहुँचते-पहुँचते ही दुर्गंधित हो जाती है। इन्हीं मकानों मे इस ग़ुलाम देश के ग़ुलाम बच्चे जन्म लेते है, इन्हीं सड़ी जगहों में वह दिन-रात पलते है और इन्हीं स्थानो मे यह अभागे बच्चे जितने जन्मते है, उनमे आधे साल-भर के अंदर ही मर जाते हैं।

इस पर एक और मार है कि इन क़ैदख़ानों और मृत्यु-स्थानों के लिये हमारे भाई और बहनों को अपनी आय का सर्व-श्रेष्ठ भाग मालिक मकान को किराए के रूप मे अर्पण करना पड़ता है। ऐसे ऐसे लोग इन क़ैदख़ानों में बंद रहते है और वे इस घोर दुःख के सहने के इतने अभ्यस्त हो गए है कि यह कष्ट उन्हें कुछ भी नहीं अखरता।

गर्भाधान और प्रसव

जिस प्रकार छोटे पौदों के लिये धूप तथा हवा आवश्यक है, उसी प्रकार आपके उस नन्हे लाल के लिये जिसका सुंदर मुख देखने को आप उत्सुक हैं, शुद्ध वायु तथा धूप अत्यंत आवश्यक है। जहां तक हो सके, गर्भावस्था में अपने मकान की खुली छत में सोवें, खिड़कियाँ खोल रक्खें, धूप का भी जाड़े में इधर सेवन करें। मुँह ढककर न सोवें, हवा के ठीक सामने न सोवें, पर जिस कमरे में सोवें, उसमें हवा का पूरा प्रवेश होना चाहिए।

इधर शहरों में तो यह हालत है, उधर गाँवों में दरिद्रता तो है ही, पर धनवान के धनवान गाँववाले ऐसे मकान बनाते हैं कि जिनमें वायु का संचार पूरी तरह नहीं होता। कुएँ, सोपर व कुंडा इत्यादि घरों के पास ठाट देते हैं, जिससे वायु में सड़ा रहता है।

सोना

गर्भावस्था में यदि कुछ अधिक नींद आवे, तो सो लेनी चाहिए, परंतु बहुत अधिक सोना व ऊँघना ठीक नहीं है। इससे अधिक सुस्ती बढ़ती है। सोते समय पेट पर अधिक बोझ न पड़े, इस बात का ध्यान रहे। पूरी तो पेट का बल लेकर सोना भी ठीक नहीं। गाना गाना, नाटक-तमाशे देखना, [illegible] अधिक सोना [illegible] है। यदि जल्दी नींद न आवे, तो गुनगुने पानी से [illegible] पैर धोवें, [illegible] चाहिए। परमात्मा का ध्यान कर [illegible] नींद आ जायेगी। [illegible] सोने और उठने के नियम का न छोड़ना चाहिए।

मन की दशा

१५ मई	१ ऑक्टोबर	६ फ़रवरी
३१ ,,	१७ ,,	७ मार्च
१ जून	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ नवंबर	२२ ,,
३० ,,	१६ ,,	६ एप्रिल
१ जुलाई	१७ ,,	७ ,,
१५ ,,	१ दिसंबर	२१ ,,
३१ ,,	१७ ,,	७ मई
१ अगस्त	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ जनवरी	२२ ,,
३१ ,,	१७ ,,	७ जून
१ सितंबर	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ फ़रवरी	२२ ,,
३० ,,	१७ ,,	७ जुलाई
१ ऑक्टोबर	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	३ मार्च	२२ ,,
३१ ,,	१६ ,,	७ अगस्त
१ नवंबर	२० ,,	८ ,,
१५ ,,	३ एप्रिल	२२ ,,
३० ,,	१८ ,,	६ सितंबर
१ दिसंबर	१६ ,,	७ ,,
१५ ,,	३ मई	२० ,,
३१ ,,	१६ ,,	७ ऑक्टोबर

इस नक्शे की सहायता से आप स्वयं शेष तारीखों का भी हिसाब लगा सकती है।

जाता है। मन की अवस्था का बालक पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। यदि आपकी यह इच्छा हो कि आपका बालक सत्यवक्ता, सदाचारी व गुणी हो, तो स्वयं आपको इन्हीं गुणों का अभ्यास करना चाहिए। घर के अन्य रहनेवालों को भी इसमें सहायता करनी चाहिए।

गर्भावस्था में मैथुन

गर्भावस्था में मैथुन निम्न-लिखित हानियाँ पैदा करता है—

१—नसों के उत्तेजित होने से तीसरे व पाँचवें मास में गर्भपात हो जाता है और फिर बार-बार होता है।

२—गर्भस्थ बालक पर बुरा प्रभाव पड़ता है। गर्भावस्था में मैथुन करते रहने पर सयमी संतान की इच्छा करना व्यर्थ है।

३—प्रायः श्वेत प्रदर हो जाता है।

४—बालक बढ़ नहीं पाता।

५—बेजा दबाव कुसमय प्रसव पड़ने से हो जाता है।

६—जरायु तथा योनि के अनेक रोगों की आशंका रहती है। इसलिये

१—गर्भ स्थिर हो जाने के बाद संभोग बिल्कुल न करें।

२—यदि निश्चय न हो, तो कम-से-कम उन दिनों में जब कि साधारण अवस्था में मासिक धर्म हो, तो कदापि न करें। उन चार-पाँच दिनों में पुरुष सहवास करने से ही गर्भपात होते हैं, श्वेतप्रदर तथा अन्य जरायु रोग हो जाते हैं, अत वे चार दिन अवश्य ओलिम पूर्ण हैं।

३—गर्भपात के बाद कम-से-कम तीन मास तक संभोग कदापि न करें। इससे अनेक रोग हो जाते हैं।

४—एक दफा गर्भपात हो चुकने पर फिर गर्भ स्थित हुआ हो, तो जिस महीने में गर्भपात हुआ था, यदि संभोग किया गया, तो उसी समय फिर गर्भपात अवश्य होगा। इसलिये खूब सावधान रहें। गर्भपात बुरा रोग है।

५—गर्भपात प्राय तीसरे व पाँचवें मास के उन दिनों में होता है, जब साधारण अवस्था में मासिक धर्म होता है। यदि तीसरे-पाँचवें मास "पुरुष-संग" किया गया, तो गर्भपात की पूरी आशंका समझिए।

६—गर्भावस्था में अलग-अलग कमरों में या पृथक् पलंगों पर सोना चाहिए।

प्रकरण ७

गर्भ-काल

जितने दिन में स्त्री रजस्वला होती है, उतने दिनों तक उसको गर्भ धारण [illegible] होता है, अर्थात् साधारणतया २८वें दिन स्त्री रजस्वला होती है और २८ + १० = २८० दि[illegible] तक वह गर्भ धारण किए रहती है, परंतु यह मालूम करना कठिन हो जाता है कि किस दि[illegible] गर्भ स्थिर हुआ। ऐसी अवस्था में रजस्वला होने के बाद [illegible] दिन से [illegible] अनेक बार हिसाब लगाया जाने पर २७२ और २८६ के बीच के [illegible] दिन में [illegible] हुआ सिद्ध हुआ है। अतः २८० दिन का गर्भ-काल [illegible] अनुचित न होगा। [illegible] यह [illegible] देखा गया है कि स्त्री पुरुष की [illegible] आयु कम होती है, उनके [illegible] कम दिनों में [illegible] है और आयु बढ़ जाने पर गर्भ-काल भी बढ़ जाता है। [illegible] १०वें मास बालक जन्म लेता है। गर्भ-स्थिति होने के [illegible] आयु [illegible] की हड्डियों में [illegible] होने लगती है, और [illegible] होने पर इस हिलने-डुलने के समय में भी [illegible] होने लगता है। [illegible]

१५ मई	१ ऑक्टोबर	६ फ़रवरी
३१ ,,	१७ ,,	७ मार्च
१ जून	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ नवंबर	२२ ,,
३० ,,	१६ ,,	६ एप्रिल
१ जुलाई	१७ ,,	७ ,,
१५ ,,	१ दिसंबर	२१ ,,
३१ ,,	१७ ,,	७ मई
१ अगस्त	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ जनवरी	२२ ,,
३१ ,,	१७ ,,	७ जून
१ सितंबर	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	१ फ़रवरी	२२ ,,
३० ,,	१७ ,,	७ जुलाई
१ ऑक्टोबर	१८ ,,	८ ,,
१५ ,,	३ मार्च	२२ ,,
३१ ,,	१६ ,,	७ अगस्त
१ नवंबर	२० ,,	८ ,,
१५ ,,	३ एप्रिल	२२ ,,
३० ,,	१८ ,,	६ सितंबर
१ दिसंबर	१६ ,,	७ ,,
१५ ,,	३ मई	२० ,,
३१ ,,	१६ ,,	७ ऑक्टोबर

इस नक्शे की सहायता से आप स्वयं शेष तारीखों का भी हिसाब लगा सकती हैं।

प्रसव

बालक का माता के (गर्भाशय) से बाहर निकलकर आना प्रसव (Delivery) कहलाता है। जिस स्त्री को प्रसव हो, प्रसूता (जच्चा) कहलाती है। प्रसूता को प्रसव में थोड़ा-बहुत दर्द होता है। जो स्त्रियाँ हृष्ट-पुष्ट होती हैं, जिनका स्वास्थ्य अच्छा होता है, चक्की पीसना, चरखा कातना, भोजन बनाना इत्यादि घर के प्रायः सब काम अपने ही हाथ से करती हैं अथवा कुछ छोटे शारीरिक व्यायाम करती रहती हैं। जिनकी कमर व पेडू की हड्डियाँ अच्छी बनी होती हैं और जहाँ बच्चे का मुख रहता है, वहाँ की हड्डियाँ तंग न होकर चौड़ी होती हैं, [illegible] होती हैं तथा ठीक समय से जिनको प्रसव होता है, उनको प्रसव-

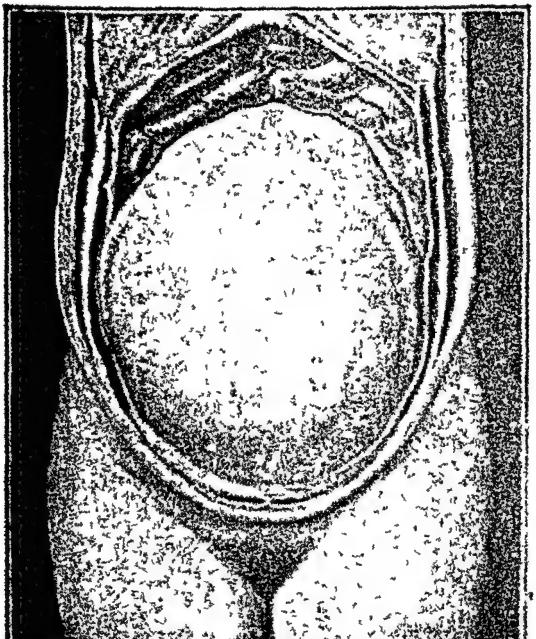

पूर्ण गर्भ

पीड़ा बहुत कम होती है। इसके विपरीत कमोर घरानों की आलसी व नाजुक स्त्रियाँ जो घर के काम-काज करने, पूरा घरका को हाथ लगाने में भी अपना हतक समझती हैं, या जो तंग कपड़े पहनती हैं, किसी प्रकार का शारीरिक व्यायाम नहीं करती, जो कम उमर में अर्थात् १६ वर्ष से नीचे बच्चा जनती हैं या बहुत बड़ी उमर में पहला बच्चा जनती हैं यथा २०-२२ वर्ष से ऊपर, जिनकी कमर की हड्डियों का घेरा तंग होता है, आजकल की सुधरी सभ्यता में रहनेवाली स्त्रियाँ जो खाना-पहनना, रहन-सहन सभी में प्रकृति के विरुद्ध व्यवहार करती हैं, जो प्रसव से पूर्व ही बच्चा जनती हैं, जो चंचल होती हैं, उनको यह पीड़ा अधिक होती है।

प्रसव की तैयारी

सूतिकागार—जिस कमरे अथवा कोठरी में प्रसूता को रखना जाता है, वह 'सूतिकागार' कहलाता है। प्रसव की पीड़ा आरंभ होने से लेकर कम-से-कम १० दिवस तक और संभव हो, तो २० दिन तक प्रसूता को वहीं रहना होता है। सूतिकागार जिस कमरे को बनायें, उसमें निम्न-लिखित बातों का पूरा ध्यान रखें—

१—हवा के आने-जाने का अच्छा प्रबंध होना चाहिए। जहाँ प्रसूता को जच्चाई हो, उस जगह मोटी हवा नहीं आनी चाहिए, लेकिन कमरे में हर समय ताजा हवा के आने और गंदी हवा के निकलने का पूरा प्रबंध होना चाहिए।

२—किसी प्रकार की दुर्गंध कमरे में न आने पाए। यदि दैवात् हो जाए, तो तुरंत दूर कर दी जाए।

३—यदि जाड़े का मौसम हो, तो कमरे में इस प्रकार से आँच रक्खी जाय कि उसका धुआँ तो चिमनी द्वारा बाहर निकलता रहे और उसकी गर्मी से कमरे की वायु गर्म होती रहे। कोयलों के जलाने से जो गैस निकलती है, यदि वह कमरे के किवाड़ बंद करने पर अंदर ही रहेगी, तो बच्चे का दम घुट जायगा और माता को भी बेहोश कर देगी।

४—प्रकाश का भी समुचित प्रबंध रहे।

५—कमरे की छत जहाँ तक हो सके, ऊँची और कमरा कम-से-कम इतना बड़ा हो कि जिसमें ४-५ चारपाइयाँ बिछाकर भी चलने-फिरने की जगह रहे।

६—कमरे का डाल अच्छा हो और मोरी अवश्य हो।

७—कमरे में न तो तुरत की की हुई सफ़ेदी हो, न काला धुआँ और जाला लगा हुआ हो। अच्छा हो, यदि ४-५ मास पूर्व ही सफ़ेदी करवा कर नीलथोथा डालकर हलका रंग करवा दिया गया हो तो अच्छा है।

८—सूतिकागार में एक ज़च्चा का पलँग और एक चारपाई। एक-दो कुर्सी तथा ज़च्चा के पीने का पानी व पहनने के कपड़ों के अतिरिक्त और कोई वस्तु काठ-कबाड़, असबाब आदि नहीं होना चाहिए। यदि हो सके, तो दीवारों पर राम-जन्म, कृष्ण-जन्म, बुद्ध-जन्म तथा महापुरुषों के चित्र अथवा जंगल, झरने, बागों आदि के सुंदर दृश्य लगा दें। उत्तम वाक्य भी लिखे हों, तो हानि नहीं। जानवरों की तस्वीरें या भयानक चित्र कोई न हों। चित्रों की संख्या भी कमरे के अनुसार अधिक न हो।

सूतिकागार में कौन-कौन रहे ?

चतुर दाई के अतिरिक्त एक चतुर, अनुभवी, प्रसन्न-मुख स्त्री सदा प्रसूता के पास रहे, तो अच्छा है। दो-चार बच्चों की मा हो, तो उत्तम है। यह स्त्री प्रसूता की माता या प्रसूता से अधिक प्रेम रखनेवाली निकट संबंधिनी नहीं होनी चाहिए, क्योंकि अधिक प्रेम अधिक चिंता और अव्यवस्थता से अधिक घबराहट पैदा कर देता है। लेकिन बिल्कुल ही हृदय-शून्य, कठोर-हृदय स्त्री न होनी चाहिए। स्त्री को चाहिए कि प्रसूता को प्रसन्न रखने का प्रयत्न करे, उसे अच्छी-अच्छी बातें सुनावे, उस पर नाराज़ न हो, उसके सामने भयानक घटनाओं का या किसी कष्टमय प्रसंग या प्रसव का वर्णन कदापि न करे। प्रसूता की माता का उस कमरे में तो नहीं, परंतु उस घर में रहना आवश्यक है। इससे प्रसूता को तसल्ली रहती है।

सूतिकागार के अंदर अन्य स्त्री-पुरुषों को नहीं जाना चाहिए। बाहर से ही बातचीत कर लेनी चाहिए। इधर हिंदुओं में जो छूताछूत का नियम इस संबंध में है, वह उचित सीमा से बढ़कर ठीक है। सूतिकागार को गैर मर्द कर देना चाहिए।

दाई कैसी हो ?

[illegible] होने के अतिरिक्त हँसमुख, चतुर, मज़बूत और स्वच्छ होना आवश्यक है। दाई का [illegible] होना उत्तम है। यदि कोई दाई ऐसी हो, तो प्रथम तो

उसे बुलाना ही नहीं चाहिए और यदि बुला ली गई हो, तो फिर उसकी मजदूरी देने में संकोच न करना चाहिए। दाई न तो बहुत बूढ़ी हो और न बिल्कुल छोटी उमर की हो। यदि विवाहिता और दो-तीन बच्चों की मा हो, तो अच्छा है। दाई को पहले से ठीक कर रखना चाहिए और समय से पहले ही बुला लेना चाहिए। नवीं मास आरंभ होने के बाद चौथे-पाँचवें दिन दाई को दिखा देना चाहिए। दाई को अपना काम शुरू करने के पूर्व कपड़े बदल लेने चाहिए। उसे उचित है कि स्वच्छ कपड़े पहन ले और [illegible] पाँव गरम जल से धो ले, बालों को दृढ़ कर बाँध ले।

प्रसव की पूर्व सूचना

प्रसव होने के कोई १५ दिन पूर्व ही प्रसव की सूचना मिल जाती है। जरायु जो [illegible] बढ़ता है इन दिनों नाभि के ऊपर तक पहुँच जाता है, लगभग १५ दिन पूर्व कुछ नीचे [illegible] खिसक जाता है। और नाभि के थोड़ा नीचे तक भी पहुँच जाता है। [illegible] तो बोझ और दबाव-सा मालूम हुआ करता है, पर हलका पड़ जाता है। [illegible] साँस लेने लगती है। पेट कुछ [illegible] जाता है और हर प्रकार गर्भिणी को [illegible] होता है। सुस्ती बिल्कुल नहीं रहती। [illegible] कि गर्भिणी का जी [illegible] को चाहता है। परंतु सावधान! इस समय मामूली से अधिक कोई [illegible]

दूसरे

स्त्री की भग कुछ भारी हुई-सी मालूम होने लगती है और कुछ [illegible] है, कभी श्वेतप्रदर-जैसा स्राव होने लगता है और [illegible] लेने की [illegible] इच्छा सिद्ध है। समझना चाहिए कि प्रसव के अधिक पीड़ा न होगी।

तीसरे

प्रकरण ८

वस्तुएँ जो प्रसव के समय हाज़िर रखनी चाहिए—

(१) आध सेर स्वच्छ बढ़िया रुई और धुले हुए स्वच्छ वस्त्र के कई टुकडे, जो सफ़ेद हों। रक्त को पोंछने-सुखाने और प्रसूता को शुद्ध करने के लिये तथा प्रसूति के नीचे बिछाने के लिये।

(२) ३-४ नरम तौलिए। (उपर्युक्त रुई, कपडे और तौलिए कारबोलिक लोशन में भिगोकर सुखा लिए गए हों। एक हिस्सा कारबोलिक एसिड में चालीस हिस्सा पानी मिलाने से कारबोलिक लोशन बन जाता है।)

(३) मोटे कपडे की १½ गज लंबी और १४ इंच चौडी दो-तीन पट्टियाँ जो प्रसव के बाद माता के पेट में लपेट दी जायँ। जिसकी चौडाई में छातियों से नीचे पेडू तक और लंबाई में दो फेरे कमर के गिर्द आ जायँ। ज़रूरत पडने पर पलँग की चादर लंबाई में दो पर्त करके काम में लाई जा सकती है।

(४) महीन फलालेन की ५ इंच चौडी और २ फ़िट लंबी दो पट्टियाँ बच्चे के पेट में लपेटने के लिये।

(५) एक नरम फ़लालेन का टुकड़ा जिसमें बच्चा लपेट लिया जाय। (यह भी कारबोलिक लोशन में भिगोकर सुखाया हुआ हो।)

(६) नाल काटने को एक तेज़ क़ैंची (कारबोलिक लोशन में धुली हुई।)

(७) एक मुग और कारबोलिक साबुन दाई के हाथ धोने के लिये।

(८) चार औंस लाइसोल दाई के हाथ धोने के लिये (एक सेर पानी में एक चम्मच लाइसोल डालना।)

(९) दो औंस बोरिक एसिड का पाउडर, नाल काटकर बुरकी देने के लिये।

(१०) कुछ छोटे-छोटे कपडे के टुकडे कारबोलिक लोशन में उबले हुए। प्रत्येक टुकड़ा ३ इंच लंबा और इतना ही चौड़ा हो और उसके बीच में नाल का टुकडा सुगमता से घुस सकने योग्य छेद होना चाहिए।

(११) चार-छः औंस जल में घुले हुए बोरिक एसिड की एक बोतल। बच्चे की आँख और मुख के स्राव आदि धोने के लिये।

(१२) आधे या एक औंस की आर्जिराल लोशन की बोतल जिसमें १०% आर्जिराल हो, बच्चे के नेत्रों को स्वच्छ करने के लिये।

(१३) कुछ औंस वेसलीन और मीठा तेल बच्चे के शरीर को स्वच्छ करने के लिये।

(१४) कुछ सेफ्टी पिन माता और बालक के पेट की पट्टी में काम आने के लिये।

(१५) कुछ स्वच्छ कपड़े बच्चे के पोतड़ों के लिये।

(१६) दो टुकड़े मुलमल या टेर ६ या ८ इंच लम्बे। साधारण १०-१२ धागे लम्बा बनाया जा सकता है।

(१७) एक उगालदान।

(१८) पलँग की ६ धुली हुई चादरें, ५ कम्बल आदि।

(१९) शहद व गर्म पानी आवश्यकता के लिये।

(२०) थोड़ी-सी साबुन और एक सोने की अंगूठी बच्चे को पहनाने के लिये।

यह समस्त सामग्री एक मेज या अलमारी में सुंदरता से सजाकर रखनी चाहिए। इसमें से थोड़ी उबला करनी, सद्योदय और एमोनिया मिलित साबुन भी रख लेना चाहिए। सब सामग्री जो बच्चे और माता के लिये एकत्रित किए जाय, उनके विषय में यह पूर्ण सावधानी रक्खी जाय कि वे धूल से सर्वथा सुरक्षित रहें, और स्वच्छ सफेद रक्खी हों। प्रायः अनेक प्रसव के दो सप्ताह बाद ही मर जाते हैं और प्रसूति को भी भयानक रोग हो जाते हैं। इसका मुख्य कारण प्रसव के समय की अस्वच्छता है।

बहुधा गंदे औजारों का उपयोग उस मोमबत्ती के लिये किया जाता है। यह बड़ा भयानक है।

साफ बर्तनों में कई बार्ता पानी उबाला और स्वच्छ बर्तनों में उसका ठंडा किया रहना चाहिए और चिमटियों भी हर समय तैयार रहनी चाहिए।

प्रकरण ६

प्रसव

प्रसव के मुख्य लक्षण दो हैं—प्रथम योनि से रक्त-द्रव-स्राव, दूसरा प्रसव-वेदना। सच्ची वेदनाएँ ठहर-ठहरकर उठती हैं। प्रथम १५ से ३० मिनट के अंतर से और फिर ज्यों-ज्यों प्रसव-काल निकट आता है, शीघ्र आने लगती हैं। प्रसव निकट है या नहीं, इसकी परीक्षा स्पर्शन द्वारा करनी चाहिए।

प्रथम स्पर्शन

चित्र-लिखित रीति से गर्भाशय के मुख पर छूकर देखो। यहाँ भ्रूण का चूतड़ रहता है। यह स्थान सिर की अपेक्षा कोमल प्रतीत होगा।

द्वितीय स्पर्शन

चित्र की रीति से भ्रूण के चूतड़ को माता की पीठ की ओर दबाओ।

प्रथम स्पर्शन

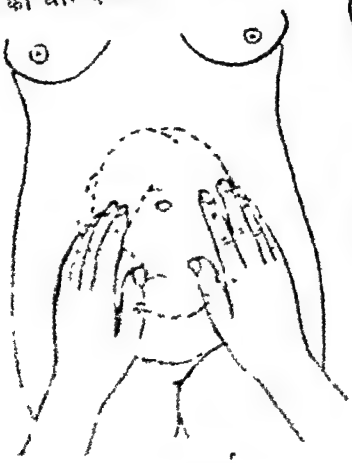

द्वितीय स्पर्शन

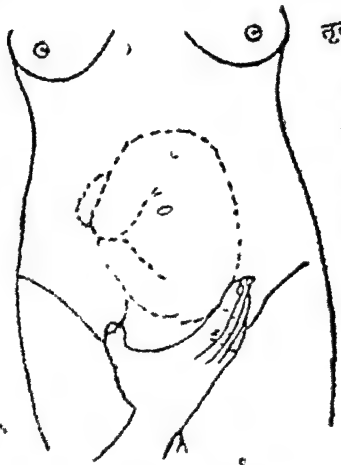

तृतीय स्पर्शन

चतुर्थ स्पर्शन

गर्भिणी के मुख की ओर पीठ करके दोनों हाथों को गर्भाशय के निचले भाग के पास रख कर वस्ति-गुहा की ओर ले जाने का यत्न करो।

प्रसूति-गृह में तमाशाई स्त्रियों की भीड़ नहीं रहनी चाहिए। एक दाई और दो और स्त्री उसकी सहायता के लिये काफी है।

स्त्री को गर्म जल से स्नान कराओ। पेड़ू और योनि को साबुन और गर्म पानी से अच्छी तरह धो दो। प्रसव-काल से जल्दी-जल्दी मल उतरता है। यदि घंटे में प्रसविनी को दस्त नहीं हुआ है, तो उसे एनीमा दे दो, ताकि कोष्ठ साफ हो जाय।

पहली पीड़ा में प्रसविनी [illegible] कर सकता है, परन्तु पीड़ा के [illegible] आने पर [illegible] समय उसका [illegible] या [illegible] हानिकारक है।

चतुर्थ स्पर्शन

दाई को अपनी पीठ और हाथ [illegible] साबुन से [illegible] कर लेना चाहिए। [illegible] कोठरी [illegible] रहना चाहिए। [illegible] होने चाहिए। [illegible] का [illegible] चाहिए।

जब पानी की थैली फूटती है, तब बालक का सिर योनि के मुंह से निकलता हुआ दिखाई देगा। यदि कुछ गड़बड़ नहीं है, तो बालक का मुंह नीचे माता की पीठ की ओर होगा और प्रथम बार खोपड़ी दीखेगी। यदि सिर जल्दी से निकलेगा, तो योनि बुरी तरह चिर जाने का भय है। इसलिये ज्यों ही सिर दीख पड़े, उस पर उँगलियाँ लगाओ, और प्रत्येक पीड़ा में मज़बूती से नीचे को दबाओ। इस प्रकार से बालक का सिर छाती की ओर झुकता है। इस कारण वह योनि के छेद द्वारा सुगमता से निकल आता है। इस प्रकार से सिर का निकलना कुछ मिनटों तक रुक जाता है। पीड़ा के उठने में जो समय का अंतर होता है, उसमें स्नायु स्वयं बढ़ते तथा संकुचित होते हैं। जब वह खुलना प्रारंभ होता है, तब सिर को बाहर निकालने देना आवश्यक है। इस विधि से अंग फटने का भय कम होगा।

सिर निकलने के पीछे थोड़ा ठहरकर शरीर बाहर आता है। ज्यों ही सिर निकले, दाईजी बालक की गर्दन पर लपेटकर देखे कि नाल तो गले में नहीं लिपटी है। यदि नाल लिपटी है, तो बच्चे को जल्द निकालो और यदि नाल गले में लिपटी नहीं है, तो एक स्वच्छ कपड़े

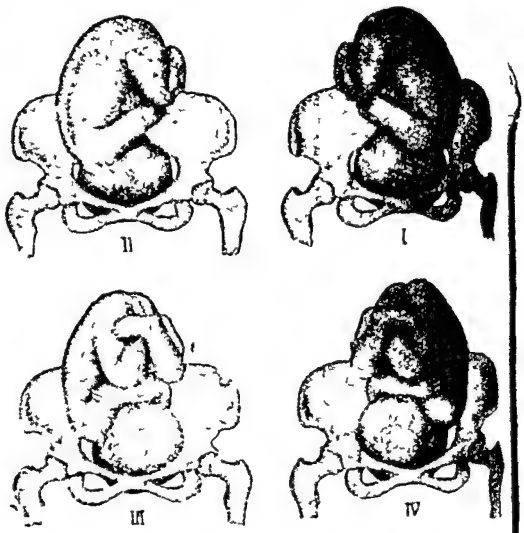

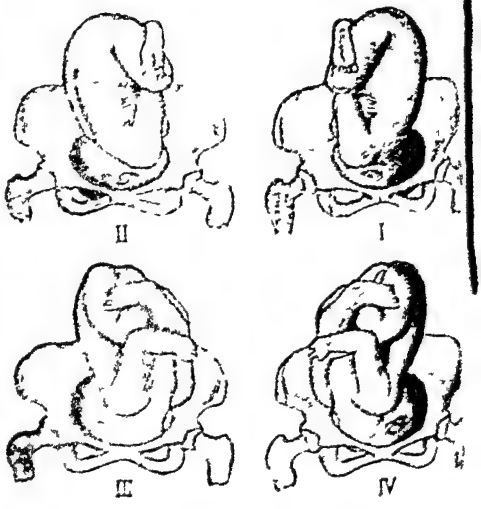

शिशोदय के भिन्न भिन्न रूप

अथवा सोखनेवाली रुई से; बालक के नेत्रों को स्वच्छ करो और पोंछो। और उसका मुंह खोलकर मुंह को भी स्वच्छ करो।

जब बालक उत्पन्न हो गया, तब उसे फलालैन में लपेट दो। उसके मुंह को रगड़ में लोट-पोट न होने दो। बोरिक-सार लोशन की बूंद उसकी आंखों में डालो। यह न हो, तो बोरिक एसिड की बूंद नेत्र में डालो। जन्म के समय बालकों के नेत्रों को न धोने से ही हजारों बालक अंधे हो जाते हैं।

बालक के प्रसव होने पर जब तक नाड़ी बंधे का प्रयोग करें, तब तक दाई या सहायक स्त्री को माता के पेट पर हाथ धरे गर्भाशय को उसमें रहना चाहिए। पेट पर से [illegible]

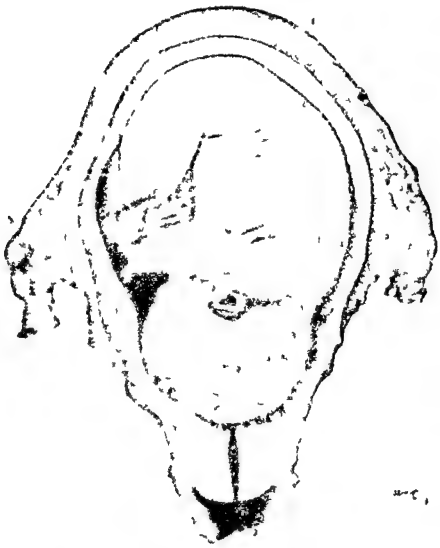

शिरोदय

पर दर्द थोड़ी देर को बंद हो जाता है, और फिर से दर्द होकर आँवल गिरती है। प्राय प्रसव के २० मिनट बाद आँवल गिरती है। नाल के छोर को खींचो मत। न इस बात से भय करो कि नाल माता के पेट में चली जायगी। सिर्फ गर्भाशय को हटना से दबाए रहो, पर अधिक बल न लगाओ। इससे प्रवाह बंद हो जायगा, और आँवल गिर जायगी। पर यदि आँवल न गिरे, तो बच्चेदानी को इस भाँति दबाओ, मानो आँवल को बच्चेदानी से निचोड़कर निकालते हो। [illegible] दर्द से आँवल गिर जायगी।

इसके बाद गर्भाशय को १०० [illegible] दबाए रखना आवश्यक, जिससे [illegible] शक्ति से सिकुड़ जाय। इसके बाद को पट्टी बाँधना चाहिए। [illegible] पेट पर बाँध

लोशन में उबाल लो। यदि इन चीज़ों में ज़रा भी दोष रह गया, तो बच्चे को भयानक रोग लग जाने का भय है।

नाल काटकर उस पर ज़रा-सा बोरिक एसिड बुरक दो। इसके बाद वह टुकड़ा कपड़े का रक्खो, जो छेद करके प्रथम ही रख छोड़ा है। उसके छेद से नाल को निकाल लो, फिर कपड़ा नाल पर लपेट दो, फिर एक पट्टी बालक के चारो ओर बाँध दो कि वह नियत स्थान पर रहे और उसे दाहनी करवट किसी नरम और सूखी जगह पर लिटा दो।

अब प्रसविणी की तरफ़ ध्यान दो। यदि उसका ठीक उपचार हो गया है, तो शीघ्र ही आँवल गिरेगी। बच्चा पैदा होने

बच्चेदानी को दबाना

देनी चाहिए और उसे पिन से अटका देना चाहिए। पट्टी [illegible] देनी चाहिए। इसके बाद [illegible] बोलिक लोशन से जच्चा की जांघ और [illegible] धो देना चाहिए। [illegible] यशेदानी में भी [illegible] दे देना चाहिए कि साफ़ हो जाय। [illegible]

पर यथासंभव उसे हिलावे नहीं। तौलिए की एक गद्दी बनाकर योनि-मुख के ऊपर रख दो और इसे आगे-पीछे पिन के द्वारा लंगोट की भाँति पेट की पट्टी से अटका दो। इसके बाद कमरे से सब हट जायँ। माता को विश्राम करने दो। एक घंटे बाद देखो कि क्या यशेदानी सिकुड़ गई है? सिकुड़ी हुई यशेदानी कड़ी गेंद के समान मालूम होगी। उस समय नाड़ी देख लो, यदि वह १०० से अधिक मालूम हो, तो [illegible] है। ऐसी दशा में इससे [illegible] सावधान रहो। और यदि [illegible]

[illegible]

पौष्टिक आहार खा सकती है। फल और फलों का रस भी उसे दिया जा सकता है। हाँ, ठंडा पानी और ठंडा भोजन उसे न देना चाहिए। प्रसव के बाद एक मास तक वह सौभाग्य शुंठी का सेवन करे, यह सबसे उत्तम बात है। गुड, सोठ, मखाने, पंजीरी, घृत का हलुआ यह देना उत्तम है। ६ दिन बाद खीर, खिचडी, फुलका आदि साधारण भोजन दे सकते हैं। सौभाग्य शुंठी का नुसखा इस ग्रंथ में अन्यत्र दिया गया है।

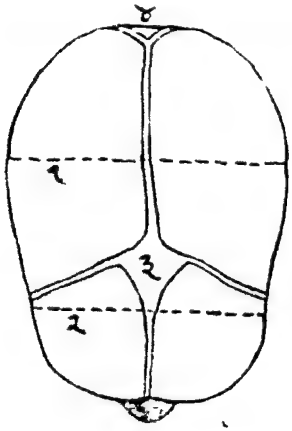

भ्रूण-कपाल

१ पार्श्विकास्थि मध्य व्यास।
२ शंखास्थि मध्य व्यास।
३ ब्रह्मरंध्र।
४ प्रजापतिरंध्र।

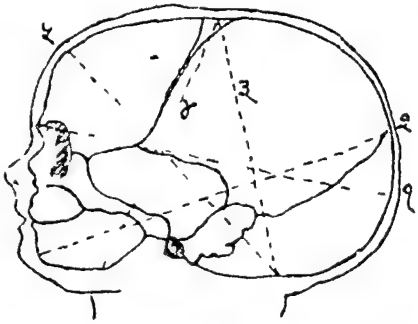

भ्रूण-कपाल का व्यास

१ नासा-मूल से कपालार्बुद तक ४½ इंच।
२ ठोडी से प्रजापतिरंध्र तक ५¾ इंच।
३ सिर का पिछला भाग ३¾ इंच।
४ सिर का अग्र भाग ३¾ इंच।
५ ललाट से ग्रीवा के पिछले भाग तक ३¾ इंच।

प्रकरण १०

प्रसव के बाद का स्राव

प्रसव के बाद १०-१५ दिन तक स्राव होता रहता है। यह स्राव पहले लाल फिर पीला पानी के समान दुर्गंधित रहता है। कभी-कभी यह एक मास तक जाती रहता है। यह इसके अधिक निकलने से दुर्बलता आती है और शीघ्र पेट होने से नींद, [illegible], पेट के भारीपन, कमर में पीड़ा आदि लक्षण हो जाते हैं। इसके लिये 'दशमूल' का काढ़ा या इसका अर्क एक मास तक पिलाना अति उत्तम है।

प्रतिदिन कारबोलिक लोशन और फार्मेलीन सोल्यूशन से योनि को धोना अत्यन्त उत्तम है।

(२) गर्भाशय को पेट पर से ज़ोर से पकड़कर दबाओ, ताकि वह सिकुड़ जाय। जब तक रक्त-प्रवाह बंद न हो जाय, ज़ोर से पकड़े रहो।

(३) बर्फ़ के पानी में या ठंडे पानी में कपड़ा भिगोकर उसे पेडू और योनि में रक्खो, और बारंबार ठंडा पानी डालते रहो। ठंड से रक्त-नालियाँ सिकुड़ जायँगी, और रक्त बंद होने में सहायक होगी।

(४) २-३ फ़ुट की उँचाई से आमाशय पर ठंडा पानी डालो। बालक को तुरंत स्तनों से लगा दो। दूध चूसने से गर्भाशय सिकुड़ता है।

इसके बाद २-३ दिन तक स्त्री को चुपचाप शांत होकर लेटा रहना चाहिए। बैठने या उठने न दो।

प्रसूति-ज्वर

प्रायः प्रसव के बाद ५-४ दिन तक स्त्रियों को ज्वर रहा करता है, पर यह साधारण बात है। परन्तु जो ज्वर प्रसव के ३-४ दिन पीछे आता है, भयानक है। इसके साथ नाड़ी भी अत्यन्त तेज़ चलती है। प्रथम ठंड लगती है। पेट के नीचे के भागों में प्रायः पीड़ा रहती है। सिर-दर्द करता है, रज-स्राव कम हो जाता है।

यह ज्वर वास्तव में अशुद्ध वस्तुओं, दाई के गंदे हाथों और गंदे वस्त्रों की छूत से होता है।

इसमें सर्व-प्रथम कोष्ठ शुद्ध करना आवश्यक है। अरंड तैल का प्रतिदिन जुलाब दो। प्रति चार घंटा बाद लाइसोल की पिचकारी दो। इतने पर भी यदि रोग न दबे, तो तत्काल योग्य चिकित्सक को दिखाओ।

प्रकरण ११

प्रसव-बाधा

अनेक कारणों से प्रसव में बाधाएं पड़ती हैं, जिनमें से प्रधान-प्रधान हम यहाँ लिखेंगे

१—गर्भाशय-दोष—गर्भाशय का मुख [illegible] हो, उसमें कोई [illegible] हो, अथवा उसका मुख न खुले, तो बालक गर्भाशय में ही अटक जाता है, इससे बालक और माता दोनों के प्राणों पर संकट आता है।

२—योनि-दोष—गर्भाशय में कोई खराबी नहीं। बच्चा उसमें से निकल आता है। परंतु योनि किसी कारण से छोटी है, [illegible] भी [illegible] है। या वह कुदरती तौर से इतनी छोटी है कि [illegible], तो भी बालक नहीं निकल सकता।

३—पेशाब की थैली भरी हो गई हो, या योनि के निकट भाग में सूजन हो, तो भी प्रसव रुक जाता है।

४—पेशाब की थैली [illegible] और [illegible] हो तो भी यह कठिनाई आती है।

५—कभी-कभी बच्चे के सिर [illegible] इतना बड़ा हो जाता है कि उसका योनि-मार्ग से निकलना ही कठिन है।

[illegible]

यदि योनि और [illegible] से [illegible] है, तो [illegible] [illegible] है [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] चाहिए।

किसी का मुख बाहर आकर अटक जाता है, शरीर भीतर रहता है। कोई-कोई हाथ-पैर ऊपर करके सिर के बल कील की भाँति योनि-द्वार में ठुक जाता है। किसी के हाथ-पाँव खुर के समान बाहर निकल आते हैं।

ऐसी अवस्था में स्त्रियाँ ठंडी, बेहोश, नीली पड़ जाती हैं, उनके बचने की आशा नहीं रहती।

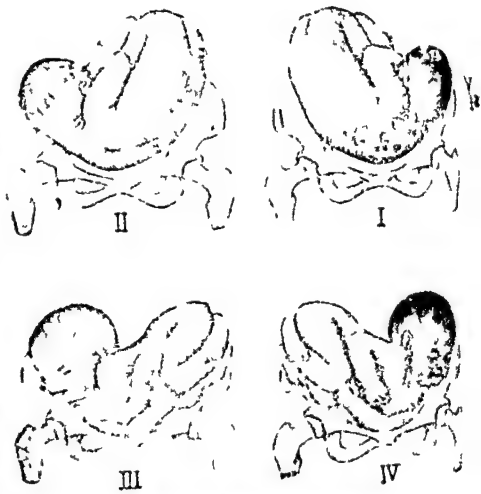

मृढगर्भ के भिन्न-भिन्न रूप

पेट में मरे हुए बच्चे की पहचान

यदि बच्चा हिले-डुले नहीं, पीड़ा उठनी बंद हो जाय, स्त्री का शरीर हरा या नीला हो जाय, स्त्री की साँस में मुर्दे के समान गंध आवे, पेट पर सूजन चढ़ गई हो, तब समझना कि बच्चा पेट में मर चुका।

उसकी चिकित्सा

(१) साँप की काँचली को दो शकोरों में जलाकर राख कर लो और उसे शहद में मिलाकर आँख में आँज दो, इससे यदि बच्चा जिंदा होगा, तो बाहर आ जायगा।

(२) बिंडाल के डोंडे और इंद्रायन की जड़ दोनों को १-१ तोला पानी में पीसकर योनि मार्ग में रख दे। जीता और मरा बच्चा बाहर आ गिरेगा।

यदि इन उपायों से काम न हो, तो अति चतुर डॉक्टर से चीर-फाड़ करावे, जिससे माता के प्राण बच सकें।

अद्भुत बातें जो कभी-कभी प्रसव में हो जाती हैं

(१) अनेक बच्चों का एक साथ होना। परीक्षा से जाना गया है कि प्रति ८७ बच्चों में एक प्रसव दो बच्चों का और प्रति ७,६७५ में एक प्रसव ३ बच्चों का होता है। ५ बच्चे तक एक साथ में होने सुने गए हैं, पर बहुत ही कम। जब दो बच्चे होते हैं, तब प्रायः एक लड़का और एक लड़की होती है। दोनों लड़कियाँ बहुत कम होती हैं और लड़के उनसे भी कम होते हैं।

एक साथ प्रसव रोगी, अल्पायु और बेहोश होते हैं। दो बच्चों का गर्भ पहचाना जा सकता है। पेट की झिल्ली के बीच में गड्ढा होता है। दो हृदयों की धड़कनें सुनाई देती हैं। [illegible] से हो सकता है। जब दोनों बच्चे पैदा हो जायँ, तभी नाल काटना चाहिए।

(२) अस्वाभाविक बच्चा पैदा होना। कभी कोई अंग कम, कभी अधिक, जैसे ६ उँगलियाँ [illegible] होना या होंठ या तालु कटे होते हैं।

प्रकरण १२

गर्भ न रहने के कारण

गर्भ न रहने के अनेक कारण हो सकते हैं—

१ स्त्री वंध्या हो या पुरुष नपुंसक हो।

२ जननेंद्रिय के रोग।

३ मासिक धर्म की विकृति।

४ अतिरिक्त विषयासक्ति।

वंध्या और नपुंसकपने का दोष दो प्रकार का होता है। एक स्वाभाविक जिसमें स्त्री पुरुषों की जननेंद्रिय या तो होती ही नहीं और यदि होती भी है, तो अति स्वल्प। इनकी कोई चिकित्सा नहीं, परंतु ये रोग भ्रम, घृणा, भय आदि कारणों तथा साधारण कारणों से भी हो जाते हैं। यदि किसी उत्तम वैद्य से चिकित्सा कराई जाय, तो लाभ हो सकता है।

जननेंद्रिय के रोगों को खूब ध्यान से दूर करना चाहिए। और उनकी चिकित्सा करानी चाहिए। प्रदर, सूजाक, आतशक और योनि-रोग एवं प्रमेह ही संतान के बाधक हैं। उपर्युक्त रोग की चिकित्सा के बाद 'अशोकारिष्ट' नामक औषधि जो प्रत्येक अच्छे वैद्य के यहाँ मिल सकती है, स्त्री-रोगों को तथा गर्भाशय शुद्धि के लिये तथा चंद्रप्रभा वटी पुरुषों के लिये अति उत्तम वस्तु है।

मासिक धर्म की विकृति के लिये यह दवा अति उत्तम है—

गुलाब के फूल ४ माशा, अनारदाना ४ माशा, दालचीनी ३ माशा, वायविडंग ४ माशा, गुड़ पुराना दो तोले। रक्तोदर्शन के प्रारंभ होते ही ४ छटाक पानी में पकाकर २ छटाक शेष रहने पर छानकर दोनों समय पीना तथा ऋतुकाल के नियमों का पालन करना चाहिए। मासिक धर्म में चाहे भी जैसी विकृति, जैसे दर्द, रक्त कम आना, काला, पीला, दुर्गंधित रक्त आना आदि-आदि दो-तीन मास तक ऋतुकाल में ३ दिन लेने से कष्ट दूर हो जायगा।

उपर्युक्त केवल नाम की एक वनस्पति भी मासिक धर्म के विकारों में अति उत्तम है, उसका विशिष्ट प्रयोग डॉ० दयाशंकर केमिकल वर्क्स ने बनाया है, जो सर्वत्र बिकता है। उसे भी सेवन किया जा सकता है।

गर्भ रहने के उपाय

यदि कोई रोग शिकायत न हो, तो एक मास स्त्री-पुरुष ब्रह्मचर्य से रहें। पुष्टिकर और हल्का भोजन करें।

ऋतुकाल में उक्त काढ़ा मासिक शुद्धि का सी पीवे। स्नान करके ७ दाने शिलाजीत के पीस निगल जाय। दाँतों को न लगने दे। दूसरे दिन ६, तीसरे दिन ११, चौथे दिन १२, इसी प्रकार बाद में १-१ दाना बढ़ाकर निगल जाय। तथा रात्रि को १ माशा नागकेशर चूर्ण कर दूध के साथ फंकी ले ले। यह क्रिया ८ दिन करे। लाभ है, अवश्य गर्भ रह जायगा। उसी मास में या २-३ मास के अंदर।

८ दिन बाद 'महाफलघृत' का सेवन करे। इसका नुस्खा यह है— पीली गौ का ताजा घृत जिसके नीचे बछड़ा हो १ सेर। उसी गौ का दूध ४ सेर। त्रिफला, मुलहठी, बड़, पीपल, दारुहल्दी, कुटकी, वायविडंग, पीपल, नागरमोथा, इन्द्रायण की जड़, सोंठ, जड़, [illegible], महामेदा (ये न मिलें, तो इनके बदले मुलहठी), [illegible], [illegible] (न मिले तो मेदा के फूल), [illegible], सफेद चंदन, हींग, लालचंदन, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] की जड़ें, मिसरी, [illegible], दूर्वा, ये २० [illegible] एक-एक तोला ले इनको [illegible] कूट कर लुगदी कर ले और घी-दूध तथा ४ सेर पानी मिलाकर [illegible] में पकावे। [illegible] जाय, छानकर रख ले। यही फलघृत है। १ से २ तोले तक दूध में [illegible] मिलाकर खाना चाहिए।

यदि तीन मास होने पर भी गर्भ न रहे, तो ये गोलियाँ खावे—

मायफल ४ माशा, [illegible] ४ माशा, [illegible] ४ माशा, [illegible] ४ माशा, [illegible] ४ माशा, [illegible] ४ माशा, [illegible] ४ माशा, [illegible] के [illegible] [illegible] घृतभावना कर [illegible] के [illegible] रस में एक-एक [illegible] की गोलियाँ [illegible] पानी में ऋतुस्नान के बाद ८१ दिन [illegible] गर्भ होगा।

अध्याय पाँचवाँ

शिशु-पालन

प्रकरण १

वायु और प्रकाश

जहाँ तक बन सके, बच्चों को खुली हवा में रखना चाहिए। जब बच्चा घर में हो, चाहे वह सोता हो, चाहे वह खेलता हो, बराबर इस बात का ध्यान रक्खो कि बाहर की खुली और ठंडी हवा निरंतर कमरे में आती रहे। बच्चे को हवा के झोंकों से तो ज़रूर बचाने का ध्यान रखना चाहिए। परंतु हवा ठंडी है, इस बात का कुछ डर नहीं करना चाहिए। स्वच्छ, ताज़ी, ठंडी हवा शक्ति-वर्द्धक है, और बच्चों को सर्दी लगने से बचाती है। सर्दी, खाँसी, ज़ुकाम, डब्बा आदि रोग उन्हीं बच्चों को होते हैं, जिन्हें स्वच्छ और ताज़ी हवा से बिलकुल बचाया जाता है। कोयलों आदि से गर्म किए हुए कमरे की हवा फुर्तीली और तंदुरुस्ती को हानिकर होती है, और बच्चों को सर्दी-ज़ुकाम का शिकार बनाती है। क्योंकि ऐसी हवा में रहनेवाले बच्चे जब कभी बाहर खुली हवा में आते हैं, ठंडी हवा उनकी हड्डियों में भयंकर प्रभाव उत्पन्न करती है।

स्वस्थ शिशु

इसलिये बच्चों को अच्छी तरह गर्म कपड़े पहनाकर बेखटके स्वच्छ और ठंडी वायु में खेलने और सोने दिया जाय। ऐसी आदत जिन बच्चों को पड़ जायगी, वे सर्दी लगने से सुरक्षित रहेंगे और उन्हें कभी खाँसी, डबरा आदि रोग न होंगे।

सोने-जागने का प्रबंध

जन्म लेने के बाद अठवारे तक बच्चे प्रायः २० से २२ घंटे तक सोया करते हैं। इस सोने से लाभ ही है। यदि बच्चा कभी नींद में जगाया जायगा, तो वह सारे दिन रोवेगा।

सबसे उत्तम तो बात यह है कि बच्चे को एक अलाहिदा कमरे में ही रक्खा जाय। अगर जगह की तंगी हो, तो इतना तो ज़रूर करना चाहिए कि बच्चा अलग माता-पिता से कुछ फ़ासले पर पालने पर सुलाया जाय। बाहर की बैठक भी बच्चे के सोने के लिये ठीक की जा सकती है, पर हर हालत में यह बात परमावश्यक है कि जो भी स्थान इस काम को निश्चय किया जाय, पूर्णतया हवादार हो।

बच्चे को अपनी माता के साथ एक ही बिस्तर पर कदापि नहीं सोने देना चाहिए। उसके लिये एक अलाहिदा पालना ज़रूरी है। अगर यह पालना माता-पिता के ही सोने के कमरे में रक्खा जाय, तो उसे माता के पलंग के ठीक सामने काफी फासले से रक्खा जाय, जिससे पालने और पलँग के बीच स्वच्छ वायु का बाहर से सीधा प्रवाह आता-जाता हो, जिससे बच्चे को अपने माता-पिता के श्वास से निकली गंदी वायु में श्वास न लेना पड़े।

स्वच्छ वायु का प्रवाह

उपर्युक्त प्रकार से स्वच्छ वायु में बच्चे को रखने का प्रभाव उसके रंग, शरीर की बढ़ोतरी, पुष्टि, नैरोग्य और प्रसन्नता को देखने से प्रकट हो जाता है। ये परिणाम उस दशा में अधिक उत्तम होते हैं, यदि बच्चा नज़दीक ही किसी अलग कमरे में नित्य सोता रहे। मैं समझता हूँ कि अपने प्यारे बच्चे को अपनी छाती से अलग रात-भर रखने में ख़ासकर अलग कमरे में सुलाने को कोई माता राज़ी न होगी। परंतु यदि वे केवल एक महीने तक जी कड़ा करके बच्चों को इसी प्रकार सोने का प्रबंध करें, तो उसी महीने में बच्चे की उत्तम दशा देखकर वे कभी फिर अपनी पुरानी रीति को पसंद न करेंगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

ऐसे बच्चे जो स्वच्छ और ठंडी वायु के प्रवाहवाले कमरे में नित्य सोते और खेलते कूदते हैं, वे खूब गहरी नींद में ६ से ८ घंटे तक सोते रहते हैं और बीच में जाग और रोकर माता को कभी कष्ट नहीं देते। अतएव यह ज़रूरी है कि एक नरम, मोटा तौलिया या कपड़े का टुकड़ा उसके नीचे ज़रूर बिछा देना चाहिए और एकाध बार ध्यान से देख लेना चाहिए कि बच्चे के मल को पेशाब तो नहीं कर दिया है। यदि कपड़ा भीग गया हो, तो उसे तत्काल बदलकर दूसरा कपड़ा लगा देना चाहिए। बच्चे को रात्रि के समय कदापि कुछ खाने को न दिया जाय।

बच्चे के लिये सर्वोत्तम स्थान

बच्चे के सोने के पालने के स्थान पालने के लिये सर्वोत्तम है। पालने के पास छोटा-सा पर्दा इस तरह लगाना है कि हवा का झोंका बच्चे के शरीर को हानि न पहुँचावे। माता के पलँग के पास बच्चे का पालना रखना अच्छा नहीं है। सबसे उत्तम स्थान खिड़की के पास है। [illegible] यदि बच्चे का पालना रहेगा, तो खिड़की के द्वार से आनेवाली स्वच्छ वायु का [illegible] द्वार से बाहर निकल जायगा। अतएव सर्दी के दिनों में बच्चे के लिये [illegible] है। इस बात से सर्दी में स्वच्छ और ठंडी वायु बच्चे को मिल [illegible] के और सर्दी के [illegible] के [illegible] से बचाव भी हो सकता है। अभिप्राय यह है कि माता

बच्चा दोनों का स्थान आमने-सामने फ्रासले पर होना ही चाहिए, यदि उन्हें पृथक्-पृथक् कमरे में सोने का सुभीता न हो।

बच्चे के लिये सबसे निकृष्ट स्थान

माता के साथ पलँग पर सोना बच्चे के लिये सबसे निकृष्ट स्थान है। उसमें नीचे लिखी हानि होती हैं—

१—नींद में बच्चे का हाथ-पाँव माता की करवट के नीचे आ जाने से उसके कुचल जाने का भय है।

२—माता की साँस के साथ जो ज़हरीली हवा निकलती है, उसमें साँस लेने से बच्चे के कोमल फेफड़ों को अत्यंत भय है।

३—बच्चा अपनी ही साँस की गंदी हवा में बार-बार साँस लेगा। क्योंकि जब उसके मुख और नाक के चारों ओर की हवा गर्म होगी, तब साँस की छोड़ी हुई ज़हरीली हवा का एक बादल-सा उसके चारों ओर बन जायगा और यदि ठंडी और ताज़ी हवा उसके मुख और नाक के चारों ओर होगी, तो साँस की छोड़ी हुई ज़हरीली हवा गर्म और हल्की होने के कारण एकदम ऊपर को उठ जायगी। क्योंकि ठंडी हवा उसे नीचे से ऊपर फेंक देगी।

४—माता की गंदी गर्म श्वास की हवा बच्चे के शरीर और कपड़े को बिल्कुल कमज़ोर बना देती है। बच्चे का शरीर इतना नाज़ुक हो जाता है कि उसे चाहे जब सर्दी पकड़ जाने का खतरा लगा रहता है। ज़्यादातर दिन में यदि ऐसा बालक ज़रा भी ठंडी हवा में छोड़ दिया जाय, तो उसे फ़ौरन सर्दी लग जायगी।

बच्चे को हवाख़ोरी

प्रातःकाल और सायंकाल बच्चे को बिना सुखी और धूल-रहित जगहों में, बाग़ों या बाग़ीचों में ले जाकर स्वच्छ वायु का सेवन कराना चाहिए।

इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि बच्चे को गोदी में लेकर घूमना बिल्कुल हानिकर है, उससे बच्चे को कुछ भी आराम नहीं मिलता। आजकल फ़ैशनेबुल और देशी अनेक प्रकार की गाड़ियाँ बच्चों के इस काम के काम की होती हैं, उन्हीं को काम में लाना चाहिए।

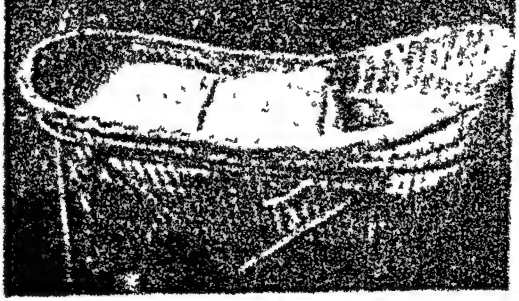

सबसे उत्तम गाड़ी

बच्चे उत्तम गाड़ी वह है, जो बेत या बाँस की बुनी हुई

जालीदार हो और जिस पर ऊपर की छतरी झिनझिने कपड़े की हो, जिसकी जाली में सरलता से स्वच्छ वायु का प्रवाह बहता हो। इस गाड़ी में लेटा हुआ बच्चा अगर सोम लेगा, तो वह गदी हवा ऊपर को उठ जायगी और स्वच्छ हवा बराबर श्वास के लिये मिलती रहेगी।

इस प्रकार की गाड़ियों में मच्छर, मक्खी, और धूप को बचाने के लिये कपड़ा मढ़ दिया जाता है। यह कुछ अच्छा नहीं, अलबत्ता बारीक जाली मच्छर-मक्खी की रक्षा के वास्ते होनी जरूरी है, पर ऐसी नहीं कि जिसमें हवा के आने-जाने में बाधा पड़े। बढ़िया तनज़ेब या मलमल से गाड़ी को मढ़ लेना बहुत उत्तम उपाय है। बच्चे को स्नान करने के १५-२० मिनट बाद शुद्ध वस्त्र पहनाकर हवाखोरी को ले जाना चाहिए। चाहे जैसी सर्दी हो, अगर बच्चे का शरीर अच्छी तरह गर्म कपड़ों से ढका है, तो उसे बिल्कुल खुली हवा में फिराने में किसी बात का खटका नहीं है।

बच्चे का लिटाने की रीति

कुछ विलायती गाड़ियाँ केनविस या आइल क्लाथ की गाड़ियोंवाली चमड़े से मढ़ी हुई होती हैं। बच्चों के लिये ये बच्चे के लिये हानिकर हैं। खासकर गर्मी के दिनों में जब बच्चे के शरीर का तापमान भारी हो जाती है, ऐसी गाड़ियाँ जिनमें चारों तरफ जाली न होने से स्वच्छ वायु का प्रवेश नहीं होता, उस दुर्गन्धी हवा का एक बादल बच्चे के इर्द-गिर्द बना देती है और उसी में बच्चे को सोम लेना पड़ता है, परंतु लेटे हुए बच्चे के मुख को कपड़े से ढक देना उचित और आवश्यकीय कार्य है, जिसमें हवा आने-जाने की गुंजाइश न हो। बच्चे के शरीर की हरारत और गरमी को बढ़ायगी, और उसके चारों तरफ तकलीफ असर पैदा कर देगा। क्योंकि वह हवा गर्मी से इस तरह भर जायगी, जैसे टब में पानी भर जाता है और बच्चा उसी में डूबा रहेगा। अगर ऐसी गर्मी में बच्चा एक कमरे में रात-भर सोने दिया जाय और हवा आने-जाने के लिये खिड़की खुली न हो तो यह और भी भयंकर है। चाहे सर्दी हो या

परंतु किसी भी दशा में बच्चों के पालने या गाड़ी में किसी तरह का ढकना, पर्दा या और ऐसा रुकाव न होना चाहिए, जिससे बच्चे को सांस के लिये स्वच्छ वायु मिलने में [illegible] हो या उसके आस-पास कार्बोनिक [illegible] भर जाय। कभी-कभी धूप और मक्खी से बच्चे [illegible]ाने के लिये दुशाला या कोई भारी चीज़ गाड़ी या पालने पर डाल दी जाती है। [illegible] करने से बच्चे के भाग्य पर कुठार [illegible]। चाहे जिस ऋतु में बच्चे को इस बिल्कुल ढांक देना खतरनाक है। [illegible] जो हवा प्रतिक्षण बच्चे को मिलती है, इस बात को [illegible]।

[illegible] ख़याल बिल्कुल ग़लत है कि दिन में [illegible] की ज़रूरत होती है, परन्तु [illegible] से ज़्यादा हो जाती है। फिर यदि [illegible] जाय कि धूप [illegible], तो [illegible] धूप की छाया में रख सकते हैं। [illegible] सार्वजनिक [illegible], यह भी उसकी नींद को [illegible]। [illegible] सके, तो यह [illegible] गहरी नींद में सोवेगा। [illegible] आराम हो जायेगा, पर इस बात पर विचार करना चाहिए कि [illegible] को देखता है। [illegible] को पहचान करने में [illegible] है कि [illegible] के प्रकाश से [illegible] के द्वारा [illegible] मालूम होता है और [illegible] है।

[illegible] को [illegible] करता है। [illegible] हुआ [illegible] है। [illegible] जाय, [illegible] हो [illegible] जो [illegible] हैं [illegible] होता है।

यदि स्तनों की घुंडी चपटी होने या बच्चे मे चूसने की शक्ति कम होने से उस समय दूध न निकले, तो एक स्त्री को उँगली मे ज़रा-सा घी या तेल लगाकर नरमी से स्तन को दबाना चाहिए, जिससे दूध बच्चे के मुख में पहुँच जाय। अथवा पंप का प्रयोग करना चाहिए।

शुरू के महीनों मे प्रतिदिन तीन घंटे पर बच्चे को पाव घंटे दूध पिलाना चाहिए। यदि दूध पिलाने के समय पर बच्चा सो रहा हो, तो उसे निस्संदेह उसी समय जगाकर दूध पिलाना चाहिए। तंदुरुस्त माता के स्तनों से बच्चे के निरंतर एक-सा चूसने से दूध का प्रवाह निकलता है, जो नौ मास तक के बच्चे के लिये बिल्कुल काफ़ी है।

यदि बच्चे को इस प्रकार स्वस्थ नीरोग दूध मिले, तो बच्चे का रंग गुलाबी हो जायगा और वह जब सोकर उठेगा प्रसन्न होगा, कभी न रोवेगा। शरीर मांसल और दृष्टि प्रफुल्ल होगी। निरंतर वज़न बढ़ेगा। बच्चे मे यह लक्षण न हों, तो अवश्य संदेह करना चाहिए कि उसको दूध अशुद्ध मिल रहा है।

जन्म से दो दिन के भीतर यदि बच्चा बेचैन या प्यासा पाया जाय, तो उसे एक चम्मच गुनगुना पानी दूध पीने पर दे देना ठीक होगा। परंतु यह जल चार घंटे में एक बार से ज़्यादा न दिया जाय।

दूध पिलाने का ढंग

माता सीधी पालथी मारकर बैठे, प्रथम स्तन को पोंछकर एकाध बूँद धरती पर गिराकर बालक के मुँह में दे। पहले दाहना स्तन पिलावे, पीछे बायाँ। लेटकर कभी दूध न पिलावे। इससे बालक का कान बहने लगता है। बालक को गोद में लेकर और एक हाथ उसके मस्तक के नीचे लगाकर मस्तक को ऊँचा रक्खे, तब पिलावे। नींद में न पिलावे। यदि कोई दाया धाया न हो, तो माता ही को बच्चे को दूध पिलाना चाहिए। [illegible] माता का दूध नहीं पीते, उससे स्नेह [illegible] करते। इसके सिवा बच्चे को दूध पिलाने से स्त्री [illegible] है। ऐसी स्त्री को गर्भ-[illegible] नहीं होता।

[illegible] बच्चे को माता दूध पिलावे। [illegible] दूसरे की [illegible] करने लगे।" [illegible] हो, तो [illegible] न रहे,

दूध पिलाने के लिये उठाने की रीति

को दूध पिलाए जाय। इससे [illegible] पोषित [illegible] संसार में [illegible] और नहीं है। कहावत है—"[illegible] दूध पिलाकर बालक का मुँह भी [illegible] चाहिए, जिससे [illegible] चिह्न जब माता के शरीर में होंगे, तभी दूध [illegible] चाहिए

—जब माता के स्तनों में दूध न हो।

—जब माता के स्तनों में [illegible] मालूम हो।

—जब माता की आँखों में [illegible] हो।

—आँखों में पीला हो।

—मस्तिष्क में भ्रमर और [illegible] हो।

—मूर्छा और [illegible] आते [illegible], शरीर [illegible], [illegible] हो, [illegible] हो, पेट में [illegible] हो, [illegible], मुँह पर पीलापन [illegible] हो, [illegible]

महीने तक बच्चे को [illegible] दूध [illegible] पानी [illegible] में [illegible] ले। ऐसा करने से [illegible] होती है।

[illegible] पिलाकर [illegible] को [illegible] दूध [illegible] होते हैं।

[illegible] बालक दूध [illegible] में [illegible] [illegible] होगा, तो यह [illegible]

[illegible]

दूध पीने का काल

यह बात बिल्कुल ठीक-ठीक नहीं कही जा सकती कि कितने दिन तक माता को बच्चे को दूध पिलाने की ज़रूरत है। यदि कोई बाधा न हो, तो बच्चे को नौ महीने तक सिर्फ माता के दूध पर ही रखना चाहिए। इस बीच में बच्चे को बराबर तोलते रहना चाहिए। यदि उसका वज़न बिल्कुल ठीक-ठीक बढ़ रहा है, तो इसका मतलब यह है कि उसे और किसी खाद्य पदार्थ की सहायता की ज़रूरत नहीं है, और कुछ भी चीज़ खिलानी उसके लिये हानिकर हो सकती है।

बहुधा बच्चा जब माता के दूध ही पर रहता है, सुस्त और ढीला-सा रहता है। इसका कारण ज़रूरत से ज्यादा दूध पिलाना है। ऐसी दशा में दूध पिलाने का समय और लंबा कर देना चाहिए। यदि माता दो घंटे में दूध पिलाती हो, तो तीन घंटे में पिलावे। और बच्चे को पाव घंटे तक स्तन पीने दे। इसके बाद भी बच्चा स्वयं स्तन न छोड़ दे, तो माता को अपने हाथ से स्तन छुड़ा लेना चाहिए और ज़रूरत हो, तो चार घंटे तक के समय का अंतर दूध पिलाने के लिये रक्खा जा सकता है।

धाय

यदि किसी कारण-वश दूध पिलाने के लिये धाय की ज़रूरत हो, तो नीचे-लिखे प्रकार की धाय होनी चाहिए—

धाय ऐसी हो कि जितने दिन के बालक के लिये धाय चाहिए, उतने ही दिन का बालक उसकी गोद में हो। दस-पांच दिन की कमी की कोई बात नहीं, क्योंकि ऐसा न होने से उसका दूध बच्चे की प्रकृति के अनुकूल न होगा। धाय में इतनी बातें होनी चाहिए—

१ युवती और सुंदर हो, बहुत मोटी या कृश न हो।
२ उसकी संतान होकर मर न जाती हो।
३ उसे कोढ़, खांसी, दमा, क्षय आदि कोई रोग न हो।
४ शौकीनी तथा अनुभवी न हो।
५ क्रोधी, सुस्ती, बेकार, गंदी और स्नेह-हीना न हो।
६ सुशील, हँसमुख और संतोषी हो।
७ [illegible] न हो। दूसरे-तीसरे की हो। स्तन ऊँचे, कठोर और लंबे हों। यदि ऐसी धाय न मिले, तो उसे बराबर दूध ही देना उत्तम है।

गाय का दूध

[illegible] दूध के मुकाबिले की तो कोई चीज़ है ही नहीं, परंतु [illegible] दूध [illegible] और चीनी मिलाकर यथासंभव माता के दूध के [illegible] बच्चे को दिया जा सकता है।

[illegible] के लिये बिल्कुल ठीक है, पर बच्चे के लिये वैसा नहीं है। बच्चे के

गोंद अकेशिया (Gum Acacia)	१ ड्राम
रोगन बादाम	आधा ड्राम
बाइजोइक एसिड (Bigoic Acid)	पाव ग्रेन
सैकरीन	पाव ग्रेन
पानी (डिस्टिल्ड)	आधा औंस

अलसी के तेल के स्थान पर जैतून का तेल या काडलिवर आइल भी दिया जा सकता है।

लाइम वाटर

चूने का पानी बनाने की विधि यह है कि आध सेर उबले हुए पानी में एक चम्मच पान में खाने का बढ़िया चूना घोल दो और बर्तन को ढक दो। १२ घंटे बाद जब पानी बिल्कुल निथर जाय, तो पानी को फेंक दो। नीचे के जमे हुए चूने में एक पाव पानी और मिला दो। ३ मिनट तक हिलाओ। और १२ घंटे तक रक्खा रहने दो। ऊपर का निथरा हुआ स्वच्छ जल ही लाइम वाटर है। इसे बोतल में भरकर कसकर डाट लगाकर रख देना चाहिए, और जरूरत के समय उसी में से काम में लाना चाहिए और फिर तत्काल डाट कस देना चाहिए। बोतल हवा में खुली रहे।

दूध को रखने की विधि

दूध को उबालकर उसे बहुत ही जल्दी और सावधानी से ठंडा करना चाहिए। यदि दूध को अपने आप ठंडा होने देने को पड़ा रहने दिया जायगा, तो उसमें अनेकों प्रकार के दूषित कीटाणु उत्पन्न हो जायँगे, खासकर गर्मी की ऋतु में, अगर दूध को ठंडा रखने की खासतौर से चेष्टा न की गई, तो वह बहुत शीघ्र खट्टा हो जायगा। यह दूध बच्चे के लिये विष के समान घातक है।

गर्मी में साधारणतया ३ घंटे से अधिक रक्खा हुआ दूध बच्चे को न देना चाहिए। वह दूषित हो जाता है।

दूध को ठंडा बनाए रखने की विधि

बोतल में दूध भरकर उसमें से डाट निकाल दो और ताजी हवा उसमें आने दो। परंतु इस बात का ध्यान रखो, कि धूल न पड़े, इस बात का सावधानी से ध्यान रक्खो, और एक साफ कपड़े में उसे रख दो, फिर उसे मामूली गर्मी की आलमारी या चौकी वगैरा पर रख दो। इस प्रकार से रखकर दूध ठंडा हो। इस विधि से गर्मी में दूध ठंडा बना रहेगा। बहुत लोग इस प्रकार की गलती कर बैठते हैं कि दूध की बोतल सीधे मामूली पानी में रख देते हैं, जिससे दूध की अपेक्षा रक्षा नहीं होती है। सर्दी के दिनों में तो इससे विशेष हानि नहीं होती, पर गर्मी के दिनों में दूध को बोतल बंद के पानी में रखकर ठंडा करना चाहिए।

[illegible] दूध को फेर में डालकर खट्टा कर सकती है, जिससे वह जल्दी [illegible] ठंडा [illegible] रहता। दूध को देर तक अच्छा बनाए रखने का, खासकर तेज गर्मी के

बाहरी दूध पिलाने की सारिणी

बच्चे के वजन का परिमाण	बच्चे की आयु	कितना बार दूध पिलाना	एक बार में कितना पिलाना	दिन रात में कितनी	आहार का परिमाण दूध	आहार का परिमाण गर्म जल	विश्राम घंटे	दूध पिलाने के घंटे
जन्म के समय बच्चे का वजन लगभग ३½ सेर के लगभग होता है, और जन्म के बाद तीन दिन में १ पाव वजन प्रायः कम हो जाता है।								
३॥ सेर	जन्म के तीसरे दिन	६	२॥ तो०	३ छ०	४ तो०	२॥ छ०	३	६,९,१२ प्रात· ३,६,१० सायं
	,, चौथे ,,	६	३॥ तो०	४॥ छ०	१॥ छ०	३ छ०	३	
३से १०छ	,, पाँचवें ,,	६	१ छ०	६ छ०	२॥ छ०	३॥ छ०	३	
	,, सातवें ,,	६	६। तो०	७॥ छ०	४ छ०	४ छ०	३	
३॥। सेर	,, दशवें ,,	६	१॥ छ०	९ छ०	५॥ छ०	३॥ छ०	३	
	३रे सप्ताह का प्रा०	६	१ छ ३॥। तो०	१०॥ छ०	७ छ०	३॥ छ०	३	
४से० ६छ०	४थे ,, ,,	६	२ छ०	१२ छ०	९ छ०	३ छ०	३	
	२रे मास का प्रा०	६	२छ० ६मा०	१२ छ०	१० छ०	२ छ०	३	
५। सेर	,, ,, मध्यकाल	६	२छ० १तो०	१३ छ०	१३ छ०		३	
	३रे मास का प्रारंभ	६	२छ० १।तो०	१३॥ छ०	१३॥ छ०		३	
६०से १छ	,, ,, मध्यकाल	५	२छ० ४तो०	१४ छ०	१४ छ०		४	६,१० प्रात २,६,१० सायं
	४थे ,, प्रारंभ	५	२॥ छ०	१५ छ०	१५ छ०	..	४	
६से.११छ	५वे ,, ,,	५	३छ० १॥तो०	१ से०	१ सेर	..	४	
	६ठे ,, ,,	५	३॥ छ०	१से० १॥छ०	१से १॥छ		४	
७॥ सेर	७वें ,, ,,	५	३ छ० ४तो०	१से० २॥छ०	१से.२॥छ		४	
८ सेर	८वाँ और ९वाँ मास	५	१ पाव	१। सेर	१। सेर	. .	४	

४-४ घंटे बाद दूध पिलाना अधिकांश बच्चों का शुरू से ही उपयुक्त पड़ता है। परंतु बहुत को प्रारंभ के पाँच मास बाद तक ३-३ घंटे में भी दूध पिलाना पड़ता है। वास्तव में बात यह है कि दूध की मात्रा और काल, बच्चे की पाचन-शक्ति, शरीर-स्थिति और आवश्यकता पर निर्भर है। ऊपर की सारिणी साधारणतया ही लिखी है।

१ से ५ मास तक के बच्चे को घंटों के हिसाब से दूध पिलाना

रात काल	६ बजे	—दूध पिलाना	सवेरा	६ बजे	स्नान और दूध पिलाना
" "	७ "		"	७ "	
" "	८ "	—सोना	"	८ "	—सोना
" "	९ "	स्नान और दूध पिलाना	"	९ "	
" "	१० "		रात्रि	१० "	—दूध पिलाना
" "	११ "	—सोना	"	११ "	
दोपहर	१२ "	—दूध पिलाना	"	१२ "	
"	१ "		"	१ "	
"	२ "	सोना	"	२ "	
	३ "	—दूध पिलाना	"	३ "	—सोना
दोपहर बाद	४ "		"	४ "	
"	५ "	—सोना	"	५ "	
			"	६ "	

५ से ९ मास तक के बच्चे को

रात काल	६ "	दूध पिलाना	सवेरा	६ बजे	स्नान और दूध पिलाना
" "	७ "		"	७ "	
" "	८ "	—सोना, दोपहर	"	८ "	
" "	९ "	स्नान	"	९ "	—सोना
" "	१० "	दूध पिलाना	"	१० "	
	११ "	—सोना, दोपहर	रात्रि	११ "	
	१२ "	दूध पिलाना	"	१२ "	—दूध पिलाना
	१ "		"	१ "	
दोपहर	२ "	—दूध पिलाना	"	२ "	
	३ "		"	३ "	
	४ "	—सोना, दोपहर	"	४ "	
	५ "	दूध पिलाना	"	५ "	

बाहरी दूध का परिवर्तन

अगर बच्चा एक महीने का हो गया हो और हृष्ट-पुष्ट हो, तो उपर्युक्त प्रयोगों में से धीरे-धीरे गर्म जल कम करके दूध को बढ़ाते जाना चाहिए। १½ महीने की उम्र में बच्चे को ग्वालिस गाय का दूध दिया जा सकता है। परंतु इस बात का ध्यान ज़रूर रखना चाहिए कि एकाएक दूध की मात्रा में परिवर्तन न किया जाय। बच्चे की पाचन-शक्ति की तरफ़ भरपूर ध्यान देना चाहिए।

अजीर्ण

अगर बच्चे को हरे और लसदार दस्त आने लगें, तो समझिए अजीर्ण हुआ है। ऐसी दशा में दूध की मात्रा में कमी करके गर्म पानी ज्यादा बढ़ा देना चाहिए। अगर एक-दो बार सिर्फ़ गर्म पानी ही दूध की जगह दिया जाय, तो उत्तम है। अगर दस्त थोड़े-थोड़े, बारंबार दर्द करके आते हैं, तो एक चम्मच कास्टर आइल दे देना चाहिए। और सिवा गर्म जल के कुछ न देना चाहिए। जब तबियत साफ हो जाय, तब तीन भाग गर्म जल में एक भाग दूध मिलाकर देना चाहिए।

अजीर्ण होने पर कच्चा दूध हरगिज़ नहीं काम में लाना चाहिए।

प्रकरण ३

नौ महीने बाद का आहार

आश्वलायन गृह्यसूत्र में लिखा है—"[illegible] मधुघृतमिश्रमन्नं प्राशयेत् ।"

अर्थात् छठे महीने बच्चे को अन्न दे । भात के [illegible] दही, शहद, घृत मिलाकर उसे चटावे ।

परंतु सबसे उत्तम बात यही है कि बच्चे को [illegible] जाय । और नौ महीने बाद उसे अन्न दिया जाय । उपर्युक्त [illegible] उत्तम आहार है । प्रतिमास [illegible] बच्चे को तीन सेर [illegible] दिया जा सकता है, परन्तु [illegible] इससे अधिक [illegible] न रहने दिया जाय, किन्तु [illegible] ([illegible]) इनका अभ्यास कराया जाय, जिससे उसके [illegible] मालूम हो ।

यह उचित है कि २४ घंटे के लिये [illegible] परन्तु भात और [illegible] । [illegible] भात में ही [illegible] हैं, जिससे [illegible] चाहिए । बच्चे की [illegible] चाहिए । [illegible] है, [illegible] हो सकते हैं ।

[illegible]

वर्ष की समाप्ति पर बच्चे को दूध और रोटी दी जा सकती है। यदि उसे ज़्यादा देर तक दूध या पतली चीज़ ही दी जायेंगी, तो उसके जबड़े बहुत ही सुस्त हो जायेंगे। शरीर की प्रारंभिक दशा में शरीर की बनावट जिस तरह सुधरती है, उस तरह आसानी से बाद में नहीं सुधरती।

फलों का रस

सब प्रकार के फलों को यों ही बच्चे के हाथ में दे देने की अपेक्षा फलों का रस यदि बच्चों को दिया जाय, तो वह अत्यंत गुणकारी है। तीन या चार मास के बच्चों को मज़े में फलों का रस दिया जा सकता है, संतरे का रस सर्वोत्तम है। नीबू, अंगूर, अनार और सेब के रस भी दिए जा सकते हैं। बेदाग फल को लेकर झटपट उसका गूदा निकालकर और साफ़कर उसे निचोड़कर रस निकालना चाहिए। बच्चे को पिलाने के समय ही ताज़ा-ताज़ा रस निकालना चाहिए। होशियारी से उसे साफ़ मलमल में छानना चाहिए, जिससे उसमें ज़रा भी कड़वाहट न रह जाय। बच्चे के आहार का जो समय है, उस समय के बीच के समय में फलों का रस देना सबसे अच्छा है। ज्यों ही बच्चा सोकर उठे, इस रस में दुगना पानी मिलाकर पिलाओ। पानी उबालकर ठंडा किया हुआ हो। यदि रस बहुत ही खट्टा हो, खासकर नीबू का रस, तो उसमें थोड़ी चीनी मिलाई जा सकती है। शुरू में २० बूँद रस देना चाहिए और फिर उसकी शक्ति के अनुसार ३ या ४ चम्मच तक बढ़ा देना चाहिए।

दूसरे वर्ष का आहार

दूसरे वर्ष में बच्चों के दाँत और मुख को स्वच्छ रखने की तरफ़ पूरा ध्यान देना चाहिए। देखा गया है कि बच्चों के दूध के दाँतों से प्राय काम ही नहीं लिया जाता। माता-पिता बहुत दिन तक बच्चे को सिर्फ़ नरम भोजन देते रहते हैं, जिनके लिये दाँतों की बिल्कुल ज़रूरत ही नहीं पड़ती। बहुत-से बच्चे दूध, खिचड़ी, भात या मिठाइयों पर देर तक निर्भर रहते हैं, इससे उनके दाँतों की जड़ निहायत नाज़ुक और कमज़ोर रह जाती है, और उनमें वह स्वाभाविक शक्ति नहीं आती, जिसके लिये ईश्वर ने उनकी रचना की है।

दूसरे वर्ष में बच्चे की तंदुरुस्ती ख़ास तौर से उसके दाँतों की परिस्थिति पर निर्भर है। यह समय बड़ा महत्व-पूर्ण विषय है, क्योंकि भविष्य की बच्चे की पाचन-शक्ति इसी पर निर्भर है। [illegible] पर ही शरीर की वृद्धि, शक्ति और वजन बढ़ना निर्भर है। प्रथम वर्ष [illegible] पर ही बच्चे को [illegible] खाद्य देना चाहिए कि उसे चबाने और मुँह चलाने का [illegible]। बच्चे की [illegible] वृद्धि के लिये ये बातें अत्यंत साधारण, किंतु [illegible]। बच्चे के रंग का [illegible], जिससे उसके चेहरे का सौंदर्य और मुद्रा [illegible] पर निर्भर है कि उसके मुख को भोजन के समय [illegible] चलने का [illegible] विद्वान का कथन है कि 'दो वर्ष बच्चे की रक्षा कर लो, शेष की [illegible]।'

धूप चढ़ाने से जब जबड़े और चेहरे में रक्त का भरपूर दौरा होगा, उससे मांसपेशियों और कंठ पर प्रायः तौर से अच्छा असर पड़ेगा। इससे रक्त, खांसी, सर्दी, फुंसी आदि का बच्चों पर बहुत कम असर होगा।

बच्चे बहुत सख्त चीज़ को बेशक चबा नहीं सकते, परंतु उनका खाना इतना ऐसा न हो, जिससे कि उनके मुख, दाँत और जबड़े को भरपूर व्यायाम न करना पड़े, तो निश्चित रूप से दाँत घिसेंगे, टेढ़े और निकम्मे हो जायेंगे। हीरे का तरह चमकते हुए दाँत सुदृढ़ता के व्यक्तिगत चिह्न हैं। जो माताएँ बच्चों को देर तक पकड़े और रक्त खाने देती रहती हैं, वे निश्चित रूप से बच्चे के दाँतों के सौंदर्य को नष्ट करेंगी।

से दूध पिलाना न बंद किया जायगा, तो पीछे बच्चे से उसका छुड़ाना बहुत कठिन हो जायगा।

१८ मास बाद सिर्फ़ ४ बार आहार देना काफ़ी है। कोई-कोई बच्चे सिर्फ़ तीन बार ही खाकर प्रसन्न रहते हैं। परंतु दो वर्ष के बाद ही तीन बार भोजन देना ठीक है।

दूसरे वर्ष की गर्मी की ऋतु ख़ास तौर से बच्चे के लिये ख़तरनाक है। अगर बच्चा स्वच्छ न रक्खा जायगा और उसका आहार और हाज़मा नियमित न रक्खा जायगा, तो बच्चा ज़रूर ही रोगी होगा। हज़ारों, लाखों बच्चे इसी समय ऐसी असावधानियों से ही मर जाते हैं।

१ वर्ष से १५ मास की आयु तक भोजन-विधि

पहला भोजन प्रातःकाल ६ और ७ बजे के बीच में होना चाहिए। यदि बच्चे को बिलायती दूध देना है, तब ऐसा करना चाहिए कि एक पाव तैयार किया हुआ दूध (जिसका क्रीम पीछे आ चुका है), उसके बराबर ताज़ा गाय का दूध मिलाकर १५ मिनट तक उबाल लो, फिर जल्दी से ठंडा कर लो। यह दूध २४ घंटे को काफ़ी है। और यदि ताज़ा गाय का दूध है, तो आध सेर दूध उबालकर ठंडा कर लेना चाहिए। शाम को ६ बजे (चौथी बार) नया दूध एक पाव उबालकर काम में लाना चाहिए। इस आहार के समय एक छटाक के अनुमान ताज़ा भात दिया जा सकता है। गेहूँ का दलिया भी यदि पच सके, तो देना उत्तम है। परंतु बच्चे को यदि पतले दस्त आते हों, तो उसे भात ही देना मुनासिब है।

दूसरा भोजन १० और ११ के बीच में। रोटी का मोटा टुकड़ा—चूसने और चबाने को। तैयार दूध २ छटाक, दलिया या भात एक छटाक।

तीसरा भोजन १½ बजे से २½ बजे तक। चावल का भात एक से दो छटाक तक, रोटी का एक टुकड़ा (चुपड़ा हुआ) तैयार दूध दो या तीन छटाक। थोड़ा-सा पका हुआ सेब टुकड़े करके, अगर ज़रूरत हो, तो ज़रा-सी चीनी लगाकर देना चाहिए।

चौथा भोजन ५ से ६ तक, और पाँचवाँ भोजन ९ से १० तक दूसरे भोजन के समान।

दूसरे भोजन के १ घंटे पश्चात् २-३ चम्मच संतरे का रस बच्चे को ज़रूर देना चाहिए। यह [illegible] पेट की हालत के बहुत मुफ़ीद है।

भोजन के समय के बीच में बच्चों को यदि प्यास लगे, तो उन्हें स्वच्छ उबाला हुआ पानी पिलाना ही चाहिए। इसको छोड़कर बीच में बच्चे को न तो कुछ खाने को देना चाहिए और न पीने को।

१५ से १८ मास की आयु तक की भोजन-विधि

[illegible] दिनों में [illegible] सकता है। सिर्फ़ सूखी चीज़ें—जैसे, रोटी [illegible] दूध में [illegible] सकता है। दूसरे भोजन में दो या तीन चम्मच सूखी दूध में [illegible]

हुई दे सकते हैं। तीसरे भोजन में खूब पतली खिचड़ी दी जा सकती है। और कभी-कभी उबला हुआ आलू दिया जा सकता है। थोड़ा सेब भी दो-एक बार देना चाहिए। और भारे बच्चे को पके सेब का शौक बढ़ाना चाहिए।

१८ मास के बाद

१८ मास के बाद सिर्फ चार बार भोजन देना काफी है। इस बीच में भरपूर नींद और समय पर ही भोजन करने की होनी चाहिए। भोजन को समय-कुसमय देना बच्चों की पाचन-शक्ति का जिस तरह नाश करता है, उसी तरह और कोई दूसरी हानि नहीं करता।

बनाने बच्चा का आहार

मिठाइयों के स्वाद से बच्चे को बिल्कुल अपरिचित ही रक्खा जाय, मिठाइयों से बच्चे को दूर रखना मानो उन पर बहुत कुछ दया रखनी है।

फलों में भी ऐसे अधिक फल नहीं हैं, जो बच्चे को दूसरे वर्ष में दिए जा सकें। जब बच्चा १४-१५ मास का हो, तब सेब का एक टुकड़ा चूसने को दे सकते हैं। यदि बच्चे को कब्ज रहता है, तो नारंगी का रस देना बहुत अच्छा है। दूसरे फल बच्चों की प्रकृति के योग्य नहीं होते और उनके देने से अनेकों बीमारियों के हमले का भय रहता है। अलबत्ता कभी-कभी अंगूर का रस दिया जा सकता है। बच्चे को कब्ज़ियत के लिये इससे उत्तम और कोई उपाय नहीं है कि उन्हें फल और सब्ज़ी की मात्रा बढ़ाकर दी जाय और उन्हें ताज़ी हवा में खूब खेलने दिया जाय।

दाँतों की सफाई के ख़याल से भोजन के बाद में एक ताज़ा सेब दाँतों से काट-काटकर खाने को देना हजार बुरा से कहीं ज़्यादा उत्तम है। अगर दूसरे वर्ष के आरंभ में ही एक बच्चे को पूरा सेब स्वयं खाने को दिया जाय, तो निगलने, चबाने और चूसने की शक्ति की वृद्धि करेगा। साथ ही होंठ, ज़बान, दाँत और तालू को साफ रक्खेगा। बच्चे को सेब पर काफी परिश्रम करना पड़ेगा। फिर भी पेट में ज़्यादा वज़न न जायगा। १८ मास से दो वर्ष तक की आयु के बीच में बच्चा एक पूरा सेब खा सकता है।

दाँतों को साफ़ रखने की सदा हिदायत रखनी चाहिए। टमाटर, दम किए आलू, प्याज़ आदि वस्तु बच्चों को नहीं देनी चाहिए। ज़्यादा घी की बनी चीज़ें और पकवान भी नहीं देने चाहिए। चाय, काफी, सोडा, बर्फ़, केला, कम पके फल, कच्चे फल, अचार, मुरब्बे भी नहीं देने चाहिए।

बच्चों का वज़न

बच्चे को शुरू में कुछ महीनों तक हर हफ्ते वज़न कराते रहना चाहिए। और उसके बाद प्रतिमास वज़न कराते रहना चाहिए, जिससे यह मालूम होता रहे कि बच्चा वृद्धि कर रहा है या कमज़ोर हो रहा है। पतले दस्त आना या इसी प्रकार की साधारण शिकायतें बच्चे के वज़न की बढ़ोतरी पर ख़ास प्रभाव पड़ता है, इसलिये यदि बच्चे के वज़न को एक चार्ट पर ख़याल में रक्खा जायगा, तो इन रोगों के बढ़ने की शंका ही न रहेगी।

जन्म के बाद शुरू के कुछ दिनों में बच्चा पाव-भर के अनुमान वज़न में बढ़ता है। इसके बाद एक या दो सप्ताह तक वज़न की वृद्धि अनिश्चित रहती है, इसके बाद वृद्धि [illegible] पर निर्भर रहती है।

[illegible] बच्चे का वज़न समय पर कम-ज़्यादा होता रहता है। कभी-कभी [illegible] हो जाता है। इसका कारण, कभी-कभी साधारण पाचन-शक्ति की [illegible] हो जाती है। इस अवसर का ख़ास तौर पर ख़याल रखना चाहिए।

प्रतिमास [illegible] बढ़ना एक बड़ी अच्छी बात है। परंतु कुछ कभी कभी [illegible]

भी जाय, तो चिंता नहीं। स्वाभाविक दाँत निकलने के समय से जब कि बच्चे की आयु १२ मास की हो। बच्चे यदि खूब खेलने का अवसर पाते हैं, तो उनका वजन अवश्य ही बढ़ता है।

माताओं को बच्चों के अधिकाधिक बढ़ाने से ही प्रसन्न नहीं होना चाहिए। न उन्हें बारंबार बिना कारण तोलते ही रहना चाहिए। तोलने का वहम अच्छा नहीं होता, बच्चों को पोंगा-दास बनाना कोई महत्व-पूर्ण बात नहीं है, उनकी वृद्धि सिर्फ नियमित रीति से ही होनी उचित है, जिसका तारतम्य दूध और मास-पेशियों की वृद्धि पर निर्भर हो।

चौथे मास के दूसरे हफ्ते से बच्चे का २ पा० से ४ पा० तक वजन हर हफ्ते बढ़ता है। ४ से ६ मास तक २ पाव प्रतिमास के हिसाब से बढ़ता है। और ६ से १२ महीने तक आध सेर वजन बढ़ता है। ६ मास के बच्चे का वजन जन्म के वजन से दुगना होना चाहिए और एक वर्ष के बच्चे का वजन १० सेर से

दस्त

बच्चे को प्रातःकाल अधिक-से-अधिक १० बजे तक ज़रूर दस्त हो जाना चाहिए। यदि १० बजे तक दस्त न हो, तो उसका फौरन् ही बंदोबस्त करने में ज़रा भी सुस्ती नहीं करनी चाहिए।

जन्म के बाद कुछ दिन तक बच्चे को रोज़ दो या तीन दस्त नित्य होते रहते हैं। एक मास बाद प्रतिदिन एक दस्त होता है। बहुत-से बच्चे दो बार दस्त जाते हैं और कुछ दो से ज्यादा। बात यह है कि दस्त की गिनती पर ही ध्यान देना ज़रूरी नहीं है। दस्त के रूप-रंग को देखकर इस बाबत कुछ निश्चय करना चाहिए।

सबसे ज़रूरी बात तो यह है कि दस्त आने का समय नियमित हो। ठीक समय पर बच्चे को दस्त के लिये ज़रूर बैठाओ। प्रातःकाल उठने के समय और तीसरे पहर ३-४ बजे का समय इसके लिये उपयुक्त है। यदि ठीक अभ्यास कराया जाय, तो दो मास के बच्चे को ठीक समय पर दस्त जाने की आदत अवश्य पड़ जायगी। बच्चे को प्रथम माता के घुटनों पर बैठाने का अभ्यास कराना चाहिए।

यदि ठीक समय पर बच्चे को दस्त न आवे, तो बच्चे को जन्मघुट्टी में मिलाकर पाँच से दस बूँद तक कास्टर आइल देना चाहिए। अथवा पिचकारी से, जो ख़ासतौर पर बच्चों ही के लिये बनाई हुई मिलती है, दस्त कराना चाहिए। एनीमा में २½ तोले से ज़्यादा पानी नहीं लेना चाहिए। पानी गुनगुना हो और उसमें बहुत ज़रा-सा खाने का नमक डाल लेना चाहिए। साधारण काँच की पिचकारी द्वारा भी यह पानी बच्चे की गुदा में पहुँचाया जा सकता है। साबुन कभी न मिलाना चाहिए, इससे बच्चे के पेट में दर्द होने लगेगा। माता का दूध पीनेवाले बच्चे को यदि कब्ज़ है, तो माता को कब्ज़ ज़रूर होगा, इसलिये माता को कब्ज़ दूर करने की दवा ज़रूर लेना चाहिए।

प्रकरण ४

वस्त्र

[illegible] बारह आना गजू की [illegible] के लिये [illegible] है। [illegible]
[illegible] यह विशेष उपयोगी है। इससे [illegible] गर्मी भी [illegible] मिल जाता है, और [illegible]
[illegible] से रक्षा भी होती है। साथ ही [illegible] पसीने से गीला भी [illegible]
[illegible] पसीने से गीला कपड़ा पहनाना [illegible] के लिए [illegible] है।
[illegible] के ऊपर कुछ महीन, नरम और [illegible] [illegible]
[illegible]। बहुत से बच्चे कड़े और [illegible] वस्त्र से [illegible]
[illegible]। घटिया फलालैन बच्चों की नरम [illegible] पर बहुत ही [illegible] होता है। [illegible]
[illegible] होने के कारण [illegible] [illegible]
[illegible] भी [illegible] होती है।

छाती किसी भी दशा में कसी न रहनी चाहिए। छोटे होते ही कपड़ों को बदल देना चाहिए। वस्त्र इस ढंग से पहनाए जायँ कि चाहे जब उनमें भीतर हाथ डाल दिया जाय।

मैं यह अनुभव से कह सकता हूँ कि यथासम्भव बच्चों को नंगा रखना उनकी बढ़वार के लिये सर्वोत्तम है। किसानों के छोटे-छोटे बच्चे अक्सर नंगी हालत में जमीन पर पड़े लोटा करते हैं। वे बहुत शीघ्र हृष्ट-पुष्ट और चलने के योग्य हो जाते हैं। प्राकृतिक उत्ताप और वायु से उनके शरीर का सीधा सम्पर्क होकर बच्चे की हड्डियाँ और नसें बहुत दृढ़ हो जाती हैं। बच्चे को गोदी में लिए रहना उसे लुंजा बनाना है।

बच्चों के वस्त्र

पोतड़े

जन्म से दो-तीन मास तक बच्चे पड़े पड़े ही दस्त जाते हैं। पुराने धोती के टुकड़ों को इस अवसर पर काम में लाया जा सकता है, परन्तु ये टुकड़े निरंतर धोकर सुखाए जाने चाहिए। मल-मूत्र से भरे हुए वस्त्रों की सह बदलकर पड़े रहने देना बुरा है। ऊनी कपड़ों को सोडे से कभी न धोना चाहिए। सोडे से धोने से वे कड़े हो जाते हैं। १०-१५ दिन बाद नए पोतड़े बदल देने चाहिए।

मोजे और जूते

अगर [illegible] सर्दी न हो, तो यही मुनासिब है कि बच्चे के पैर, टाँग और घुटने बिल्कुल [illegible] रहें, जिससे उनकी सर्दी की सहन-शक्ति का अभ्यास हो जाय। पर यदि सर्दी का समय हो और बच्चे पैदल चलने के योग्य हों, तो उन्हें गर्म मोज़े और जूते पहनाने चाहिए। मोज़े [illegible] सर्दी [illegible] निकाल देने चाहिए। जूतों की चोब पतली न हो, उनके आगे के हिस्से की बनावट बिल्कुल पैर की बनावट के अनुसार ही हो। अँगरेज़ी बूट जिनकी नोक पतली [illegible] है, [illegible] पैर [illegible] हो जाते हैं। इसलिये जूते यदि [illegible] हों, तो [illegible] चाहिए जिनकी नोक की बनावट बिल्कुल पैर की बनावट के [illegible] हो और [illegible] होने हों तो फौरन बदल देने चाहिए।

[illegible] बच्चों को [illegible] पैरों को आज़ाद दशा में रखने पर बहुत [illegible] बहुत ही अच्छा है। परंतु बच्चों को [illegible] पैदल चलने के [illegible] पैदल न [illegible]। बच्चों को दूध पिलाकर या [illegible] दूसरे उनके पेट में दर्द पैदा हो जायगा।

प्रकरण ४

बच्चों की पालन-विधि

जब तक बच्चे की नाल (टूँटी) का प्रलम्ब अच्छा न हो जाय, तब तक बच्चे को रोज स्नान न कराना चाहिए। प्रथम बार कुछ-सा मीठा तेल लगाकर सीधे सीधे से बदन साफ कर देना ही अच्छा है। जब तक नाल का प्रलम्ब न अच्छा हो, तब तक नीचे लिखा उपचार करना चाहिए—

बहुत बारीक मैदा	१½ औंस
बोरिक एसिड	१½ ,,
जिंक सोलफाइट	१½ ,,

तीनों को मिला लेना चाहिए। साफ करते वक्त इस चौर पाउडर [illegible] । प्रथम बार नाल को गर्म पानी से धीरे-धीरे धोना चाहिए। फिर इस पाउडर से उसे अच्छी तरह सुखाकर उपर्युक्त पाउडर छिड़क दें। फिर एक कपड़े के बीच में छेद करके उस पर रख देना चाहिए। [illegible] उपर एक पट्टी सफाई से लपेट दी जाय। उपर्युक्त [illegible] दो जायगी, तो भी उसे साफ करने में कुछ भी [illegible] दूसरे दिन फिर साफ कर देना चाहिए और उसी तरह पाउडर [illegible] । [illegible] तक यह क्रिया [illegible] चाहिए।

बहुधा बच्चों का टूँटी पक जाता है और वे बहुत [illegible] । [illegible] इसलिए [illegible] इस काम में [illegible] चाहिए।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

परंतु जो बच्चे ठंडे रहते हैं यानी जिनकी साधारण शरीर की गर्मी कम है अथवा कमज़ोर हैं, उन्हें उत्तेजन के स्थान पर स्नान से और भी दब जाने का भय रहता है। जब तक रक्त के अंदर नार्मल गर्मी न उत्पन्न हो जाय, तब तक जल के स्नान के स्थान पर तेल ही की मालिश उत्तम है, और इसके बाद भी जब कभी ऐसे बच्चों को स्नान कराया जाय, गर्म पानी से कराया जाय या स्पंज किया जाय। और उससे प्रथम गर्म तेल से शरीर पर मालिश बराबर की जाय और यह क्रिया लगातार रोज़ कई सप्ताह तक करनी चाहिए।

साधारण स्नान

यदि सर्दी के दिन हों, तो स्नान के लिये बच्चे के कपड़े उतारते समय इस बात की सावधानी रखनी अत्यंत आवश्यक है कि स्नान से प्रथम, पीछे या नहाती बार ही उसके शरीर की गर्मी को कोई हानि न पहुँचे। कपड़े उतारो, नहलाओ और झटपट वस्त्र पहना दो। अकारण चमड़ी पर हवा मत लगने दो। स्नान का पानी गर्म और ठंडा मिला हुआ हो। बंद कमरे में स्नान कराया जाय। बच्चे के स्वच्छ वस्त्र और सूखा बैसोड़ा तैयार रखें। नहलाते समय बच्चे की आँख, कान, नाक, होंठ या चमड़ी को [illegible] साफ़ करना और सुखाना चाहिए। परंतु बच्चे के मुँह को व्यर्थ रगड़कर [illegible] बच्चे को [illegible] [illegible] है।

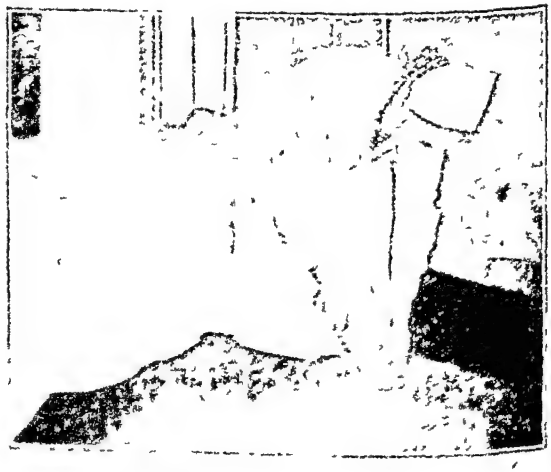

बच्चे को स्पंज करने की रीति

करा देना चाहिए। कुछ ही सेकेंड में जल-क्रिया समाप्त करके रगड़कर शरीर सुखाना चाहिए। शरीर पोंछने का अँगौछा बिल्कुल गर्म रहना चाहिए। फिर फ़ौरन् वस्त्र पहनाकर उँगली पकड़कर टहलाओ, या दौड़ने-खेलने की आज्ञा दो। पर यह काम स्वच्छ वायु में होना चाहिए। और १५-२० मिनट से अधिक देर तक नहीं होना चाहिए। बच्चा जिसमें प्रसन्न रहे, ऐसा खेल उसे बताना चाहिए।

बच्चे का स्नान

ठंडे पानी में स्नान और उसके बाद वास्तविक कसरत और खेल बच्चे को स्वास्थ्य प्रदान करने में सबसे उत्तम साधन है। यह सिर्फ़ बच्चों के लिये ही नहीं, प्रत्युत प्रत्येक के लिये जन्म-भर को उत्तम है।

अपेक्षा कई गुना अधिक सर्दी को पकड़ती है, इसलिये जब-जब उसे खुली हवा में ले जाया जाय, तब-तब उसके शरीर को गर्म बनाए रखने के लिये उसे अच्छी तरह गर्म वस्त्र पहना दिए जायँ। कुछ माताएँ खासकर गर्मी के समय में भी बेअदाज़ वस्त्र बच्चों को पहना देती हैं, यह बात भी अच्छी नहीं। इससे बच्चों की चमड़ी नाज़ुक और शीघ्र सर्दी पकड़नेवाली बन जाती है। नंगे रहनेवाले बच्चों की अपेक्षा खूब लदे हुए रहनेवालों को ही सर्दी आदि की बीमारियाँ हुआ करती हैं।

बहुधा बच्चों के वस्त्रों को एकाएक परिवर्तन करने में भूलें हुआ करती हैं, जिन पर माताओं का ध्यान ही नहीं जाता। जैसे अभी गर्म फलालैन का कुर्ता उतार कर सूती वस्त्र पहना दिया! ऐसा न होना चाहिए।

सोने के समय के वस्त्र

सोने के समय बच्चे को कभी नंगा न सुलावे। उसके वस्त्र ऐसे हों, जो उसे आराम दें। खासकर सर्दी में सोने के वस्त्रों में सबसे बड़ा गुण यह होना चाहिए, जो अधिकाधिक गर्म हों और साथ ही अधिकाधिक हल्के हों, जिससे बच्चे को साँस लेने में ज़रा भी कष्ट न हो न करवट बदलने में अड़चन हो। यथासंभव ऊन के वस्त्र अत्यंत उपयोगी हैं। खूब बुने हुए शाल, दो-तीन तह करके डाल देना सबसे उत्तम है। भारी-भारी कंबलों की अपेक्षा नई भरी हुई हल्की रज़ाइयाँ उत्तम हो सकती हैं। यह वस्त्र पतला और हल्का होने पर भी गर्म रहेगा, जो इसका बुना होगा और जिसमें हवा का प्रवेश न होगा। यदि बच्चा ठंडी हवा में सोता हो, तो इस बात का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है कि कहीं से ठंडी हवा उसके शरीर पर तो नहीं लग रही है।

बिछौने

बच्चे की खटोली पर [illegible] सदा स्वच्छ [illegible] बिछौने। [illegible]

बच्चे का [illegible]

ह तोशक पर इस तरह जमा देनी चाहिए, जिससे बिछ[illegible] न जाय। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] सी तरह मोड़कर पिन से जमा दी जाय। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हों, [illegible] [illegible]। बिछौना कड़ी न हो, तो रबड़ की चादर में [illegible] दो। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गा। उसे अधिक उम्र तक उठाओ। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] सर्वत्र ऐसा देखा जाता है। इससे बच्चे का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] तथा करवटें लेने में कष्ट होता है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

अगर बिछौना काफी नर्म है, तो बच्चा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हम भी डर नहीं है। उससे तो उसका [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] होगा। की वृद्धि होगी, मांस [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] होगी। बिछौना [illegible] [illegible] कमरे में बच्चे को सुलाने से [illegible] होगा, कमज़ोर, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] जायगा।

प्रकरण ७

फुटकर बातें

बच्चों के लिये सुनहरी नियम—

१—बच्चों को सदा माता या धाय का दूध पिलाना चाहिए। यदि यह संभव न हो, तो बच्चे को दूध (Humanised milk) देना चाहिए, परंतु एकदम अधिक मात्रा में नहीं, धीरे-धीरे। इसकी विधि इसी अध्याय के दूसरे प्रकरण में देखना चाहिए।

२—नियमित रीति से दूध पिलाओ। समय-कुसमय नहीं। रात्रि को दूध मत पिलाओ। दूध पिलाने का समय हो गया हो और बच्चा सो रहा हो, तो बेशक जगाकर पिला दो। नियमित समय के बीच में कुछ भी खाने को मत दो। यदि प्यास हो, तो जल दे सकते हो।

३—यदि बच्चे को ऊपरी दूध पर ही रक्खा जाता हो, तो बोतल में लंबी नली मत लगाओ, सिर्फ रबर का मामूली टूँटना लगाओ। बोतल और टूँटना दोनों अच्छी तरह साफ़ रखने चाहिए। दूध को बोतल में डालने के समय उसे हिलाओ मत। पिलाते समय बोतल को हाथ में पकड़े रहो।

४—जहाँ तक संभव हो, बच्चे को कोई दवा मत दो, सिर्फ चिकित्सक की सम्मति से उसका पालन करो।

५—तरह तरह के बने हुए विलायती खाद्य मत खिलाओ। खासकर नौ मास की उम्र से प्रथम तो किसी हालत में मत दो।

६—जो स्त्रियाँ अपने आपको 'तत्त्ववेत्ता' इसलिये कहें कि उन्होंने बहुत-से बच्चे पैदा किए और उनकी में रहते हैं, उनकी शिक्षाओं पर ध्यान मत दो।

७—बच्चे को बिस्तर पालने में ही एक जगह पड़ा मत रहने दो। बल्कि दिन-भर में कई बार उसे उठाओ, खेलाओ, और इधर-उधर घुमाओ।

८—बच्चा जब तक दूध [illegible] स्वतंत्रता से हाथ-पैर नहीं फेंक लेगा, पुष्ट न होगा और इसी [illegible] उसका स्वाभाविक रोना भी [illegible] के लिये एक उत्तम कसरत है।

९—कपड़े [illegible] हल्के, [illegible], [illegible] और [illegible] के हों, तो बच्चे के हाथ-पैर [illegible] [illegible] न हो। [illegible] कुछ [illegible] की बढ़वार मारी जाय, और [illegible] [illegible] हाथ-पैर [illegible]।

१०—[illegible] को [illegible] में [illegible] रहने दो। [illegible] बार [illegible] [illegible] पर मत डालो।

११—बच्चे को हवा के ठंडे झोंकों से बचाएँ। शरीर को [illegible] से ढाँकने पर फिर उसे हवा से कोई भय नहीं रहता।

१२—प्रारंभ के छः महीनों तक प्रतिदिन गुनगुने पानी से स्नान कराना चाहिए। स्नान के बाद झटपट सूखे वस्त्र पहना देने चाहिए। [illegible] सूखे वस्त्र से पुनः लेना चाहिए। जब बच्चा कुछ खिसकने लगे, तब ठंडे पानी से स्नान कराना प्रारंभ कर देना चाहिए।

१३—सबसे अधिक इस बात का ध्यान रखना [illegible] कि बच्चा [illegible] और [illegible] स्वच्छ और निर्दोष खावे। बच्चे को नियमित रीति से प्रतिदिन [illegible] दे देना चाहिए।

१४—बच्चे स्वभाव से ही निद्रालु होते हैं।

१५—नियमित भोजन और [illegible] को [illegible] जीवन और स्वास्थ्य के लिये [illegible] होते हैं।

१६—अनियमित भोजन और [illegible]

आठवाँ सप्ताह—अपनी आँखों से कुछ देखकर या देखने के इरादे से सिर या शरीर को इधर-उधर कर सकता है। चेहरों पर ध्यान देता है। अपनी माता को पहचानता है।

चौथा महीना—माता-पिता और परिजनों से अधिकाधिक परिचित हो जाता है, परंतु अनजान आदमी से अत्यंत भय खाता है। इस समय वह लज्जाशील भी होता है।

पाँचवाँ महीना—जोर से रोता और हँसता है। पहली बार जब बच्चा जोर से हँसता है, तब उसकी हँसी हज़ारों टुकड़ों में टूट जाती है।

छठा महीना—जन्म से दूना वजन हो जाता है।

पाँच से सात मास तक—झुनझुने और खिलौनों को हाथ में पकड़कर उनसे खेलता है। चिल्लाना, शोर करना और इधर-से-उधर चीजों को फेंकना पसंद करता है। बारंबार इस प्रकार की हरकतें करता है। प्रत्येक वस्तु मुँह तक ले जाता है। अपने घुटनों पर घिसकता है। वह स्वयं अपने आपको एक खिलौना बना लेता है। उसे इस बात की कुछ भी धारणा नहीं होती कि वह अपने पैरों खड़ा हो सकता है या नहीं। वह अपने घुटनों के बल खूब इधर-उधर घिसकना चाहता है। ६ मास का बच्चा स्वयं घूमने लगता है। दर्द और सुख को ठीक-ठीक अनुभव करता है।

प्रकरण ८

नियमित आदतों का अभ्यास

बच्चों के लिये ठीक समय पर, नियमित रीति से खाने, सोने, [illegible] की आदत होना निहायत ज़रूरी है। [illegible] जाने का अभ्यास नहीं कराया गया है, वे सदा [illegible] असुविधा रहती है। जहाँ बच्चों की आदतें नियमित रखने का [illegible] वहाँ पर बड़ा गंदा और अस्त-व्यस्त रहता है।

प्रायः स्त्रियों की आदत होती है कि [illegible] दे दिया, चाहे वह [illegible] पेट में दुःख होने से [illegible] है कि बच्चों को दिन-भर ठूँस ठूँसकर [illegible] आदत होती है कि वे कुछ मिठाई या और [illegible] रहता है। वे नहीं खाना चाहते, तो भी [illegible] दिया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि बच्चों [illegible] है। बच्चों के [illegible] रंग, [illegible] [illegible] है।

कहने पर भी वह मानती न थी। उसका कहना था कि बच्चे ने कई दिन से कुछ नहीं खाया न खाने से कैसे जिएगा!

जो बच्चे सोने और खेलने का नियमित अभ्यास नहीं रखते, वे सदा माता को दुख देते हैं। वे दिन-भर वक्त-बे-वक्त सोते हैं और रात को रोते, और जागकर माता को कष्ट देते हैं। ऐसे बच्चे प्रायः चिड़चिड़े हो जाया करते हैं।

यह बात पीछे कही जा चुकी है कि बच्चों को सदैव नियमित समय पर, खूब पाबंदी के साथ आहार दिया जाना चाहिए और नियमित समय से पूर्व उन्हें कुछ भी न देना चाहिए। इस बात पर बारंबार ध्यान करना और बहुमूल्य उपदेश समझकर उसका पालन करना चाहिए।

ठीक समय पर बच्चे का सुख की नींद सोना, उसकी तंदुरुस्ती का सबसे उत्तम प्रमाण है। यदि यह देखा जाय कि बच्चे की नींद में गड़बड़ है, तो यह समझना चाहिए कि बच्चा सुखी नहीं है, उसे कुछ-न-कुछ तकलीफ़ ज़रूर है। पर जिन बच्चों के सोने का कोई नियत समय ही नहीं है, उनकी तंदुरुस्ती या गड़बड़ी का कुछ पता लगना बहुत मुश्किल है।

सबसे अच्छी बात तो यह है कि बच्चा प्रातःकाल उठते ही दस्त जाय। पर यदि यह संभव न हो, तो इस बात का कड़ा नियम बना लेना चाहिए कि १० बजे तक उसे अवश्य ही दस्त हो जाय।

अगर बच्चे को दस्त का कब्ज़ हो जाय, तो इस बात की सबसे प्रथम ध्यान-पूर्वक जाँच करो कि बच्चा रोगी है या आरोग्य। बहुधा माताओं की यह शिकायत रहती है कि उनके बच्चों को दस्त जाने का कोई नियमित समय नहीं है। यह जान लेना चाहिए कि बालक आदत के जीव हैं, जैसी आदत उन्हें डाल दी जायगी, वैसी ही उन्हें जन्म-भर रहेगी। ठीक समय पर दस्त जाने की आदत अनिवार्य होनी चाहिए। यदि किसी बालक को कब्ज़ रहता है, तो उसे [illegible] दूर हो जाय, बराबर उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। यह शिकायत पुरानी होने पर कठिनाई से दूर होती है, इसलिये उचित है कि प्रारंभ ही से दूर कर देना चाहिए।

[illegible] दस्त साफ़ नहीं आते हैं, उन्हें हमेशा बदहज़मी की शिकायत बनी रहती है। इस [illegible] का एक बड़ा भारी कारण यह है कि बहुत-सी माताओं के दूध में [illegible] होता है और जीवन के प्रथम ३-४ सप्ताह तक बच्चा उसे अच्छी तरह हज़म नहीं कर सकता। इसी तरह [illegible] दूध पर जो बालक रखे जाते हैं, उन्हें भी [illegible] अवश्य रहता है।

[illegible]

[illegible] बच्चों को [illegible] देना [illegible], यह अधिक चिंतनीय है और इस [illegible] देना चाहिए। इस [illegible] में दिन-रात में एक दस्त आना तो चाहिए ही। [illegible] और तंग अँधेरी कोठरियों में [illegible] होते हैं।

यह बात निश्चय जान लेनी चाहिए कि प्रत्येक बच्चे के लिये खुली वायु, धूप और खेल-कूद का पूरा-पूरा अवसर अवश्य चाहिए। शरीर को हरकत देने का प्रभाव आँतों पर बहुत पड़ता है। बालकों के कब्ज़ दूर करने का एक उपाय यही लिखा जाता है। दाहनी तरफ की छाती पर पसलियों के ऊपर हाथ फेरो, फिर नाभि तक ले जाओ। फिर उसी तरह की छाती पर, इसी तरह करके नाभि तक हाथ लाओ। हाथ गर्म करके धीरे-धीरे फेरना चाहिए। और ज़रा-सा मीठा तेल गर्म करके हाथ से चुपड़ लेना चाहिए। यह क्रिया सोते समय करनी चाहिए, जब बालकों का दस्त जाने का समय हो। पाँच मिनट तक यह क्रिया करनी चाहिए।

गाय का दूध जिसमें पानी मिला होता है, उसमें या दूध जाड़े में गाढ़ा बहुत ज़्यादा होता है। यह दूध बहुधा बालकों को हज़म कर लेना है। लेकिन पानी दूध का भी यही परिणाम होता है। ज़्यादा औटाने से भी दूध गाढ़ा हो जाता है। इसलिये ज़्यादा नहीं औटाना चाहिए। यह हानि प्रायः उबले का रूप पीने से होता है। पहले सुखदायी, फिर रूखा और बाद में अतिसार।

प्रकरण ६

साधारण भूल

निस्संदेह यह सत्य बात है कि छोटे बच्चों के जीवन और मृत्यु का दारमदार उन सम्हाल पर निर्भर है। जो लोग धीरे-धीरे बच्चों के माता-पिता बनते हैं, वे तो बहुत कु अनुभवी बन जाते हैं। पर बच्चे अधिकांश में मूर्ख नौकर और धायों की असावधानी, दाइ के लाड़-प्यार और थोथे रिवाजों के शिकार बनकर जान खोते हैं।

सैकड़ों बच्चे इसी तरह मार डाले जाते हैं। हज़ारों इन मूर्खता-पूर्ण परिपाटियों के कार जन्म-भर रोगी और दुर्बल रहते हैं। और लाखों जन्म से ही कमज़ोर और रोगी पैदा होते हैं

पहली भूल

यह समझना कि गर्भिणी को फुदरती तौर से आराम करना, सुस्त पड़े रहना और शरीर-शरीर कुछ काम न करना चाहिए।

यह बात में कुछ बात ही नहीं। गर्भिणी को खूब खुश, तंदुरुस्त और चुस्त रहना चाहिए। खूब घूमना चाहिए। सदैव प्रकाश और स्वच्छ वायु में रहना चाहिए। और इ मामलों में उसे अपने या पेट के बच्चे के लिये कुछ भी भय न करना चाहिए। यह स्मरण रखना चाहिए कि जब तक स्त्री खूब परिश्रम न करे, और शरीर को अच्छी तरह फुर्तीला न बना रखे—वह न तो अपना ही स्वास्थ्य कायम रख सकती है और न सही-सलामत प्रसव क सकती है।

किसी किसान की स्त्री को देखो कि वह कैसी आसानी से तंदुरुस्त बालक उत्पन्न क सकती है।

दूसरी भूल

यह समझना कि गर्भिणी को दो आदमियों के लिये खाना चाहिए।

यह बात समझना अर्थात् कि बालक का एक वाहन—माता के पेट में—१½ सेर के ला भार है। उसके लिये माता को कितना भोजन और अधिक खाना चाहिए? इसलिये गर्भिणी क पुष्ट पौष्टिक खाद्य-पदार्थ, नियमित भोजन और ठीक समय पर शौच-क्रिया करना है। इस प्रकार बालक स्वस्थ होगा ही।

तीसरी भूल

[illegible] का सेवन करना—यह शरीर के [illegible] में [illegible] है।

चौथी भूल

यह कि दूध पिलानेवाली को खूब गरिष्ठ भोजन करना चाहिए, यह चौथी भूल है। बहुत-सी माताएँ ठूँस-ठूँसकर चराई जाती हैं। इससे उल्टा दूध का प्रवाह कम होता है। प्रायः ऐसी स्त्रियों को बदहज़मी हो जाती है और इससे उलटा दूध खराब हो जाता है। दिन में सिर्फ़ तीन बार भोजन करना काफ़ी है।

भोजन में चावल, दाल, दलिया, खीर, रोटी, दूध, खिचड़ी आदि सुपाच्य पदार्थ होने चाहिए।

पाँचवीं भूल

यह कि प्रसव के बाद तीन दिन तक बालक को स्नान न दिया जाए। यह भूल न दिया ही माता की स्वाभाविक दूध-प्रवाह की शक्ति को कम कर देता है और बालकों को अपना काफ़ी दूध पीना पड़ता है। बालक के चमड़े से ही दूध का प्रवाह जारी होता है। इसलिए प्रसव के बाद प्रथम दिन ही प्रवाह जारी होता है। इसलिए प्रसव के बाद प्रथम दिन ही प्रवाह को उत्तेजन न दिया गया, तो दूध-प्रवाह धीमा पड़ जाएगा। बहुत धीमा है बच्चे को स्नान देने में माताएँ तो घबराती हैं, परंतु इस मामूली बात के कारण बड़ी हानि उठानी पड़ती है।

धाय का ही प्रबंध करना चाहिए, क्योंकि मनुष्य के दूध के अंश में जो स्वाभाविक प्रतिभा, विकास और पुष्टि का उत्कृष्ट अंश है, वह पशु के दूध मे नही। विलायती पेटेंट खाद्य, जमे हुए दूध आदि भी बालक के लिये अस्वाभाविक है।

नवीं भूल

यह कि बालक यदि सो रहा हो और दूध पिलाने का समय आ गया हो, तो उसे जगाना नहीं चाहिए। यह विचारना बड़ी भारी ग़लती है। बालक को दूध पिलाने और आहार देने का जो समय-विभाग हो, उसका यथावत् पालन कड़ाई से करना चाहिए। इसी तरह सोना, खेलना, दस्त जाना आदि भी नियमित रूप से होना चाहिए, जिससे बालक को दिन और रात के अपने नियमित जीवन का अभ्यास हो जाय।

दसवीं भूल

बालक के रोते ही उसके मुँह मे स्तन दे देना या कुछ खाने की वस्तु दे देना। इससे अधिक बालक की पाचन-शक्ति को बिगाड़नेवाली कोई बात हो ही नहीं सकती। बहुधा बालक अजीर्ण और बदहज़मी अथवा पेट के दर्द से रोया करते हैं। उनके मुख मे भी स्तन ठूँस दिया जाता है। ऐसे बालकों का मुख और गुदा निरंतर चलती रहती है।

ग्यारहवीं भूल

यह समझना कि बच्चों को कुछ गरिष्ठ भोजन भी खाना चाहिए, दूध से क्या होगा यह विचार हानिकारक है, खासकर जन्म के बाद प्रथम ९ महीनों में। इन दिनों में तो सिर्फ दूध ही देना युक्तिसिद्ध है।

बारहवीं भूल

यह समझना कि बच्चे के दूसरे वर्ष में फिर उसकी ज़्यादा खबरगीरी की ज़रूरत नहीं है, बिलकुल झूठ है। दूसरे साल में तो खासतौर पर बच्चे को नियमित रीति से आहार विहार देना चाहिए।

तेरहवीं भूल

यह कि भोजन के नियमित समय से प्रथम उसे एकाध टुकड़ा रोटी या मिठाई दे देने की [illegible] नहीं। यह आदत [illegible] में अत्यंत हानिकारक है। आहार के द्रव्यों को हज़म होने के लिए यह नियमित समय चाहिए। दूसरे बीच में ही कुछ और खाना देना बड़ा ही [illegible] काम है।

चौदहवीं भूल

यह [illegible] कि [illegible] बच्चे के लिये हानिकारक है।

यह [illegible] कि बच्चे को [illegible] बनाने में ठंडी हवा जैसी [illegible] है, [illegible] है। [illegible] बच्चे के [illegible] ठीक-ठीक दबे हुए हैं, तो ठंडी हवा से [illegible] नहीं है।

पंद्रहवीं भूल

यह कि बच्चों को सदा गर्म जगह में रखना चाहिए। सिवा उस समय के जब कि स्नान के लिये बच्चे के कपड़े उतार लिए गए हों, दूसरे समय में उन्हें गर्म जगह में रखना आवश्यक नहीं।

सोलहवीं भूल

यह कि बच्चे को रोने देना बहुत खतरनाक है। यह विचार पैदा होते ही माताएँ बच्चे को रोने से रोकने के लिये अनुचित रीति से चेष्टाएँ किया करती हैं। बच्चे को गोद में लेती हैं और अपने पास सुला लेती हैं। ऐसा न होना चाहिए।

सत्रहवीं भूल

अगर बच्चे को ऊपरी दूध और माता का दूध भी दिया जाय, तो सदा ही माता का दूध ही पिलाना चाहिए। यह निकम्मा विचार है। शक्ति को तो बच्चे को दूध पिलाना ही चाहिए। दूध पिलाने के पीछे और पहले भी बच्चे को स्तन पकड़ने से इस बात का पता लग जायगा कि बच्चे ने कितना दूध पिया है। शक्तिमान का दूध बच्चे को [illegible] नहीं रक्खेगा। [illegible] स्तन के [illegible] [illegible] ।

प्रकरण १०

बुरी आदतें

अच्छी या बुरी जैसी आदतें बच्चों को पड़ जाती हैं, उनका आगे जाकर बदलना बहुत मुश्किल है। इसलिये प्रत्येक माता को सावधानी से इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चों में किसी भी प्रकार की कोई बुरी आदतें न पड़ें। जन्म से ही बच्चे का जीवन उच्च और उत्तम हो, यह उसके भविष्य के लिये बहुत ही बहुमूल्य बात है। नियमित आहार, उत्तम स्वास्थ्य, उत्तम पाचन-शक्ति, उत्तम शरीर-संगठन, भविष्य-निर्माण की नींव है। नीचे-लिखी आदतों को बच्चे में कभी न पड़ने देना चाहिए—

उँगलियों और कपड़े तथा खिलौनों आदि को मुँह में डालकर चूसना

प्राय. बच्चों की ऐसी आदत होती है कि जो कुछ उनके हाथ में आ जाय, उसी को मुँह में रख लेते हैं। इससे हाजमे पर और मुख के अवयवों पर बहुत नुकसान पहुँचता है। कपड़ों में प्रायः मैले और जहरीले परमाणु रहते हैं, इसी प्रकार खिलौनों में जहरीले रंग होते हैं। अतएव बच्चों की यह आदत कदापि नहीं पड़ने दी जानी चाहिए।

दाँत से नाखून काटना या मिट्टी खाना

दोनों आदतें भयंकर हैं। नाखून तो एक जहरीली वस्तु है, परंतु मिट्टी में भी प्राय. रोग-कीटाणु मिले रहते हैं। फिर मिट्टी ऐसे भी कुछ खाने की वस्तु नहीं है। मिट्टी खानेवाले बालक बहुधा मर जाते हैं, या अजीर्ण पेट के रोग और पाण्डुरोग या जलोदर की बीमारी उन्हें हो जाती है।

बिस्तर में दस्त-पेशाब न करना

[illegible] से ही बच्चे की यह आदत डाली जा सकती है कि वह दस्त-पेशाब के [illegible] पर [illegible] कर दे। बिछौना न गीला करे।

[illegible] की [illegible] पर निर्भर है, और कुछ बच्चे के स्वास्थ्य और [illegible]। [illegible] बच्चे को यदि वह दूसरे वर्ष में भी बिछौने में पेशाब [illegible] है। परंतु यदि तीसरे वर्ष में भी उसकी आदत न छूटे, तो [illegible] चाहिए। निस्संदेह दुर्बल बच्चों की ही यह आदत [illegible] है, [illegible] को [illegible] कोई तरल पदार्थ खाने को नहीं देना चाहिए, [illegible] चाहिए तथा प्रातःकाल दूध और पानी की [illegible]। [illegible] यह [illegible] छूट जायगी।

मूत्रेंद्रिय को मसलना

बहुत-से बच्चे प्रायः हाथ से मूत्रेंद्रिय मसलते रहते हैं। या बिस्तर पर लेटकर बिछौने से रगड़ते हैं। अथवा किसी अन्य वस्तु द्वारा रगड़ते हैं। यह [illegible] हानिकारक [illegible] है। इससे से तत्काल छुड़ानी चाहिए। और यदि उसका ऐसा करने से कोई कारण उत्पन्न हो—जैसा इंद्रिय में मैल जमना, खाज चलना आदि, उन्हें [illegible] कर देना चाहिए।

प्रकरण ११

बच्चों का रोना

पहले रोने का कारण मालूम करो। बाद में नर्मी, बुद्धिमानी और दृढ़ता का व्यवहार करो। रोने को बच्चे को कुछ आराम पहुँचाकर मत रोको। न केवल खाने को ही देकर रोना बंद करो।

बच्चों के रोने की खास-खास अवस्थाएँ

(१) विशेष—दुख-रहित हिचक-हिचककर रोना। यह रोना फेफड़ों को लाभदायक है।

(२) शरीर के कष्ट के कारण रोना। विशेष दुख से रोकर शरीर और मन को कष्ट पहुँचाना।

(३) केवल ध्यान आकर्षित करने के लिये बिना किसी कारण के रोना। (ऐसा रोना बुरा बच्चा ही रोता है।)

दुख-रहित हिचक-हिचककर रोना

पैदा होते ही रोना फेफड़ों को मज़बूत करने के लिये बहुत ही ज़रूरी है। कुछ-कुछ होश सँभाल लेने पर रोना और भी लाभदायक है। क्योंकि रोने का मुख्य कारण नसों और पुट्ठों को दृढ़ बना देना है। रोने से बच्चे का कंठ-द्वार खुलता है—उसकी बाँह और गर्दन मज़बूत होती है।

रोना नियमबद्ध है या नहीं ?

रोना स्वाभाविक है, पर बच्चे को बहुत अधिक और बेजा तौर पर नहीं रोने देना चाहिए। [illegible] का कथन है कि रोना ज़ोर से और दृढ़ता से होना चाहिए, पर बहुत देर तक नहीं। [illegible] होता [illegible]। बच्चे की माता को आवाज़ पहचान लेनी चाहिए। [illegible] भूख और गर्मी को बताता है। थोड़ी-थोड़ी देर में रोना या एकदम ही [illegible] को बताता है। लंबी साँस के साथ रोना [illegible] को बताता है। तेज़ी से और [illegible] से रोना [illegible] को बताता है। उदासी से रोना भूख को बताता है।

भूख या [illegible] का रोना

[illegible] है। [illegible] ज़ोर से भी [illegible] है। यदि बच्चे को कुछ [illegible] है, तो [illegible] है। पर बच्चे को [illegible] न [illegible] चाहिए।

र का ठीक नियम रखना आवश्यक है। यदि बच्चा जिस भी सोने, खाने के समय से पहले
सोना शुरू कर दे, तो समझ लो कि उसे खाना पचाने का जितना था, सा ज्यादा।
ठीक नहीं पचा है। ज्यादा खाने की पहचान यह है कि वह बीमार-बीमा दिखाता है।

बेचैनी से सोना

अत्यंत गर्मी हो या अत्यंत सर्दी हो या बच्चा सारे कपड़े में पड़ा हो या कपड़े
मोटे हो या भारी कपड़े पहन रहा हो या एक स्थान पर बहुत देर तक लेटा रहा हो, इन
परिस्थितियों में बच्चा बेचैन होकर सोता है। शिशु को परिस्थिति में फंसाकर बाधा देने से बच्चा
शांत हो जाता है। बच्चों को सोते-सोते कभी-कभी भयंकर या डरावने सपने आने लगते हैं

बच्चे को नष्ट कर डालती है। बहुत-से लोग कान में पिचकारी लगा देते हैं। यह और भी भयंकर है। जब तक इस काम में आप अच्छी तरह दक्ष न हो, तब तक इसे न करो।

आँख का दर्द, सिर-दर्द इत्यादि—इस रोग में देर न करके तुरंत डॉक्टर को बुला भेजो। पलक का सूज जाना मृत्यु-सूचक है।

मुँह और दाढ़ का दर्द—बच्चा बार-बार उँगलियाँ चबावे, रोवे, चिल्लावे, तो समझ लो, दाँत निकल रहे हैं। इनका साधारण उपचार करो।

जोड़ों या हड्डियों का दर्द—जरा भी दर्द हो, तो तुरंत डॉक्टर को बुला भेजो।

फूटकर गुप्त रोग—पेशाब लाल-लाल आता हो, आँखों की चमड़ी पुरानी होकर चिपक गई हो, पेशाब होने में जलन होती हो, ऐसी अवस्था में तुरंत इलाज कराओ। बच्चा इस रोग में बार-बार पानी पीता है।

बीमारी के कारण—प्रत्येक बच्चा रोता है। पर रोने से यह मत समझ लो कि बच्चे को कोई बीमारी ही है। घर-भर भी बच्चा रोया करता है। हाँ, इसका निर्णय ठीक-ठीक कर लेना चाहिए।

मैला-कुचैला रहने से रोना—जिस बच्चे को नियम से पाला जाता है और ठीक समय पर सभी क्रियाएँ की जाती हैं, वह बच्चा शांत-स्वभाव, हँसमुख और सुखी बनेगा। [illegible] से ही सुधर भी जाता और बिगड़ भी जाता है।

[illegible] बच्चा लेट रहा हो और माँ उठकर चल दे, तो बच्चा रोता है। जब तक उसकी इच्छा पूरी न हो जायगी, तब तक वह रोता ही [illegible]। [illegible] आने पर वह चुप हो जाता है। बस यही भेद बच्चे को बिगाड़ देता है। बच्चे को ऐसा करने का कभी मौका ही न देना चाहिए।

[illegible] समझनेवाले माँ-बाप यह समझते हैं कि बच्चा अभी कुछ भी नहीं समझता, पर [illegible], बच्चा सब कुछ समझता है। उसको सभी से आज्ञा माननेवाला बनावे—[illegible]।

[illegible] बच्चा रोवे तो क्या करना चाहिए? [illegible] देखो कि उसका बिछौना गीला [illegible] है। [illegible] बच्चा रो रहा हो, तो दूसरे [illegible] कि यों ही रोता है। तब उसे रोने [illegible], तो कारण ढूँढ़ निकालना चाहिए। [illegible] है। वे [illegible] नहीं [illegible]—यही उसके रोने के कारण हैं। [illegible] उठता है। यदि अनेक उपाय करने पर भी [illegible] दिखाना चाहिए।

प्रकरण १२

मुंह और दांत

बच्चे के मुंह और दांत [illegible] को लग जाते हैं। हमें इन बातों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि [illegible] और दांत बहुत ही सुंदर और साफ रहने चाहिए। [illegible] हैं कि बच्चे के मुंह में जोरा-जोरी [illegible] नहीं। धीरे-धीरे दूध बच्चा [illegible] कारी भी होता है।

धीरे-धीरे उनके पेट में मल रुकने लगता है। और उनके मुख, नाक और कंठ में अग्नि-सी जलती है। ऐसा होने से उनकी शक्ति क्षीण होने लगती है। मुलायम भोजन करने से जीभ भी पूरी तरह नहीं बढ़ती, वह छोटी ही रह जाती है। इससे उनका जबड़ा भी छोटा रह जाता है, और दांत भी छोटे रह जाते हैं। बस इसी प्रकार श्वास नलिका और आहार-नलिका ही रह जाती है और बच्चे रोगी बन जाते हैं। यह बात साधारण नहीं है, किंतु हमें कई पीढ़ियों तक दुख पहुंचाती है। हमें इसकी सावधानी अवश्य रखनी चाहिए।

बच्चों को यदि निरंतर दूध, दूध-रोटी, डबल रोटी इत्यादि मुलायम भोजन ही दिया जाय तो उनका जबड़ा बिगड़ जाता है। उनके दांत टूट पड़ते या गल-सड़ जाते हैं। जिस आदमी की पाचन-शक्ति ठीक है, उसके दांत परस्पर मिले हुए रहते हैं। और जिसकी पाचन शक्ति ठीक नहीं है, उसके दांत अलग-अलग होते हैं। यह एक साधारण-सी पहचान है।

प्रत्येक माता को यह भली प्रकार जानना चाहिए कि शरीर का कोई भी भाग व्यर्थ नहीं है। प्रत्येक भाग अपना अपना काम करता है। कुछ बच्चे कड़ी चीज़ नहीं खाते हैं और माता यह समझती है कि कहीं बच्चे का दांत न टूट जाय, पर यह केवल भ्रम है। हाँ, अधिक कठोर चीज़ न दें, पर अत्यंत मुलायम भी न दें, बच्चे के दांत खूब दृढ़ हों, ऐसी कुटकने की चीजें तो देनी चाहिए।

और ६ वर्ष के उस बच्चे का, जो खूब खिलाया-पिलाया गया है—वजन ११ सेर और ऊँचाई तीन फ़िट ६ इंच होनी चाहिए।

कभी-कभी ऐसा होता है कि बच्चे का पेट [illegible] और [illegible] [illegible] तरह फूलने लगता है। होंठ पीले-पीले हो जाते हैं, मुँह पिचक जाता है और [illegible] सूखने लगता है। ऐसा क्यों होता है? इसका कारण यही है कि बच्चा [illegible] भोजन [illegible] लेता है। न अच्छी प्रकार मुँह चलाता है, न दाँत ही। वह [illegible] खाता [illegible]। [illegible] का [illegible] या [illegible], मामूली [illegible], खेल या [illegible], खाना और भोजन [illegible] [illegible] [illegible] है [illegible]

है। १८ और १५ वर्ष के बाद "अक्कल डाढ़" निकलती है। और इस प्रकार ३२ दाँत पूरे होकर जबड़ा भर जाता है।

बच्चे के दाँत साफ रखना ज़रूरी बात है। कब साफ करें? यह प्रश्न ज़रा विचारणीय है। डॉक्टरों का मत है कि जब एक दाँत निकल आए, तभी से उसे बुरुश से साफ़ किया जाय। पर हमारी राय में २ वर्ष की आयु में दाँत बुरुश से साफ़ करने चाहिए। क्योंकि इस अवस्था में दाँत ज़रा दृढ़ हो चुकते हैं और कच्चे टूटने का डर नहीं रहता।

(बच्चों के दाँत साफ करने का एक विशेष बुरुश मिलता है। इसका नाम Tom Thumb है।)

बुरुश के साथ थोड़ा-सा खाने का सोडा लगाकर तब दाँतों से रगड़ना चाहिए—इससे दाँत दृढ़ और स्वच्छ बनते हैं। फिर रेशमी कपड़े से दाँत रगड़ डालने चाहिए। पर यह काम बड़ी ही सावधानी और कोमल हाथ से करना चाहिए, ताकि दाँत टूट न जावें।

काम कर चुकने पर बुरुश को पानी से धोकर खूँटी पर लटका देना चाहिए, ताकि वह सूख जाय।

जब बच्चा १८ महीने का हो जाय, तब उसे दूध के सिवा और चीज़ भी खिलानी चाहिए। पर दुःख तो यही है कि २½ या तीन वर्ष की अवस्था ही से दूसरी चीज़ें खाने को दें, क्योंकि बच्चा भोजन को भले प्रकार चबा सकता है।

बच्चे का प्रथम वर्ष बहुत उपयोगी होता है। इसी वर्ष में बच्चे का मस्तिष्क बहुत बढ़ जाता है। जितना मस्तिष्क २५ साल में बढ़ता है, उतना ही प्रथम वर्ष में बढ़ जाता है। इस को यह अवसर न खोना चाहिए। यदि माता अच्छी-अच्छी बातें प्रथम वर्ष में बच्चे को सिखा देती है, तो वह आगे के झंझटों से बच जाती है। सरल स्वभाव और सभ्यता—बच्चे को आदर्श पुरुष बना देते हैं।

बहुधा सर्दी से भी बच्चे को दस्त लग जाते हैं, इसलिये बच्चे को सर्दी से बचाना बहुत ही आवश्यक है।

नीचे दो प्रयोग लिखे जाते हैं, जो बच्चों के हरे-पीले दस्त और उलटी को फायदे मंद हैं—

१—छुहारे की गुठली निकाल उसमें अफीम भर फिर उसे एक आटे की बाटी में रख कर भूभल में डाल दो। बाटी पकने पर उसमें से छुहारा निकाल लो। उसे खरल करके जौ के बराबर गोली बना लो। एक से दो गोली तक माता के दूध में देने से सब प्रकार के दस्तों को फायदा होगा।

२—मोर, हरड़ बड़ी, काला नमक थोड़ा-थोड़ा पत्थर पर घिसकर बच्चों को पिलाने से उलटी और दस्त दोनों बंद होते हैं।

जो भोजन पचता है, वही शरीर के काम आता है। जितना अंश नहीं पचता, उतना बाहर का काम करता है। इससे पचने का ख़याल रक्खे और भूख से ज्यादा न खिलावे।

मीठा, चिकना-चुपड़ा या मसालेदार खाना स्वाद के लालच से सभी अधिक खा जाते हैं। बच्चों को इस अवगुण से शुरू से ही बचाना और सादा खाना खिलाना चाहिए। कभी ठंड लगने और न सेंकने से कुपच हो जाता है, इसको सोचकर उसका प्रबंध करे।

जब बालक बैठने लगे, तो उसे धीरे-धीरे खड़ा होना सिखावे। किसी गाड़ी आदि के सहारे यह काम किया जाय पर माता को दूर नहीं जाना चाहिए। नहीं तो गिरकर बच्चा चोट खाएगा। उसको खेल-कूद-पूर्वक लोटने-कूदने और किलोल करने दे, पर गिर पड़ने की सावधानी रक्खे। इस प्रकार किलोल करने से बालक बहुत बढ़ते और मगन रहते हैं।

सबसे बड़ी बात यह है कि बच्चे को दस्त सदा साफ आता रहे। सारे रोगों की जड़ पेट का ही विकार है। जन्म से तीन वर्ष की अवस्था तक बच्चे को सप्ताह में दो बार जन्म घुट्टी देना चाहिए, उसका नुसखा यह है—

(१) सोंफ, हरड़ दोनों, सोंठ, सनाय, अमलतास, अजवायन, अजमोद, इंद्रजौ, नौसादर, सुहागा, पीपरामूल प्रत्येक दो दो रत्ती, खाँड ६ माशे २½ तोला पानी में पकावे और चतुर्थांश रहे तो छानकर पिलावे।

लेकर यह लुगदी डाल और ३ सेर पानी मिला आग पर पकाओ, [illegible] पानी [illegible] छानकर शीशी में रक्खो। मिश्री मिलाकर १ माशा दिन में [illegible] बार पिलाओ।

जो बालक दूध के साथ अन्न भी खाता हो, उसके [illegible]—

मुलहठी, बच, पीपल, चीता, त्रिफला, [illegible] घृत [illegible] में पका कर दें।

इनके सिवा नीचे के नुसखों को पढ़ाने से [illegible] घृत, [illegible] और [illegible]

१—सोने का वर्क एक, कूट १ रत्ती, [illegible] रत्ती, [illegible] १ रत्ती, [illegible] १ रत्ती।

२—सोने का वर्क आधा, [illegible] १ रत्ती, [illegible] १ रत्ती, [illegible] २ रत्ती, [illegible] १ रत्ती

कुमारकल्याण घृत और [illegible] घृत भी [illegible] रोग, पेट के कीड़ों की बीमारी और [illegible] रोगों को [illegible]

३—कुमार कल्याण घृत १ सेर [illegible] ([illegible]) [illegible] १ सेर पानी रहे, तो छानकर रक्खो, उसमें १ सेर [illegible] धीमी-धीमी आग में पकावे, [illegible] मात्रा में बच्चे को पिलावे।

प्रकरण १६

बच्चों के रोग

ऊपर हमने इतनी बातें बताई हैं, इनको माताएँ ध्यान-पूर्वक काम में लावें, तो हम दृढ़ता पूर्वक कहते हैं कि उन्हें हमारे इस अध्याय को पढ़ने की नौबत ही नहीं आवेगी। उनके बच्चे बीमार ही नहीं होंगे। क्योंकि बीमारी विकार है। और विकार अवश्यंभावी नहीं होता तथा स्मृतत. हम समय-समय के लिये बाल-चिकित्सा की भी बातें लिखे देते हैं।

बच्चे की चिकित्सा बड़ी कठिन है। बड़े आदमी तो अपने सुख-दुख की बात कह भी देते हैं, जिससे बहुत कुछ उनके रोग का प्रतिकार हो सकता है, किंतु बच्चे न बोल सकते हैं, न समझा सकते हैं। मूर्खा माताएँ बच्चे के रोने को भूख का कारण समझती हैं। चाहे वह अतड़ियों के शूल से ही बिलबिला रहा हो, तब भी उसको चुप करने को दूध ही पिलाने लगती हैं। वह दूध उसे विष होकर लगता है, देश में लाखों अभागे बच्चे इसी विष रूपी दूध को पीकर प्राण खो देते हैं। उन्हें जान लेना चाहिए कि भोजन युक्ति से ही उपकारी होता है। सुश्रुत में लिखा है—

अन्नं प्राणिनां प्राणा तदयुक्तं हिनस्त्यसून् ;
विषं प्राणहरं तच्च युक्तियुक्तं रसायनम् ।

अन्न ही सब प्राणियों का प्राण है, उसके बिना किसी का जीवन कठिन है। किंतु बिना विचार सेवन करने से वही मार डालता है। संसार में जितने प्राणी रोगी होते हैं, उनमें अधिक [illegible] होते हैं। और विष तुरंत प्राणों को नाश कर देता है, किंतु वही युक्ति से सेवन किया हुआ बचाने और मृत्यु को दूर कर देता है। सो उचित तो यह है कि बच्चे क्या बूढ़े सब को भोजन के नियमों पर ध्यान देना चाहिए। नहीं देने पर हानि होती है।

बच्चों के रोग जानने का उपाय

बालक रोता हो और उसके मुख में झाग आवे, तो समझ लेना चाहिए कि उसके [illegible] में कोई पीड़ा है और बच्चे को [illegible] है। उसको ढूँढ़कर निकाल देना चाहिए। बालक [illegible] मुख से [illegible]।

[illegible] बालक अपने पैरों को पेट की ओर समेटे, और पेट को दबाने का [illegible] [illegible] हो, तो समझना चाहिए कि पेट में दर्द है। इसकी चिकित्सा इस प्रकार करनी चाहिए—। (१) [illegible] पर हाथ को [illegible] करके बालक के पेट को सेंके, पर इस बात का [illegible] कि बच्चे को [illegible] न लगे। (२) रोगन घृत को गरम करके पेट पर [illegible]

दे। (३) नमक को खूब बारीक पीसकर और गरम करके पेट पर [illegible] दे। (४) [illegible] के दो बीज, सौंफ के दो दाने मा के दूध में पीसकर पिला दे।

बालक सोकर उठे और नींद [illegible], इधर-उधर सिर [illegible], तो समझना चाहिए कि बालक भूखा है, उसे तुरंत दूध पिलाना चाहिए।

एक करवट देर तक सोने से, कोई वस्तु चुभने से या कोई [illegible] से भी बालक रोता है, सो इस बात को भी प्रथम [illegible] देख लेना चाहिए।

जो बालक बराबर ऐं-ऐं किए [illegible] जावे, दूध न [illegible], रोवे, तो समझना चाहिए कि [illegible] है, या कोई दुख है। दर्द [illegible] है, यह इस तरह पहचाने कि जहाँ दर्द होता है, [illegible] बालक बार-बार छूता है। और दूसरे के [illegible] पर रोता है।

जब बालक के सिर में दर्द होता है, तो [illegible] आँखें मूँद लेता है।

गुदा में दर्द होता है, तो बालक [illegible] और [illegible] है। [illegible] दर्द होता है तो पेट [illegible] जाता है, और [illegible] है।

अर्क एक तोला, भुनी फिटकरी एक रत्ती, सतगिलोय एक रत्ती मिलाकर पिलावे। गोखुरू के काढ़े में आधा रत्ती शिलाजीत दे।

टूँडी का पक जाना

१—नाल खींचने से पक गई हो, तो मरहम कपड़े पर लगावे। उसकी विधि यह है—

(क) मोम एक तोला, अलसी का तेल २½ तोला, जंगार एक माशा, पीसकर मिला के और आग पर हल कर ले।

(ख) कपड़े को सरसों के तेल या गोले के तेल में भिगोकर लगा दे।

(ग) जो सूजन हो, तो यह काम करे—पीली मिट्टी का एक ढेला लेकर आग में लाल करे, फिर उस पर दूध डालकर टूँडी को बफारा दे। नाल पक जाने के लिये प्रसव के प्रकरण में जो प्रयोग लिखे हैं, वे भी काम में लाए जा सकते हैं।

खाल लग जाना

२—बालक की खाल, काँख, कोहनी, घोट्ट, गल या जाँघ में से चिपकी रहती है। यहाँ मैल जम जाने से गल जाती है, इसलिये उचित है कि कड़ुवा तेल नित्य लगा दिया करे।

सब खाँसी पर एक और उत्तम प्रयोग है—

लौंग १ छ०, बहेड़ा १ छ०, मिरच स्याह १ छ०, कत्था सबके बराबर घोटकर कीकर का छाल के काढ़े में चना-जैसी गोली बनाना। मुँह में डाले रखने से सब खाँसी पर गुण करती है।

धुएँ के कारण जो धाँस हो गई हो, तो तालु सुरसुराने से आराम होगा।

गले में गरद-गुबार चले जाने से जो खाँसी हो, तो छाती पर तिल का तेल मलने से या गला सहलाने से आराम होगा।

सुरसी से गले में फाँसे पड़ गई हों, तो बिहीदाने के लुआब में मिश्री मिलाकर पिलावे या अदरक-रसकूल चटावे।

खाँसी, ज्वर और अतिसार साथ-साथ हों, तो यह उपाय करे—

काकड़ासींगी, पीपल, अतीस, मोथा पीसकर चटावे।

केवल खाँसी और ज्वर हो, तो मुलहठी अधभुना सम भाग, काली मिर्च पीसकर घीगुवार के रस में चने बराबर गोली बनावे।

(२) बादाम की मींगी पानी में घिसकर पिलावे।

(६) कुड़े की छाल, [illegible], [illegible], [illegible], लोध [illegible] १-२ [illegible] [illegible] करके पीवे ।

[illegible] हो तो (१) सेंधा नमक, सोंठ, [illegible], [illegible] और भाग [illegible] [illegible] का गरम पानी के संग पिलावे ।

(२) भाँग को भूनकर और पानी में [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] ।

[illegible]

(१) बालक की मा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

(२) लोध पठानी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

(३) [illegible] [illegible] या मांड़ी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

(४) [illegible] के पत्ते [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

(५) [illegible] १ तोला, [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] १ [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

ज्वर

इस रोग में किसी वैद्य की ही सम्मति लेना चाहिए। साधारण चिकित्सा यह है—

(१) कोष्ठ-वृद्ध हो तो एरंड के तेल से दस्त करावे। या काला दाना १ माशा, सोंठ ३ रत्ती का चूर्ण कर दोनो को गर्म पानी से फकी करा दे। जब तक ज्वर रहे, दवा नहीं देना चाहिए, ज्वर हलका होने पर दवा देना चाहिए।

(२) करंज की मींगी १ तोला, काली मिरच ३ माशे पीसकर तुलसी के पत्ते के रस में घोटकर उड़द बराबर गोली बनावे। सब प्रकार के ज्वर पर जादू का काम करती है—किसी विकार का डर नहीं।

(३) नीम की हरी-हरी सींक लेकर छिलका छील दे। २५ सींक और ७ काली मिरच डालकर पानी में पीस ले। तीन दिन दोनो समय पीने से ज्वर अवश्य जाता रहता है, यह माना बड़े गुण की है, यथा को बुद्धि के अनुसार बहुत कम कर दे।

मुँह आना—(१) शीतलचीनी १ तोला, शोरा २ माशा पीसकर मुँह में बुरकी दार नीचे गुण करे और पानी टपकावे।

(२) शीतलचीनी, फटकिया कत्था पीसकर शहद में चटावे।

(३) केले की ओस चटावे।

(४) सर्वांग खाते हों और मुँह लाल हो गया हो, तो पहले घुट्टी दें। फिर बंशलोचन, फटकिया कत्था, छोटी इलायची के बीज बुरक दे।

(५) शहद में भुना सुहागा पीसकर बुरक दे।

बालों की जड़ भी पसीने की नालियों के गुच्छों की तरह अंदरूनी तह में है। यह ग़ाने के समान होते हैं, जिनकी तह में यह बाल उगते हैं। इनकी जड़ों के साथ-साथ नालियाँ होती हैं और यही नालियाँ स्वाभाविक रीति से हमारे बालों की चिकनाहट को ग्रहण करती हैं। ये नालियाँ अंगूरों के गुच्छों के मानिंद होती हैं। बालों की जड़ों में भी कुछ छोटे-छोटे पटठे होते हैं, जिनके सिकुड़ने से बाल खड़े हो जाते हैं। खाल के किसी-किसी हिस्सों में ऐसी नालियों के समूह होते हैं, जो कि ख़ास किस्म की दुर्गंध निकालते हैं। ये बग़ल और उँगलियों के बीच में बहुत होते हैं। खाल और उसके ठीक नीचे ऐसी नालियाँ होती हैं, जिनका काम जिस्म के रग-पुट्ठों में से मल निकालने का है। ये नालियाँ सब उसी नालियों के समूह की तरफ़ जाती हैं, जो कि जबड़े और गर्दन के निकट दीख पड़ते हैं, ये ही शरीर के तमाम अंग में फैले होते हैं। खाल के किसी-किसी भाग के विशेष अवयव होते हैं। इनमें रंग देनेवाला एक पदार्थ होता है।

मतलब यह कि चमड़ी जो कि प्रकट में सकाचट झिल्ली दीखती है, वास्तव में एक बड़ा पेचीदा और पूर्णांग अवयव है। जिसमें बहुत-सी खून की नालियाँ और रगें, जिनके साथ पसीने के रोम-कूपों के छोर और स्पर्शेंद्रिय के छोर आदि लगे हुए हैं।

गया है कि बदन को पहले बड़ी देर तक पानी में रख कर तोला गया मगर वजन नहीं बढ़ा। मल्लाह लोग जो जहाज़ से समुद्र में गिर पड़ते हैं अपने बदन या कपड़े पानी में भिगोकर प्यास कम कर लेते हैं, परन्तु प्यास इसी कारण रुकती है, कि खाल में घुसावट नहीं बनते क्योंकि खाल ठंडी रहती है।

उचित यही मालूम होता है कि हम अभी यही समझें कि शरीर में पानी या तो घुसता ही नहीं और घुसता भी है तो इतना कम कि जिसका कुछ विचार ही नहीं किया जा सका। समुद्र का पानी यदि शरीर में घुस जाता तो समुद्र-स्नान बेशक हानि कर वस्तु होती।

स्नान से शरीर की उष्णता ठीक होती है, इसके जरिए हम अपने शरीर को चाहे जितनी उष्णता अधिक दे सकते हैं। गर्म और ठंडे पानी से नहाने के लाभों को बताने के प्रथम यह आवश्यक है कि शरीर की स्वाभाविक गर्मी और वास्तविकता मालूम करें। शरीर की स्वाभाविक गर्मी यदि थर्मामेटर से देखी जाय तो ९८-९९ फ़ारन हीट है। और यह गर्मी हालत में बराबर जुदा है। सर्द जगह में शरीर इस गर्मी को ठीक-ठीक क़ायम रख सकता है। गर्म देशों में कुछ कम गर्मी रहती है। यह सब से गंभीर बात है कि शरीर में गर्मी का ठीक रखने की ताक़त स्वाभाविक है। शरीर में भोजन के पकने से उसी तरह गर्मी उत्पन्न होती है। जैसे कि कोयले जलने से गर्मी पैदा होती है। यह गर्मी भोजन की मात्रा, व्यायाम और शक्ति पर निर्भर है। रक्त सबसे ज़्यादा चुस्त चीज़ है इसके कारण तमाम शरीर में एकसा तापमान बनी रहती है। रक्त की गर्मी शरीर के अवयवों में, हृदय में, मस्तिष्क में उत्तम [illegible] है, कभी कभी शरीर की गर्मी बेहद कम या ज़्यादा हो जाती है। जिसका कारण ठीक ठीक मालूम नहीं होता। शरीर की गर्मी [illegible] पर कि जीवन निर्भर है, यदि ७६ फ़ारनहाइट की [illegible] पर १०० फ़ा० डिग्री हो जाय तो तत्काल मृत्यु हो जाती है।

[illegible] असर यह होता है कि शरीर बहुत ठंडा हो जाता है। [illegible] है, [illegible] खाता है। पर थोड़ी सी [illegible] है और [illegible] है। इस से मांस और नसों की [illegible] है, और [illegible] रखने की अजायब शक्ति उत्पन्न हो जाती है [illegible] स्नान को कुछ देर तक [illegible] लगाते हैं। पर ज्यों ही [illegible] है। [illegible] में गर्मी और [illegible] इस समय शीघ्र दौड़ पड़ता है, [illegible] होता, उतनी ही रक्त की [illegible] यह असर है कि यह शरीर की [illegible] है। इससे [illegible] है। [illegible]

प्रकरण २

स्नान के प्रकार

साधारण स्नान

गुनगुने पानी के स्नान की तापोष्मा ८५ से ९२ तक होती है। गर्म जल के स्नान ९२ से ९८ तक और तेज़ गर्म जल के स्नान की ९८ से ११२ तक होती है। ठंडे जल स्नान की ६० से ७५ तक और बहुत ही शीतल जल के स्नान की ६० से नीचे ही रहती

स्नान के लिये साधारणतया ठंडा या गर्म जल काम में लाया जाता है। प्राय गर्मी ठंडा और सर्दी में गर्म। रोगी या नाज़ुक-मिज़ाज लोग प्राय सदैव गर्म पानी में स्नान क है। परन्तु गाँवों और छोटे कस्बों के रहनेवाले, क्या सर्दी क्या गर्मी, हमेशा ताज़े पानी कुएँ पर स्नान करते हैं। कुएँ पर या नदी अथवा तालाब के किनारे स्नान करना हिंदू ल एक [illegible] आवश्यक दैनिक कार्य मानते हैं।

अर्वाचीन वैज्ञानिकों ने जल की उत्तेजना-शक्ति बढ़ाने के अनेकों उपाय सोचे हैं। इन उप [illegible] स्नान करने से स्नान के गुणों का ठीक-ठीक प्रभाव शरीर पर पड़ता है। इनमें [illegible] स्नान [illegible] है, जिसमें शरीर पानी में डूबा रहे और शरीर पर प [illegible] इसमें कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि उस पद्धति के अनुसार स्नान की इच्छा [illegible] और उसमें बैठकर स्नान कर सकते हैं। टब में बैठकर स्नान करने [illegible]

तैरने का स्नान

[illegible] कि पानी पर स्नान करनेवाला [illegible] [illegible] में स्नान के तो गुण हैं ही, साथ [illegible] होते हैं। इसके सिवा और एक [illegible] कि शरीर की सतह पर पानी की लहरों [illegible] है, और धमनी को बहुत ही [illegible]

[illegible] आदमियों को इससे अच्छा [illegible] है, [illegible] इससे [illegible] और [illegible] है। [illegible] पानी [illegible]

एक खाट पर, जिस पर एक कंबल और एक चादर बिछी हो, लिटा देना चाहिए। कंबल और चादर के बीच में एक मोमजामे का टुकड़ा बिछा देना चाहिए, जिससे कंबल ख़राब न हो। चादर पानी से तर हो। ऊपर भी भीगी चादर उढ़ा देनी चाहिए। यदि रोगी को बहुत ही ठंडक दरकार हो, तो ऊपर की चादर इस ढंग से उढ़ानी चाहिए कि हवा सीधी उसके शरीर को लगे। और यदि चमड़ी को कुछ गर्मी या उत्तेजना पहुँचानी हो, तो एक-दो कंबल उस पर डाल देने चाहिए।

वाष्प-स्नान

भाफ का स्नान एक ख़ास स्नान है। इसके गुण भी असाधारण हैं। शरीर को गर्म करने, रक्त के ठीक-ठीक सञ्चालित होने और अनेक स्नायु-रोगों के लिये भाफ का स्नान अद्भुत स्नान है। सर्वत्र जगत में स्वाभाविक वाष्प स्नान भी देखे जाते हैं। अगर रोगी बैठ सकने की शक्ति रखता है, तो भाफ का स्नान अत्यन्त सरल है। स्नान करनेवाले के सिर और छाती को भाफ से बचाया भी जा सकता है, अगर चिकित्सक की राय हो। अगर रोगी बैठ नहीं सकता, तो चारपाई पर भी यह स्नान हो सकता है। छोटी बुनी खाट पर बिना कुछ बिछाए, केवल कपड़े रोगी को लिटा दो, और चौड़े मुँह के दो बर्तनों में पानी गर्म करके, जब वह खौलने लगे, चारपाई के नीचे रख दो। बर्तनों का मुँह शाल से ढक दो। रोगी के ऊपर दो कंबल इस तरह उढ़ा दो कि नीचे तक लटकते रहें, जिससे हवा बंद हो जाय। यह क्रिया यह कमरे में ही करनी चाहिए। जितनी भाफ की ज़रूरत हो या रोगी सहन कर सके, उतनी भाफ देने के लिये बर्तनों से भाफों को सरकाना चाहिए।

[illegible] गर्म है। इसका उत्ताप १२०° से १५०° तक होता है। इस प्रकार [illegible] से शरीर [illegible] गर्म हो जाता है, तब शरीर की स्वाभाविक [illegible] करने की शक्ति [illegible] जाती है। और इस प्रकार जब शरीर १०५ डिग्री तक [illegible] हो जाता है तब [illegible] की इस वृद्धि के कारण चमड़ी पर रक्तवाहिनी और स्वेद [illegible] पर [illegible] प्रभाव पड़ता है। भाफ का स्नान बहुत ही सरल और [illegible] है। [illegible] को, जैसे हाथ, पैर, गर्दन और [illegible]। [illegible] में भाफ के स्नान का एक [illegible] है [illegible], फिर उसके बाद तत्काल ही ठंडे जल [illegible]।

[illegible]

[illegible]। इस समय को [illegible] जब कि इस [illegible] में डूबे रहते हैं। [illegible] [illegible] और [illegible] को [illegible] [illegible] की [illegible], [illegible] के [illegible]

पहुँचाए जायँगे, परन्तु यह कमरा उससे कुछ ज्यादा गर्म होगा। इसके बाद एक तीसरे कमरे में आप ले जाए जायँगे, जो उससे भी अधिक गर्म होगा। इस कमरे का ताप-क्रम १५०° से २१०° F तक होता है। इस कमरे में मोटे चमड़े का स्लीपर पैर में पहनना पड़ेगा, वरना पैर गर्म फर्श की तेजी से जलने लगेंगे। यहाँ थोड़ी ही देर रहने से पसीना शरीर से बहने लगेगा। जब खूब पसीना बहने लगेगा, तब आप फिर उसी बीचवाले गुम्मजदार कमरे में आयेंगे, और आपको नंगा होकर फर्श पर लेट जाना पड़ेगा। एक आदमी आकर आपको खूब रगड़ेगा और गर्म पानी आपकी एड़ी से शुरू करके गर्दन तक उलीचा जायगा। फिर फिर लिटाकर उसी प्रकार आप पर पानी डाला जायगा। पीछे साबुन और गर्म पानी से खूब मल-मलकर आपके शरीर को साफ किया जायगा। इसके बाद घोड़े के बालों के दस्तानों से आपकी चमड़ी को रगड़-रगड़कर धोया जायगा।

रोग दूर करने के लिये कुछ खास-खास स्नान योरप के डॉक्टर लोग काम में लाते हैं, वे इस प्रकार हैं —

दर्द दूर करने के स्नान

१—गर्म-पानी २० सेर, गेहूँ की भूसी २½ सेर, आलू का सूखा आटा आध सेर, अलसी का आटा आध सेर।

२—पानी गर्म २० सेर। कार्बोनेट आफ् सोडा या पोटास ६ औंस।

३—२० सेर गर्म पानी में Muriatic या Nitric ऐसिड या Nitro Muriatic (दोनों का मिश्रण) तेज़ाब मिलाते हैं।

४ Iodine या Bromine भी स्नान के पानी में मिलाए जा सकते हैं।

अमेरिका में एक बिजली का स्नान बड़ी तेज़ी से प्रचलित हो रहा है। वह इस प्रकार होता है एक साधारण स्नान के टब को ऐसे तख्ते पर रक्खा जाता है, जिस पर बिजली का असर नहीं हो सकता। इसके बाद बर्तन को पानी से भर देते हैं। उसमें थोड़ा नमक या सिरका डाल देते हैं, जिससे उसमें बिजली को ग्रहण करने की शक्ति बढ़ जाती है। फिर एक बिजली की बैटरी टब के पास ही रख दी जाती है, जिसके दोनों सिरों पर ३-४ गज़ की लंबाई का तार लगा दिया जाता है और एक लंबा लकड़ी का डंडा टब पर रख दिया जाता है, जो तार बिजली के सहारे रक्खा रहता है। इसके बीच में चमकदार तार लपेट दिया जाता है, जो बैटरी [Battery] के सिरे पर लगा रहता है। इसे फलालेन से ढक देते और चारों तरफ़ से बंद कर देते हैं। अब रोगी को टब में बैठाया जाता है। वह उस डंडे को बीच में से पकड़ लेता है। वह पानी में बिलकुल डुबा जाता है। अब 'निगेटिव' का सिरा टब में डुबा दिया जाता है। इसी को ऐसा होता है, स्नान करनेवाले को बिजली का करंट मालूम होने लगता है। बिजली बैटरी के पॉजिटिव सिरे से चलती है और डंडे तक रोगी के बाहुओं के बीच शरीर के भीतर होती हुई गुज़र जाती है। फिर उसके शरीर में गुज़रती हुई पानी के रास्ते से बह जाती है और [illegible] के लिये तार भी पहुँच जाती है। इस स्नान के लिये [illegible] इससे [illegible] हो जाता है और पारा या सीसा [illegible] शरीर से निकल जाता है।

रगड़-रगड़कर शरीर मलना स्नान करने के समय की अच्छी कसरत है। इससे शरीर का मैल, पसीना छूट जाता है, और नस-नस में शक्ति का संचार होता है, परंतु कमज़ोर रोगी के साथ ज़्यादा रगड़-पट्टी करनी अच्छी नहीं।

प्राचीन काल में लोग स्नान के समय तैल मलते थे, अब साबुन का प्रयोग करते हैं। कोई भी साबुन लगाया जाय, पर वह घटिया न हो। गरम पानी से स्नान के बाद यह ज़रूरी है कि नहानेवाला खासकर रोगी, एकाध घंटे को बिस्तर पर लेट जाय। स्नान के पीछे प्यास लगने पर ठंडा पानी पीना चाहिए।

स्नान करने के स्थान

बड़े बड़े शहरों में कई प्रकार के स्नानागार होते हैं। हम्माम मुसलमानी काल में बहुत प्रसिद्ध था। परंतु भारत-निवासी, जो रोज़ के नहानेवाले हैं, इन हम्मामों में रुपए क्या खर्च कर सकते हैं। रोग हो जाने की आशंका में इन हम्मामों में चिकित्सक की सम्मति अनुसार नहाना लाभदायक हो सकता है। इस प्रकरण में हम सर्व साधारण के नहाने के लिए बने हुए स्थानों का ज़िक्र करेंगे।

भारत में कुएँ और नदियों पर नहाने का ही अधिक रिवाज है। कुओं पर खुली हवा में खुले जल से नहाना कितना सुखदायक है, यह बताने की आवश्यकता नहीं, परंतु आम तौर पर कुओं पर नहाए हुए पानी के निकास का अच्छा प्रबंध नहीं होता। चारों तरफ़ कीचड़ हो जाती है या कुछ गड्ढे में पानी भर जाता है। इस पानी में हज़ारों मच्छर और कीड़े उत्पन्न हो सकते हैं, या पानी को सड़ा सकते हैं। कुएँ के पास बदबू आने लगती है, और वहाँ नहाने से लोगों को [illegible] हानि ही होती है। इससे बचने के निम्न-लिखित उपाय किए जा सकते हैं—

(१) कुएँ के [illegible] ओर पक्की नाली बनाकर एक कच्ची नाली निकाल देनी चाहिए [illegible] या पक्की नाली में जा गिरे।

(२) [illegible] कुओं में इस किस्म की होज़ियारी की बहुत ज़रूरत है।

(३) [illegible] के पानी के लिये या पानी इकट्ठा होने के लिये [illegible] पानी से धो डाले।

(४) [illegible] नहाना नहीं चाहिए। अलग [illegible] निकालने का उत्तम प्रयत्न करे।

[illegible] के लिये लाभदायक होता है। [illegible] कुओं पर नहाने के लिये [illegible] की सीमाएँ एक दूसरे को [illegible]

[illegible] नदियों के [illegible] है। [illegible] में [illegible]। [illegible] बड़े बड़े होते हैं। इसमें [illegible]

प्रकरण ४

स्नान के उपयोग

स्नान किन-किन रोगों में इलाज के तौर पर उपयोगी है। यहाँ इस बात का विचार नहीं किया जायगा। यहाँ सिर्फ स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से स्नान के लाभ बताए जायँगे। स्नान के लिये यह कहा गया है कि यह प्रत्येक रोग को दूर करने की शक्ति रखता है। जर्मनी के डॉक्टर लुई कोने ने तो स्नान के अनेक प्रकार निर्माण करके स्नान-चिकित्सा का आविष्कार किया है। और उनकी यह चिकित्सा-पद्धति बड़े जोरों पर सारे संसार में फैल रही है और पसंद की जाती है। परंतु वास्तव में यदि देखा जाय, तो यह अत्युक्ति है।

परंतु स्नान का सबसे स्पष्ट उपयोग चमड़ी को साफ करना है। जिसके लाभ असंख्य हैं। चमड़ी साफ है। इसका अभिप्राय यह है कि उसकी सतह और रोम कूप दोनों शुद्ध हैं।

[illegible] लोग स्नान को एक आवश्यक कृत्य समझते हैं। [illegible] दो लोटे पानी डाल लेना [illegible] लेना इनके लिये स्नान करना है। परंतु सच पूछा जाय, तो उक्त स्नान का कुछ भी लाभ नहीं होता। इसके सिवा अमीर आदमी, जो नौकरों की सहायता से [illegible] नहाते हैं, स्नान के लाभ से वंचित ही रहते हैं। कारण, ऐसे स्नानों [illegible] नहीं होते। जब तक कि [illegible] पसीना न निकले, चमड़ी साफ [illegible] नहीं [illegible]। [illegible] जो [illegible] शुद्ध हैं, जो [illegible] मेहनत करते हैं और जिनका [illegible] निकलता है। [illegible] को प्राप्त करने के लिये पसीना निकलना बहुत [illegible] है और यदि [illegible] नहीं होता, तो आवश्यक है कि बनावटी [illegible] [illegible] चमड़ी को [illegible] और रोम कूप शुद्ध रखना ही [illegible] [illegible] करने का सबसे उत्तम उपाय [illegible] अच्छी तरह साबुन लगाया [illegible] समुद्र या नदी में [illegible] की प्राप्ति इस स्नान से होती है [illegible] पसीना निकालना अनुचित है। [illegible] और [illegible] की [illegible] से प्रथम। [illegible] में [illegible] अनुचित है। [illegible] है। [illegible] से स्नान [illegible] देता है। [illegible]

ठीक करने और स्वास्थ्य को सुधारने में [illegible] । परन्तु [illegible] चाहिए । पिछले अध्यायों में बताया गया है कि ठंडे पानी से स्नान करने से [illegible] होता है । एक-भर को चमड़ी पानी पकड़ फिर [illegible] । यदि इस [illegible] अंतर आवे, थकान या कमजोरी मालूम पड़े, तो ठंडे [illegible] चाहिए । इसके सिवा सर्दियों और बात रोग से रोगी [illegible] स्नान करना उचित नहीं । बच्चों को [illegible] नहलाए जाते हैं, वे सदा हृष्ट-पुष्ट रहते हैं ।

कुछ ज्वरों में ठंडे पानी से स्नान [illegible] रोगों में जो शीतल-फालन [illegible] जाती है । पर यह [illegible] चाहिए । [illegible] है । १० I' और १५ । [illegible] चाहिए । २० मिनट से [illegible] निकाल से । सूखे [illegible] स्नायु की [illegible] प्रकार की [illegible] ।

[illegible] के सिवा [illegible] पानी की पट्टी या धार का [illegible] ।

यह जल-चिकित्सा-शास्त्र इतना [illegible] कि [illegible] जाएगा। इस समय केवल कुछ [illegible] उपयोगी उपचार का [illegible]।

आठ कटोरी पानी का प्रयोग

वर्तमान काल के पश्चिमीय विद्वानों ने स्नायवीय-शास्त्र से यह सिद्ध किया है कि [illegible] का जीवन कोई दूसरी वस्तु नहीं है, केवल [illegible] उलट-पलट सभी हो सकती है, तब कि [illegible] प्राकृतिक गर्मी यदि कम हो जाय, तो शरीर में [illegible]

३२ या ६४ कटोरी जल भरकर उसी क्रम से औषध डालकर पकावे, जब एक कटोरी जल या
रह जावे उतार ले, और छानकर पिला दे। इसी का नाम १६-३२ और ६४ कटोरी का प्रयो
है। जितनी अधिक कटोरी जल रक्खा जायगा, उतना ही अधिक गुणकारी जल बनेगा
इसीलिये ६४ कटोरी जल दिया जाता है। इससे अत्यंत असाध्य अवस्था में पहुँचे हु
रोगी के शरीर में भी ऐसी विचित्र शक्ति पैदा हो जाती है कि मुमूर्षु रोगी भी एक बार उ
दे ही देगा।

साधारण दृष्टि से देखने से तो यह प्रयोग मामूली-सा ही दीखता है, परंतु अनेक
अनुभव में लेने से इसका फल इतना लाभकारी दीखता है कि जहाँ बढ़िया-से-बढ़ि
सामग्रियाँ काम नहीं करतीं, वहाँ यह अपना कार्य अवश्य करता है। छाती में या गले में
कितना कफ जमा हुआ हो, उसे तो तत्काल ही निकाल डालता है। इस बात की सा
राजनिघंटु और निघंटुभूषण में है—

[illegible] मिट्टी के पात्र में भरकर स्वच्छ ताजा जल पीवे, उस मनुष्य के सभी रोग नष्ट होते हैं, चित्त और [illegible] प्रसन्न होते हैं, और बहुत शक्ति उत्पन्न होती है।"

पीने के जल का कितना परिमाण होना चाहिए, इस विषय में लिखा हुआ [illegible] है

[illegible]

अर्थात् सूर्योदय के समय आठ [illegible] (६४ तोला) जल पीना चाहिए।

जल के केवल पीने के उपयोग से ही रोग दूर होते हैं, ऐसा नहीं है, परन्तु [illegible] स्थिति में ठंडा या गर्म जल अलग अलग रीति से स्नान करने से, [illegible] करने से भी विचित्र लाभ होता मालूम पड़ता है। [illegible] मनुष्य की प्रकृति भिन्न भिन्न होती है, और इसीलिये कैसा और कितने परिमाण में [illegible] उपयोग करने से विशेष अनुकूल पड़ेगा, इसका विवरण आगे लिखते हैं।

शरीर को अच्छा लगता है। परंतु यह बलवान् मनुष्यों को ही माफ़िक़ होता है। जिनके शरीर में रक्त का दौरा बहुत धीमा होता है, उन्हें एकदम माफ़िक नहीं आता है। जो मनुष्य कमज़ोर हों, उन्हें चाहिए कि पहले गुनगुने जल से स्नान करना आरंभ करें। फिर धीरे धीरे जल को ठंडा करते जाना चाहिए। ठंडे जल से स्नान करने से शरीर में तुरत आनंद, उमंग और फ़ुर्ती मालूम होने लगती है। यदि यह बात ठंडे जल के स्नान से न मालूम हो, तो अपनी प्रकृति के अनुसार जल को गुनगुना कर लेना चाहिए।

ठंडे जल से लाभ प्राप्त करना हो, तो प्रथम थोड़ा व्यायाम करके तब स्नान करना चाहिए। उससे शरीर को स्वच्छ करने के लिये सुन्दर तौलिए से पोंछना चाहिए। पहले तौलिए को ठंडे पानी में भिगोकर फिर शरीर को खूब रगड़कर पोंछना चाहिए। इससे चमड़ी बहुत साफ़ हो जाती है। सर्दी भी लगती होगी, तो गर्मी आ जायगी। ठंडे जल से स्नान करती बार इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि गर्म जल से स्नान करने में जितना समय लगाया जाय उतना ठंडे जल में नहीं लगाना चाहिए। ठंडे जल का स्नान ५-७ मिनट में ही समाप्त कर देना चाहिए।

अश्वेद-स्नान

इस स्नान में रोगी को सिर्फ एक लंगोटी पहनाकर कुर्सी पर बिठाकर [illegible] और [illegible] एक में कंबल ढक दो, जिसमें गर्म [illegible] बाहर निकला रहे। [illegible] बाहर का दूसरा आदमी न आवे। यह सब करने पर रोगी के सिर पर भीगा [illegible] और कुर्सी के नीचे ८-१० सेर गर्म [illegible] एक [illegible] में [illegible] बाद एक गरम की हुई ईंट उस पानी में धीरे से [illegible] लगी पर न पड़ें। ईंट डालते ही [illegible] भाप लगानी चाहिए, जिससे [illegible] पसीना लेना हो, तो थोड़ा [illegible] चाहिए। शुरू में जितनी गर्मी [illegible] दो। इससे गर्म भाप [illegible] यही। यह प्रयोग कर चुकने पर रोगी को [illegible] पानी से [illegible] चाहिए।

सर्दी में ठंड लगती हो, [illegible] हो, [illegible] हो, [illegible] यह प्रयोग बहुत [illegible] है।

[illegible]

तेज़ गर्म जल में ऊन या बनात का मोटा कपड़ा भिगोकर निचोड़ लो। जब उसमें से भाप निकले, तब उस रोगी के सिर पर फेरो और सूखे कपड़े से गीलापन दूर करो। फिर एक गर्म कपड़ा शरीर पर लपेटकर एक-दो घंटा सोने दो। इस समय रोगी को हवा से बचाना चाहिए। ज्वर हो जाने पर अधिक दिन होने पर भी न छूटे, तब यह प्रयोग किया जाता है। निद्रा-जैसे रोगों पर और फेफड़ों के वरम में भी हितकर है। यह प्रयोग करती बार जब गर्म कपड़ा लपेटा जाय, तब उसके हाथ बाहर निकाल लेने चाहिए। पर ऊपर से दूसरा कपड़ा ओढ़ने पर सिर के सिवा सारा शरीर ढक देना चाहिए।

जिस प्रकार गर्म कपड़े का उपयोग किया जाता है, उसी प्रकार सन के कपड़े को ठंडे पानी में भिगोकर खूब निचोड़ लो, फिर उसे एक रज़ाई पर या मोटे कंबल पर बिछाकर रोगी को उस पर सुला दो। उसके बाद हाथ बाहर निकालकर उस कपड़े को अच्छी तरह अगल बगल में लपेट दो। फिर उसके ऊपर एक रज़ाई या कंबल डाल दो, जिससे उसे पसीना आने लगे। आधे घंटे बाद सब कपड़े हटा दो। यह प्रयोग करते समय दिमाग़ में खून का ज़ोर न हो जाय, इसके लिये सिर पर ठंडे पानी से भीगा कपड़ा रख देना चाहिए। यदि रोगी को इतना तेज़ ज्वर हो गया हो कि शरीर गर्मी से झुलसा जाता हो और कुछ भी कपड़े न सहन कर सकें, तो ऐसी दशा में यह प्रयोग बहुत ही लाभदायक है।

[illegible] के रोग में जिस प्रकार सारे शरीर पर भीगा कपड़ा लपेटा जाता है, उसी [illegible] के रोग में भी यह प्रयोग किया जाता है। [illegible] अंग की चिकित्सा के लिये [illegible] कपड़े को [illegible] तह बनाकर रक्खो। उसके ऊपर तेल में भिगोया हुआ रेशमी कपड़ा इस [illegible] जिससे [illegible] न [illegible]। यह प्रयोग बहुधा रात्रि में ही होता है, [illegible] रहते हैं। इस प्रकार [illegible] पड़ी रात-भर यों ही रहने [illegible] कपड़े [illegible] या ऊनी कपड़ा रख देते हैं।

[illegible] रोगी को सुखा दिया जाय, तो उससे [illegible] है। [illegible] रोगी के लिये यह प्रयोग करने से [illegible] है। [illegible] में निहित [illegible] रखती है। गर्भाशय और [illegible]।

[illegible] गर्मी की सूजन [illegible] जाती है। [illegible] पर [illegible] प्रकार का [illegible], गर्मी की सूजन, [illegible] की अपेक्षा जल्दी अच्छे हो जाते हैं। [illegible] अच्छा होना पड़ता है। इसके [illegible] हो गया हो, तो [illegible] सूजन, [illegible], [illegible], [illegible] या [illegible] [illegible] रख देने से [illegible]

रक्त बंद हो जायगा। यदि फेफड़ों में से इतनी अधिक मात्रा में रक्त निकलता हो कि रक्त की उल्टी होने लगे, तो छाती पर बरफ रखना चाहिए और बरफ के टुकड़े उसके मुँह में रखने चाहिए। बरफ के अंदर जाते ही रक्त आना बंद हो जायगा क्योंकि रक्तवाहिनी नलियों में जो छिद्र हो जाता है, वह बरफ की ठंड से संकुचित हो जाता है।

गर्भाशय से यदि अधिक रक्त आता हो, तो उस रक्त को बंद करने के लिये गर्भाशय का मुँह संकुचित हो जाय, ऐसा उपाय करना चाहिए। यह काम [illegible] गर्भाशय का है। इस काम के लिये रोगी को जितना बन सके, उतना बरफ खिलाना और यदि [illegible] तो योनि और गला के अंदर भी रखना चाहिए।

भी मिला देते हैं, जिससे पैरों की त्वचा जल्दी ही सुर्ख हो जाती है और रक्त पैरों की तरह दिखने लगता है। इस प्रयोग से रोगी को साधारण रीति से पसीना आ जाता है। यदि अधिक पसीना लाना हो, तो थोड़ा ठंडा पानी डाल देना चाहिए। इस प्रयोग के अभ्यास से सर्दी के मौसम में उत्पन्न हुए शिरोरोग, ज्वर और पैरों की सुन्नता आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

औषधि-मिश्रित स्नान

भिन्न भिन्न रोगों की शीघ्र शांति के लिये कभी-कभी शुद्ध जल के बदले में औषधियाँ जल में मिलाकर स्नान करते हैं। यह प्रयोग इतना बड़ा है कि विस्तार-पूर्वक कुल वर्णन करने के लिए यहाँ स्थान नहीं है, तो भी कुछ प्रयोग नीचे लिखे जाते हैं--

(१) इस सर्द जल में चार सेर गेरू की भूसी डालकर अच्छी तरह पकाओ। यदि चार न हो सके, तो पाव भर लो। इसमें स्नान करने से चमड़ी की खुजली और जलन शांत होती है, खुश्की और मैल सब छूट जाते हैं।

(२) इस सर्द जल में २० ग्रेन (२० रत्ती) सल्फेट ऑफ पोटाश डालकर स्नान करने

अध्याय सातवाँ

भोजन

प्रकरण १

भोजन का वैज्ञानिक विश्लेषण

भोजन किसे कहते हैं

शरीर जिन चीज़ों से बना है और जिन [illegible] को खाकर शरीर में पहुँचाई जाती है, वे सब भोजन कहलाते हैं।

भोजन से लाभ

भोजन से मुख्य लाभ यह है कि [illegible] शरीर बढ़ता है और [illegible] शरीर को उन पदार्थों का [illegible] न मिलें, तो शरीर [illegible] है। इस तरह भोजन से यह [illegible]

[illegible]

कुछ वस्तु शरीर के मांस की वृद्धि करती है। इसी प्रकार तंदुरुस्त और रोगी के भोजन में भी बहुत अंतर होना चाहिए।

२ भोजन ऐसा होना चाहिए कि वह अच्छी तरह से पच सके। जहाँ तक हो, वह ताजा से कम हो। भोजन की सबसे बड़ी तारीफ यह है कि वह मिकदार में कम, पचने में हल्का और शरीर की पुष्टि करनेवाला हो। भुने हुए अन्न जो जरा भी पुष्टिकर नहीं होते, कभी भोजन की दृष्टि से खाने उचित नहीं हैं। खासकर दुबले-पतले लोगों को, जिन्हें पुष्टिकारक वस्तुओं की सख्त जरूरत होती है। ऐसी वस्तुओं में ताजा मक्खन और मलाई बेमिसाल

के इन पोषक तत्वों में सदैव रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं। पोषक तत्व [illegible] के संयोग से ओषजनीकरण क्रिया होती रहती है, जिससे इन तत्वों से [illegible] निया और जल इत्यादि पदार्थ बन जाते हैं। जिससे गर्मी पैदा [illegible] हो जाती है।

तन्दुरुस्त आदमी के पेशाब में या तो [illegible] पाया जाता। पर किसी को [illegible] हो, या मुटाक हो चुका हो, [illegible] हो, तो मूत्र में [illegible] लगता है। उसे मामूली तौर से कार देख सकता, [illegible] रहता है।

चर्बी

मक्खन, तैल, घिनौने का घी, मेवा, [illegible] और [illegible] में चर्बी [illegible] मनुष्य और पशुओं के शरीर में चर्बी [illegible] है। और छोटी छोटी गांठों के रूप में [illegible] चर्बी की मात्रा भोजन, शारीरिक [illegible] और [illegible] पर निर्भर है।

यदि भोजन पेट में [illegible] है, तो अधिक भोजन [illegible]

भोजन का पोषक तत्व [illegible] जाती है। इसके [illegible] तत्वों में [illegible] जम जाती है।

में इसका भाग १ फीसदी है। यह वस्तु प्रत्येक में होती है। और भोजन का एक उपयोगी अंग है। यह जाकर मनुष्य में काम करने की शक्ति उत्पन्न करता है। और बड़े आराम से हाजम हो जाता है। इससे भी शरीर में चर्बी बनती है।

लवण

इससे शरीर को कुछ भी शक्ति नहीं मिलती। फिर भी यह शरीर के लिये आवश्यक वस्तु है। यह शरीर में ५ या ६ फीसदी है। यह ज्यादातर हड्डी और दाँतों में पाया जाता है। कुछ रेशों में भी। जब शरीर जला दिया जाता है, तब केवल यही पदार्थ राख की सूरत में रह जाता है। वैज्ञानिक दृष्टि से इसकी कई जातियाँ हैं—जैसे सोडियम, पोटेशियम, मग्नेशियम, सल्फिर इत्यादि।

चिकनाई—७ तोला
शक्कर—२० तोला
लवण, जल जितनी ज़रूरत हो।

मांस पोषक तत्व से ही बनता है। शरीर में मांस का [illegible] है, इस[illegible] जानना चाहिए कि भोजन में पोषक तत्व की [illegible]। [illegible] पोषक तत्व अधिकवाले पदार्थ ही ज्यादा खाने चाहिए।

चर्बी और शर्करा खास तौर से शरीर में शक्ति [illegible]। इसलिए [illegible] शरीर से परिश्रम करनेवाले लोगों को ज्यादा खाना चाहिए। [illegible] सब लोग यह बात नहीं जानते कि शरीर में [illegible] अर्थात् गर्मी पैदा करने शक्ति [illegible] का काम [illegible] है— [illegible] करे, तो वह गुड़ खाकर उतनी ही [illegible] शरीर में पैदा कर सकता है, [illegible] से पैदा [illegible]। सिर्फ इतनी बात है कि [illegible]।

२०-२५ वर्ष की उम्र तक [illegible] तत्व अधिक हो। क्योंकि २०-२५ वर्ष तक शरीर का [illegible]। [illegible] के लिये पोषक तत्व बहुत उपयोगी है। [illegible] के लगभग पोषक तत्व [illegible] होना चाहिए।

निस्संदेह चिकनाई और [illegible]। [illegible] बच्चों को [illegible], [illegible] पेट्रा [illegible] है। [illegible] जाते हैं। [illegible] का हिस्सा ज्यादा है, [illegible]।

[illegible]

[illegible]

कुछ दिन पूर्व काबुल के एक पत्रकारों ने [illegible] था कि [illegible] में [illegible] सेर घी या ३० सेर गेहूँ और ४० सेर चुने का माल मिलता है। [illegible] में ४ सेर घी और हमारे भारत में ५॥ सेर से भी [illegible] में रुपए का १२ से १६ सेर तक दूध मिलता। [illegible] में ३० सेर भी नहीं मिलता। यदि यही दशा रही, तो [illegible] जायँ, मगर गरीब बेचारे निर्धन भूखे मर जायँगे।

अमेरिका के एक विद्वान का कथन है कि [illegible] कम खाती है। साथ ही मनुष्यों के लिये उसकी [illegible] है, [illegible] जहाँ गाय का दूध [illegible] शौकीन की रीति पर सर्वथा लाभप्रद है।

हमारे पूर्वजों को गाय का [illegible] पूर्ण पोषण के लिये उसका [illegible] कहकर पुकारा और हर तरह उसकी [illegible] पर ये केवल मन के मन में हैं।

भारत में प्रतिवर्ष ४० लाख [illegible] भारतीय मुसलमानों के [illegible] संसार भर में [illegible] केवल दूध घी की [illegible] का [illegible] कमी है। भारत की [illegible] पहुँच [illegible] है।

[illegible] है।

विदेश के मुल्कों में जहाँ गाय पवित्र प्राणी नहीं माना जाता, वहाँ गायों की नस्ल उन्नत हो गई है।

भारत में ८० हजार गोरे सिपाही हैं, जिनका भोजन गोमांस है। प्रत्येक पुरुष १॥ सेर मांस भी प्रतिदिन खाय तो रोजाना १४६ मन और साल-भर में ३ लाख ४५ हजार २१० मन हुआ। इतना कितनी गायों की हत्या से मिलेगा? फिर ७ करोड़ मुसलमान भी हैं जो हिन्दू या गरीबी के कारण महँगा बकरी का मांस न खाकर सस्ता गाय का मांस खाते हैं।

इंग्लैंड भर के लगभग सरकारी कसाई-घरों के अलावा देश में ३॥ लाख के अनुमान कसाई हैं। यह जानकर रोमांच होता है कि आज ऋषियों की पवित्र भूमि पर २० करोड़ (!) मांसाहारी मनुष्य रहते हैं। इनमें से ७ करोड़ मुसलमान और १० लाख अँगरेज निकाल दिये जायँ, तो भी ८॥ करोड़ हिन्दू मांसाहारी लोग बच रहते हैं, जिन्होंने बकरी के मांस को इतना महँगा कर दिया है कि गरीब मुसलमान लाचार गाय का गोश्त खाते हैं।

[illegible] सब खर्च काटकर ३,०००) का लाभ हुआ। बंगाल में ऐसी ६७ सभाएँ हैं। ये सब [illegible] को आपरेटिव मिल्क-यूनियन से मिली हैं। इस यूनियन ने १ वर्ष में ४,४०,४००) का [illegible] है। यह यूनियन सन १९१० में स्थापित हुआ था। प्रारंभ में इसे ४,२१४) का [illegible] हुआ। सन १९२४-२५ में २०,१४६) रु० का लाभ हुआ।

कुछ दिनों पूर्व कलकत्ता-निवासियों का ध्यान सस्ते और [illegible] दूध की तरफ [illegible] हुआ था। इधर जब कि यह ज्ञात हुआ कि दूध के प्रभाव से प्रतिवर्ष ६०० [illegible] की [illegible] हो जाती है, तब यह प्रश्न और भी महत्व-पूर्ण हो गया। इस समय [illegible] में ३,००० मन दूध की खपत का अनुमान लगाया गया है। ८०० मन दूध [illegible] से तीसरे, ४० मन इधर से होकर बाहर से आता है, शेष [illegible] ३,००० मन [illegible] और [illegible] के स्थानों से प्राप्त हो जाता है। यहाँ की मनुष्य संख्या १०,११,०६४ है, [illegible] दूध पर्याप्त नहीं है, और औसत लगाने से १०० [illegible] है। [illegible] के भीतर जितना दूध खपता है, उसका ठेका [illegible] दिया है, [illegible] निष्ठुरता का व्यवहार करते हैं। [illegible]

दूध लाते समय उसकी [illegible] के [illegible] समीप [illegible] से तंबाकू पिया करते और [illegible] जमा लिया है, इनके द्वारा [illegible] के पश्चात् में लोग "फूका हुआ" दूध [illegible] के साथ कर्पूर [illegible] हाथों मारी जाती है। [illegible] और [illegible] का उपयोग किया था, [illegible] सुधार के निमित्त [illegible] था कि कार्पोरेशन की [illegible] उनको [illegible]

अमेरिका में हर साल सबसे अधिक स्वस्थ और सबसे अधिक दूध देनेवाली गाय के मालिक को इनाम दिया जाता है। हरएक प्रांत में नुमायशें होती हैं और उनमें गायों को अच्छे इनाम दिए जाते हैं।

गौ को माता माननेवाले भारत देश की तरह वहाँ दुबली-पतली गौ नज़र नहीं आती। इस वर्ष जो गौ प्रथम आई थी, वह इतना दूध देती थी कि यदि एक बालक को वह पिलाया जाय, तो उसका एक दिन का दूध बालक के लिये ३६५ दिन तक काफ़ी होगा। गाय बड़ी सुंदर और हृष्ट-पुष्ट थी। जब उस गाय को इनाम मिला, तो न्यूयार्क के रईसों ने उस गाय की दावत की। एक सार्वजनिक बाग में शहर के मुख्य-मुख्य रईस तथा अधिकारीगण सम्मिलित हुए, मेज़-कुर्सियाँ सजाई गईं, और नाना प्रकार के भोजन परोसे गए। ठीक मध्य में सुंदर रेशमी वस्त्र ओढ़े हुए गौ लाई गई, उसके आते ही सब उपस्थित सज्जन सादर खड़े

दूध बेचनेवाले हलवाई, ग्वाले, घोसी पानी के भी और बेईमान होते हैं। वे [illegible] में कूड़ा, अशुद्ध और मैला पानी मिलाते हैं। बहुत-से चारा मिट्टी, [illegible] शकरकंद घोल देते हैं, बहुधा मक्खन निकाला दूध मिला देते हैं। [illegible], अशुद्ध, [illegible] दूध में पड़ने की तो उन्हें परवाह ही नहीं होती—[illegible] अनेकों भयंकर और छूत के रोगी पशुओं के दूध को भी, जो कि [illegible] के समान है, [illegible] के लोग नहीं हिचकिचाते। कुछ लोग भैंस के दूध में पानी मिलाकर उसे [illegible] और कोई बकरी के दूध में भैंस का मिलाकर अधिक गाढ़ा दूध [illegible]।

यह बनाव-बनाव मिलावटी दूध स्वास्थ्य के लिये [illegible] ही में स्वच्छ और उत्तम दूध मिल सकता है।

२—सस्तापन—गाय पालने का दूसरा लाभ [illegible] है। [illegible] यदि होशियारी से गायों की सम्हाल की जाय, तो [illegible] दूध [illegible] है। आजकल यों तो सभी जगह [illegible] महँगा हो गया है, पर [illegible] महँगा मिलता है, पर वहाँ उतना ही सस्ता दूध भी मिल सकता है, [illegible]।

इससे यह समझ लेना चाहिए कि [illegible] दूध [illegible] गौ का पालन हमेशा लाभकारी है। [illegible] में दे देती है। यह खर्च में तो दूध [illegible] निकाला जा सकता है। ऐसी दशा में तो [illegible] अधिक [illegible] हो सकता। [illegible] किसी [illegible]।

मिलाई जाती है। ५—इससे खाद्यों की अपेक्षा वह शीघ्र खराब हो जाता है। ६—शहरों में बाजार का दूध शुद्ध और नीरोग मिलना प्रायः असम्भव है। बाजार का अच्छे-से-अच्छा दूध अरोग्यता का नाश करनेवाला है।

दूध बच्चे के लिये अत्यन्त आवश्यक खाद्य है, इसलिये शुद्ध दूध की प्राप्ति के लिये सदैव प्रयत्न करना चाहिए।

शुद्ध दूध किसे कहते हैं

दूध की शुद्धता ४ बातों पर निर्भर है। १—दूध खालिस हो, उसमें पानी आदि मिला न हो। २—जिस जानवर से दूध काढ़ा गया हो, वह नीरोग हो। ३—दूध में गंदगी, रोग-कीटाणु न हो। ४—उसमें कोई रोग-जंतु न हो।

दूध अशुद्ध होने के कारण

ज्वर, मोतीझरा, माल्टा फीवर (यह बकरी के दूध से [illegible]) [illegible], [illegible], [illegible] क्षय रोग इत्यादि उत्पन्न हो जाते हैं।

इसलिये प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि [illegible] सूचनाओं पर ध्यान रखकर विशुद्ध दूध [illegible], [illegible] शीघ्रता से ठंडा करके काम में लावे। [illegible] जाते हैं। दूध के संबंध में [illegible]

दूध का [illegible]

नीचे लिखी तालिका में इस [illegible] में कितने मूल तत्त्व होते हैं —

प्राणी	प्रोटीन	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
स्त्री	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
गाय	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
भेड़ी	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
गधी	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
बकरी	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
ऊँटनी	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]

स्त्री और पशुओं के दूध का अंतर

१—स्त्री के दूध की अपेक्षा गाय के दूध में तिगुना पोषक तत्व है। २—चिकनाई लगभग-लगभग बराबर है। ३—स्त्री के दूध में शर्करा का भाग गाय से अधिक है। ४—गाय का दूध स्त्री के दूध की अपेक्षा जल्दी खट्टा हो जायगा, क्योंकि उसमें लवण का अंश अधिक है। ५—भैंस के दूध में स्त्री और गाय के दूध की अपेक्षा दुगनी के लगभग चिकनाई होती है। ६—बकरी का दूध लगभग गाय के दूध के समान ही होता है, पर उसमें गाय के दूध से कहीं अधिक चिकनाई होती है।

जिन पशुओं को मुंह, खुर और छाती की बीमारियां होती हैं, उनका दूध दूषित हो जाता है। ऐसे पशु का दूध भी पीना उचित नहीं। ऐसे दूध के पीने से सख्त ज्वर (मियादी बुखार), अतिसार, मूत्र, मूत्र, मल और दाहरोग हो जाने का भय है।

अन्य बातें

जिस दूध से मक्खन निकाल लिया जाता है, उसमें पोषक तत्व और शर्करा बराबर रहती है। चिकनाई निकलने का भाग हाथ से मक्खन निकालने पर सौ में एक भाग और मशीन से निकलने पर [illegible] भाग रह जाता है।

[illegible] दूध (Condensed Milk) तीसरा गाढ़ा होता है और दूध [illegible] अच्छे को [illegible] मिलती होती है।

[illegible] का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाय तो हमने प्रत्या

चिकनाई	१८ ४
शर्करा	४ [illegible]
नमक	० ५
पानी	७५ ०

जिस प्रकार की चिकनी चीजें हैं, उनमें मलाई [illegible] यह कादलीवर आइल से कहीं [illegible] चिकनाई का भाग वही है, जो मक्खन में है, परन्तु [illegible] परती है।

अच्छे दूध में सेर पीछे एक पाव [illegible] भी बैठता है।

मलाई जमाने की विधि यह है कि दूध [illegible] एकान्त स्थान में ठंडा होने को रख दो। [illegible] अथवा सोलह-सत्रह इंच [illegible] के आकार के—जिन पर [illegible] डालने से प्रथम उन्हें [illegible] दूध से पौने भर लेना चाहिए, [illegible] ठंडा हो, तभी कोई न [illegible] [illegible] में [illegible] कदापि न [illegible] [illegible] में मलाई [illegible] [illegible] भर का [illegible] है।

मक्खन

मक्खन गर्म दूध का अच्छा, गाढ़ा, निकला और अधिक स्वादिष्ट होता है। पर गर्मी में कच्चे ही दूध का निकालना चाहिए।

यदि लगातार दूध से ही मक्खन निकालना है, तो उसे रात-दिन रखता रहने दो, दिखाओ दुधारों नहीं, तो उस पर मोटी मलाई की तह जम जायगी, और मक्खन अधिक और जल्दी निकलेगा। पर यह दूध इतना खट्टा हो जाता है कि पीने के काम का नहीं रहता। यदि दूध की मलाई में जाता है, तो रात भर ही रखकर मक्खन निकाल लेना चाहिए। इसमें मक्खन [illegible] निकलेगा। दही और उसके इस्तेमाल को सब जानते हैं, उससे पाव घंटे में मक्खन निकल आता है। [illegible] से कुछ पानी निकलता है। मलाई से यदि मक्खन निकालना हो, [illegible] को बर्तन में डाल दो और उसे पानी के द्वारा छींटे दो, और दूध की [illegible] से डालो। ज्यों ज्यों मक्खन आने लगे, हाथ कुछ धीमा करते जाओ। [illegible] कि दही गर्म न होने पावे, वरना मक्खन तैर जायगा, तो कठिन [illegible]।

मक्खन रोगों पर

१—क्षय में शक्ति लाने के लिये मक्खन १ तोला, मिश्री १ तोला, [illegible] और वर्क-सोना १ नग मिलाकर सुबह-सुबह चाटे। २—[illegible] हों, तो मक्खन [illegible] ३—हाथ-पैरों में जलन हो, तो मक्खन-मिश्री खावे। ४—[illegible] से—बच्चों [illegible] में गर्मी चढ़ी हो, तो ६ माशा मक्खन-मिश्री और [illegible] मिलाकर [illegible] ५—भिलावा आदि आँख में गिर पड़े, तो मक्खन मले। [illegible]।

घृत

हर अठवारे पर सब मक्खन या मलाई को इकट्ठा कर [illegible]। [illegible] रविवार के दिन देहात में घृत बनाते और सोमवार को बाजार में [illegible]। [illegible] को सब बाज़ारों में प्रायः ताज़ा घृत मिल जाता है।

घृत बनाना—एक साफ़ कड़ाही या [illegible] में सब [illegible] कोयलों की आँच पर रक्खो और धीमे-धीमे गलने दो।

पहले कुछ झाग आवेंगे, फिर कुछ [illegible] होगा, बाद [illegible] दिखाई देगा, थोड़ी देर बाद झाग की पतली [illegible] जावेंगे। इसके पीछे बबूले उठेंगे, [illegible]। [illegible] उतारकर ठंढा होने दो, हिलाओ मत, [illegible] बर्तन में छानकर [illegible] होगी, [illegible] गलाने से घी का [illegible] नष्ट हो जाता है। [illegible] सड़ जाता है, पर ठीक [illegible] नहीं [illegible]।

दाल

दाल में अत्यंत पोषक तत्त्व होता है। रोटी खानेवाले [illegible] भी [illegible] का समान उपयोग करते हैं। इस तरह [illegible] होता है, उसकी पूर्ति दाल के पोषक तत्त्व से ही होती है। [illegible] जब तक दाल अच्छी तरह न पक जायगी, तब तक [illegible] उबाल लेना बहुत ही आवश्यक है। [illegible] पानी में घुल जाय। बंगाल और पंजाब में [illegible] इस्तेमाल की जाती है। मूंग की दाल रोगियों के लिए [illegible] भी पोषक तत्त्व बहुत है। गर्म [illegible]

[illegible]

गेहूँ—मीठा, ठंडा, भारी, [illegible] पाला, मुश्किल से पचनेवाला, [illegible] प्रकारों है।

काठा गेहूँ—जो मारवाड़ में होता है [illegible] कारक, शीघ्र पाचक और [illegible] की [illegible]

मसूरी गेहूँ—मधुर, [illegible] चिकना, [illegible], पुष्टिकारक [illegible]

मुण्डा गेहूँ—[illegible]

[illegible]—[illegible], मधुर, [illegible] [illegible] के [illegible] में, [illegible] के [illegible] में, [illegible]

[illegible]—[illegible], [illegible], [illegible]

खिचड़ी—वीर्यवर्द्धक, शक्तिप्रद और बलप्रद है। दस्तों के रोग में देनी चाहिए।

ताहरी—घी में चावल दाल या बड़ी भूनकर जो खिचड़ी बनती है, वह ताहरी कहाती है। यह शक्तिकारक और कामोत्तेजक है।

खीर—देह में पनपनेवाली, शक्तिप्रद और बल करती है।

मेवड़ा—धातुओं को पुष्ट करनेवाली, शक्तिप्रद और टूटे को जोड़नेवाली है। इसे बहुत नहीं खाना। गुड़ की शक्कर डालने से शीघ्र पचती है।

पूरी—वीर्य की शक्ति को बढ़ानेवाली और कुछ शक्तिप्रद होती है।

हलुआ—अनेक प्रकार का बनता है। सब प्रकार गरिष्ठ है, मंदाग्निवाले को न खाना चाहिए।

बाटी—बलकारी और धातुओं को बढ़ानेवाली होती है।

मालपूआ—वीर्यवर्द्धक, महापुष्टिकर, पराक्रम उत्पन्न करनेवाली है। शारीरिक परिश्रम करने [illegible] को [illegible] चाहिए।

गूँझा—उपर्युक्त गुण-युक्त किंतु हीन।

फेनी—हल्की और पुष्टिकर है।

सेव—दुर्जर होते हैं।

बूँदी के लड्डू—बलकर्ता, ग्राहिक और ज्वर में हितकारी हैं।

जलेबी—पुष्टि, कांति, बल, धातु आदि को बढ़ानेवाली, अत्यन्त स्त्री-प्रसंग से निर्बल पुरुष को तत्काल फ़ायदा करनेवाली।

शर्बत—सब प्रकार के शर्बत ठंडे, दस्तावर, मूर्च्छा, वमन, पित्त और दाहनाशक होते हैं।

पना—जो मिठाई का बनता है, तत्काल इंद्रियों को तृप्त करे, रुचिकारक और बलकर्ता है।

मन्थ—भूख, प्यास, खंड-वृष्टि, मूत्रकृच्छ्र और नेत्ररोग को नष्ट करनेवाले और बलकारक हैं। पर पीने लायक़ करके पिएँ।

चबेना—सब रूक्ष, शीघ्र पचनेवाले और बलकर्ता होते हैं।

मिठाइयाँ पचने में भारी होती हैं, और ये रोगी तथा कमज़ोर को न खानी चाहिए। मूँगी का हलुआ, मूँग की दाल और मालपुआ तथा पेठे की मिठाई बीमार को [illegible] दी जा सकती है। बादूशा, मोदनि, [illegible] और घिया के रोगी के लिए मिठाई [illegible] करना नहीं है। बनावटी मिठाई से [illegible] और [illegible] से [illegible] हैं।

दूध की बनाई हुई चीज़ें, पावा, [illegible], [illegible] आदि रोगियों को [illegible] हैं।

प्रकरण ४

शाक, फल और मेवे

नीचे दिखी तालिका में भिन्न भिन्न शाक, फल और मेवों के मूल अवयव का पता लगेगा

शाक	पोषक तत्व	चिकनाई	कर्बोज	खनिज पदार्थ	जल
[illegible]	१.८	०.४	५.८	१.३	८१.१
[illegible] का फल	२.२	०.४	४.७	०.८	१०.७
[illegible]	०.८	०.२	२.०	०.४	९५.१
[illegible]	१.२	०.२	५.०	०.७	९१.१
[illegible]	२.०	०.२	२०.१	१.०	७१.८
[illegible]	१.२	०.२	८.२	१.०	८१.४
[illegible]	०.५	०.५	१०.१	०.१	८१.५
[illegible] ([illegible])	४.४	०.५	१०.१	०.१	७८.१
[illegible]	१.१	०.३	१०.१	०.१	८१.१
[illegible]	१.३	०.२	१४.५	१.०	८२.१
[illegible]	१.३	०.१	२२.०	०.८	७५.३
[illegible]	०.८३	०.१३	३.४८	०.२१	९३.३८
[illegible]	१.१२	१.१	८.३२	०.८	१०.३
[illegible]	०.१०	१.०	३.२१	०.७	९०.१०
[illegible]					
[illegible]	०.३	०.४	१०.४	१.४	८२.४
[illegible]	०.१	०.१	११.५	१.४	८१.१
[illegible]	०.४	०.५	९.८	१.३	८८.५
[illegible]	१.०	१.०	१३.२	१.५	७८.१
[illegible]	१.०		५.३	०.०	८३.१
[illegible]	०.३		११.३	०.३	८१.४
[illegible]	१.०	१.०	१८.५	१.०	७१.०
[illegible]	०.०	०.०	०.३	०.३	८१.८

शाकों के गुण

बथुआ—बथुआ दो प्रकार का होता है। [illegible] प्रकार का [illegible] मधुर, [illegible] रसरा, अग्नि को तेज करनेवाला, पाचक, रुचिकारक, हलका और [illegible]। [illegible], [illegible], बवासीर, पेट के कीड़े, इनको नष्ट करता है। [illegible] में [illegible]। [illegible] को सदा खाना चाहिए। लाल बथुआ इससे भी उत्तम होता है।

पोई—[illegible], चिकना, कफकारक, वात तथा पित्त को [illegible] करनेवाला, [illegible] पित्त [illegible]ला, लसदार, आलस्य और नींद लानेवाला, शीतल और [illegible] करनेवाला, [illegible] पथ्य है। लाल पोई, छोटी पोई, बन पोई और [illegible] पोई [illegible] भी [illegible]।

चौलाई—हलकी, शीतल, [illegible], [illegible] को लानेवाली, [illegible], [illegible] वेदनाशक और खून की खराबी में [illegible]। बवासीर को लाभ पहुँचाती है।

पालक—पालक वातकारक, [illegible], कफकारक, हलका, भारी, [illegible], [illegible], [illegible]। [illegible] इन्हें दूर करती है। ज्वर में पथ्य है।

नटेमुआ—अग्नि को [illegible]वाला, [illegible], [illegible], [illegible] [illegible] है।

नारी का शाक—[illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] को [illegible] हलका, ठंडा और [illegible] है।

जिमीकंद—हाज़मे को बढ़ानेवाला, [illegible] है। बवासीर के लिये खास तौर पर फायदेमंद है। [illegible] फ़ायदा करता है। दाद, खून-खराबी, [illegible] है।

रतालू—ठंडा, थकान को मिटानेवाला, [illegible] है। मुज़ाकवाले को फायदा करेगा।

अरबी (घुइयाँ)—[illegible] करनेवाली, [illegible] तेल में पकाने से रुचिकारी हो जाती है।

मूली—छोटी मूली चरपरी, गरम, [illegible] करनेवाली, ज्वर, श्वास, नाक के रोग, [illegible] है। बड़ी मूली रूखी, गर्म भारी और [illegible] को फायदेमंद है। मूली की पत्ती ([illegible]) [illegible] बवासीर, गुल्म, [illegible], श्वास, [illegible] को फायदा करती है। पुरानी मूली गर्म है। [illegible] भोजन से प्रथम खाई हुई मूली [illegible] है बल बढ़ाती है, पचन करती है।

गाजर—हल्की, [illegible] है। पेट के कीड़े मारती है।

आलू—भारी, [illegible]

पिंड खजूर—भारी, दाह मूर्छा और रक्त-विकार में विशेष उपयोगी है।

जामुन—भारी, कसैला, कफकारी, स्वादिष्ट, शीतल, मदकारी [illegible] और [illegible] है।

मेव—वातनाशक, पित्तनाशक, पुष्टिकारक, भारी, शीतल, [illegible] को साफ करनेवाला तथा वीर्य-वर्द्धक है।

नासपाती—धातु-वर्द्धक, मीठी, भारी, रुचिकारी और [illegible]

चकोतरा—स्वादिष्ट, रुचिकारक, [illegible]

नीबू—पथ्य, पाचक, रोचक, [illegible] का नाश करनेवाला है। [illegible]

मीठा नीबू—भारी, वात-पित्त [illegible] करनेवाला है।

अंगूर—[illegible] को हितकारी, [illegible] करनेवाला, [illegible] को उत्तम करनेवाला, [illegible] बल, कफकारक, मूत्रकृच्छ्र मोह, [illegible]

मुनक्का—[illegible] वीर्य-[illegible] को [illegible] करनेवाले [illegible]

अध्याय आठवाँ

फलाहार और फलों की रोगनाशक शक्ति

प्रकरण १

फलों का महत्त्व

जीवन के साथ फलों का कैसा गाढ़ा संबंध है, इस बात का [illegible] । सृष्टि के आदि काल में, जब इस भड़कीली सभ्यता का विकास नहीं हुआ था [illegible] लोग केवल फलाहार करके ही अपने स्वाभाविक [illegible] थे, [illegible] स्वस्थ, आनंदमय और सशक्त थे। [illegible] वेद, गूढ़ दर्शन-शास्त्र और गंभीर उपनिषद् [illegible] थे। रोग, शोक, अल्पायु, दौर्बल्य, चिंता, क्षोभ, [illegible] फलों में अधिकांश ऊपर की मोहक [illegible] मातरूपी, फलाहार खाते और [illegible]

हैं, इसलिये अमीर लोगों के फल खाने के चोचले देखने ही योग्य होते हैं। दिल्ली के बैंक बेरों को बड़ी होशियारी से छीलकर उन्हें तराशकर रूमाल पर चुनेंगे, तब कहीं बड़ी नज़ाकत से खायेंगे। काशी में एक सज्जन के यहाँ आम खाने में आए। दोपहर को आम छील कर एक चाँदी के थाल में सजाए गए। ऊपर से बर्फ़ में दबा दिए गए। रात को चमचे और छुरी की सहायता से खाए गए। इसी प्रकार नारंगी-संतरों को छीलकर नमक लगाकर खाते हैं। दिल्ली में आम, केला, आड़ू, नाशपाती, अमरूद की चाट बनाते हैं उन्हें छील काटकर नमक, मिर्च, मसाला, खटाई आदि डाली जाती है। हज़ारों आदमी इसी तरह फलों को हज़ार करके बेचने का धंधा करते हैं। इन पद्धतियों से खाने से फल तो फल अनुपयोगी ही कम खाए जाते हैं, इससे उनसे वे लाभ नहीं होते, जो स्वाभाविक रीति से खाने से होने चाहिए। प्रत्येक मनुष्य के ऊपर-नीचे के अगले आठ दाँत प्रायः जन्म से मसूड़े निकलने लगते हैं। इनसे काटे बीज काटी ही नहीं जाती। यही दाँत रोगाक्रांत हैं। यदि फलों को सादी रीति से दाँत से काटकर खाया जाय, तो निस्संदेह बहुत अच्छा हो। जो फल ठीक ठीक पक गया हो, वह मनुष्य के खाने के लिये सर्वांग-पूर्ण वस्तु है। मनुष्य जिसे खाद्य मात्र को कुछ दिनों आहार करता रहे, तो वह केवल फलों पर ही बसर कर सकता है, और इससे वह निरोग रहेगा। जो लोग फलाहार पर निर्भर करने के इच्छुक हैं, उन्हें एक अमेरिकन विद्वान की राय पर ध्यान देना चाहिए। लिखते हैं—

सम्पूर्ण शरीर से बलात् बाहर निकल जाती है । चाय [illegible] विष है । इसी तरह [illegible] को भी समझना चाहिए ।

फलों को सदा भोजन के प्रारंभ में खाना चाहिए । भोजन के पदार्थों में यदि [illegible] बिना पकाए हुए दोनों प्रकार के पदार्थ हों, तो बिना पकाई वस्तुएँ प्रथम [illegible] यदि भोजनके साथ मिष्टान्न भी हो, तो मिष्टान्न को प्रथम खाना चाहिए । फल जिनका [illegible] हो, उन्हें फलों को भोजन के साथ न खाकर [illegible] अकेले ही खाना चाहिए [illegible] चाहें, तो फल खाने के कुछ देर बाद भोजन [illegible] घी या मक्खनके स्थान पर नारियल का घी भोजन में इस्तेमाल करें, तो [illegible] सकता है ।

फलाहार-चिकित्सा

इँगलैंड के एक प्रसिद्ध डॉक्टर [illegible] ([illegible]) ने [illegible] पाया । उस डॉक्टर की राय भी यह है कि ऐसे रोगी को [illegible] हो न खिलाया जाय, और सिर्फ [illegible] फल ही [illegible] के पास न चले, तो अच्छे से [illegible] को देना चाहिए ।

[illegible] में मनुष्य पीनेवाला जन्तु नहीं है । [illegible] तक बिना एक बूँद [illegible] पिए, [illegible] ऐसी कठिनाई नहीं हुई । मनुष्य को [illegible] जाती है, पीछे उसे पानी की जरूरत [illegible] यदि [illegible] और [illegible] से पानी पीने की [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] चिकित्सा पर विश्वास करें। चाहे भी [illegible] धारे से हो, अकेले फलाहार से ही उसका रोग नष्ट हो जायगा।

फल और उपवास

उपवास के द्वारा चिकित्सा करने की परिपाटी भारत में बहुत पुरानी है, परंतु अमेरिका में इसका [illegible] प्रचार [illegible] है। योग्य के [illegible] जंतुओं के लिये यह एक [illegible] चिकित्सा है। विशेष [illegible] आमाशय को बिलकुल खाली रखना [illegible] है। [illegible] उपवास, [illegible], [illegible] और अनेकों अवसरों पर [illegible] उपवास किया करते हैं, और [illegible] इसका भारी [illegible] है। मुझे इस [illegible] में एक [illegible] [illegible] चिकित्सा अधिकांश में मोटी, भारी, [illegible], [illegible] और [illegible] पड़ी रहीं, परंतु [illegible] चिकित्सा सुन्दर, सुंदर, सुपुष्ट और [illegible] [illegible] हुईं। [illegible] करने पर मुझे [illegible] हुआ, और यह था उपवास की [illegible]। [illegible] में उपवास का प्रभाव बहुत है। [illegible] का शरीर [illegible] है कि [illegible] अधिक [illegible] करता है, इसलिये उपवास का [illegible] पड़ता है।

[illegible] जिन्हें उपवास [illegible] है, [illegible] को जाता है। यद्यपि यह [illegible] है कि [illegible] में [illegible] है, परंतु मैं तो [illegible]

है, परंतु फल खाने से यह मैल कम हो जाता है, और [illegible] ों का आहार बहुत ही उपयोगी है। क्योंकि यह रोगोत्पादक जन्तुओं का नाश कर देता [illegible] शरीर की बनावट को दृढ़ करने के लिये फल खाना परमोपयोगी है। फल खाने [illegible] रखनेवाले बालक शरीर से दृढ़ होते हैं, और उनके [illegible] इस तरह रुक जाते हैं कि वे [illegible] भोजन [illegible] ।

फल मनुष्य की सब आवश्यकताओं को पूरा करनेवाले हैं, [illegible] में बस पुष्टिदाता अथवा [illegible] नहीं, वरन् [illegible] अधिक सहायता देनेवाले हैं। इतना होने पर भी वे [illegible] और प्रकार की हानियों से दूर हैं। इतना ही नहीं, [illegible] उत्पन्न हो जाती हैं, फल उनको [illegible] देता है। [illegible] है, इसके सिवा फल रुधिर में एक प्रकार का [illegible] ता है। पकाने से भोजन के [illegible] नष्ट हो जाते हैं, [illegible] देते हैं। इसलिये फलों को [illegible] ग भी गिनना चाहिए। इसी कारण से पकाये हुए [illegible] ों को खाने और सूखे फल भी खाने चाहिएँ।

दूसरी रीति से पके हुए फल [illegible] के लिये [illegible] डाले, तो यह [illegible] हो सकती है और [illegible] खाना छोड़कर फल [illegible] लाभ होता है

सूखे फल भी [illegible] है, [illegible] हो जावें, [illegible] नहीं।

[illegible] हैं। [illegible] हैं, [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] हैं। [illegible]

[illegible]

सेब

सेब, बिही, नासपाती, तीनों की एक जाति है। [illegible] होते हैं। नासपाती हिंदोस्तान में भी [illegible] होती है। [illegible] होते हैं। पत्ते भी अमरूद के बराबर छोटे होते हैं। [illegible] काबुल का खट्टा होता है। काश्मीर में एक और [illegible] होती है, [illegible] बहुत ही मीठी होती है। बिही का मुरब्बा बहुत ही [illegible] बीमारी में काम आता है।

[illegible]

आधुनिक विज्ञान के द्वारा जितनी शक्ति-वर्द्धक [illegible] में प्रधानता है। स्नायु और मस्तिष्क की [illegible] परिवर्तन के गुणों पर इतने मुग्ध हैं कि [illegible] लिखे हैं। परन्तु जो [illegible] होते हैं। नसों की कमजोरी और [illegible] वस्तुओं में से शायद ही कोई [illegible] है और न दिमागी कमजोरी [illegible] के पीछे होकर इन रोगों [illegible] हैं। [illegible]

सेब की चाय

एक-दो उम्दा सेब लो। उन्हें धो लो, मगर छीलो मत। [illegible] लो, उसमें एक नीबू को ३-४ टुकड़े करके डाल लो, उन्हें [illegible] १० मिनिट रख दो, ठंडा होने पर छानो, थोड़ी चीनी मिलाकर पिओ।

अंगूर

अंगूर में जादू-सा एक चमत्कारी गुण है। [illegible] हो, [illegible] बाधु शीत हो गई हो या रस न बनता हो, तो [illegible] करता है। दुबले-पतले, बदहज़मी से रोगी जो [illegible] की धारा शरीर में दौड़ने लगेगी। [illegible] चाहए और ऊपर से भर-पेट खाते पड़े हुए [illegible] नहीं, और शरीर में तत्काल ही [illegible] रोगी को या रुग्ण के ऐसे रोगी को, [illegible] साफ़ कपड़े में निचोड़कर पिलाइए। [illegible] देख लेंगे। अंगूर खाओ और इस बात पर [illegible] पूरा निचोड़ जाइए, पर छिलका और बीज [illegible] रक्त के रोगी हों या [illegible] कब्ज़ी, और जिन्हें ज्वर ([illegible]) [illegible] रोग हो, उन्हें कुछ [illegible] अंगूर खाने चाहिए।

[illegible] के रोगी [illegible] के [illegible] कर सकता है कि [illegible] हो पर [illegible] हो, तो [illegible] है। [illegible] के [illegible] हुए अंगूर बहुत ही [illegible] हुए हैं।

[illegible] के रोगी के लिये [illegible] अंगूर को [illegible] रोगी को [illegible] अंगूर [illegible] चाहिए।

[illegible] के [illegible] है, [illegible] के [illegible] है, [illegible]

श्वेतप्रदर-रोग में केले का [illegible] गुण है। [illegible] दो केले खाने से प्रदर रोग के [illegible] होता है।

मिश्री, गाय का घृत, केला ये तीनों वस्तु [illegible] लेकर [illegible] है। इसमें [illegible] तोला, लोध १ तोला, धाय के फूल, [illegible] प्रत्येक ६ माशे, [illegible] ३ माशे बारीक पीसकर मिलावें। २ तोला सुबह-शाम खाली पेट [illegible] के प्रदर में आश्चर्य गुण करता है।

केले में लोहा होता है, इसलिये पाण्डु-रोग में [illegible] है। [illegible] गन्ने के रस के साथ खाने से इसमें [illegible] है। [illegible] दिलवे को बाँध देने से सुजाक नहीं [illegible]।

शोफरा नारियल

[illegible] के फीते का बहुत उत्तम इलाज है। [illegible] सुबह लेना चाहिए, जब तक आराम न हो। [illegible] है, [illegible]।

मसाने की दुर्बलता और [illegible] में शोफरे का [illegible] है। [illegible] सुजाक का पुरानी अवस्था में शोफरा [illegible] है। शोफरा [illegible] है। [illegible] है। मैथुन-शक्ति बढ़ती है।

[illegible] की विधि- एक सेर शोफरे को [illegible] गाय का घृत लो और उसमें [illegible] शोफरा [illegible] दो रात, तब २॥ पाव [illegible] घृत [illegible] शोफरा को [illegible] और [illegible] पीसकर [illegible] एक [illegible] करो, [illegible] करो। [illegible] पानी का [illegible] दिया [illegible] दो। [illegible]

[illegible]

[illegible]

बड़ा बेर

इसका रस जाड़े में जुकाम और खाँसी को फायदा करता है।

रस निकालने की विधि—किसी बड़े इनामदल्ले में इसे [illegible] गर्म करो, और कपड़े में डालकर रस निचोड़ लो। इस तरह उसे [illegible] एक सेर रस में आध पाव खाँड डालकर घोल लो। उसे एक साफ बोतल में भर [illegible] बोतल को गर्म पानी के बर्तन में रक्खो, और पानी को पाव घंटा उबालो। [illegible] चाहिए। पीछे उसे निकालकर काफ़ी [illegible] तक्रिये जुकाम में लाभप्रद है। सोते वक्त गर्म पानी के साथ दो [illegible] भी गुणकारी है।

शरीर पर बेर के पत्ता की पुल्टिस—[illegible]। इसके पत्तों को [illegible] पानी में नहीं, भाफ़ में उबालो। एक चौड़े मुँह के बर्तन में पानी भरो, [illegible] पत्ते रख दो, ऊपर से थाली से ढाँप दो। जब गर्म हो जाय, [illegible] उसे कर मस्सों पर बाँध दो, घंटे-भर तक [illegible] रहने दो। [illegible]

[illegible]

[illegible] का रस पसीना लानेवाला है। [illegible] खाया जाता है। [illegible] वात-व्याधि और पेट के [illegible] में [illegible] फायदा करता है।

[illegible] के उड़ने को [illegible] नहीं खाना चाहिए। [illegible] विशेष गुण करता है। [illegible] को पैरों की बिवाइयों पर [illegible] हों, तो [illegible] बाँध दिया जाय, तो [illegible]

[illegible] के बनने में [illegible] इसे [illegible] [illegible] के रस [illegible] [illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

गुठली निकाल लो। आधा पानी जल जाय, तब उतारकर ठंडा कर लो, और छान लो। फिर पानी फिर मद्धी-मंदी आँच से पकाओ, यहाँ तक कि चासनी बन जाय, यही अर्क है। यह गर्भवती स्त्रियों को भी गुणकारी है। इसमें पेट चलने और सूखा की शिकायत में।

अंजीर

अंजीर साक्षात् ताक़तवर है। सूखे अंजीर के खाने की तरकीब यह है कि अन्दाज़ गर्म पानी में भी डालो, और बीस मिनट तक भाग दो।

अंजीर पेट-भर खाने से कोष्ठ में बहुत फायदा होता है—खासकर सर्दी कोष्ठ में। यह रक्त दस्त को नरम करके लाता है, इसलिये जिन्हें दस्त की कठिनता हमेशा रहती हो, उन्हें अंजीर खाना चाहिए। रक्त-फसाद या बीमारी में भी बहुत फायदा करता है।

प्रदर का अनोखा नुसखा

नागकेसर ५ तो०, गाल २॥ तो०, बलाद का पानी ३ तो०, [illegible] २॥ तो०, बबाबीनी २ तो०, आँवला सूखा ३ तो०, [illegible] ४ तो०।

कपड़छन चूर्ण करके ताज़े अंजीर के रस में [illegible] अंजीर में भिगें, तो १० तोला सूखे अंजीर [illegible] उबाल दें, और उनमें भावना दें। इसके बाद [illegible] भावना दें। जब रस सूख जाय, तब उसमें १४ तोला [illegible] बूरा मिलाकर शीशी में रख लो। [illegible] के प्रदर में [illegible] प्रदान करता है।

शीशी

[illegible] की शीशी में [illegible] है। [illegible] को [illegible] डालना चाहिए। यदि शीशी में [illegible] हो जाती है, फेर में [illegible] उत्तम है।

है कि जब नशे का भरपूर वेग होता है, तब वह [illegible] पानी और [illegible] पर उतर पड़ता है । कभी किसी सदाचारी व्यक्ति को सदाचारी भावनाओं से [illegible] गया । यह इस बात का अकाट्य प्रमाण है कि मदिरा मस्तिष्क का [illegible] । [illegible] उत्तेजित हो चुकने पर या मस्तिष्क में गर्मी, हृदय में व्याकुलता [illegible] अनुभव करता और अवसन्न दशा में ग्रस्त होने लगता है । [illegible] पड़ जाता है । उसका मस्तिष्क क्रिया-शक्ति और ज्ञान-तन्तु [illegible] हो जाते हैं ।

कुछ वैज्ञानिक विद्वानों ने स्वयं अपने ऊपर मदिरा का प्रयोग किया और [illegible] और वे इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि प्रत्येक अवस्था में मदिरा मस्तिष्क [illegible] और विवेक को नष्ट करनेवाली है । उन्होंने [illegible] ८ दिन [illegible] लिया है । ८ दिन बाद उनकी मानसिक शक्ति [illegible] । [illegible] हिसाब जो वह पहले ५ मिनट में [illegible] ८ दिन बाद [illegible] में हल किया ।

इसके सिवा सरकारी सूचनाओं के आधार पर [illegible] चोरी, खून, व्यभिचार और धोखेबाजी के [illegible] १५ [illegible] है । मदिरा पीनेवालों के द्वारा [illegible] होते हैं ।

मदिरा और जीवन

“मेरे अभागे सुंदर युवको ! [illegible]

[illegible]

ا

-

[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible] अरुचि पैदा करता है। कार्बन मोनक्साइड [illegible] है। इसका असर यह होता है कि [illegible] हो जाती है, रोमांच और ऐंठन होती है। [illegible] पसीना, ठंडा बदन, बेहोशी और [illegible] संतुलन को डोला कर देनेवाला विष है, जिससे बाद में [illegible] है। एकोनीन एक गैस है, जो मन में [illegible] पैदा कर देता है।

किसी प्रकार भी तंबाकू सेवन किया जाय, वह दोष-[illegible] है। [illegible] यद्यपि यह कुछ पेट में नहीं पहुँचता, तब भी [illegible] पीने भर जाते हैं, और उनकी क्रिया बंद हो जाती है। [illegible] बंद हो जाती है, इससे पाचन-क्रिया कम पड़ जाती है। [illegible] दुर्गंधित कीट जम जाता है। यह कीट और कुछ नहीं, [illegible] है।

तंबाकू पीनेवाले बहुधा कहा करते हैं कि [illegible] दूर हो जाती है, थकान नहीं रहती, भूख बढ़ती है। [illegible] है। तंबाकू सेवन का सबसे पहला [illegible] कहने को तंबाकू पीने से कुछ [illegible]

भारत में १० लाख बीघे धरती में तम्बाकू बोई जाती है। इतनी जमीन में यदि [illegible] बोया जाय और दो बार बुआई करने से उसमें से प्रति बीघा २० मन [illegible] भी हो, तो २० करोड़ मन अन्न उत्पन्न हो सकता है। प्रतिदिन एक सेर के हिसाब से एक एक मनुष्य [illegible] २ मन अन्न एक वर्ष को काफी हो सकता है। इस तरह २२ लाख से अधिक मनुष्य [illegible] भर सकता है। एक विद्वान् ने तो हिसाब लगाकर बताया है कि [illegible] बोया जाय, तो उससे २ करोड़ २० लाख मनुष्यों [illegible] हो सकता है।

तंबाकू के विषय में विद्वानों की राय

"दारू और भांग की तरह तम्बाकू भी खराब है। जो [illegible] वह सिगरेट, तंबाकू कैसे पी सकता है। तम्बाकू खाने से [illegible] बिना आज्ञा के दूसरों के घरों में तम्बाकू पीने [illegible]।

I)

१—दूध में अधिक चीनी न मिलाई जाय। इससे [illegible] होती है। २—मिठाइयाँ बहुत कम खाई जायँ, और वे भी [illegible] कम खाए जायँ। सदा ऐसे भोजन करने चाहिए, जो [illegible] गर्म और बहुत ठंडे पदार्थ न खाए जायँ। ५—[illegible] खाया जाय।

विज्ञापनबाज और पेटेंट दवाइयाँ

आजकल देश के लिये सबसे भारी [illegible] और विज्ञापनों [illegible] और पेटेंट दवाइयाँ हैं। विज्ञापन की [illegible] दवाइयाँ [illegible] हुआ करती हैं। और युवकों को उनसे [illegible] से कह सकते हैं। इन विज्ञापनों की भाषा उत्तेजक, [illegible] होते हैं, और बड़े-बड़े [illegible]

६—कुछ दिन पहले तक लोगों की यह राय थी कि [illegible] को मांसाहार करना नितांत आवश्यक है, इसीलिये [illegible] पहलवान अधपके मांस और अन्य उत्तेजक पदार्थों के [illegible] दूर हो रहा है, और शाकाहार पर लोग विश्वास [illegible] में, बेलजियम की ५००० मीटर की दौड़ में, [illegible] में, साइकिल पर लगातार २४ घंटे चढ़कर ४०३ मील [illegible] दस बार, कुश्ती में दस बार, भारी बोझ उठाने में, [illegible] विजय प्राप्त की, वे सब निरामिषभोजी थे।

७—मांसाहारी प्रोषी, मुर्ग, [illegible] का अभाव होता है।

८—गेहूं, उड़द, बाजरा, मटर, घी, [illegible] दूध और घी से बनी वस्तु, मांस का [illegible] होती है।

संसार जितनी तेजी से बढ़ रहा है, उससे इस बात का भय है कि भविष्य में संसार में [illegible] करोड़ लोग इस रोग के शिकार होंगे।

१७—अमेरिका के प्रसिद्ध विद्वान प्रो० चिटेंडन Ph D D SC I I D [illegible] ने परीक्षण किया था। उन्होंने ६ मस्तिष्क से कार्य करनेवालों के लिए, जिनमें [illegible] थे तथा २० शारीरिक कार्य करनेवालों लिए, जो [illegible] यूनिवर्सिटी से पहलवान लिए गए। [illegible] इक्कीस की [illegible] जाँच बिल्कुल वैज्ञानिक ढंग से की गई थी।

यह प्रयोग अक्टोबर, १९०३ में प्रारंभ [illegible] जिन्हें थोड़ा प्राण-पोषक तत्व दिया जाता था, [illegible] नहीं रह सके। इस प्रयोग के पूर्व चिकित्सकों का मत था कि [illegible] ग्राम (२ छटाक) प्राण-पोषक तत्व (प्रोटीन) [illegible] कि मनुष्य के लिये केवल प्राण-पोषक तत्व [illegible] जितना स्वादु मिले, उतना ही [illegible] दिन कि २० खिलाड़ियों के लिये [illegible] होता था। उनको [illegible] की वृद्धि होती गई। प्रयोग में [illegible] औसत (प्रत्येक २१ सेर) था, [illegible] था। प्रयोग में [illegible] १६ सेर के लगभग) कर दी गई। [illegible] में, [illegible]

सर्व-भक्षकों की नली दसगुनी और फल-भक्षकों की [illegible] नली ठीक १२ गुनी है, अतः यह भी फलाहारी [illegible] (बड़ी आँतड़ियों का एक भाग) सुस्त सुस्त होता है, परन्तु [illegible] का सुस्त सुस्त होना है। ४—मांस भक्षक, [illegible] होते हैं, परंतु मनुष्य आदि फल-भक्षकों के [illegible] होंपों का अभाव है, परन्तु उक्त जाति के [illegible] कोने के पेट में ४ भाग होते हैं। [illegible] कुछ [illegible] तक रहता है। मांस-भक्षकों के पेट [illegible] (Gastric Juice) अधिक उत्पन्न होता है, [illegible] होती है। ८—मांस-भक्षक जीभ से पानी पीते हैं, [illegible]

विरोध करती है। जिनमें यह शक्ति कम होती है, उन्हीं को रोग जल्द सताता है, औरों को नहीं। यदि एक आदमी बचपन ही से दुबला-पतला है, उसे सदा सर्दी, जुकाम, खाँसी, बदहजमी बनी रहती है, बस मौका पाते ही जब के रोग-जंतु उसे सताना शिकार बना लेते।

मलेरिया, तिजारी या चौथिया ज्वर के जंतु इन खूनचूसने वाले मच्छरों द्वारा चमड़ी को भेदकर भीतर पहुँचते हैं। ये मच्छर मादा जाति के होते हैं। इन रोगों के जंतु आदि इन मादा मच्छरों के मुख और आमाशय में रहते हैं। जब यह मच्छर पेशाब करने के लिये अपनी सूँड़ की नोक के समान सूँड़ चमड़ी में चुभाते हैं, तब रोग-जंतु उसके शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। पीला ज्वर अत्यंत भयानक है, जो एशिया में अधिक होता है। यह मच्छरों से ही उत्पन्न होता है। काला आजार जो आसाम, बंगाल और मद्रास के प्रांतों में होता है, एक जाति के खटमलों द्वारा होता है। प्लेग के जंतु एक प्रकार के पिस्सुओं के शरीर में रहते हैं, जो चूहों के शरीर पर पाए जाते हैं। अति निद्रा रोग (यह रोग अफ्रीका के कुछ भाग, कांगो में होता है) एक प्रकार की मक्खी के द्वारा शरीर में पहुँचता है। [illegible] पिस्सुओं द्वारा होता है। चूहे, गिलहरी, पालतू [illegible] आदि [illegible] ऐसे ही जंतुओं द्वारा होता है, जो उनकी त्वचा में [illegible]।

[illegible]

आतशक के रोग-जंतु माता-पिता के वीर्य और रज के द्वारा [illegible] बच्चे में [illegible] कर जाते हैं। बहुधा आतशक तीन पीढ़ी तक [illegible] है। यह भयानक रोग [illegible] है, [illegible] आतशक के अध्याय में पढ़ेंगे, और आप इससे भय करना।

शरीर में रोग-जंतुओं से [illegible]

शरीर में रोग-जंतु एक बार यदि पहुँच जाते, तो वे [illegible] । इसके दो कारण हैं—

१—यहाँ उन्हें मन-पसंद गर्मी मिलती है।

२—यहाँ उन्हें खुराक खूब मिलती है।

ये वृद्धि के साथ-साथ खूब [illegible] बनाते और [illegible] शरीर में फैल जाते हैं। परंतु इस [illegible] कुछ [illegible] विरुद्ध युद्ध करने की शक्ति है। इन [illegible] इन्हें भयानक युद्ध [illegible] जाता है। शरीर में जो 'श्वेताणु' हैं, वे [illegible] जाते हैं। इसीलिये इनका नाम 'भक्षकाणु' है। [illegible] शरीर-रक्षक सिपाही कहना चाहिए। [illegible] बच्चों की सेना पहुँची। यदि ये जीत गए, तो [illegible] शरीर को आतंक कर लिया, और [illegible] हो [illegible]

[illegible] रोग-जंतु [illegible] में घुस गए। [illegible] [illegible] रोगाणुओं को [illegible] युद्ध होना [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

ये पिस्सू अँधेरे कमरों में पैदा होते हैं, अतः चूहे और पिस्सुओं से बचने के लिये उजालेदार और पक्के मकान बनवाने चाहिए।

पिस्सू की [illegible]

रोगाणुओं से कैसे रक्षा हो सकती है ?

१—प्रतिदिन स्वच्छ जल से स्नान करो, और शरीर को मोटे कँगोड़े से रगड़कर पोंछ डालो। कभी-कभी साबुन भी लगाओ। [illegible] कपड़ों में नहीं। दाँतों को नित्य [illegible] कर लो, ताकि [illegible] भी [illegible] साफ़ करो। [illegible] कुल्ला कर डालो।

२—प्रतिदिन [illegible] करो और शुद्ध वायु को [illegible] दिखो। [illegible]

३—[illegible] कपड़ों को [illegible] स्वच्छ [illegible] से [illegible] करो। [illegible] करो। [illegible] हैं।

टाइफाइड फ़ीवर—विषमज्वर के रोगी के मल-मूत्र में [illegible] हो जाने के भी महीनों बाद [illegible] कीटाणु रहते हैं। मक्खियाँ उस मल-मूत्र पर बैठकर [illegible] भोजन पर बैठती और वहाँ रोग-कीटाणुओं को छोड़ [illegible] जाती हैं।

मक्खी की [illegible] में [illegible] एक कीटाणु

पेचिश के कीटाणु भी ये मक्खियाँ इसी प्रकार फैलाती हैं। बच्चों को गर्मियों में दस्त आते और अक्सर बच्चे उनसे मर भी जाते हैं। इन दस्तों में भी एक प्रकार के कीटाणु होते हैं, मक्खियाँ दस्त पर बैठकर बच्चों के मुख पर बैठती हैं, [illegible] होठों पर दूध लगा रहता है और वहाँ उन कीटाणुओं को छोड़ जाती हैं, जो बालक के अन्दर प्रवेश करके रोग उत्पन्न कर देते हैं, इसलिये बालकों को मक्खियों से बचाना चाहिए। यह बहुत ज़रूरी है। अन्य रोगों के कीटाणु भी इसी प्रकार बालकों में प्रवेश करते हैं।

[illegible]

घर के कोने मूत्र से और ऐसे ही [illegible] भी इस प्रकार इन मक्खियों द्वारा पहुँचते हैं। [illegible] में [illegible] हैं, जिन्होंने इस संबंध में बड़ी खोज की [illegible] कि मक्खियाँ हैज़े को फैलाती हैं। इस संबंध में [illegible] हुई हैं, इसकी सहायता से मक्खी से [illegible] करते हैं।

[illegible]

इसे आग के पास न जाना चाहिए। यदि सिर में घाव हो गए हों, तो उन पर [illegible] नारियल का तेल लगाना चाहिए।

दूधों की लीखें या खंडेजातों में नीली से [illegible] हुई होती है। [illegible] के लिये बालों को हफ्ते में दो बार सिरके से धो डालना चाहिए और [illegible] कंघी से बालों को भली भाँति स्वच्छ कर डालना चाहिए।

खटमल

खटमल बस्तों और चारपाइयों में [illegible] रहते हैं, [illegible] से अनेक भयानक रोग-पुंजों को शरीर में प्रवेश कराते हैं। [illegible] सबसे अच्छा उपाय यह है कि इन्हें गर्म पानी में [illegible] पूरों में खटमल हो जायँ, तो एक भाग [illegible] डालो। तारपीन का तेल भी [illegible] है।

में पकावे। जब चार सेर पानी बाकी रहे, तब उतारकर छान ले। फिर तीन [illegible] सेर लेकर १६ सेर पानी में औटावे, ४ सेर पानी रहे उतारकर छान ले। ४ सेर [illegible] भोजन ले। यह इस प्रकार बनावे कि १ सेर मोटे [illegible] एक बार भोजन [illegible] निकल जाय, तब आठ अंगुल पानी भर दे, और दोपहर तक रखा रहने दे। [illegible] ले। बकरी का दूध ४ सेर ले। [illegible] का रस ४ सेर ले और [illegible] का घी ४ सेर ले। सबको लोहे की कड़ाई में डालकर मिला दे। [illegible] = तोला, [illegible] = तोला, [illegible] = तोला, [illegible] = तोला, [illegible] = तोला, [illegible] तोला, दारुहल्दी के क्वाथ में बकरी के दूध में [illegible] ४ तोला, [illegible] की दाल का गूदा ४ तोला, मुनक्का ४ तोला, [illegible] ४ तोला, [illegible] में लुगदी पीस ले। यह भी उसी [illegible] में पकावे। [illegible] जल जाय, घी-मात्र रह जाय, तब उतारकर छान ले। [illegible] रोगी की शक्ति के अनुसार [illegible] भर से १ तोला [illegible] का रस-क्वाथ पर इसका प्रयोग [illegible] है। इसके [illegible] उपकारी है। जिन प्रदेशों में [illegible] भोजन [illegible] सदा बहता रहता है, उनमें भी [illegible] लोह इत्यादि औषधि से मिट जाता। [illegible] जाती, तब यह औषध [illegible] गुणकारक होने से इसे 'लोहसिद्ध' और [illegible] 'अमृत' कहते हैं। यह [illegible] बहुत [illegible] करता है।

[illegible] में पकावे। घोटने लायक अवलेह तैयार करे। फिर [illegible] का चूर्ण मिला दे। दूसरे दिन [illegible] होने पर [illegible] मिलावे। [illegible] शीशी के पात्र में रखे। मात्रा ६ माशे से १ तोला तक। खाँसी, दमा, [illegible], [illegible] और [illegible] की प्रथम श्रेणी में लाभदायक है।

३ [illegible]

[illegible] के पत्ते १० सेर को ३ मन पानी में पकावे। १० सेर [illegible] रहे, तो [illegible] छान ले। इसमें २० सेर गुड़, १६ तोले [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], केसर, कबीला, सोंठ, मिर्च, पीपल, [illegible] [illegible] डालकर [illegible] बिछने बासन में १५ दिन सधान करे, [illegible] तक। पाण्डु, जलोदर, सूजन, [illegible] पर [illegible] है।

४ [illegible]

[illegible] और [illegible] के पत्तों को [illegible] [illegible] शहद मिलाकर [illegible] में [illegible] है।

५ [illegible]

[illegible] के [illegible] पत्तों को [illegible] [illegible] में बहुत ही उत्तम प्रभाव करती है।

सोंठ, काली मिरच, पीपल, कूट, [illegible] का गूदा, [illegible] की [illegible], [illegible], अनंतमूल, चौलाई की जड़ प्रत्येक [illegible] तोला चूर्ण कर [illegible] में [illegible] के साथ के तांबे के बर्तन में डालकर पकाया गया, [illegible] दो-तीन घालियों में डालकर धूप में रख दिया [illegible] लगाकर दो-दो आने-भर की गोलियाँ बना [illegible]।

ये गोलियाँ सायं प्रातः एक-एक [illegible] तोला [illegible] गई। [illegible] मुख का [illegible] दिया [illegible] जिस के साथ में [illegible] एक गोली [illegible] थी। इस प्रयोग से उस रोगी [illegible] शरीर का [illegible] दूर हो गया। [illegible]

[illegible] के बीज जिस प्रकार [illegible] में उपयोग करने से [illegible] में [illegible] को [illegible] फायदा होता है—

[illegible] के [illegible], [illegible] के साथ [illegible] करके [illegible] करके [illegible] लेना चाहिए। [illegible]

[illegible] के [illegible] के लिये [illegible] के [illegible] का विस्तार करके [illegible] [illegible]।

में चार तोला तक औषध खाकर ऊपर से यथाशक्ति जल या गाय का दूध पीना चाहिए। और प्रकृति के ही अनुसार दूध-चावल का [illegible] आहार करना चाहिए। [illegible] में कार्यों की अधिकता कम करके शान्तिमय जीवन [illegible] करें। इस प्रकार एक-दो वर्ष तक इस औषध के सेवन करने करने से उसके [illegible] दीर्घजीवनदाता सत्वों का शरीर में [illegible] होता है और रस, रक्त, वीर्य आदि में उत्पन्न हुए दोष दूर हो जाते हैं। [illegible] प्रकृति [illegible] दोष हो जाती है। रस, रक्त आदि धातुओं के शुद्ध करने से [illegible] बढ़ती है, शरीर की कांति तथा वर्ण सुंदर होता है, शरीर और इन्द्रियों का [illegible] होता है। वीर्य शुद्ध और अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है। पीड़ा शरीर [illegible] इस बात का अवसर नहीं आने सकती, [illegible] जीवन-दोष [illegible] हो जाते हैं।

(२) जिन कारणों से [illegible] और जो सैकड़ों पेटेंट दवाइयों में पैसे की [illegible] है—उस रोग पर यह अवलेह बहुत [illegible] है। [illegible] ऐसी [illegible] कि ठंडी या गर्म [illegible] हो, तो [illegible] लिये बहुत ही लाभकारी है। [illegible] औषध खाकर ऊपर से गाय का दूध पीना [illegible]। [illegible] इस प्रकार एक-दो वर्ष तक सेवन करने करने से [illegible] होती है और वीर्य शुद्ध हो जाता है। [illegible]

कफवात, अजीर्ण और अम्लपित्त को लाभ होता है। भोजन के बीच में [illegible] लेने से कष्ट नहीं होता तथा [illegible] पचने समय [illegible] होती है। भोजन के अंत में लेने से परिणामशूल [illegible] होता है।

४ [illegible] गुड़—[illegible] तथा पीपलामूल, जीरा, वच, सोंठ, [illegible] अजमोद, चित्रक की जड़, प्रत्येक दो-दो [illegible] निशोत्तर का चूर्ण और ३२ तोला [illegible] तैयार हो जाय, तब उसमें [illegible] मिलाकर [illegible] के पात्र में भरे। यह औषध [illegible] उससे सब प्रकार की [illegible] पुरानी [illegible] होता।

५ [illegible]—[illegible] २००० [illegible] भाग [illegible], २०० तोला [illegible] तोला [illegible] में भरकर [illegible] है। [illegible] पुरानी होती, [illegible] लेने से [illegible] पाण्डु, [illegible] आदि [illegible]

६ [illegible]

प्रकरण ५

चौलमोगरा

[illegible] एक प्रकार के वृक्ष के फल हैं। इसका [illegible] होता है। इसका रंग कुछ [illegible] होता है। इस वृक्ष [illegible] और गोलाकार फल उत्पन्न होते हैं। [illegible] कार्तिक के महीने में पकते हैं। इनमें [illegible] में हाथ के दबाव से ही तेल निकल जाता है। [illegible] भी कोई पशु-पक्षी इन्हें नहीं खाता।

[illegible] हिमालय के नीचे के प्रदेशों में ऐसे [illegible] प्रचुर होते हैं। [illegible] बाजार में लाते हैं। उनमें [illegible] का रंग बादाम के [illegible] होता है, और तेल भी उसी [illegible] होता है। [illegible] अन्य ३-४ रुपए [illegible] रहता है, [illegible]

करने के काम में लानी चाहिए। इससे [illegible] रोग के रोगी भी आराम होंगे, और [illegible] हैं। कोई की शुरुआत में इसका उपयोग करने से रोग के [illegible] कम होते जाते हैं। खुजली, दाद आदि रोगों की बात तो [illegible] ही नहीं।

एक बंगाली वैद्यराज का अनुभव है कि खुजली के [illegible] के साथ इस तेल को मिलाकर मलने से दाद तत्काल आराम होता है।

पेरिस की बैमिकल सोसाइटी और इंगलैंड का [illegible] और लंदन की F.I S E L A [illegible] "[illegible] ऑव इण्डिया"-नामक ग्रंथ में लिखते हैं—

से मच्छर नहीं काटते। पास न आकर दूर से ही भाग जाते हैं, और इससे मलेरिया का डर,
जो मच्छरों के विष से हो जाता है, होने का डर नहीं रहता। यदि मच्छर के काटे [illegible]
के दूध हों, तो उसकी गंध से मच्छर वहाँ पास भी नहीं फटकते हैं। यहाँ के [illegible]
में मलेरिया को दूर करने के लिये काली तुलसी बहुतायत से [illegible] थी, और उसका
परिणाम भी बहुत अच्छा हुआ, जिसकी साक्षी मर जाने वाले [illegible] से उस समय दी गई।

सन् १७०७ में 'इंपीरियल मलेरिया कान्फ्रेंस' हुई थी, उसका भी यही निर्णय हुआ था
कि काली तुलसी से मलेरिया के उपद्रव दूर होते हैं।

लंदन के इंपीरियल इंस्टीट्यूट के डाक्टर मोडिग तथा डॉ० [illegible] का [illegible]
[illegible] है कि तुलसी के पत्तों में एक प्रकार का तेल है, जो वायु [illegible]
जिससे हवा शुद्ध होती और मलेरिया के ज्वर के कीटाणुओं को नष्ट करती है।
डॉ० मेजर लोरीमर ने बहुत पत्तों के अनुभव से यह सिद्ध किया है कि तुलसी के पत्तों
से सुगंध निकलती है, उससे मच्छर मर जाते हैं।

यह तो शास्त्र, पुराने और विदेशी विद्वानों के [illegible] हुई, [illegible]
[illegible] को देखिए। शार्ङ्गधर में लिखा है कि—

[illegible]

[illegible] तुलसी के पत्तों का रस एक [illegible]
[illegible] से विषज्वर दूर होता है।
[illegible]

[illegible] प्रयोग इस प्रकार है—नागर बेल के पान (कच्चे), काली तुलसी के पत्ते, लौंग और [illegible]-सा कपूर। सबको मिलाकर दिन में दो-तीन बार खाने से श्वास-नली में रुका हुआ कफ निकल जाता है, और श्वास, खाँसी की पीड़ा कम होकर आराम मिलता है।

कासारि चूर्ण—मुलहठी, भोंफली की जड़, बड़ के पत्ते, तुलसी के पत्ते और मुद्रपर्ण, सब एक-एक भाग, आक के फूल और छोटी पीपल आधा-आधा भाग। सबका चूर्ण बना [illegible] आदमी को देखकर एक माशे से दो माशे तक और बालक को उसकी आयु के अनुसार देनी चाहिए। इससे सब प्रकार की खाँसी दूर होती है। उसमें भी गलगल का चलना, मुख फूलना, कफ होना आदि और बालकों की खाँसी सब दूर हो जाते हैं।

तुलसी में भूत-बाधा, हिस्टीरिया, मूर्च्छा, धनुर्वात आदि वायु के रोगों को दूर करने की भी शक्ति है, और इसलिये ऐसे रोगों पर प्रयोग करने के लिये बहुत-सी दवाइयाँ तुलसी के रस के अनुपान से दी जाती हैं। इतना ही नहीं, बल्कि इस अकेले का प्रयोग भी जाता है।

भूत-प्रेतविनाशक अंजन—सर्पि का [illegible], लौंग, [illegible] (शुद्ध), [illegible], सिरस के बीज, छोटी पीपल, काली मिरच सब बराबर लेकर चूर्ण करके, सहजन के रस में खरल करके गोली बनाये। यह गोली तुलसी के रस में घिसकर आँखों में लगाने से [illegible], हिस्टीरिया, मूर्च्छा, बाई, भूत-बाधा, धनुर्वात आदि रोग दूर होते हैं।

वायु-विनाशक चूर्ण—काली तुलसी १ भाग, [illegible] की जड़ चार भाग, [illegible] १ भाग, लौंग, मिरच, पीपल, प्रत्येक एक-एक भाग उसमें [illegible] दो भाग लेकर चूर्ण करके एक-आधे से माशे शहद में मिलाकर चाटने से अनेक प्रकार के वायु-रोग दूर होते हैं।

धनुर्वात के लिये यह औषध शहद के बदले काली तुलसी और सहजन के रस के साथ देनी चाहिए, और सारे शरीर पर इस रस की मालिश करनी चाहिए, इससे पेशाब कम हो जाता है।

इसके अतिरिक्त तुलसी के बीजों में एक और विशेष गुण देखने में आता है। वह यह कि इसके सेवन से पतली धातु गाढ़ी होती है, [illegible] की वृद्धि होती है, [illegible] की शक्ति बढ़ जाती है, और कफ-वायु से पैदा होनेवाले बहुत-से रोग दूर हो जाते हैं। [illegible] की कष्टमय स्थिति में पड़े हुए बीजकण जो कि इस प्रकार की दवाइयों के लिए [illegible] हुए जितने हैं, वे तुलसी के बीज का चूर्ण करके उसमें [illegible] दूध मिला [illegible] बनाकर, सुबह-शाम एक-एक गोली [illegible] दूध के साथ दी, तो [illegible] पैदा हो। इस प्रयोग को [illegible] दिन तक [illegible] करने से [illegible] बढ़ जाती है पैदा होता है, [illegible] है और [illegible] हुई [illegible] हो जाती है।

इसके अतिरिक्त तुलसी के पत्तों से भी अनेक रोगों का [illegible] हुआ है—

(१) इसके पत्तों से [illegible] खाँसी मिटती है, और [illegible] मिटाने के [illegible]

(२) खाँसी मिटाने के लिये इसके और [illegible] के पत्तों का रस [illegible] चाहिए। ([illegible])

मरोड़ में तुलसी के बीजों को बबूल के गोंद में पानी के साथ देने से विशेष प्रभाव दिखाता है। मरोड़ के सिवा दूसरे रोगों में अधिक धातु-वृद्धि के लिये बीजों का [illegible] ज्यादा [illegible] न करें, इसलिये रेचन के लिये थोड़ा [illegible] (३५) इसका रस कान में डालने से कान के दर्द को [illegible] है। (३६) [illegible] का रस और पुराना शहद मिलाकर पीने से [illegible] और [illegible] से [illegible] हुई खाँसी में विचित्र लाभ करता है। [illegible] और जड़ का रस सर्प-दंश में देने से विष उतर जाता है। [illegible] तथा पित्त और मल को निकालनेवाला है। खाँसी में [illegible] खुजली, दाद आदि चमड़ी के रोगों में शरीर पर [illegible] के साथ [illegible] है।

तुलसी में इस प्रकार के अनेक उत्तम गुण होने से [illegible] माना है। हिंदू स्त्री-पुरुष तो इसे एक देवी [illegible] एक पवित्र पौधा माना जाता है, तो [illegible] उस तुलसी का पेड़ लगा हुआ था, [illegible] मानते थे। इस प्रकार हरएक धर्मों में [illegible]

वनतुलसी

वनतुलसी हिंदुस्थान के सब [illegible] में पैदा होती [illegible]

इस पौधे के मूल तने पर [illegible] एक [illegible] होती है और दूसरी ओर से [illegible] है। परंतु इसका स्वाद [illegible] पत्ते का एक प्रकार का [illegible] [illegible] [illegible]

ती है। वाणी को शुद्ध करती है। हृदय की गति [illegible] और [illegible]
ग को दूर करती है। बालक, युवा, स्त्री-पुरुष सबके लिये समान हितकारी है।
ोंकि शरीर के ओज-नामक तत्त्व की वृद्धि करती है। मोटे [illegible], [illegible]
लनेवाला (तोतला मनुष्य) यदि इसका सेवन करे, तो उसका [illegible]
मान स्वर हो जाता है। इसके सेवन से स्त्रियों के ऋतु-दोष और पुरुषों के [illegible]
र जाते हैं।

अधिक चलने, गाने या भाषण करने से जिनकी शक्ति और [illegible] हो गई
, उन्हें इसके सेवन से मनोरञ्जक लाभ होता है। जो [illegible]
ना चाहें, जिन्हें वाणी की शुद्धि, [illegible] और [illegible] हैं, [illegible]
ज्वर, मन्दाग्नि आदि रोग दूर करना हो, [illegible]
ें। यह प्रयोग भैषज्यरत्नावली में लिखा गया है।

सारस्वत घृत

[illegible] चमड़ी के ऊपर की बीमारियों में बहुत लाभकारी है, परंतु [illegible] में ली जाय, तो बेहोशी पैदा करती है। इस औषधि की [illegible]

[illegible] के पौदों को जड़ से उखाड़कर उसका [illegible] मिट्टी वाली से [illegible] करके छाया में सुखाकर चूर्ण कर ले। [illegible] है, पर यह उनकी भूल है। क्योंकि इस वनस्पति में [illegible] भाग तो उसकी जड़ में ही रहा हुआ रहता है। [illegible] के [illegible] सहित काम में लानी चाहिए।

मात्रा—बीस से चालीस वर्ष तक के [illegible] ३० ग्रेन (१० रत्ती) देना। फिर प्रति सप्ताह ४ रत्ती मात्रा बढ़ाते [illegible] ग्रेन (३० रत्ती) की मात्रा लगातार [illegible] (२॥-२॥ रत्ती) कम करनी चाहिए और १० ग्रेन (३ रत्ती) [illegible] फिर एक महीने तक इतनी मात्रा लेकर बंद कर देना चाहिए, [illegible] फिर न हो सके। एक महीना बंद रखकर फिर १० ग्रेन (३ रत्ती) [illegible] (२॥-२॥ रत्ती) बढ़ाकर ३० ग्रेन (१० रत्ती) [illegible] ग्रेन (२॥ रत्ती) कम करते-करते दस ग्रेन (३ रत्ती) [illegible]

करते हैं। इसी कारण यहाँ क्षय-रोग बहुत कम होता है। परंतु जहाँ के लोग [illegible] आदि देश में बस गए हैं, उस गर्मी के कारण जो लहसुन [illegible] हैं, [illegible] पन से क्षय के शिकार बनते हैं।

आठ बूँद लहसुन में २ बूँद 'एलील [illegible]' [illegible] और आसानी से शरीर में फैल जाता है, इसी आसानी से [illegible] इस बात की परीक्षा करनी हो, तो इस तरह करनी चाहिए कि [illegible] कुचली करना और उसे पैरों के तलुए से बाँधना चाहिए। [illegible] के साँस सूँघकर हरएक कह सकेगा कि उसमें लहसुन आता है। [illegible] कि लहसुन का "एलील सल्फाइड" नाम का [illegible] वाहिनी नसों द्वारा तमाम शरीर में फैलकर [illegible] जाता है। इस विधि से यह [illegible] और [illegible] दि, फेफड़े आदि शरीर के [illegible]

हांडी का मुख [illegible] बंद करके एक ऐसे पानी के गड्ढे में उस हांडी को [illegible], जिसमें [illegible] कीचड़ रहती हो। परंतु यह ध्यान रहे कि उस हांडी में पानी न [illegible]। [illegible] तोला काली मिर्च थूहर के मोटे वृक्ष में खोखला करके भर दे, और [illegible] मिट्टी से बंद करके इन मिर्चों को भी उसमें [illegible] दोनों चीज़ों को बाहर निकालकर बराबर-बराबर [illegible] कर दाद लगा देनी चाहिए। जिसे वायु का रोग हो और [illegible] उसमें [illegible] मिर में से वाय का कीड़ा निकल जाता या मर जाता [illegible] नस्य का असर ठीक कपाल तक पहुंचे, इतनी [illegible] से [illegible]। [illegible] रीति यह है कि एक कागज़ की नली बनाकर उसमें [illegible]

प्रकरण ६

भिलावा

विवरण

भिलावा सर्वत्र प्रसिद्ध वस्तु है, इसलिये [illegible] [illegible] की आवश्यकता नहीं है।

गुण-दोष और उपयोग

[illegible] वैद्यों ने भिलावे को दमे, संग्रहणी, [illegible], वायु, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] आदि रोगों के लिए [illegible]। [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] लोगों के काम में लाया जाता है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] इन्होंने सबको छोड़कर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

हैजे का [illegible] प्रयोग

एक भिलावा लेकर उसकी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] दो तोला [illegible] का रस [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। इसके पेट के जाते ही [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हो जाती है। इसका वे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और दस्तों का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। हैजे के रोग में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। इसके [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] में लिखा गया है।

पर गिरना और प्राण बचे रहना असंभव था, परंतु यह घटना एक चमत्कार-जैसी थी। उनका आँख, नाक, कान और माथे आदि किसी अंग पर घाव भी नहीं हुआ था, न कहीं से खून ही निकला, परंतु सारे शरीर में बहुत गहरी चोट लगी थी। वह बिल्कुल बिल-कुल भी नहीं चल सके थे। जब यह खबर और लोगों को लगी, तो उन्हें डोलों में डालकर ऊपर कंडिला ले जाए। इसके बाद जूनागढ़ में खबर हुई, तो वहाँ के बड़े-बड़े लोग आ गए, डॉक्टर आदि आए। डॉक्टर ने देखकर स्वामीजी से कहा कि आप ४-६ महीने तक अस्पताल में रहेंगे, तो आपको बहुत सुविधा रहेगी। दूसरे प्रतिष्ठित लोगों ने भी इसी बात की सलाह दी। स्वामीजी ने कहा कि अभी कुछ दिन तक तो कहीं आने-जाने की शक्ति नहीं है, [illegible]

रखती है।

प्रकरण ११

रीठा

विवरण

रीठे के वृक्ष सब जगह होते हैं। इनके फल को रीठे कहते हैं, [illegible] के काम में आते हैं।

गुण, दोष और उपयोग

रीठे में त्रिदोष को दूर करने की, [illegible] को नष्ट करने की, [illegible] ों, हिस्टीरिया और अपस्मार आदि रोगों को [illegible] भिन्न-भिन्न रोगों में भिन्न-भिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है।

विविध प्रयोग

सर्प-दंश होने पर या अफीम, [illegible] तीन रीठे को पुराना [illegible] थोड़ा-सा [illegible] में [illegible] लगाना। जो फिर अधिक [illegible] में दिखाई देना चाहिए। फिर [illegible] [illegible] पर इन दवाओं को [illegible] है।

रीठे के [illegible]

[illegible]

रीठे का [illegible]

[illegible]

[illegible]

काली कोयल के बीज, सब बराबर-बराबर लेकर पीसकर तुलसी के रस में खरल कर ६-६ रत्ती की गोली बना लेनी चाहिए। रोगी की शक्ति देखकर ३ से ४ गोली तक गर्म जल से देनी चाहिए। इससे दस्त और उल्टी होकर तीनों दोषों की शुद्धि होकर महा उग्र सन्निपात भी दूर हो जाता है। इसके सिवा यदि इस औषध पर खूब विचार किया जाय, तो और भी बहुत भयंकर रोग अच्छे हो सकते हैं।

[illegible] बराबर-बराबर लेकर २-२ रत्ती की गोली बनावे। दिन में [illegible]
[illegible] से दमा, हिस्टीरिया, वायु आदि रोगों में बहुत लाभ होता है।

अजीर्ण के बढ़ जाने पर जो पेट में दर्द होता है, उसको लिये [illegible]
बहुत लाभकारी और पाचक है। गुल्म, शूल, अजीर्ण आदि [illegible]
करता है—

शाक के पत्ते १००, करंज के पत्ते १००, [illegible] तोला, लहसन २० तोला, सेंधा नमक २० तोला, [illegible]
का नमक १० तोला, सोंठ, मिरच, पीपल प्रत्येक ७ तोला, [illegible]
[illegible] २ पाव, पिट लवण ४ तोला, तीज ४ तोला, राई १४ तोला, [illegible]
[illegible] बालक का ३० तोला शाक का रस, १६ तोला [illegible]
। हांडी को कपड़ौटी करके चूल्हे पर चढ़ावे, [illegible]
[illegible] एक शीशी में भर लेनी चाहिए। [illegible]
साथ लेनी चाहिए।

[illegible] पर एक विद्वान् वैद्य का सिद्ध लेप है, जो इस [illegible]
[illegible] पीपल, हल्दी, शंख-भस्म, [illegible]
[illegible] की बीट, बिदाल के बीज सब बराबर-बराबर। [illegible]
[illegible] के रस की भावना देकर [illegible] पर लेप करना चाहिए।

[illegible] के लिये—[illegible] ८ तोला, [illegible]
[illegible], इलायची, सुहागा, [illegible]
[illegible] ११ तोला, इन सबका चूर्ण कर [illegible]
[illegible] का चूर्ण पर चढ़ा देना चाहिए। [illegible]
लेनी चाहिए।

[illegible] का चूर्ण [illegible]
[illegible] में लिखकर भी [illegible]
[illegible] जिनमें [illegible]
[illegible] निकलता है और [illegible]
[illegible] प्रयोग [illegible]
[illegible] है, और [illegible]

मात्रा लेकर पोटली बनावे। प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व लिया जाये तो, उसके विशेष भाग को पानी में भिगोकर दस बूँद टपका दे, तो आधासीसी का दर्द जाता।

मृगी, हिस्टीरिया

१—सुन्दरी स्त्री के दूध में निर्बली घिसकर पिलावे, तो मृगी जाय। २—[illegible] के पौधे के बन सीताफल के बीजों की मींगी पीस कपड़े की पट्टी में रख उसका [illegible] नाक में दाबावे। ३—दौरे के समय दो काली मिर्च पानी में पीसकर [illegible] नाकों में [illegible] बूँद टपकावे। ४—हाथी के मद का फाहा भिगोकर नाक में टपकावे, तो हिस्टीरिया जाय। ५—[illegible] का एक टुकड़ा गर्म पानी में भिगोकर निचोड़े, और उस पर [illegible] में लपेट दे। रोगी होश में आ जायगा।

मस्तिष्क के अन्य रोग

स्मरण शक्ति की कमी—मुरब्बा [illegible], [illegible], [illegible] को [illegible] इस-इसबगोल पीसकर घिसकर [illegible]। [illegible], [illegible], [illegible] [illegible] मात्रा १-६ माशा और [illegible] २ तोला, [illegible] [illegible]। [illegible] गरम [illegible]।

ल ६०, चमेली की कली ४०, तिल के [illegible] ८०, सरदो [illegible]
[illegible] बनावे। ज्यादा को [illegible] तेज़ करता है।

माँड़ा, फूली, जाला, नाखूना, मोतियाबिंद आदि के लिये लाभदायक प्रयोग। [illegible]
ल, रीठे की मींगी, गिरनी की मींगी, छोटी हरड़ की मींगी, सब बराबर ले [illegible] में [illegible]
टकर गोली बनावे और घिसकर आँखों में लगावे।

हल्दी की एक गाँठ लेकर उसमें छेदकर उसे गेहूँ की आटी में रखकर आग में [illegible]
[illegible] आटी जल जाय, हल्दी को निकालकर [illegible] से, और [illegible] होने पर [illegible]
[illegible] नेत्रों में लगावे। नाखूना के लिये बहुत उत्तम है।

[illegible] का दूध नेत्रों में भर दे, तो जाला दूर हो।

बढ़िया सफ़ेद गोरा कलमी १ तोला, हल्दी १ माशा दूध [illegible] में [illegible]
[illegible] जाला, फूला, [illegible] आदि आराम होता और ज्योति बढ़ती है।

नौसादर और सफ़ेद फटकरी बराबर मिलाकर [illegible] में [illegible]
[illegible], [illegible], [illegible] और नेत्रों की कम ज्योति ठीक हो।

मुट्ठी का पाक

नेत्रों के सब रोगों पर [illegible] है। [illegible],
[illegible], [illegible], मुलहठी प्रत्येक १-१ तोला। [illegible]
[illegible] मिला दे। मात्रा २ तोला।

रगड़ा—[illegible] दलका, सुरमा, [illegible] की [illegible]
[illegible] सफ़ेद, भुनी फिटकरी, [illegible] हरड़ का [illegible]
[illegible] फूल की बाती पर रगड़ा लगावे।

[illegible] उड़ाकर [illegible] लो, और [illegible]
[illegible], [illegible] को बहुत [illegible] होगा।

यह गोली गंने व घाव को फ़ायदा करती है—[illegible] सींगी, [illegible], [illegible] बराबर लेकर गोलियां बनावे। [illegible] लगावे, [illegible] गुण [illegible]। यह तेल हर प्रकार के घावों को लाभदायक है—१ सेर [illegible] नीम तेल [illegible] में [illegible] पीछे नीम की पत्तियों की टिकियां और [illegible] की टिकियां [illegible], [illegible], बकायन की पत्तियां १२ तोला ४ माशा, [illegible] [illegible]। [illegible] में लाओ।

यह तेल नासूर को फ़ायदा पहुंचाता है और [illegible] के लिये भी [illegible] है—[illegible] के बीज १-१ तोला। [illegible] [illegible] १-१ माशा। [illegible] २ माशा, तिल का तेल १ पाव। पहले तेल पकाव, [illegible] उबाल लावे, [illegible] कर जलावे। फिर कौंच के बीज, [illegible] [illegible]। इसके [illegible] मुर्दासंग पीसकर मिलावे और [illegible] पर से उतारकर [illegible], [illegible] जाय, तब छानकर काम में लावे। बहुत गुणकारी है।

[illegible] नं० १—जो घाव को फौरन् भरता है—माशा [illegible] [illegible] में, फिर कौंच के बीज पीसकर मिलावे और [illegible] [illegible] मिलाकर ६ तोला ८ माशा [illegible] [illegible]

[illegible] नं० २—गंधक, पारा प्रत्येक ३॥ माशा, [illegible] [illegible], [illegible] फिर पारा मिला दे। यह [illegible] [illegible] है।

पेट के दर्द का लेप—समुद्रफोल १६ माशे, मेदा लकड़ी २४ माशे, छाल २४ माशे, तज २४ माशे, मेथी १६ माशे, हल्दी १६ माशे, सबको कूट पानी में मिलाकर पेट पर लेप करे। उपले की आग से दूर से सेंके। ऊपर से अरंड के पत्ते बाँध दे। हल्दी की पोटली को अलसी के तेल में भिगोकर सेंके।

[illegible] और पेट के दर्द की दवा—सौंफ, काली मिर्च, [illegible], सेंधा नमक, [illegible] नमक, गंधक आँवलासार प्रत्येक ३ तोला, अजवाइन ६ माशे, [illegible] ६ माशे, [illegible] ६ माशे, जीरा काला ६ माशे, इलायची बड़ी ६ माशे, [illegible] ६ माशे, सबको कूट-पीसकर ३ दिन नीबू के रस में घोटे, फिर ४ दिन [illegible] के रस में। मात्रा १ माशे से २ माशे।

कब्ज की दवा—तेल, अजवायन, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], सेंधा नमक, काला नमक, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], काली मिर्च, हरड़, बहेड़ा, आँवला, तज, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]। सबको [illegible] गर्म पानी से ले। मात्रा १ से ४ माशे तक। [illegible] के साथ दे।

पेशाब अधिक आने की दवा—[illegible] १ [illegible], [illegible] ५ तोला, तालमखाने ५ तोला, [illegible] १० [illegible], [illegible] १० तोला ८ माशे, बिनौले की गिरी १० तोला [illegible], सबको [illegible] का शहद मिलाये। मात्रा ६ माशे से १ तोला [illegible] ३ तोला [illegible], [illegible] मक्खन १२ तोला में मिलाकर सात लेने से अधिक पेशाब आना बंद हो।

था। यह भी देखा गया कि वह साँप का फन [illegible] करने के [illegible] पर लगाता था, पर साँप को उसके शरीर से इतनी [illegible] थी कि [illegible] था। [illegible] मुशामद और दबाव के बाद उसने दवा बनाई। [illegible] नाग और [illegible] पाया। दवा यह [illegible]—मीठा [illegible], [illegible] ([illegible]) [illegible], नौसादर १ माशा, रेशम का [illegible] १ तोला। कपड़े में [illegible] बनाकर निर्धूम कोयलों पर जला ले। जब [illegible] हो जाय, तब [illegible] से [illegible], [illegible] ३ पुड़ियाँ बनावे और घी में प्रति घंटे १ पुड़िया खावे। [illegible] लगावे, [illegible] आराम होगा। उस पंजाबी का [illegible] था कि मैं [illegible] को प्रतिदिन मुख में रखता हूँ। मेरे [illegible] आराम करने को तो मेरे मुँह की लार ही काफी [illegible] है। [illegible] आराम [illegible] को मुँह में चूसता था, यह भी सुना गया।

अध्याय तेरहवाँ

प्रसिद्ध नुसखे

प्रकरण १

स्वर्ण-वसंत-मालिनी

सोने के वर्क १ माशा, मोती २ तोला, [illegible] ८ तोला, [illegible] ४ [illegible], [illegible] शुद्ध ८ तोला। पहले [illegible] को घोटे, फिर नींबू के रस में [illegible], [illegible] फिर [illegible] न हो जाय। [illegible] और पुराने [illegible] है।

[illegible]

पारा १० तोला, गंधक शुद्ध २० तोला, १ [illegible]। [illegible] ४ पहर घोटे, फिर [illegible] में [illegible] और [illegible] दे। मुँह बंद करके १२ पहर [illegible] में पकावे। [illegible] गिर हो जाय, तब उसमें १० तोला [illegible]। [illegible] १ बार करे। और [illegible] ४ पहर [illegible]। [illegible] तोला गंधक [illegible] ४ तोला [illegible]। [illegible] भाति [illegible] होगा। [illegible] है, [illegible] १ [illegible]।

बड़ी इलायची, धान्य, सेंधा नमक, [illegible], [illegible], गोखरू, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], दालचीनी, [illegible], [illegible], तालीसपत्र, [illegible], सब समान [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] घी का हाथ लगाकर १ लाख चोट पहुँचाना। [illegible] [illegible] है।

वसन्तकुसुमाकर

स्वर्ण-भस्म २ भाग, चाँदी-भस्म २ भाग, वंग, सीसा, लौह भस्म प्रत्येक [illegible] भाग, अभ्रक, प्रवाल, मोती-भस्म प्रत्येक ४-४ भाग। सब एकत्र मिला [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ईख का रस, अडूसे की छाल का रस, ताड़ के [illegible] का रस, [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] की जड़ का रस, केले के फूल का रस, कमल का रस, मालती के [illegible] रस, [illegible] [illegible] और कस्तूरी सबकी पृथक्-पृथक् भावना देकर २ रत्ती की गोलियाँ [illegible] [illegible], [illegible], शहद के साथ अनुपान है। प्रमेह और धातु-दौर्बल्य का एकमात्र सिद्ध रस है।

अध्याय चौदहवां

खास नुसखे

प्रकरण १

पारा-भस्म

पारा शुद्ध ६ तोला, नमक सेंधा ११ तोला, [illegible] [illegible] १० तोला, [illegible] १ तोला, [illegible] कौड़िया २० माशा, [illegible] [illegible] २० माशे, [illegible] [illegible] [illegible] मिट्टी के प्याले में प्रथम आधा नमक बिछावे, उस पर आधा [illegible] [illegible], फिर [illegible] [illegible] जमावे। बीच में पारा रख दे। फिर अनुक्रम से उसी प्रकार [illegible] [illegible] [illegible] दे। और दूसरे प्याले में संपुट कर दे फिर मजबूत कपड़मिट्टी करे। [illegible] में १४ सेर [illegible] में रखा और [illegible] की [illegible] बचाकर आँच दे। [illegible] [illegible] पर निकाले। [illegible] १२ आँच दे। भस्म तैयार है। जो [illegible] निकलेगा, जो सोना बनावेगा। और [illegible] होगा, तो अक्सीर [illegible] होगा। मात्रा १ चावल।

पारे की गोली

सीसे के बर्क १ तोला, पारा शुद्ध ([illegible]) १ तोला [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गोली बनाओ। अब [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] उसमें गोली रख दोनों [illegible] को [illegible] कर दो [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] को [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] रखे रहो। प्रतिदिन [illegible] नई [illegible] दिया करो।

[illegible] दिन बाद १ मिट्टी का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] पर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] उस पर गोली [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] के बीच में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करो। ([illegible], [illegible], [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]) [illegible] करो। ३१ बार [illegible] करो। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

४ तोला, अजवायन पुरानी ४ तोला, अजमोद ४ तोला, सौंफ ४ तोला, [illegible] ४ तोला, मालकांगनी ४ तोला, जायफल ४ तोला, जावित्री ४ तोला, [illegible] १० तोला, [illegible] ३ तोला, [illegible] ४ तोला, जायविरा ३ तोला, [illegible] ३ तोला, [illegible] ३ तोला, [illegible] ३ तोला, पालाल-चूर्ण या देवी-चूर्ण में [illegible]।

पालाल-चूर्ण की विधि तो यह है कि एक भट्ठी [illegible] तोड़ा जाय, [illegible] से [illegible] कुछ साफ हो। उसके ऊपर एक घड़े में उपर्युक्त सब चीजें [illegible] में एक ऐंदकनी उँगली के समान हो। भट्ठी में नीचे एक [illegible] दिया जाय, इसके ऊपर घड़े के चारों ओर दूध आग लगा दी जाय, जिससे [illegible] में [illegible]।

देवी-चूर्ण की रीति यह है कि मिट्टी के दो घड़े [illegible] मिलाकर [illegible] ढंग पर इस भाँति [illegible]। [illegible] घड़े पर हो, दूसरे में आक [illegible] उदर [illegible] करके नीचे लगा दी जाय, जिससे [illegible] नीचे [illegible] में पड़े।

[illegible] की गोली

एक गोली [illegible] शक्ति-वर्द्धक और [illegible] में गोली चाहिए।

[illegible], जायफल, [illegible] कर गोली बनावे। एक गोली [illegible]

पुत्र [illegible]

एक चाँदी की डिबिया में ३ माशा [illegible], ३ माशा [illegible], ३ माशा [illegible] ३ माशा स्वर्ण-भस्म गुलाब जल में घोटकर [illegible] महेन्द्र फनी की जड़ में दबा दो। [illegible] ३ घारन है। मक्खन के साथ। [illegible]

[illegible]

शक्कर, सुहागा चौकिया, [illegible] १ भाग, शहद आवश्यकतानुसार।

[illegible]

या दवा गिरते हुए गर्भ को रोकने [illegible] समुद्रसोख ७ तोला, [illegible] ३ माशा, [illegible] ३ तोला, [illegible] माशा म है।

[illegible]

१ तोला चाँदी का शुद्ध [illegible] सोना, सीसा [illegible] चाँदी को दर्जों को पानी में मिलाकर [illegible] पकाओ। फिर बुझाओ, फिर तपाओ, [illegible] इस प्रकार खोता और भस्म हो [illegible] ऐसा हो जाय, तो इसे [illegible] एक लोहे का ऐसी [illegible] एक घड़ा उसे भी भरो [illegible] दो। इसके पश्चात [illegible] कर दो। चाँदी [illegible] बैठ कर जाती। [illegible]

[illegible]

अध्याय पंद्रहवाँ

धातुओं की भस्म

[illegible]

[illegible] और भस्म [illegible] का उपयोग करते हैं। इन धातुओं का [illegible] तथा शक्ति बनाए रखने के लिये ही धातु [illegible] वैद्य लोग बहुत ही महँगी देते हैं, [illegible] रहता है। आज लोगों को धातु [illegible] क्योंकि चाँदी-सोने आदि उत्तम [illegible] कुछ नहीं होता, किंतु यदि [illegible] (परिमाण में) मात्रा में, थोड़े [illegible] [illegible] उस [illegible] [illegible]

[illegible] सोने [illegible] है न [illegible] चाहिए। [illegible] [illegible] उत्तर [illegible] करता है।

[illegible]

ताम्र

ताँबे के लक्षण—जपा के फूल के समान जिसका रंग हो, चिकना, कोमल और धन के सहारनेवाला, लोहा और सिक्था जिसमें न मिले हो, ऐसा ताँबा मारने योग्य है, और जो काला, रूखा, अति कठोर या श्वेत और घन को न सहारनेवाला हो, लोह और सिक्थ का मिलावट हो, ऐसा ताँबा योग्य नहीं।

गुण—ताँबा कसैला, कुछ खट्टा, मिट्ठा और पाक में कटु है। विष, कफ, इसका हरना और शीतल है। नेत्रों को शोधन करनेवाला और रेचन है। गुल्म, [illegible] हुआ पाण्डु, उदर रोग (बवासीर), ज्वर, कुष्ठ, कास, श्वास, क्षय (क्षया) रेजस (पानस), (अन्नविष), इसमें अन्न का पाक मंद होता है, खट्टी डकारें आती हैं, भूख नहीं लगती, नाभि [illegible] कच्चा अन्न गिरता रहता है। शोथ, फोड़े, शूल, इनको दूर करता और [illegible] है। यदि यह शुद्ध न किया हो अथवा अच्छे प्रकार न मारा हो तो विष से भी अधिक [illegible] करता है, क्योंकि विष में तो केवल मारण (मार देना) यह एक ही दोष है, परन्तु अशुद्ध और कच्चे ताँबे में १—दाह (अंगों में अग्नि की चोट लगना), २—स्वेद (पसीना), ३—अरुचि (खाने की इच्छा न होना), ४—मूर्च्छा, ५—[illegible], ६—[illegible], ७—विभ्रम (उल्टी), ८—भ्रम (चित्त ठिकाने न हो), ९—[illegible] ये दोष हैं इसलिए ताँबे को अच्छी प्रकार शोधे और मारे।

शोधन—ताँबे के अच्छे पत्र बनाकर दो प्रहर तक मुख में अग्नि से पकावे। फिर तप्त [illegible], काँजी, कुलथी के काढ़े में सात बार बुझावे फिर तप्त [illegible] जावे, तब ताँबा शुद्ध हो। मात्रा एक से दो रत्ती तक शहद से।

ताँबे की भस्म

शुद्ध पारा और गंधक सम भाग लेकर कज्जली करे और [illegible] के रस से [illegible] इसका लेप ताँबे के शुद्ध पत्रों पर करे। फिर दो [illegible] में [illegible] करके [illegible] में फूँक दे और शुद्ध पारा और गंधक न मिले, तो उतना ही जितना [illegible] के रस से घोटकर [illegible] कोयल आँच दे। ६ या ७ आँच में उत्तम भस्म होगा। इस भस्म को [illegible] के रस से [illegible] कराकर यह गोला [illegible] में रक्खे और [illegible] फूँक दे। फिर [illegible] में फूँक से। यह भस्म निर्दोष और अति उत्तम [illegible] और [illegible] की [illegible] भस्म होगी।

लौह

भस्म करने के लिये [illegible] या [illegible] लेना [illegible]। [illegible] अत्यन्त, उत्तम ही गुणकारी होगा।

गुण—[illegible] रक्त को बढ़ाने और [illegible], [illegible] के [illegible] का [illegible], कुछ [illegible], [illegible] शक्ति-वर्द्धक और [illegible] है।

अभ्रक भस्म

अभ्रक ऐसा लेना, जो पत्थर के समान भारी, [illegible] । [illegible] में [illegible] के जिससे पर्त न फैल जायँ । इसे पूर्वोक्त रीति से [illegible] कर चूर्णकर चतुर्थांश धान मिलाकर एक [illegible] दो । ३ दिन बाद एक बड़े कूँडे में रखकर [illegible] पानी में घुल-घुलकर बह जायँ । इसे [illegible] कर फेंक दो और अभ्रक ले लो । अब इसमें [illegible] गजपुट में फूँक दो । जब [illegible] इमली के रस की दो । ७ बार [illegible] यह उत्तम अभ्रक-भस्म बनेगा । मात्रा [illegible] होने पर सेवन करो ।

अध्याय सोलहवाँ

आकस्मिक उपचार

पकड़ [illegible]

घाव और चोट

बहुधा ऐसा होता है कि [illegible] जाने, कुचल जाने आदि से या अन्य किसी [illegible] स्थानों में चिकित्सक का मिलना सम्भव नहीं [illegible] को ऐसे अवसर पर कुछ [illegible] का ज्ञान होना [illegible] बात, तो अब [illegible] चिकित्सक की [illegible] सके। सबसे प्रथम नीचे लिखी बातों पर [illegible]

[illegible]

यदि [illegible] हो, तो नकली दवा से [illegible] चाहिए। [illegible] पीने को दीजिए, पर बेहोशी की हालत में [illegible] में चला जाता है, इससे [illegible] को समझाना है।

मामूली घाव—मामूली घाव जिनसे [illegible] करते हैं, या तो उनका खून बंद न हो, या घाव में मैल, मिट्टी या [illegible] घाव। इसलिये उचित है कि तत्काल खून बंद करने और [illegible] को घाव में [illegible] करना चाहिए। [illegible] को घाव में [illegible] अच्छी तरह धो लेना चाहिए, और घावों [illegible] सबसे उत्तम तो यह है कि घाव का [illegible] ऐसा संभव न हो, तो सिर्फ [illegible] खुला रहे और कपड़ा कान में [illegible] उतार ली जाये।

नहीं है, क्योंकि पीछे बताई हुई रीति से [illegible] से भी [illegible] भय है।

गले और कंधे के घाव के लिये यथासम्भव शीघ्र चिकित्सक [illegible] लेना ही [illegible] है।

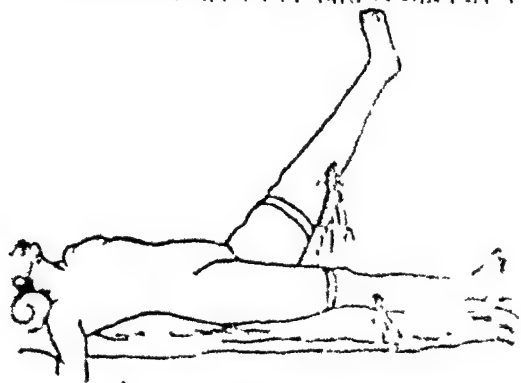

पैर ऊपर उठाने से [illegible] होगा

[illegible] चाहिए। जब तक कि [illegible] न हो। [illegible] को इस तरह [illegible] है। [illegible] का भाग सुर्ख हो जाता है, इसलिये [illegible]

पट्टी बाँधना – पट्टी १॥ या २॥ इंच चौड़ी, [illegible] जिनमें कलफ न हो, उन्हें साथ पहले [illegible] पानी में [illegible] चाहिए। [illegible]

सिर की पट्टी

[illegible]

[illegible]

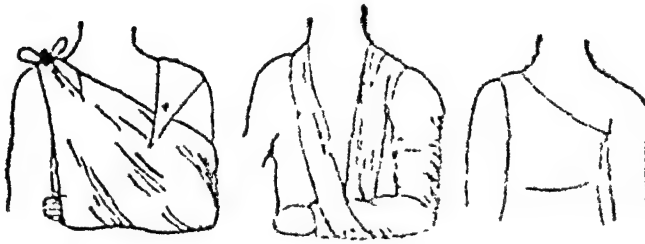

हाथ का रूमाल से बाँधकर गले में लटकाना [illegible]

जोड़ की थैली के फट जाने से मोच आई हुई जोड़ में सूजन [illegible]
नसों के इकट्ठे हो जाने से ऐसा होता है। [illegible]

उपाय—मोच आते ही जोड़ [illegible]
दिनों तक ऐसा करने से दर्द और सूजन [illegible]
नसों में भीगे कपड़े को जोड़ पर [illegible]

जोड़ हट जाना—जोड़ पर [illegible]
कभी-कभी [illegible]

पहचान—टूटा हुआ अंग टेढ़ा हो जाता है। [illegible] नहीं सकता। दर्द [illegible] होता है, और टूटे अंग का नीचे का भाग झूल जाता है।

उपाय,—जहाँ तक बन सके, टूटे स्थान को स्वयं नहीं हिलाना चाहिए। इससे मांस, धमनी, शिरा, पुट्ठे आदि को हानि पहुँचती है और रोगी को भी दुःख होता है।

यदि सिर्फ एक ही हड्डी हो, तो उस भाग को चारों ओर से किसी चीज से [illegible] चाहिए। यथा—बाँस के पतले या चिरु के टुकड़े से, परन्तु [illegible]

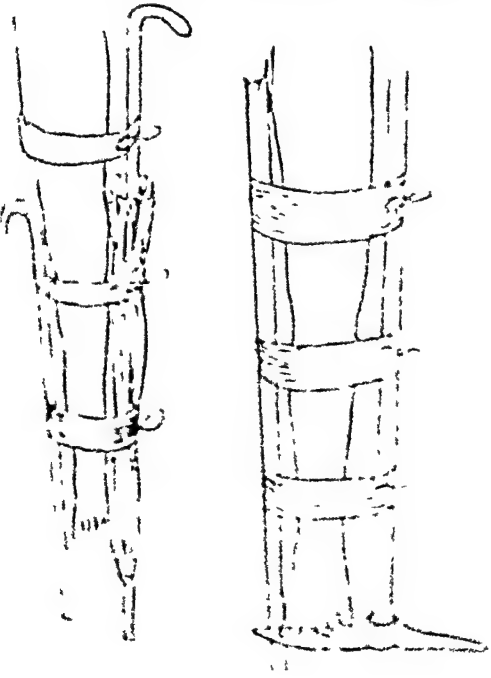

प्रकरण २

विषैले जंतुओं का काटना

सर्प

सर्प दो प्रकार के होते हैं [illegible] । [illegible] होते हैं। ऐसे सर्पों में कोबरा, मेहुवा [illegible] होते हैं। [illegible] पहचान इनका फन है। [illegible] सर्पों के ऊपरी जबड़े में दो [illegible] दाँत होते हैं, [illegible] । इंच तक लम्बे [illegible] । [illegible] दाँतों की नोक [illegible] जाती है। इन दाँतों की [illegible] रखता है। सर्प [illegible] थैलियों में [illegible] दो रस में [illegible] जाता है। पर यदि [illegible] सर्प प्रथम [illegible] दो का [illegible] उँगली में [illegible] [illegible]

[illegible] लार टपकती रहती है। यदि कोई ऐसा कुत्ता किसी को काट खाय, तो उसे लार [illegible] डालना चाहिए, बल्कि बाँध रखना चाहिए लार [illegible] नहीं। यदि कुत्ते ने कपड़े के ऊपर से काटा है, तो [illegible] उसकी लार में होता है। ऐसी अवस्था में लार [illegible] गल हो जाना चाहिए। रोगी का यह उपचार [illegible]

१—साँप ही की भाँति २ स्थान में पट्टियाँ बाँधना।

२—घाव को गर्म पानी से खूब धोओ, ताकि [illegible] पर कार्बोलिक एसिड या नाइट्रिक एसिड लगाओ। [illegible] मैग्नेट को ही घाव में भर देना चाहिए। [illegible] देना चाहिए, जहाँ इसका [illegible]

अँगूठा—यदि अँगूठे की नाखूनवाली पोर चौड़ी और लंबी है, तो वह आदमी धुन का पक्का है। यदि उसकी दूसरी पोर चौड़ी है, तो समझिए कि उसकी तर्कना-शक्ति बड़ी है। जिसकी तीसरी पोर बड़ी है, वह प्रेमी है।

शिक्षित और बुद्धिमान् माता-पिता की संतान का अँगूठा लंबा और सुडौल होता है। [illegible] अँगूठेवाला भावुक होता है। जिसका अँगूठा पीछे की ओर नहीं मुड़ सकता, उसकी इच्छा प्रबल [illegible]-चौड़ी होती है। पर उसकी पूर्ति नहीं हो सकती। मुद्गर की आकृति [illegible] अँगूठेवाला क्रूर और झगड़ालू होता है।

उँगलियाँ—[illegible] उँगली उत्साह की सूचक है। यदि उनके जोड़ की गाँठें उभरी हुई हों, तो मानना चाहिए कि मनुष्य समय का पाबंद और स्वच्छंदता-प्रिय है। यदि उँगलियाँ [illegible] हैं, तो मनुष्य मनमौजी [illegible] करता है। यदि चोकोर हैं, तो वह जो कहता है, वह कर भी दिखाता है।

[illegible] उँगलियोंवाला आदमी क्रमबद्ध होता है। यदि उँगलियाँ भिन्न-भिन्न आकृति की हों, तो मानना चाहिए कि मनुष्य चरित्र-हीन है।

तर्जनी—यदि वह [illegible] लंबी और [illegible] हो, तो मनुष्य न्यायी और बुद्धिमान् होता। [illegible] चौड़ी और चोकोर होने से तर्कशील। गोलमुख होने से विलासी और परिश्रमी। यदि वह [illegible] हो, तो वह मनुष्य उत्तरदायित्व-शून्य होगा। यदि टेढ़ा हो, तो [illegible] होगा।

मध्यमा—यदि वह [illegible] बहुत अधिक लंबी है, तो वह भय और मोह का शिकार [illegible] रहता है। यदि [illegible], [illegible] और अन्य उँगलियों से छोटी हुई, तो [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible] होता है।

[illegible]—यदि [illegible] और [illegible] है, तो मनुष्य [illegible], [illegible] और [illegible] होता, [illegible] अधिक [illegible] होने से मनुष्य [illegible] और [illegible] होता है, [illegible] और [illegible] का [illegible] होता है। और [illegible] झुकाव [illegible] [illegible] और [illegible] होता है। यदि झुकाव मध्यमा की ओर है, [illegible] और [illegible] होता है।

[illegible] यदि [illegible] अन्य उँगलियों से छोटी [illegible] हुई, तो वह [illegible] [illegible] उँगलियों से छोटी [illegible] हो और उँगली [illegible], तो [illegible] मनुष्य [illegible] है। यदि वह [illegible] से [illegible] हुई, [illegible]

[illegible] उँगलियों की [illegible] [illegible] है, तो मनुष्य [illegible] [illegible], यदि [illegible] है, तो [illegible] है।

[illegible] मनुष्य [illegible] और [illegible]

अँगूठे के मूल के नीचे का स्थान खूब उभारदार हो, तो मनुष्य प्रेमी, गंभीर, सहानुभूति और संगीत तथा सौंदर्य का उपासक होगा। बहुत अधिक ऊँचा होने से भोग-विलास में फँसा रहेगा। ऊँचाई न होने से स्वार्थी, असफल और मनुष्यत्व से हीन होगा।

ये चिह्न यदि संयुक्त हों, तो फल भी उसी प्रकार होगा।

रेखाएँ

आयु-रेखा—यह रेखा तर्जनी-मूल के नीचे से प्रारंभ होकर हथेली के बीच होती हुई अँगूठे के नीचे तक जाती है। यदि यह रेखा लंबी, सीधी, साफ और गुलाबी हो, तो समझना चाहिए कि मनुष्य दीर्घजीवी है। यदि काली, पीली, कटी-फटी हो, तो अल्पजीवी समझना चाहिए। यदि रेखा बाएँ हाथ में टूटी हुई और दहने में साफ हो, तो जानना कि वह भारी रोग में दुःख पावेगा, पर मरेगा नहीं। यदि दोनों हाथ की रेखा खंडित हों, और खंडित भाग का अंतिम छोर अनामिका-मूल का ओर मुड़ा हो, तो जानना चाहिए कि रेखा टूटने के समय में जो अवस्था का अनुमान हो, उतनी ही आयु में मृत्यु होगी। रेखा को पूरे १०० वर्षों में विभक्त करना चाहिए। यदि रेखा सौंकल की कड़ियों के समान हो या बहुत-सी लम्बाकार रेखाओं से बनी हो, तो जानना चाहिए कि मनुष्य रोगी और दुर्बल होगा। यदि दूर दूर ऐसी और कुछ दूर साफ हो, तो उसी हिसाब से रोगी और फिर नीरोग समझना चाहिए। यदि यह रेखा लंबी तो है, पर पतली है, तो वह जन्मभर रोगी रहेगा। यह रेखा एक दूसरी रेखा कनिष्ठ उँगली के मूल के नीचे से उठकर आयु-रेखा के समानांतर होती है। यदि यह रेखा साफ और अखंडित है, तो वह प्रधान आयु-रेखा की कमी को पूर्ण करती है। यह रेखा जिस दिशा के हाथ में पूर्ण होती है, वे कभी विपत्ति नहीं होती। यह रेखा आयुष्य को सूचित करती है। यदि आयु-रेखा बिलकुल अँगूठे के मूल में हो, तो वह आयु का लक्षण नहीं होता। यदि आयु-रेखा पर तिल या चक्र हो, तो आदमी बड़ा [illegible] यदि आयु-रेखा में से अनेक छोर पर बहुत सी रेखाएँ फूटें, तो वह मानसिक [illegible] यदि अँगूठे के मूल के नीचे आयु-रेखा में से अनेक रेखाएँ निकलकर अँगूठे की मूल [illegible] तो समझना चाहिए कि इतनी आयु में मनुष्य का भाग्योदय होगा। यदि [illegible] तो मनुष्य उस पद प्राप्त करता। यदि [illegible] तो [illegible]। यदि अनामिका तक जाय, तो [illegible] यदि [illegible] मूल के [illegible] तो [illegible] में [illegible] [illegible]।

[illegible] यदि [illegible] अँगूठे के [illegible] तो [illegible] यदि अँगूठे मूल के नीचे [illegible] तो मनुष्य [illegible] रहता।

[illegible] अँगूठे के मूल के [illegible] तो [illegible]

में डूबकर मरेगा। जिसकी आयु-रेखा अँगूठे की ओर न मुड़कर हथेली की ओर झुकती [illegible] वह बलिष्ठ, साहसी और चतुर होता है। और उसकी मृत्यु विदेश में होती है। आयु रे[illegible] में जो शाखाएँ ऊपर को जायँ, वे शुभ और नीचे को जायँ वे अशुभ हैं। यदि बाएँ ह[illegible] की रेखा साफ़ और दाहिने की दूषित हो, तो समझना चाहिए कि मनुष्य लापरवाही [illegible] स्वास्थ्य नाश कर रहा है। यदि इसके विपरीत लक्षण हों, तो समझिए कि मनुष्य स्वास्थ्य सुधारने का चेष्टा कर रहा है।

बुद्धि-रेखा—आयु-रेखा के मूल से निकलकर हथेली को पार करती हुई जो रेखा हाथ [illegible] मूल तक जाती है, वह बुद्धि-रेखा है। इससे मनुष्य के जीवन की प्रायः-प्रायः घटनाओं का ज्ञान होता है। इस रेखा के ३० सम भाग कल्पना करने चाहिए। और जहाँ ऊर्ध्व रेखा [illegible] वह [illegible], वहाँ आयु समझना चाहिए। अर्थात् वहाँ तक की घटनाएँ ३५ वर्ष में [illegible] हुईं। यदि यह रेखा गहरी और लंबी हो, और कनिष्ठा के मूल के नीचे तक हथेली [illegible] चली आई हो, तो समझना चाहिए कि मनुष्य की बुद्धि का पूर्ण विकास होगा। ऐसा आदमी ज्ञानी और ईमानदार होगा।

हृदय रेखा—कनिष्ठा के मूल के नीचे से जो रेखा उठकर तर्जनी की ओर गई है, वह हृदय-रेखा है। यदि रेखा सीधी और अखंडित होकर तर्जनी-मूल में गई हो, तो मनुष्य निरालस, [illegible] और नम्र है। और उच्च प्रेम-भावना से संयुक्त है। वह सदाचारी और [illegible] है। यदि तर्जनी मूल में रेखा दो भागों में फट जाय, तो मनुष्य [illegible] [illegible] और [illegible] है। यदि यह रेखा टूटी-फूटी है, तो [illegible] भाँति [illegible] है। [illegible] में भी [illegible] आती है। यदि मध्यमा के नीचे रेखा टूटी है, तो मनुष्य [illegible] में [illegible] जाता है। यदि कनिष्ठा-मूल में टूटता है, तो प्रेम में पागल होता है। यदि रेखा [illegible] और मोटी हो, तर्जनी के मूल में समाप्त हुई हो, तो मनुष्य ईर्ष्या[illegible] [illegible] है। [illegible] जाता है, इसे [illegible] दुःख देता है। यदि रेखा बुद्धि रेखा पर [illegible] हो, तो [illegible] नहीं मिलेगा। [illegible] इसकी [illegible] अल्पवय में मृत्यु [illegible] यदि [illegible] न हो बुद्धि और [illegible] न मिले, तो इसकी [illegible] मृत्यु [illegible] यदि बुद्धि और [illegible] के [illegible] बहुत [illegible] अन्तर हो, तो मनुष्य [illegible] और [illegible] होगा। यदि रेखा तर्जनी तक गई हो और उसकी एक शाखा मध्यमा [illegible] गई हो, तो मनुष्य [illegible] होता है। [illegible] में [illegible], [illegible], [illegible] [illegible] होता है।

यदि [illegible] हो तो [illegible], तो मनुष्य [illegible] और [illegible] होगा। यदि यह [illegible] बुद्धि [illegible] हो, तो उस मनुष्य [illegible] [illegible] होगा।

[illegible] यदि हृदय की [illegible] विकृत [illegible] [illegible] तो मनुष्य [illegible] [illegible] होगा। [illegible]

तक आए हों, तो पति-पत्नी का संबंध कुछ काल तक रहेगा। यदि जौ की आकृति का हो, तो विवाह दुःख-मूलक होगा। यदि रेखा लंबी हो, तो ब्याह धनी घराने में होगा। यह द्रव्य-रेखा के पास है, तो ब्याह बचपन में होगा। यदि कनिष्ठा-मूल के मध्य में हो तो १३ से २० वर्ष की आयु में होगा। यदि कनिष्ठा-मूल के तल में है, तो ३० से ४० में होगा। यदि रेखा नीची और ऊपर को उठी हुई हो, तो वह जन्म-भर अविवाहित रहेगा। यदि विवाह हुआ भी, तो स्त्री की शीघ्र मृत्यु होगी।

संतान-रेखा—ब्याह-रेखा के ऊपर कनिष्ठा-मूल में खड़ी जितनी रेखाएँ हैं, वे सब संतान-रेखाएँ हैं। इनमें जितनी गहरी और साफ हों, उतने पुत्र और जितनी साधारण हों उतनी पुत्री होती हैं। यदि रेखा टूटी-फूटी हो, तो संतान मृत होगी। यदि आड़ी रेखाएँ कटती हुई हों, तो संतान की मृत्यु माता-पिता के सामने होगी। ये रेखाएँ माता के हाथ में बहुत साफ होती हैं।

भाग्य-रेखा—यह रेखा आयु-रेखा से निकलकर कलाई की ओर अंगूठे से विपरीत दिशा में जाती है। यह रेखा यदि साफ हो, तो मनुष्य परदेश में जायगा। यदि कलाई पर रेखा दूर निकलकर काटती हुई कनिष्ठा-मूल तक गई हो, तो मनुष्य परदेश में दूर भटकता रहेगा।

आयु-रेखा—आयु-रेखा के मूल से जो रेखा निकलकर आयु-रेखा के समानांतर जाती है, वह भाग्य रेखा है। उसके स्पष्ट होने से मनुष्य परिश्रमी और सफल होता है।

[illegible] रेखाएँ कनिष्ठा-मूल में आड़ी पड़कर भाग्य-रेखा को काटती हैं, [illegible] हों उतना ही मनुष्य से अधिक कष्ट होगा।

[illegible]—[illegible] रेखाएँ यदि साफ और सुडौल हों, तो मनुष्य [illegible] होगा तथा सुख से जीवन व्यतीत करेगा। यदि ये [illegible] हों, तो मनुष्य [illegible] रहेगा, और पेट के लिये बड़ा परिश्रम करेगा। यदि [illegible] रेखा [illegible] हो जाने जाय, तो मनुष्य अधिकतर यात्रा में रहेगा। यदि [illegible] मूल में [illegible] हो, तो [illegible] होगा। यदि [illegible] मूल में जाय, तो वह [illegible] का [illegible]

[illegible] चिह्न

[illegible] चिह्न हो, तो मनुष्य विपत्ति में फँसता। [illegible] मूल में [illegible] चिह्न हो तो [illegible]। [illegible] मूल में हो, तो वह [illegible]। [illegible] मूल में हो, तो मनुष्य [illegible] में फँसता। यदि [illegible] में हो, तो [illegible] मूल में हो, तो [illegible]। यदि

फूट कर चार्ते—यदि बुद्धि-रेखा और सफलता-रेखा स्पष्ट हो, और कनिष्ठिका की दूसरी पोरी में खड़ी लकीर हो, तो वह सफल चिकित्सक होगा।

यदि बुद्धि-रेखा सुडौल और साफ हो तथा अनामिका, कनिष्ठा-मूल और कनिष्ठा-मूल के नीचे का भाग ऊँचा हो, तो मनुष्य इंजीनियर होगा।

जिनकी हथेली बड़ी, उँगलियाँ गाँठदार और कनिष्ठा की पहली पोरी लंबी हो तथा कनिष्ठा-मूल ऊँचा हो, तो वह मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश होगा।

स्त्रियों की बुद्धि-रेखा लंबी और उसका अंतिम छोर दो भागों में विभक्त रहता है।

जिनकी उँगलियाँ चौड़ी तथा नरम हों, वे साहित्यिक होंगे।

पतिव्रता के हाथ में आयु की दो रेखा होती है। यदि अँगूठे की लंबाई तर्जनी के बराबर हो, तो वह अत्यंत विद्वान् होगा।

यदि आयु-रेखा अँगूठे के बिलकुल निकट से निकले, तो संतान-हीन होगा।

[illegible]—उँगलियों के पोरों में शंख-चक्र होते हैं। ये दोनों हाथों के देखने चाहिए। यदि हाथ में ३ चक्र हों, तो वह धनवान होगा। यदि दो चक्र होंगे, तो सुखी और ३ हों, तो [illegible]। चार चक्र वाला दरिद्री, पाँच और छः चक्र वाला विलासी, ७ चक्र वाला सुखी, ८ चक्र वाला [illegible], ९-१० चक्र वाला [illegible] भोग करने वाला, एक शंख होने से सुखी, चार से [illegible], ६ से [illegible], १२ से २, ३, ४ से दरिद्र, सुखी, ७, ८, ९, १० होना उत्तम है।

[illegible]—जो बुद्धि, आयु तथा स्वास्थ्य की रेखा से बनता है। इसका जो कोण [illegible] बुद्धि और [illegible] से बनता है, वह बड़ा हो, तो मनुष्य संयमी, उदार, बुद्धिमान और [illegible] होगा। यदि वह कोण छोटा हो, तो आदमी गँवार होगा। यदि वह तर्जनी-मूल से [illegible] हो, तो मनुष्य दुःखी और अभागा होगा।

[illegible] बुद्धि और स्वास्थ्य से बनता है। यदि ऐसा हो त्रिकोण हो, तो मनुष्य [illegible] यदि बुद्धि और स्वास्थ्य-रेखा से और बुद्धि-रेखा से त्रिकोण बना है, तो वह [illegible] है। त्रिकोण का [illegible] यदि अँगूठे-मूल में हो, तो [illegible] और बुद्धिहीन है। त्रिकोण में अन्य चिह्न अच्छे हैं।

[illegible] मूल [illegible] हो, तो वह [illegible] होगा। यदि बुद्धि-रेखा [illegible] हो, तो मनुष्य [illegible] हो, तो [illegible] बुद्धि-रेखा [illegible] के स्थान में टूटा हो, तो [illegible] है।

[illegible] बातें—यदि बुद्धि-रेखा और सफलता-रेखा स्पष्ट हो, और कनिष्ठिका की तृतीय [illegible] तरफ [illegible] हो, तो वह सफल चिकित्सक होगा।

यदि बुद्धि-रेखा सुडौल और साफ हो तथा अनामिका, कनिष्ठा-मूल और कनिष्ठा-मूल [illegible] नीचे का भाग ऊँचा हो, तो मनुष्य इंजीनियर होगा।

जिसका हाथ लंबी, उँगलियाँ गाँठदार और कनिष्ठा की पहली पोर लंबी हो तथा कनिष्ठा-मूल ऊँचा हो, तो वह मजिस्ट्रेट या न्यायाधीश होगा।

[illegible] का बुद्धि-रेखा [illegible] और उसका अंतिम छोर दो भागों में विभक्त रहता है [illegible] जिनकी उँगलियाँ चौड़ी तथा नरम हों, वे साहित्यिक होंगे।

[illegible] के हाथ में आयु की दो रेखा होती है। यदि अँगूठे की लंबाई तर्जनी के बराबर हो, तो वह अच्छा मरण विद्वान् होगा।

[illegible] अँगूठे के [illegible] निकले, तो संतान-हीन होगा।

[illegible] के पोर में संतान-चक्र होते हैं। ये दोनों हाथों के देखने चाहिए। यदि [illegible] चक्र हों, तो [illegible] होगा। यदि दो चक्र होंगे, तो [illegible] और ३ हों, तो [illegible] [illegible] दरिद्र, [illegible] और [illegible] चक्र [illegible] विलासी, ७ चक्र वाला सुखी, ८ चक्र [illegible] रखा, [illegible] चक्र वाला [illegible] भोग करनेवाला, एक [illegible] होने से सुखी, चार [illegible] [illegible] ३, ३, ६ से दरिद्र, सुखी, ७, ८, ९, १० होना उत्तम है।

[illegible] बुद्धि, आयु तथा स्वास्थ्य की रेखा से बनता है। इसका जो [illegible] बुद्धि [illegible] से बनता है, वह [illegible] हो, तो मनुष्य [illegible], उदार, बुद्धिमान और [illegible] हो, तो [illegible] होगा। यदि वह तर्जनी-मूल [illegible] हो, तो मनुष्य दुःखी और [illegible] होगा।

[illegible] बुद्धि [illegible] से बनता है। यदि ऐसा हो त्रिकोण हो, तो मनुष्य [illegible] और बुद्धि-रेखा से त्रिकोण बना है, तो [illegible] है। त्रिकोण का [illegible] भाग यदि [illegible] हो, तो [illegible] बुद्धिमान है। त्रिकोण में [illegible] चिह्न अशुभ है।

[illegible] हो, तो वह [illegible] होगा। यदि बुद्धि-रेखा [illegible] और [illegible] चिह्न हो, तो मनुष्य [illegible] बुद्धि-रेखा [illegible] के [illegible] में टूटी हो, तो [illegible]

प्रकरण ३

आग और पानी के उपद्रव

आग से जलना

[illegible]

[illegible]

[illegible]

करती । जो कोई डूबने को हो, और निकाल लिए जाने पर साँस लेने लगे, तो
च जायगा ।

पानी में डूबे हुए आदमी को शीघ्र जल से निकालकर शरीर से कपड़ा दूरकर शरीर पो
कर देखो । यदि शरीर गर्म और शिथिल हो, तो इलाज करो, यदि ठंडा होकर अकड़ ग
ो, तो व्यर्थ है ।

बहुधा डूबे हुए आदमी की श्वास और नाड़ी की गति बंद हो जाती है । घबराओ मत
उसके नेत्रों को होशियारी से उजाले में देखो । यदि तुम्हारी परछाईं उसमें दीखे, तो जीवि
समझो, अन्यथा मृतक ।

पहले मुँह और नथुनों को साफ करो । मुँह खोलो, और जीभ धीरे-धीरे आगे को खींचे
जिससे हवा भीतर जाय । गर्दन और छाती पर के कसे कपड़े हटा दो ।

यदि उसे श्वास न आता हो, तो उसका मुँह खोलकर तत्काल उलटा लटका दो
फिर पेट को धीरे-धीरे पसलियों के नीचे दबाओ, जिससे स
पानी निकल जाय ।

यदि डूबा हुआ व्यक्ति बालक हो, तो उसे घुटनों के सहा
उलटाकर पेट दबाकर जल निकाल दो ।

इसके बाद रोगी को तत्काल चित लिटा दो, उसके सि
लक का पानी निकालना के नीचे तकिया या और कुछ लगा दो, जिससे वह उभ
य । फिर मुँह साफ़ करके ठोढ़ी को नीचे दबाकर जीभ को, जो भीतर लौट जाती है
किसी चिमटे या कपड़े की पट्टी या उँगलियों से बाहर निकाल लो । रोगी के हाथों को
कंधे के ऊपर से पूरे
फैलाओ । फिर हाथों
को कोहनियों पर मोड़
कर पसलियों के बराबर
से पेट तक लाकर जरा
दबा दो । यह क्रिया प्रति
मिनट १५ से २० बार
तक करो । कम ज़्यादा न
होने पावे । इससे श्वास
आने लगेगी । गले को
सहलाना भी असर
करता है ।

पानी निकालने की दूसरी रीति

यदि इस क्रिया से

प्रकरण ४

ज़हर खाना

यदि रोगी बेहोश हो और उसका कारण ठीक तौर पर मालूम न हो, तो ध्यान से नीचे लिखी बातों की जाँच करे—

१—उसके चारों तरफ कोई ज़हर, ज़हरीला द्रव्य, उसकी ख़ाली शीशी या और कुछ ऐसी ही वस्तु तो नहीं है।

२—वहाँ संदेह योग्य जो कुछ मिले, हिफ़ाज़त से रक्खे, फेंके नहीं।

३—देखे कि रोगी के शरीर पर, ख़ासकर हाथ-पैरों पर कहीं किसी प्रकार के जानवर के काटे के निशान तो नहीं।

४—उसके होठों या कपड़ों पर किसी प्रकार के दाग़ तो नहीं।

५—उसके मुख से किसी प्रकार की दुर्गंध तो नहीं निकल रही है।

६—उसकी आँखों की पुतलियाँ अपनी असली हालत में हैं या घट-बढ़ गई हैं। आँखों की पुतलियाँ धतूरे के विष से लंबी और पतली पड़ जाती हैं तथा अफ़ीम के विष से छोटी।

उपचार

यह बात मालूम होने पर कि रोगी ने विष खाया है, निम्न-लिखित उपचार शुरू कर दे—

१—सबसे प्रथम योग्य डॉक्टर को बुला भेजे।

२—विष के नाश करने या उसे हलका करने का कुछ उपाय करे।

३—रोगी को घी, मीठा तेल, दूध, चाय, काफ़ी या घुला हुआ आटा पिलावे, जिससे उसके आमाशय की दीवारों की भी विष से रक्षा हो।

४—रोगी को उल्टी कराने की कोशिश करे। उसके गले में उँगली या पर अथवा नर्म पत्ते डाले। यदि मुँह, होठ और गले में किसी प्रकार के घाव या छाले न हों, तो रोगी को उल्टी कराने के लिये दो चम्मच मीठा तेल और एक चम्मच नमक गर्म पानी में मिलाकर पिला दे।

५—विषों के दो प्रकार के प्रभाव होते हैं—पहले वे जो चुपचाप अपना काम करते हैं, दूसरे वे जो गले, पेट, मुँह आदि में जलन करते हैं। पिछले प्रकार के विषों में कै न करानी चाहिए। ऐसे विष अम्ल या ज्वर पैदा करते हैं। इनके नाश की तरकीब यह है कि विपरीत क्रिया करे। अर्थात् क्षारीय विषों में अम्ल-पान और अम्ल विषों में क्षार-पान करावे। ज़िंक सल्फ़ेट चौथाई चम्मच

उपचार

ऐसे रोगी को भी कै न कराओ। नीबू या संतरा चूसने को दो, दूध खूब पिलाओ। दूध में घी भी मिलाओ। १० तोला एरंडी का तेल ½ सेर गर्म पानी में पीने को दो।

शीशे का चूरा

इससे पेट में भारी ऐंठन उठती है, पतले दस्त आ जाते हैं और उसके साथ खून के कतरे भी गिरते हैं। कै भी होने लगती है। और उसके साथ शीशे का चूर्ण भी निकलता है।

उपचार

नरम, गर्म और चिकना खाना भर-पेट खिलाओ, जैसे दलिया, साबूदाना आदि, जिससे शीशे का चूरा उसमें लिपट जाय और आंतों को कम हानि पहुँचाये। इसके बाद कै कराओ।

मिट्टी का तेल

मुँह, गर्दन और पेट में जलन, दर्द, ऐंठन होती है। सांस में तेल की बू आती है। कै होती और उसमें तेल निकलता है। कड़ा प्यास लगती और बेहोशी आती है।

उपचार

प्रथम तत्काल कै कराओ, फिर रोगी को लिटाकर पैरों में गर्म पानी की बोतलें रख दो। थोड़ी बराडी पिला दो।

तारपीन का तेल

इससे साँस में घुरघुराहट होती है। आँखों की पुतलियाँ सिकुड़ जाती हैं। मांस-पेशियाँ सख्त हो जाती हैं। साँस से तेल की बू आती है।

उपचार

प्रथम तत्काल कै कराओ, फिर दस्त लाने को एनीमा दो। दूध में आटा या मैदा घोल कर पिलाओ।

अफीम और मारफिया

इससे जम्हाई आती है। आँखों की पुतलियाँ सिकुड़ जाती हैं। बारंबार बेहोशी आती है। साँस धीरे-धीरे तथा गहरी चलती है। पसीना खूब आता है। साँस में अफीम की बदबू आती है।

उपचार

तत्काल आध सेर पानी में १० ग्रेन पोटेशियम परमेगनेट घोलकर पिला दो। बेहोशी हो, तो स्टमक पर से उतार दो।

मरीज़ को टहलाते रहो और मुख पर छींटे मार-मारकर चैतन्य करते रहो। बारबार खूब तेज़ चाय या काफी पीने को दो। कृत्रिम रीति से साँस लाओ।

ज्वर, बेहोशी, आँखें लाल, भ्रम आदि होकर रोगी बेहोश हो जाता है। उसे ही लू लगना कहते हैं।

उपचार

ऐसे रोगी को ठंडे, शीतल, हवादार स्थान में कपड़ा खोलकर लेटाना चाहिए। फिर केले आदि के पत्तों पर ठंडे पानी के छींटे देकर हवा करना, घिसा हुआ चंदन मिला पानी बार-बार पिलाना, ठंडे पानी के छींटे मुख पर देना, ठंडे इतर सुँघाना आदि क्रियाओं से प्रथम मूर्च्छा दूर करनी चाहिए, फिर नीचे लिखा पानी बार-बार पिलाना चाहिए।

घिसा हुआ चंदन १ तोला, नींबू का रस ४ तोला, भुनी हुई कच्ची अँबिया (केरी) का रस ८ तोला, मिश्री १६ तोला सबको २ सेर पानी में मिलाकर बार-बार थोड़ा-थोड़ा देना चाहिए।

फाँसी आदि से गला घुटना

यदि श्वास बंद हो जाय, तो श्वास चलाने के लिये पानी में डूबे मनुष्य की तरह उपचार करना चाहिए। यदि गले में कुछ अटक जाय, तो गुद्दी पर धीरे-धीरे मुक्का मारना चाहिए, जिससे वस्तु धीरे-धीरे नीचे खसक जाय।

बेहोशी

ठंडे पानी के छींटे दे। इससे लाभ न हो, तो नाक में सूँघनी फूँक दे। या चूना (पान में खाने का) और नौसादर दोनों को बराबर ले पीस शीशी में भर कड़ी डाट लगा ले और बार-बार उसे सुँघावे। यदि श्वास बंद हो गया हो, तो पानी में डूबे मनुष्य की-सी क्रिया करे, फिर भी यदि होश न आवे, तो यह क्रिया करे.—

एक असली फ़लालैन का टुकड़ा तेज़ गर्म पानी में भिगोकर निचोड़ ले और उस पर तारपीन का तेल जल्दी से छिड़क दे। उस पट्टी को गले में लपेट दे। बारंबार गर्म पानी के छींटे दे, तो रोगी होश में आवेगा।

२—कपड़े उतार दो और रोगी को चित लिटा दो, उसके कंधों के नीचे तकिया या कोई नरम चीज़ रख दो, जिससे उसका सिर लटकता रहे। फिर उसके मुँह, गले और नथुनों को साफ कर दो। फिर भुजाओं को कोहनी के नीचे से पकड़कर ऊपर को उठाओ। इसके बाद उन्हें अपनी ओर यहाँ तक खींचो और फैलाओ कि उन भुजाओं की कोहनियाँ तुम्हारी तरफ़ ज़मीन को छू लें। इस क्रिया से रोगी का वक्ष स्थल फैलेगा, और वायु को भीतर प्रवेश करने का अवसर मिलेगा। फिर भुजाओं को छाती के पास उठाकर लाओ और कुहनि-

कृत्रिम श्वास की दूसरी रीति

नियों पर मोड़कर छाती पर रखकर इस प्रकार दबाओ कि फेफड़ों की वायु बाहर निकले। पानी में डूबे हुए रोगी को इसी भाँति करो। एक दूसरा आदमी घुटने टेककर उसके मुख को साफ करे, और उसकी जीभ को रूमाल से पकड़ रक्खे। फिर उसे एमोनिया (चूना, नौसादर मिलाकर) सुँघाओ।

३—उसके कपड़े उतार दो या ढीले कर दो। फिर उसे चित लिटा दो। एक आदमी रूमाल से मरीज़ की जीभ बाहर खींचा ले। दो सेकंड तक खींचकर फिर छोड़ दो। इस प्रकार १ मिनट में १५ से १८ बार तक करो। जब श्वास चलने लगे, तब शरीर में गर्मी पहुँचाओ और रक्त-संचालन की चेष्टा करो। यह क्रिया उस रोगी की की जानी चाहिए, जिसकी पसली की कोई हड्डी टूट गई हो।

बेहोशी की हालत में खास सँभाल

किसी भी कारण से कोई आदमी जब तक बेहोश रहे, उसे खाने-पीने की कोई भी चीज़ मत दो, बल्कि उसे शीघ्र होश में लाने के लिये चेष्टा करो। यहाँ हम संक्षेप से इसके लक्षण और उपचार लिखते हैं—

सिर में चोट लगना—इससे चेहरा पीला पड़ जाता है, आँखें बंद हो जाती हैं, कभी कभी कै आती है। ऐसे रोगी के सिर पर बर्फ रक्खो, रोगी को आराम पहुँचाओ, और उसे गर्म रक्खो।

अध्याय सत्रहवाँ

रोगी की सेवा

प्रकरण १

सेवा-धर्म

प्राचीन बुज़ुर्गों का कहना है कि सेवा धर्म योगियों के धर्म से भी अत्यंत कठिन है। क्योंकि योग में तो अपने शरीर और आत्मा का साधन करना पड़ता है, परंतु सेवा में पराए शरीर और आत्मा के लिये अपना सबसे बड़ा त्याग करना पड़ता है। जिस हृदय में स्वभाव से ही ईश्वरीय दया नहीं है, जो आत्मा संस्कार से ही उदार नहीं है, जिनमें भगवान् ने त्याग और परोपकार की बुद्धि नहीं दी है, वह सेवा-धर्म कदापि नहीं कर सकता।

परंतु जगत् का व्यवहार ऐसा है कि जीवन में प्रत्येक मनुष्य के सामने सेवा करने का प्रसंग आ ही जाता है। कोई भक्त युवक अपने माता-पिता की सेवा करते हैं, कोई पतिव्रता अपने पति की सेवा करती है, कोई व्यक्ति अपने इष्टदेव की सेवा करता है, कोई नौकर अपने स्वामी की सेवा करता है, कोई आधुनिक सभ्य अपनी पत्नी की सेवा करता है, परंतु मैं जिस रोगी की सेवा का ज़िक्र इस अध्याय में करता हूँ, वह सेवा इन सब सेवाओं से भिन्न है। इन सब सेवाओं की अपेक्षा इस सेवा में अत्यधिक त्याग, उदारता और धीरज की ज़रूरत है। रोगी अपने कष्ट और दुर्बलता के कारण प्रायः चिड़चिड़े हो जाया करते हैं, और उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं रहता कि हमारी सेवा करनेवाला निस्स्वार्थ भाव या हार्दिक प्रेम से सेवा कर रहा है। वे उन्हें बहुधा कठोर वचन से तिरस्कार किया करते हैं। ऐसी बातों का जो बुरा माने वह रोगी की सेवा नहीं कर सकता। साथ ही रोगी के मल-मूत्र, थूक आदि से घृणा करनेवाला भी रोगी की सेवा के पवित्र पुण्य को प्राप्त नहीं हो सकता। रोगी की सेवा वही महान् आत्मा का व्यक्ति कर सकता है, जो देव-दूत के समान रोगी की निस्स्वार्थ भाव से सप्रेम सेवा कर सकता है।

रोगी को जो दुःख हो, वे सब रोग के ही चिह्न हैं, यह सब मानने का कोई कारण नहीं है। बहुत-से दुःख अपने आप मिट जाते हुए देखे गए हैं। परंतु जहाँ-जहाँ उनके दूर होने में देरी होती है, वहाँ-वहाँ प्रायः सेवा की अज्ञानता के कारण ही रोगी को अधिक दुःख-दर्द सहने पड़ते हैं।

प्रकरण २

रोगी के योग्य घर

रोगी के रहने योग्य उपयुक्त घर में ५ बातों की सख़्त ज़रूरत है—१ साफ़ हवा, २ साफ़ जल, ३. साफ़ पाख़ाना, मोरी आदि। ४. सफ़ाई, ५ पूरी रोशनी।

साफ़ हवा

रोगी के कमरे में जितनी शुद्ध वायु होगी, उतना ही उत्तम है। सिर्फ़ इस बात का ध्यान ज़रूर रखना चाहिए कि रोगी के शरीर पर तेज़ हवा के झोंके न लगें। साफ़ हवा आने के लिये घर इस तरह बना हुआ होना चाहिए कि उसके कोने-कोने में बाहर की शुद्ध हवा पहुँच सके। मकान में यदि शुद्ध वायु पहुँच सके, तो बहुत-से रोग तो आप ही नष्ट हो जाते हैं कुछ पुराने ढंग के ऐसे भी गृहस्थ देखे जाते हैं, जो अपने मकान की खिड़की वर्षों तक नहीं खोलते। ख़ासकर रोगी के घर में हवा आने को ज़रा-सा सूराख़ भी होगा, तो उसमें कपड़े ठूस-ठूसकर उसे बंद कर देंगे। उनके ख़याल में खुली हवा ठंड पहुँचानेवाली जँचती है बहुधा देखा गया है कि अपने घरों को कुछ लोग खूब साफ़ कर लेते हैं, परंतु उसके बाहर चारों तरफ़ की गंदगी पर कुछ ध्यान नहीं देते। बाहर मैला, कूड़ा-कर्कट, सड़ा हुआ पानी जमा रहता है। मोरियों में दुर्गंध उड़ती रहती है, कहीं-कहीं रोगी के कमरे के बाहर ही रसोई का पानी जमा होता रहता है। इन सब गंदे स्थानों की हवा यदि रोगी के कमरे में जाने दी जाय, तो समझ लीजिए कि फिर रोगी के कमरे की सफ़ाई से कोई लाभ नहीं है। गंदी हवा निस्संदेह रोगी के लिये ज़हर के समान है।

हमारे यहाँ के घर बहुधा इस ढंग से बनाए जाते हैं कि चारों तरफ़ मकानात और बीच में चौक। इस चौक की हवा यदि रोगी के लिये काफ़ी समझी जाय, तो भूल की बात है। रोगी को तो बाहर से आती हुई स्वच्छ हवा की ज़रूरत है।

रोगी के कमरे में जलती हुई अँगीठी

सर्दी के दिनों में प्रायः ऐसा किया जाता है कि कमरे की सब खिड़की और दरवाज़े बंद कर एक जलती अँगीठी पास रखकर सो जाते हैं। कमरे में अधिकांश सटर-पटर सामान भरा रहता है। इस मूर्खता के काम से सैकड़ों मनुष्य मर जाते हैं।

रोगी के कमरे में सर्दी के दिनों में यदि अँगीठी रखने की ज़रूरत ही हो, तो ज़रूरी बात है कि द्वार, खिड़की भली भाँति खोल दी जायँ, जिससे ताज़ी हवा बराबर कमरे में आती रहे। यदि रोगी को खूब अच्छी तरह गर्म कपड़े उढ़ा दिए गए हों, तो ठंड लगने का उसे कोई भय नहीं है।

हना देने चाहिए। गर्म-गर्म दूध पिलाना चाहिए। अँगीठी पास रखना चाहिए। इन
ोटी-छोटी बातों में ऐसे समय सुस्ती दिखाने से रोगी हाथ से चला जाता है। रोगी के
थ्य-पानी का चाहे जैसा बदोबस्त हो, पर यदि ऐन वक्त पर रोगी को गर्म बिस्तर पर सुलाना
ौर सेंकना न सूझ पड़ा, तो रोगी मर जायगा।

उपर्युक्त आवश्यकताएँ सर्दी के दिनों में ही पड़ती हों, यह बात नहीं। गर्मी के दिनों में
ी ऐसी घड़ी आ जाती है। इस दुर्घटना का मुख्य समय पौ फटने के समय का होता है,
ब पेट ख़ाली रहता है। सुबह की ठंड जितनी हानि पहुँचाती है, उतनी शाम की नहीं।
ाम का समय प्राय ज्वर चढ़ने का होता है। उस समय प्रायः हाथ-पाँव और आँखें जला करती
। परंतु बहुधा सावधान घरों में देखा गया है कि रात हुई और हाथ-पाँव सेंके तथा मोज़े
हनाए जाते हैं। परंतु प्रातःकाल का, सर्दी का जो रोगी के लिये घातक काल है, ख़याल
बिलकुल नहीं किया जाता।

कभी-कभी रोगी को गर्म रखने के लिये तेज़ गर्म पानी से रोगी के पैरों को धोते हैं।
इससे यह हानि होती है कि रोगी की पसलियों का रक्त रोगी के मस्तिष्क में चढ़ जाता है।
स काम के लिये इतना गर्म पानी काफ़ी है, जितने में आसानी से उँगली डुबाई जा सके।
भी-कभी जस्ते के डब्बे में गर्म पानी भरकर उस पर पैर रखकर रोगी को सुला दिया जाता
, पर यह भी योग्य नहीं। ये डब्बे पहले तो ख़ूब गर्म हो जाते हैं, और पीछे एकदम ठंडे
ड़ जाते हैं। रबर की बोतलों में गर्म पानी भरकर सेकना बेशक अच्छा है, परंतु उसकी डाट
ख़ूब अच्छी तरह बंद होनी चाहिए, जिससे रिस रिसकर पानी से बिछौना न भीग जाय।

हवा का बचाव

साधारणतया कभी-कभी और ख़ास तौर पर जब कि पसीना आ रहा हो या गीले कपड़े
से उसका शरीर अँगोछा जा रहा हो, उस समय रोगी के शरीर को हवा के झोंके से बचाना
चाहिए। एकाएक रोगी को ज़ुकाम या खाँसी हो गई या बुख़ार हो आया, तो उसका मतलब
यह है कि उसके पलँग पर सीधे हवा के झोंके लगते हैं। और उसकी सम्हाल ठीक-ठीक नहीं
होती। मतलब यह कि शुद्ध वायु कमरे में खेलती ज़रूर रहे, परंतु रोगी के शरीर पर उसका
प्रभाव न हो। दरवाज़े यदि सावधानी से बंद रक्खे जायँ, तो खिड़की खुली रखने से रोगी
को कदापि सर्दी का भय न रहेगा। बहुत लोगों का यह ख़याल है कि दिन की हवा की अपेक्षा
रात की हवा ख़राब होती है। इसलिये दिन में तो वे खिड़की, दरवाज़े खुले रखते हैं, परंतु
रात को बंद कर देते हैं। यह बड़ी मोटी और भयंकर भूल है। हमारी समझ में शहरों की
आब-हवा ख़ास तौर पर दिन की अपेक्षा रात को ही शुद्ध रहती है। दिन का गर्द-ग़ुबार,
मिलों की चिमनियों के धुएँ का ज़हर रात को प्रायः नहीं रहता। इसलिये सिवा उस समय
के जब बेहद ठंड पड़ती हो, खिड़की कभी न बंद करनी चाहिए। पाठकों को यह बात याद
कर लेनी चाहिए कि दरवाज़े बंद करने और खिड़कियाँ खुली रखने के लिये ही बनाई गई हैं।

प्रकरण ३

फुटकर व्यवस्था

रोगी की सेवा करनेवाले चाहे कैसे ही सावधान और मुस्तैद क्यों न हों, फिर भी यह नहीं बन सकता कि कोई २४ घंटे रोगी के सिरहाने ही बैठा रहे। ऐसा करने की ज़रूरत भी नहीं है। ज़रूरत सिर्फ इस बात की है कि रोगी के कल्याण के लिये किन बातों की आवश्यकता है, वे सब बातें सरलता से रोगी को प्राप्त हो जायँ।

प्राय. रोगियों को नींद नहीं आती। ऐसा होता है कि रोगी की ज़रा झपकी लगी कि कोई अनजान व्यक्ति बेपरवाही से रोगी के कमरे में किसी कार्य को घुस आया, और उसी की आहट से उसकी आँख खुल गई, फिर उसे नींद आना मुश्किल है। इस बात की बहुत ही ज़रूरत है कि न दिन में और न रात में कोई अनजान मनुष्य रोगी के कमरे में जाने-आने न पावे।

कमरे की खिड़कियाँ खुली और दरवाज़े बंद रहें, वरना ठंडी हवा के झोंके रोगी को बहुत ही कष्ट देंगे।

मकान की सफाई का भी सावधानी से बंदोबस्त करना चाहिए। जिन मकानों में नई सफेदी की गई हो, वे यदि तत्काल ही बंद कर दिए जायँगे, तो अवश्य ही उनकी हवा ख़राब हो जायगी।

रोगी को कैसे समाचार सुनाना चाहिए, कैसे नहीं, कौन-कौन-से पत्र-तार उसे देने चाहिए, कौन से नहीं तथा उससे किसको मिलने देना चाहिए, किसको नहीं, ये बातें बहुत ही विचारने योग्य हैं। जिस व्यक्ति पर रोगी की सेवा का भार है, उसे ऐसा प्रबंध अवश्य कर देना चाहिए। वह यदि रोगी के पास न भी हो, तो भी ऐसी कोई बात न हो, जो रोगी के लिये अहितकर हो। रोगी अपने बिछौने पर पड़े-पड़े शून्य मस्तक से कुछ इनी-गिनी बातों को विचारा करते हैं। कहीं चिट्ठी भेजी हो, तो उनका मन उसी के जवाब में लग जाता है, और वहाँ पर बारबार उत्कंठित होकर जवाब या किसी बंधु के आने की कड़ी प्रतीक्षा करते हैं। प्राय रोगी को यह वहम भी हो जाता है कि मुझसे कुछ सच्चे समाचार छिपाए जा रहे हैं। इन सबके लिये यह उत्तम है कि रोगी के साथ ऐसा सरल व्यवहार किया जाय कि उसे कुछ भी उद्वेग न रहे। रोगी के पास से यदि कुछ देर या दिनों के लिये बाहर जाना अनिवार्य ही हो, तो रोगी से यह बात अवश्य कह देनी चाहिए, और अपनी गैर हाज़िरी में भी सब काम ठीक-ठीक तौर से चलते रहें, इसका बंदोबस्त अच्छी तरह कर लेना चाहिए।

रोगियों के संबंधियों में घुस-पुस होने से रोगी के मन में बड़ी भारी बेचैनी हो जाती है। यदि रोगी को आपरेशन कराना हो, और ऐसे वक्त डाक्टर घुस-पुस बातें करने लगे, तो रोगी जरूर घबरा जायगा। चिकित्सक को उचित है कि वह प्रसन्नता के साथ रोगी के सामने हो बड़ी शांति से बातचीत करे और वह शीघ्र नीरोग हो जायगा, इस बात का विश्वास उसे दिला दे।

चिकित्सक को यदि रोगी के घरवालों से कोई बहुत ही पोशीदा खास बात कहनी हो तो उसे रोगी के कमरे से दूर, जहां रोगी न सुन सके, करना चाहिए, और जो कुछ कहना हो, वह रोगी को देखकर जाने के बाद में कहना चाहिए। चिढ़कर बोलना रोगी को अच्छा नहीं लगता। स्वाभाविक बोल-चाल में ही बोलना चाहिए। रोगी की सेवा करनेवाले व्यक्ति के कपड़े, हाथ और शरीर स्वच्छ रहना चाहिए।

रोगी के मतलब की चाहे जितना गड़बड़ी उसके पास होती रहे, उसे बुरी नहीं लगती, पर फ़ज़ूल गड़बड़ वह बिल्कुल पसंद नहीं करता। इस्तरी किए हुए कपड़ों की खड़खड़ाहट खास तौर से उसे नापसंद होती है, इसी तरह तालियों के गुच्छों की आवाज़ या बूट की आवाज़ उसे पसंद नहीं होती। दर्वाज़े और खिड़कियों को खोलते समय भड़भड़ाहट होना रोगी को बहुत ही बुरा मालूम होता है।

रोगी के कमरे में बे मतलब बार-बार आना-जाना भी वाहियात है। इसलिये यह प्रथम ही से विचार लेना चाहिए कि उसे कौन-कौन-सी चीज़ों की ज़रूरत है, ताकि बार-बार उसे नाचना न पड़े। दरवाजों पर या खिड़कियों पर यदि चिक के पर्दे हों, तो उन्हें नीचे में बाँध देना चाहिए, जिससे वे हवा से हिलकर खड़-खड़ न करें।

मुलाक़ाती

कभी-कभी मिज़ाज पूछने को आए हुए लोग रोगी के पास बैठकर अपनी ही बकवाद करते हैं, रोगी को बोलने भी नहीं देते। कोई-कोई ऐसे होते हैं कि हर बात को हँसी में ही उड़ाते हैं। दोनों प्रकार के मनुष्यों को रोगी नापसंद करता है। कुछ लोग ऐसे आते हैं कि सौ बार बैठने को कहो, तो भी खड़े-खड़े घंटों गप्पें उड़ाया करेंगे। रोगी के समाचार पूछने के लिये मनुष्य को चाहिए कि वह रोगी के पास अच्छी तरह बैठे और शांति-पूर्वक उससे बातचीत करे। उसका कहना अच्छी तरह सुने, जिधर रोगी का मुँह हो, उधर ही बैठे। उसके सामने न बैठकर इधर-उधर बैठने से रोगी को उनकी बात सुनने के लिये बार-बार गर्दन मोड़नी पड़ती है। बात करनेवाला कितना ही पास बैठा हो और कितने ही ज़ोर से क्यों न बोल रहा हो, उसकी ओर देखे बिना सुननेवाला नहीं रह सकता, इसीलिये रोगी के सामने ही बैठना चाहिए। इसी तरह यदि कोई बराबर खड़ा ही रहे, तो उसे बराबर अपनी आँखें तुम्हारे मुख की ओर लगी रहेंगी। और वह जरूर थक जायगा। रोगी यदि किसी काम में लगा हुआ हो, तो बीच में नहीं बोलना चाहिए।

हो रही ? क्या यह संभव है कि रोगी मुँह खोलकर कहे कि तुम्हारी चकचक मुझे पसंद नहीं है।

इस बात का ध्यान रखना परमावश्यक है कि जिस पलँग पर रोगी सो रहा हो, उसमें धक्का न लगने पावे, उस पर पाँव रखकर कोई खड़ा न रहे। न उस पर कोई बैठे। अकारण उसे कोई छुए भी नहीं। कुर्सी पर बैठकर यदि धरती पर पाँव टिक रहे हों, तो धक्का बुरा नहीं मालूम होता, मगर पलँग पर लेटे हुए के पलँग के धक्का लगे, तो सोनेवाले के सारे बदन में धक्का लगने के समान तकलीफ होगी।

रोग दो प्रकार के होते हैं—एक सच्चा, दूसरा बनावटी। दोनों एक दूसरे के विरुद्ध हैं। अभी तक जो कुछ मैंने कहा है, वह सच्चे रोगी के लिये है। बनावटी रोगी की सेवा हो ही नहीं सकती, कुछ धनवान् व्यक्ति खासकर स्त्रियाँ खामखाह अपने को रोगी समझा करती हैं, यह उनका शौक है। ऐसे रोगी सबके सामने जिस काम के करने की असमर्थता दिखाते हैं, उसे ही उसके पीछे मज़े में कर डालते हैं। दूसरों के सामने ऐसे रोगी 'भूख नहीं' की बड़ी शिकायत करते हैं, परंतु पीछे खूब सफाचट करते हैं।

रोगी की सेवा करनेवाले में दो गुण अवश्य होने चाहिए, एक प्रबंध की योग्यता, दूसरा धैर्य। रोगी को जो कुछ कहना है, वह संक्षेप से स्पष्ट कह देना चाहिए। जिस विषय में शंका हो, वह बात ही रोगी के सामने न निकालो, चाहे वह छोटी हो या भारी। प्रसूति के अवसरों पर मुझे ऐसा अनुभव हुआ है कि दाई के घबरा जाने से ही उनकी मृत्यु हो गई है। दाई के चेहरे को देखकर ही उन्होंने कल्पना कर ली कि अब मैं नहीं बचूँगी। वैद्य 'अब क्या करूँ और क्या न करूँ' के फेर में पड़ता है, तो रोगी अपना मन सब ओर से खींचकर अंतिम यात्रा करने के लिये तैयार हो बैठता है। अमुक दवा अच्छी है, पर उससे लाभ होगा या नहीं, यह नहीं कहा जा सकता। यह बात कहने से रोगी अधमरा हो जाता है। चिकित्सक को उचित है कि वह स्थिर होकर अपना मत दे। डॉक्टर और सेवक सबको चाहिए कि वे रोगी को कभी कुछ और कभी कुछ न कहें। एक बार स्थिर करके यदि उससे किसी अंग काट डालने के लिये भी कहा जायगा, तो भी रोगी मान लेगा। परंतु ऐसा कहकर उससे कहा जाय कि अच्छा एक दवा देकर देखें, फिर न होगा तो आपरेशन ही करेंगे। इस बात से ही रोगी शंकित हो जायगा, और समझेगा कि अवश्य मेरी दशा भयंकर है।

रोगी की कल्पना-शक्ति बड़ी तेज़ हो जाती है। रोगी से किसी ने कह दिया कि हवा बदलने मसूरी जाना अच्छा है, बस मानो वह मसूरी पहुँच ही गया। ऐसी विचार-कल्पना उठती रहेगी। फिर उससे कहा गया, मसूरी से तो नैनीताल ठीक है। बस फिर क्या है, वह नैनीताल का ही संकल्प-विकल्प करने लगा। परिणाम इसका यह होता है कि वह पड़ा ही पड़ा उतना थक जाता है, जितना मसूरी और नैनीताल में घूम-फिरकर आया हो।

जाने से बढ़कर कोई रोज़गार है ही नहीं। जिसमें कामयाबी होने पर तो उनकी तारीफ़ होती है, और मरने पर रोगी के भाग्य को रोया जाता है।

कुपढ़ ब्राह्मणों के आवारा लड़के, अभागे कुटुम्बज़ ऊर्क, लूले, रँगे गीदड़, रँडुए, पेंशन-याफ़्ता बूढ़े, परीक्षा में सदा फ़ेल होनेवाले और विद्या पढ़ने के कठिन परिश्रम से भागे हुए विद्यार्थी प्रायः वैद्यराज या डॉक्टर बन जाते हैं। अख़बारों में, रेल के स्टेशनों पर, तार के खंभों पर, थिएटर की दीवारों पर, जिधर देखो, उधर इनकी टें-टें चिपकी मिलेगी। कोई गुरु के प्रसाद से, कोई बाप-दादों के पुराने नुसख़ों के तुफ़ैल से, कोई अपने बीसियों वर्ष के परिश्रम और हज़ारों के ख़र्च से, कोई किसी सिद्ध महात्मा की बूटी से पूरे पहुँच गए हैं। बहुधा ये लोग कलकत्ते आदि से वी० पी० द्वारा एक लम्बी डिगरी और होम्योपैथी का बक्स मँगाकर कोट पतलून पहन पूरे डॉक्टर बन जाते हैं। ये गरीबों का रक्त चूसनेवाले ठग यमराज के एजेंट दिन-दिन बढ़ रहे और अपना हलुवा-मॉंडा सीधा कर रहे हैं। इन धूर्तों के पंजों में फँसे हुए बेचारे गरीब एक तरफ़ लुट रहे हैं, दूसरी तरफ़ अपना स्वास्थ्य और जीवन खोकर कुत्ते की मौत मर रहे हैं।

यह रोज़गार भी इतना सस्ता है कि दस-बीस पुरानी-धुरानी शीशियों से ही अलमारी चमचमा उठती है। पढ़ने-लिखने के नाम पूरे पढ़-पत्थर, चिकित्सा-ग्रंथों का पढ़ना तो एक ओर रहा, उनका पूरा नाम तक भी नहीं सुना। अमृतसागर, इलाजुलगुर्बा और होम्योपैथिक उनकी पोथी और लंबी-चौड़ी गपोड़ेबाज़ी इनका ईमान-धर्म। कैसी आश्चर्य की बात है कि लोग ज़रा-ज़रा-सी बात में तो अपनी योग्यता की कुल खुर्चन ख़र्च कर देते हैं पर प्राणों का जहाँ सवाल आता है, मरने-जीने का जहाँ प्रश्न उठता है, वहाँ सोचने-विचारने की आवश्यकता ही नहीं समझते।

इस प्रकार ये अभागे लोग काँच के बर्तन की तरह तनिक ठेस से चूर चूर हो जाने-वाले जीवन-रूपी पात्र को उछाल-उछालकर उसकी मज़बूती की परीक्षा लेते हैं, इसका परिणाम जो कुछ है, वह छिपा नहीं है। मरनेवालों की संख्या को देखकर रोमांच हो आते हैं, होश फ़ाख़्ता हो जाते हैं और दिल दहल उठता है। और अधमरे होकर जीनेवालों की तो कुछ बात ही न पूछिए। भारतवर्ष की सम्पूर्ण आबादी का एक बड़ा भाग ऐसे ही युवकों और युवतियों से भरा है। ग़रज़ इस प्रकार के धूर्त और मूर्ख वैद्यों से सदा बचना चाहिए।

सुचिकित्सक का लक्षण

भगवान् धन्वंतरि अच्छे वैद्य का लक्षण यों लिखते हैं—

जिसने चिकित्सा-शास्त्र को पढ़कर उसके तत्त्व को समझ लिया हो, अपने गुरु को चिकित्सा करते, दवा बनाते, चीर-फाड़ करते देखा हो, फिर आप भी जिसने गुरु की अधीनता में काम किया हो, शस्त्र-कर्म, चीर-फाड़ में जिसका हाथ हलका हो, साफ़ स्वच्छ

कैसी दशा में है। यदि वैद्य अशुद्ध स्थान पर बैठा हो, आग जला रहा हो, खाना या और कुछ पका रहा हो या किसी कठिन और विचार-पूर्ण काम में लगा हो, तो कुछ ठहरकर बात करे।

रोगी की खाट के पास ही चिकित्सक के लिये कुर्सी, मोढ़ा या और कोई ऐसा आसन जिस पर आराम से बैठकर वह रोगी को देख सके, उपस्थित रखना चाहिए। ठंडा या गर्म जल, साबुन (जैसी ऋतु हो) और एक स्वच्छ तौलिया तैयार रखना चाहिए, जिससे रोगी को देखकर चिकित्सक हाथ धो सके।

चिकित्सक जिस समय रोगी को देख रहा हो, और वह कुछ पूछे, तो उसके प्रश्न का उत्तर ठीक-ठीक और सच्चा देना चाहिए। कोई ऐसी गुप्त बात हो, जिसका सबंध रोगी के पास रोग से हो, तो उसे चिकित्सक के न पूछने पर भी बता देना चाहिए। बहुधा देखा गया है कि रोगी कोई बदपरहेजी करके मामला बिगाड़ लेता है, तो उसे चिकित्सक के नाराज़ होने के डर से छिपा डालता है। इसका परिणाम कभी-कभी बहुत ही शोचनीय हो जाता है, क्योंकि चिकित्सक को असल बात तो मालूम होती नहीं, वह समझता है, हमने जो दवा दी है, उसी से बिगाड़ हुआ है। कदाचित् रोग को पहचानने में भूल हो गई हो, इसी भ्रम में वह दवा बदल बैठता है। बस यही गज़ब हो जाता है, इसलिये इस विषय में भारी-से-भारी गलती को साफ कह देना चाहिए।

चिकित्सक जब रोगी को देखने लगे, तो उसके पास बहुत-सी भीड़ नहीं जमा होनी चाहिए। सिर्फ़ वही आदमी पास रहें, जो हर वक्त रोगी के पास रहते हो, और रोग के विषय में सब बातें जानते हों। यदि पहले से कोई वैद्य चिकित्सा कर रहा हो, तो उसका भी सब हाल कह देना चाहिए। उसने क्या दवा दी, उससे क्या हानि-लाभ हुआ, इसके विषय में जो कुछ जानते हो, सो भी बयान कर देना चाहिए। उचित तो यह है कि पहले जिसका इलाज हो, उसके नुसख़े सुरक्षित रक्खे जायँ, और वे सब चिकित्सक को दिखा दिए जायँ, ताकि वह रोग की गहराई को समझ-सोचकर दवा दे। चिकित्सक की सम्मति को ख़ूब ध्यान से सुनना और जैसा कहे, उसके अनुकूल काम करना चाहिए।

गठिया, रक्त-विकार (ख़ून की ख़राबी) आदि की बीमारी दवाई लेने पर भी जल्दी आराम नहीं होती, और हैज़ा आदि की बीमारी या तो जल्दी आराम हो जाती है या मार डालती है। इसलिये इलाज कराने में—औषधि खाने में घबराना नहीं चाहिए, धीरज से काम लेना चाहिए। धीरे-धीरे सब ठीक होता है, रोग के बढ़ने में देर लगती है, पर घटता बड़ी मुश्किल से है।

औषध के प्रकार

आजकल इस देश में कई प्रकार की चिकित्सा-पद्धतियाँ दो जारी हैं—आयुर्वेदिक, यूनानी, डॉक्टरी (एलोपैथिक) और होमियोपैथिक आदि। इनमें से आयुर्वेदिक, यूनानी और डॉक्टरी का रिवाज बहुत ज़्यादा है, बड़े-बड़े शहरों में होमियोपैथिक का भी रिवाज बढ़ रहा है। इनके सिवा पानी का इलाज, उपवास का इलाज, रंग का इलाज आदि कई प्रकार के इलाज और भी हैं, पर वे बहुत प्रचलित नहीं हैं। न वे कठिन, भयानक और आशुकारी रोगों में अच्छे सफल होते देखे गए हैं।

चीर-फाड़ और मूढ़ गर्भ आदि की चिकित्सा में डॉक्टरी-पद्धति उत्तम है। पुराने उलझे हुए जटिल और देर तक चलनेवाले रोगों में आयुर्वेद अपनी जोड़ नहीं रखता। यूनानी चिकित्सा गर्मी और पित्त के बीमारों तथा नाज़ुक मिज़ाज रोगियों को हितकर है। और होमियोपैथिक प्रायः बच्चों के लिये ठीक रहती है।

आयुर्वैदिक और यूनानी दवाइयाँ प्रायः एक-सी होती हैं और वे मामूली तौर पर इतनी तरह की होती हैं—

क्वाथ—काढ़ा या जुशाँदा, अर्क़, आसव, शर्बत आदि पतली पीने की दवाइयाँ, चूर्ण, गोली, चटनी, घृत, रस, भस्म आदि खाने की, तेल आदि मालिश करने की, मलहम, लेप आदि बाहर लगाने की, इनके सिवा धुआँ पीने को, सूँघने की, बफारा देने की, आँख में लगाने की, कान में डालने की, मंजन करने की, कुल्ला-गरारा करने की, इत्यादि। प्रायः डॉक्टरी दवाइयाँ भी ऐसी ही होती हैं।

चालाक पंसारी

ये सब औषधियाँ प्रायः पंसारी या अत्तार की दूकान से मिलती हैं। पर ये लोग पूरे सिरे के उस्ताद होते हैं। ग्राहक जो नुस्ख़ा लेकर आया, उसमें की कोई दवा यदि उनके पास न हुई, तो कभी-कभी ये लोग उसकी जगह कुछ-न-कुछ रखकर दवाइयों की तादाद पूरी कर देते हैं, पर यह नहीं कहते कि यह दवा हमारे यहाँ नहीं है।

चाहे वर्षों की सड़ी-गली दवा इनकी दूकान में रक्खी हो, उसे कभी नहीं फेंकते, सबके दाम वसूल करते हैं। क्योंकि हानि-लाभ तो वैद्यजी के सिर है, बीमार ख़राब होगा, तो इनकी बला से, वैद्य जाने, और बीमार। इन्हें अपने टके वसूल करने से काम।

ये लोग दवा तोलकर नहीं देते, अदाज़ से रख देते हैं, इसलिये दवा मात्रा में कम-

यह काम बड़ी होशियारी का है। कभी तो घी जल जाता है, कभी कच्चा रह जाता है, इसमें यह काम वैद्य के सामने ही करना चाहिए।

तोल का हिसाब यों है कि घी से चौगुना काढ़ा और चौथाई चटनी।

यह उस घी के बनाने की विधि है, जिसकी कोई तोल नुसखे में न लिखी हो और जिसमें विधि हो, उसे उसी अनुसार बनावे।

यह घी कभी अकेला चाटा जाता है, कभी दूध, मिश्री या शहद में मिलाकर।

रस या धातु भस्म--इनके विषय में लोगों में यह भ्रम फैला हुआ है कि रस, भस्म ४० वर्ष की अवस्था से प्रथम न खानी चाहिए, पर यह कोरा भ्रम है। उत्तम पदार्थ तैयार हो, तो सब कोई बेखटके खा सकते हैं। इनके बनाने की विधि हमने अन्यत्र लिखी है। ये रस अक्षय हैं, अर्थात् पुराने होने पर इनका गुण बढ़ता है। ये घृत, शहद, मलाई अथवा अदरक या पान के रस में खाने चाहिए। पर सावधान रहें कि पथ्य में गड़बड़ न होने पावे।

रसौषध में कई गुण हैं, एक तो वे बहुत थोड़ी मात्रा (रत्ती या आधी रत्ती) में ही वे काम करते हैं, जो बड़े-बड़े कटोरे-भरी कड़वी कसैली दवा भी नहीं कर सकती। दूसरे उधर गले से दवा उतरी, उधर गुण दिखा दिया। तीसरे बेस्वाद नहीं, इसीलिये औषधि में रस की बड़ी ही प्रशंसा है, पर वह बड़ी तेज़, आनन-फानन में, जैसे रत्ती (चावल)-भर ही जादू की तरह लाभ दिखाती है वैसे ही अनाड़ी के हाथ से कभी-कभी भारी हानि भी कर देती है, इस लिये अनाड़ी से रस नहीं लेना।

दवाइयों का बाहरी प्रयोग

तेल की मालिश—दर्द, खुजली और ज्वरादि दूर करने के लिये तेल-मालिश करना होता है। तेल इस प्रकार से मालिश करना चाहिए, जिससे रोगी को तकलीफ न हो, और तेल शरीर के भीतर पेवस्त हो जाय। सिर में तेल-मालिश करना हो, तो थोड़ा तेल हथेली पर लेकर सिर पर जमाकर धीरे-धीरे दबाना चाहिए, जिससे सब तेल भीतर चला जाय।

लेप—जैसा पतला या गाढ़ा लेप वैद्य ने बताया हो, वैसा लगाना चाहिए। लेप की दवाई ख़ूब बारीक पीसनी चाहिए। पकानी हो, तो पका लेनी चाहिए। द्रव पदार्थ (पानी आदि) उसमें इतना मिलाना चाहिए कि पक चुकने पर लेप काफी पतला रहे। लेप प्रायः बाहर लगाया जाता है। सूखे लेप को त्वचा पर न रहने देना चाहिए, उसे उतारकर तब दूसरा लेप लगाना चाहिए, परंतु यदि पका हुआ फोड़ा फोड़ने के लिये लेप लगाया जाय, तो उसे सूख जाने पर भी लगा रहने देना चाहिए, ऐसा होने से खाल में तनाव होकर फोड़ा जल्दी फूट जाता है। रात में लेप नहीं लगाना चाहिए।

उत्कारिका (पुल्टिस या लूपड़ी)—प्रायः रात में ही बाँधी जाती है, और कच्चे फोड़े को पकाने या दर्द दूर करने को बाँधते हैं। गाढ़ी लेई-सी पकी हुई दवा को उत्कारिका या पुल्टिस कहते हैं।

उठे जितनी रोगी सह सके। एकदम भाफ को खोल देने से रोगी के जल जाने का भय है। ख़बरदार! अगर भाफ ज़्यादा आती हो, और रोगी से सही न जाती हो, तो ढकना आगे को सरकाकर भाफ कम कर देनी चाहिए। इस तरह से भाफ आराम से जितनी चाहो, उतनी ली जा सकती है। रोगी को चाहिए कि शरीर के जिस हिस्से में दर्द या सूजन या तनाव हो, वह हिस्सा विशेषकर भाफ के सामने कर दे।

ठीक-ठीक पसीना लेने से दर्द मिटता है, सूजन कम होती और शरीर हल्का हो जाता है। बहुत ज़्यादा पसीना लेने से ख़ुश्की और गर्मी बढ़ जाती है, और देह टूटने लगती है।

पसीना या भाफ लेने की कोई ख़ास तरकीब वैद्य के इच्छानुसार करनी चाहिए। पसीना लेते समय आँखों पर भीगे हुए केले के पत्ते, कमल के पत्ते, गुलाब के फूल या साफ धुनी हुई रुई के फाए, जो पानी में भिगोकर निचोड लिए हो, रखने चाहिए।

कुर्सी पर बैठकर और बर्तन नीचे रखकर भी भाफ अच्छी तरह ली जा सकती है। बफारा लेने से पहले प्राय: तेल मालिश किया जाता है, सो वैद्य की सम्मत्यनुसार ही करना चाहिए।

आँख मे लगाने की दवा—आँख का काम बहुत नाज़ुक होता है। उस पर नाना प्रकार की क्रिया और भाँति-भाँति के प्रयोग बडी ही सावधानी से किए जाते हैं, इसलिये वे सब चिकित्सक द्वारा या उसकी पूरी सँभाल मे होने चाहिए।

इसके सिवा कोई ख़ास विधि औषध-सेवन की वैद्य बतावे, तो उसी प्रकार बुद्धिमानी से उसका सेवन करना चाहिए। साराश यह कि दवा खाने की हो या लगाने की, उसकी विधि वैद्य से भली भाँति पूछ लेनी चाहिए, और वह जैसे बतावे, वैसे काम मे लाना चाहिए।

यदि प्रयोग कुछ कठिन या भयानक हो तो उसे वैद्य से ही कराना चाहिए। और स्वयं अच्छी तरह देखते रहना चाहिए कि जिससे वह क्रिया समझ में आ जाय और आगे को अपने आप ही कर सको।

औषध का समय

प्राय: निम्न-लिखित समयों पर दवाई दी जाती है—१ प्रात:काल, २ प्रात:काल के भोजन के पहले, ३ भोजन के बीच में या प्रथम ग्रास पर या ग्रास-ग्रास पर, ४ भोजन के अंत में, ५ बार-बार, ६ शाम को, ७ रात को, सोते वक्त।

१—आयुर्वेदिक और यूनानी चिकित्सा-पद्धति के क्वाथ और दूसरी दवाइयाँ भी प्राय: सुबह और शाम को ही पी जाती है। प्रात:काल ली हुई औषध विशेष गुणकारी होती है, परंतु दवाई ख़ाली पेट मे (बिना कुछ खाए-पिए) लेनी चाहिए। दवाई लेने के पीछे दो-तीन घंटे तक भी कुछ नहीं खाना-पीना चाहिए। ऐसा करने से औषध अपना पूरा गुण दिखाती और रोग को शीघ्र दूर कर देती है।

परंतु बालक, वृद्ध, स्त्रियाँ और कोमल प्रकृति (नाज़ुक मिज़ाज) मनुष्यो को ख़ाली पेट मे

औषध का पिलाना

दवा पीना बीमारों के लिये बड़ा कठिन काम है। कितने ही रोगी तो इसीलिये इलाज भी नहीं कराते कि न-मालूम कैसी-कैसी कड़ुई, कसैली, बदज़ायक़ा दवाई पीनी पड़ेगी। कितनों को दवाई की शकल देखते ही थर्राहट आती है। तरह-तरह का मुँह बनाने लगते हैं। ऐसे लोग दवाई पीने की अपेक्षा बीमार रहना ही अच्छा समझते हैं। बात है भी ऐसी ही। रसना बड़ी प्रबल इन्द्रिय है, यह बुरे स्वादों को चखना नहीं चाहती। परंतु समझना चाहिए--दवाई पीने में थोड़ी देर कष्ट होता है, परंतु रोग में निरंतर कष्ट पाना होता है। दवाई आरोग्यता और ख़ुशी पैदा करने के लिये है, परंतु रोग दुख, पीड़ा, रंज और मौत बुलाने के लिये है; इसलिये रोग की बड़ी तकलीफ़ की अपेक्षा दवाई पीने की थोड़ी-सी तकलीफ़ सह लेनी चाहिए। रोगी प्राय रोग से चिड़चिड़े हो जाते हैं, इसलिये उन्हें धीरे से समझा-बुझाकर आश्वासन और तसल्ली देकर, बच्चे हों, तो उन्हें खिलौने, रुपए-पैसे आदि से बहला-फुसलाकर दवाई खिला-पिला देनी चाहिए।

दवाई साफ़, स्वच्छ सोने-चाँदी या काँसे की कटोरी में लेकर परमेश्वर का नाम लेकर रोगी को पिला दे। रोगी को चाहिए कि सावधानी से बैठकर प्रसन्न चित्त से दवाई को एक साँस में पी जाय, उसका स्वाद न ले। पी चुकने पर पात्र उलटा करके पृथ्वी पर रख दे, और ठंडे या गर्म जल से (जैसा कि वैद्य ने बताया हो) कुल्ले कर डाले। पीछे इलायची के दाने या पान आदि से मुँह का स्वाद ठीक कर ले। ये चीज़ें वैद्य की आज्ञानुसार पहले से ही तैयार रखनी चाहिए। यह नहीं कि उसी वक़्त पैसे लेकर बाज़ार को दौड़ा जाय। खड़ी दवाई काँच, पत्थर या मिट्टी के पात्र में पिलानी चाहिए। रोगी अगर कमजोर हो और बैठने की शक्ति उसमें बिलकुल ही न हो, तो रोगी को लेटे-ही-लेटे टोंटीदार पात्र से, जिसमें से बहुत मोटी धार न निकलती हो, पिला देना चाहिए।

बहुत छोटे बच्चों को छोटे-से चम्मच या छोटी शीशी से थोड़ी-थोड़ी दवाई लेकर पिलाना चाहिए। बच्चे दवाई पीकर ख़ूब रोते हैं। बच्चा जब तक बेहाल न हो, और धीरे-धीरे रोवे, तब तक दूसरा घूँट फिर पिला देना चाहिए, जल्दी नहीं करनी चाहिए। क्योंकि जल्दी करने से बच्चे घबरा जाते और दम लेना भूल जाते हैं। दवाई श्वास की नली में चली जाती है, और धसका उठकर फंदा लग जाता है। बच्चा दवाई और खाए पिए की सबकी उल्टी कर देता है। कुछ समझदार और कुछ नादान ऐसी उम्र के बच्चे यदि दवाई न पीवें, और दाँत भींच लें, या कोई बड़ा रोगी बेहोश हो जाय और उसके दाँत भिच जायँ, तो प्रथम उँगली (तर्जनी) में अगुश्ताना (जैसा दर्ज़ी लोग सीते वक़्त लोहे या पीतल का बना हुआ उँगली में पहने रहते हैं) पहनकर वह उँगली डाढ़ों के पीछे मसूड़ों में डालकर कुछ ज़ोर लगाकर जबाड़ी खोल दे, फिर कोई मोटी गोल चीज़, जैसे रूल या बेलन का सिरा दाँतों के बीच में दे दें, और दवाई चमचे से मुँह में डाल दे।

प्रकरण ५

पथ्य

पथ्य—जैसे राजा को मत्री, वैसे औषध को पथ्य समझना चाहिए। कहा है—"पथ्ये स
गदार्तस्य किमौषधनिषेवणै । अपथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः।" अर्थात् बदपरहेज़
औषध से क्या ? (कितनी ही दवा-दारू करो, आराम न होगा) और परहेज़वाले को द
से क्या ? (वह रोगी ही न पडेगा, अत दवा की ज़रूरत ही नहीं)।

पथ्य के विषय मे वैद्य की आज्ञा को औषध से भी अधिक ध्यान से सुनकर पालन क
चाहिए, क्योकि अन्न प्राण है, दवा उसी की सहायक है, यह प्राण-अन्न यदि विष-रूप से शर
मे गया, तो समझिए कि औषध भी विष हो गई।

भिन्न-भिन्न रोग पर भिन्न-भिन्न पथ्य प्रस्तुत विधि है, पर सबका साधारण मतलब या
है कि पथ्य हल्का हो, जल्दी पच जाय, दोषो को शमन करनेवाला हो, कोई विकार न करे
रोगी चाहे जैसा हो, निर्बल हो ही जाता है, पडा रहता है, ऐसी दशा मे पडे-पडे वह जैस
पथ्य पचा सके, वही पथ्य देना चाहिए।

बहुत-से मनुष्य खाने-पीने की साधारण वस्तुओ का भी ज्ञान नहीं रखते, और वे इस
बात को नही जानते कि रोगी को कब, कैसा पथ्य देना चाहिए। देर तक रोगी पडा रहने
वाला व्यक्ति पथ्य की चीज़े खाते-खाते ऊब जाता है। दाल-भात, रोटी वह देखना भी
नहीं चाहता, ग्यारह-बारह बजे तक उसे भूख नही लगती, पर तब तक यदि उसे कुछ
हल्का आहार न दिया जायगा, तो वह अधिक दुर्बल हो जायगा। कमज़ोर रोगी को
प्राय. रात मे कुछ ज्वर हो जाया करता है। प्रात.काल ज्वर उतरने पर उसका चेहरा
अत्यंत निस्तेज हो जाता है। ऐसी अवस्था मे प्रात काल उसे सुपाच्य पथ्य अवश्य ही
देना उचित है। थोडा-सा दूध, चाय, साबूदाने का पानी या अरारोट की काँजी देना
उचित है। यदि चिकित्सक की स्पष्ट आज्ञा भी हो, तो भी बिना रोगी की रुचि और
पाचन-शक्ति पर विचार किए, ज़बर्दस्ती बार-बार रोगी को भोजन देना अनुचित है।

प्राय· देखा जाता है कि पथ्य-पानी के सबध मे घर की स्त्रियाँ चिकित्सक की आज्ञा का
उल्लंघन किया करती है। लुक-छिपकर ऐसी चीज़ें खिला देती हैं, जिन्हें चिकित्सक मना कर
गया है। फल सदैव बुरा पडता है।

बिल्कुल कमजोर रोगी को ठीक समय पर पथ्य देना आवश्यक है। उसमे ५ मिनट
की भी देरी होनी ठीक नहीं है। पथ्य देने का समय भी ऐसा होना चाहिए कि उस समय

हो। खाने-पीने की चीज़ों के बर्तन बाहर-भीतर से बिलकुल स्वच्छ और साफ रहने उचि हैं। पीते समय पीने का पदार्थ उसके शरीर या बिछौने पर न गिर पड़े, इसका पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए।

रोगी को क्या खिलाना चाहिए, यह एक बड़ा विकट प्रश्न है। बड़े-बड़े चिकित्सक भी इस प्रश्न का उत्तम उत्तर नहीं दे सकते। आम तौर से लोगों का ख़याल है कि मांस का शोरवा पुष्टिकर आहार है। कुछ लोग मुर्गी के अंडे को अत्यंत शक्ति-वर्धक समझते हैं, परंतु यह भूल है। ख़ासकर गर्म मिज़ाजवालों के लिये यह वस्तु निस्संदेह हानिकारक है। पहले ही से रोगी मांसाहारी हो, तो बात ही दूसरी है, नहीं तो अन्न ही रोगी को सर्वोपरि पथ्य है। जो रोगी मांसाहार करते हैं, उन्हें रक्त-दोष पैदा हो जाता है, मुँह और जीभ पर छाले हो जाते हैं। मसूड़ों से ख़ून गिरने लगता है। संधियाँ दुखने लगती हैं, और चक्कर आने लगता है। शाक-भाजी, फल-फूल रोगी के लिये उत्तम प्रभाव करते हैं। अरारोट की कॉजी फौरन् हज़म हो जाती है, परंतु यदि रोगी में ज़रा भी पाचन-शक्ति ठीक हो, तो उसे दलिया देना चाहिए, यह पुष्टिकारक और हल्का है।

यवागू—थोड़ा कुटा हुआ चावल, जौ या गेहूँ के दलिए का यवागू बनता है। माँड, पेया और लपसी यह तीन तरह का यवागू होता है। चावल आदि १६ गुने पानी में ख़ूब सिजाकर छान लेने से माँड़ कहाता है। ११ गुने पानी में ख़ूब सिजा लेने से पेया कहाता है, और ६ गुने पानी में पकाने से लपसी कहते हैं। पेया और लपसी छानी नहीं जाती। यवागू पानी की तरह पतली होने से पेय और गाढ़ी होने से लपसी कहाती है। माँड छानकर पिलाया जाता है। इसमें सेंधा नमक या मिश्री मिलानी चाहिए।

खिचड़ी—यह भी उपर्युक्त प्रकार से तीन प्रकार की होती है—इसमें मूँग या अरहर की दाल २ हिस्सा और चावल १ हिस्सा डालने चाहिए।

खील का माँड—ताज़ी खील (धान का लावा) थोड़े गर्म पानी में थोड़ी देर भिगो रखना, फिर घुल जाने पर कपड़े में छानकर पीना चाहिए। इसमें मिश्री या नमक डालना भी ठीक है।

बार्लि-अरारोट—यह अँगरेज़ी पथ्य है। बनता इस तरह है कि इसे पहले गर्म पानी में ख़ूब मिला लेना, फिर दूध डालकर पकाना, सीजने पर मिश्री मिलाकर खाना।

साबूदाना—बनाने की भी यही विधि है—उसे कुछ देर पानी में भिगोना उचित है। ये सब वस्तुएँ पीने योग्य होनी चाहिए। बाज़ार में यह चीज़ें इन्हीं नाम से मिलती हैं।

दाल का जूस—मूँग, मसूर, अरहर, मोठ इनकी दाल का जूस बनाना हो, तो इन्हें १८ गुने पानी में ख़ूब सिजाना, पीछे सेंधा नमक, हल्दी, ज़ीरा, धनिया आदि मसाला यथा-योग्य चिकित्सक की राय से डालना।

शाक—तोरई, कद्दू, पेठा, करेला, बैंगन, आलू व परवल आदि का शाक अवस्था-विशेष में चिकित्सक की सम्मति से दे सकते हैं।

उसे २-३ घंटे नींद आ जायगी। पर जिन्हें २४ घंटे नींद नहीं आती, उन्हें चाय कभी न पिलानी चाहिए। रात-भर जागने के बाद थकान उतारने को प्रातःकाल १ प्याला चाय दी जा सकती है। ज्वरवालों को काफी से चाय अच्छी लगती है। काफ़ी चाय से अधिक उत्तेजक तो है, परंतु पाचन-शक्ति भी इसी से ख़राब होती है।

चटनी या अचार—प्रायः हानिकर है, पर रुचि सुधारने को कभी-कभी थोड़ी-थोड़ी मात्रा में अदरख, पोदीना, अनारदाना, सेंधा नमक, जरिश्क, सौंफ ये सब बराबर पीसकर चटनी बनाकर देना—मुनक्का, काली मिरच और नमक (उचित) पीसकर चटनी चटाना।

हरड छोटी नींबू के रस की तथा नींबू का पुराना अचार स्वस्थ होने पर कभी-कभी देना।

रोगी का भोजन पवित्र स्थान में पवित्रता-पूर्वक नहा-धोकर धुले वस्त्र साफ़ पहनकर बनाना चाहिए। भोजन को अनेक प्रकार के जीवों (मक्खी, मच्छर, चींटी, कव्वों वग़ैरा) से खूब रक्षा रखनी चाहिए, और रोगी की चारपाई के सामने एक छोटी-सी मेज़ लगाकर उस पर चुनकर आराम से रोगी को तकिए आदि के सहारे बैठाकर खिलाना चाहिए। रोगी पीने योग्य पदार्थ को पीवे, और खाने योग्य पदार्थ को खावे।

पानी—सन्निपातादि की दशा में सेर का आधा पकाकर पानी लेना चाहिए। साधारण दशा में सेर का तीन पाव पका छान और ठंडाकर पिलाना चाहिए।

बर्फ़—सोडा आदि वमन के दौरे आदि में दे सकते हैं। बर्फ़ को मुँह में रखकर चूसना चाहिए।

शृत-शीत जल—१ तोला दवा को १ सेर पानी में डालकर पकावे। आधा जल रहने पर छानकर पी ले, भोजन के काम में लावे, इसे शृत-शीत जल कहते हैं।

अंशूदक—दिन-भर धूप में और रात्रि-भर चाँदनी में रक्खा रहने से जल अंशूदक कहलाता है। बहुधा यह भी रोगी को दिया जाता है। इसके अतिरिक्त लौह बुझाया, ईंट या पत्थर आदि से बुझाया हुआ पानी भी काम में आता है। इसे छानकर कोरे घड़े में भरकर रखना चाहिए और चिकित्सक की अनुमति से ठंडा या गर्म पिलाना चाहिए। जल ताँबे या मिट्टी के कोरे पात्र में रखना चाहिए, और वह बर्तन ढका रखना चाहिए, परंतु रोग विशेष में चिकित्सक की अनुमति से यथायोग्य जल लेना चाहिए।

ठंडा जल—मूर्च्छा, दाह, विष-विकार, रक्तपित्त, मदात्यय, थकान, भ्रम, विदग्धाजीर्ण, तमकश्वास, वमन आदि रोगों में ठंडा जल पीना चाहिए।

गर्म जल—पसली का दर्द, प्रतिश्याय (ज़ुकाम), वातव्याधि (गठिया आदि), गले के रोग, अफारा, कोष्ठबद्ध, दस्त, वमन और शुद्धि आदि कर्म के पीछे, नवीनज्वर, अरुचि, संग्रहणी, गुल्मरोग, श्वास, कास, हिक्का, इन रोगों में और घृत आदि चिकनाई पीने पर गर्म जल पीना चाहिए, इनमें ठंडा जल पीने से अनेक प्रकार के बिगाड़ हो जाते हैं।

ज्वरातिसार (पतले दस्तों में)—रोगी बलवंत हो, तो पहले उपवास, फिर मीठा अनार या अनार का रस मिलाकर मसूर का पानी, पतली खिचड़ी, धान का माँड, सिंघाड़े की लपसी दो। रोगी दुर्बल हो, तो पानी में पकाकर साबूदाना, पुराने चावल का भात दो, गरम पानी ठंडा करके पीने को देना, मीठी छाछ और भात देना।

भारी और चरपरी चीज़ें, गेहूँ, जौ, उर्द, चना, अरहर, मूँग, शाक, गन्ना, गुड़, मुनक्का, ज़्यादा नमक-मिर्च, ज़्यादा पानी या पतली चीज़ें, धूप, तैल-मर्दन, आग में तापना, स्नान, कसरत, मैथुन और रात में जागना हानिकारक है।

अतिसार—अतिसार की अपक्व * अवस्था में लंघन कराना आवश्यक है, पर रोगी बहुत दुर्बल हो, तो धान की खीलों का सत्तू बनाकर, पानी से पतला करके या पानी में साबूदाना उबालकर अथवा भात का माड़ देना। गर्म पानी ठंडा करके पीने को देना, प्यास ज़्यादा होने पर धनियाँ या सौंफ का शृतशीत बनाकर देना।

पक्वातिसार में † पुराने महीन चावल का भात, मसूर की दाल, चावल, बैंगन, केले की तरकारी, गाय का फीका और एक बार उबालकर ठंडा किया हुआ दूध देना चाहिए। अति जीर्ण अतिसार में केवल उपर्युक्त विधि से दूध ही देना। ख़ून भी जाता हो, तो बकरी का दूध देना। ज्वरांश न हो, तो गाय या भैंस का मट्ठा या दही दिया जा सकता है।

संग्रहणी—संग्रहणी रोग में पक्व-अपक्व का विचार अतिसार के समान ही करना चाहिए। दही (मीठा), चावल या खिचड़ी या केवल दही अथवा केवल तक्र (छाछ) देना। संग्रहणी में सूजन होने पर केवल गाय का दूध ही पथ्य है। और उसके देने की विधि यह है कि गाय का दूध एक बार उबालकर ठंडा कर लिया जाय। वही दूध फीका थोड़ा-थोड़ा रोगी को दिया जाय।

बवासीर—पुराने चावल का भात, मूँग, चना, कुरथी, परवल, गूलर, जमीक़न्द, छोटी मूली, केले का फूल, सेजने का डंठल, दूध, घी, मक्खन, पकवान, मिश्री, किशमिश, अंगूर, पपीता, छाछ, छोटी इलायची, नदी या तालाब में स्नान, साफ हवा में टहलना ये उपकारी है।

भुना हुआ या सेका हुआ पदार्थ, भारी वस्तु, दही, पिट्ठी की चीज़ें, उर्द, सेम, पिश्ताक, धूप, आग तापना, पूर्वी वायु, दस्त-पेशाब रोकना, मैथुन, घोड़ा या बाइसिकिल की सवारी, सख़्त चीज़ पर बैठना निषिद्ध है।

अग्निमांद्य—अजीर्ण—प्रथम उपवास, फिर हल्का भोजन, जैसे साबूदाना, खिचड़ी।

---

* बारबार अनेक रंग का मल निकले, खाया आहार न पचे, पेट में दर्द हो, पानी में दस्त हो जाय, तो अपक्वातिसार के चिह्न समझना।

† दर्द की कमी, दस्त का रंग पीला, पानी में दस्त डालने से तैर जाय, यह पक्वातिसार है।

को थोड़ा दूध मिलाकर साबूदाना अथवा दिन-भर में दो-तीन बार थोड़ा-थोड़ा साबूदाना गर्म पानी ठंडा करके पिलाना तथा शरीर सदा वस्त्र से ढका रहना चाहिए।

ओस में बैठना, आग मे तापना, रात को जागना, संगीत, चिल्लाकर बोलना, कसरत घोड़ा या बाइसिकिल को सवारी करना, पैदल चलना, परिश्रम करना, हुक्का पीना, स्नान दही, लाल मिर्च, अधिक नमक, मेम, मूली, आलू, उर्द, शाक अधिक खाना, हींग और प्याज़ आदि हानिकारक है।

खाँसी—रक्तपित्त और तपेदिक का कहा हुआ पथ्य पालन करना।

हिचकी और श्वास—रक्तपित्त के अनुसार पथ्य भोजन कराना। विशेष वायु का अनुलोमन जिससे हो वह कराना, वायु का वेग ज़्यादा हो, तो पुरानी इमली भिगोकर उसका पानी पीने को देना। मिश्री के शर्बत में नीबू मिलाकर पीने को देना। नदी या तालाब में स्नान करना। पर कफ की ज्यादती हो, तो शर्बत न पीना चाहिए। ज़रा-सा तंबाकू मुख में रख लेना उत्तम है।

भारी रूखी और तेज़ चीजें, दही, लाल मिर्च आदि, रात्रि-जागरण, परिश्रम, अग्नि तापना, पेट-भर भोजन, चिंता, शोक, क्रोध आदि का सदा त्याग करे।

गला बैठ जाना—खाँसी और श्वास की तरह पथ्य पालन करे। भोजन के साथ थोड़ा-सा पुराना गुड और घी मिलाकर खाय।

अरुचि—हलका और रुचिकर भोजन थोड़ा-थोड़ा देना। खाने की चीज़, स्थान पात्र आदि साफ-सुथरे हों, मन जिस कारण से विकृत हो, उसका त्याग करे।

वमन—प्रथम उपवास करे। फिर मूँग भाड पर भुनवाकर उसे उबालकर पानी छाने, उसमें मिश्री मिला बर्फ़ और धान की खीले डालकर दे। सुगंधित पुष्प आदि सूँघे, धूम्रपान का कोई काम न करे।

तृष्णा (प्यास)—मधुर और शीतल द्रव्य खाने को दे। उग्र-वीर्य वस्तु न खाय। शर्बतचंदन, शर्बत-नीलोफ़र, तरबूज़, संतरा, गन्ना खाय।

मूर्च्छा, भ्रम, संन्यास—पुष्टिकर और तृप्तिकारक आहार दे। दिन को पुराने चावल का भात, मूँग मसूर, चना, उर्द की दाल, गूलर, परवल, पेठा, बैंगन, केले का फूल, मक्खन, मट्ठा, दही, मुनक्का, अनार, पक्का आम, पपीता, शरीफा, कच्चा नारियल और फल। रात को पूरी, शाक, रोटी, हलुआ, मिठाई, खुरमा, दूध, घी, मैदा, सूजी, पकान्न। प्रात काल धारोष्ण दूध और शर्बत, तिल-तेल मर्दन, बहती नदी मे स्नान, सुगंध द्रव्य, स्वच्छ वायु, चाँदनी रात, गीत वाद्य आदि पथ्य है।

भारी और तेज़ चीज़ें, रूखे-खट्टे पदार्थ, भय, शोक, क्रोध, उद्वेग, मद्य-पान, रात-दिन बैठे रहना, आग तपाना, घोडे आदि की सवारी, मल, मूत्र, निद्रा, क्षुधा आदि को रोकना, रात्रि-जागरण, मैथुन और दतौन हानिकारक है।

मिर्च, शराब, धूप, परिश्रम, मैथुन, शोक, क्रोध, मल-मूत्र के वेग को रोकना, रात्रि-जागरण त्यागना चाहिए।

उदावर्त आनाह (अफारा)—पुराने चावल का गरम-गरम भात घी मिलाकर खाना, शूलरोगोक्त तरकारी तथा दूध पीना चाहिए। मिश्री का शर्बत, कच्चे नारियल का पानी, पक्का पपीता, शरीफा, गन्ना, बेदाना, अनार आदि खाना। भूख न खुली हो, तो दूध-साबूदाना, जौ के आटे की लपसी, धान की खील देना, सहने पर ठंडे या गरम पानी से स्नान।

गुल्म-रोग—वायु को शमन करनेवाला आहार-विहार करना चाहिए। दिन को बारीक पुराने चावल का भात, घी, शूलरोगोक्त तरकारी, रात को पूरी, रोटी, हलुआ, दूध। कच्चे नारियल का पानी, मिश्री का शर्बत, पपीता, पक्का आम, शरीफा। गर्म पानी से स्नान करना तथा पेट साफ रखना, इस रोग में विशेष उपकारी है।

अधिक मिश्री, घूमना, रात्रि-जागरण, धूप, मैथुन और वात-वर्धक आहार-विहार त्याग देना चाहिए।

हृद्रोग—स्निग्ध-पुष्टिकर आहार, ज्वर न हो, तो वातव्याधि की तरह आहार-विहार, पथ्य, छाती के दर्द में रक्तपित्त और कासरोगोक्त पथ्य लेना चाहिए।

रूक्ष या वायु-वर्धक द्रव्य भोजन, उपवास, परिश्रम, रात्रि-जागरण, अग्नि या धूप में बैठना और मैथुन हानिकारक है।

मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, सुज़ाक पथरी—स्निग्ध-पुष्टिकर आहार, दिन को पुराने च का भात, परवल, गूलर, केला, लौकी, तोरई की तरकारी, काग़ज़ी नीबू, रात को रोटी, हलुआ, दूध (थोडा मीठा डालकर), जल-पान। जल-पान में मक्खन, मिश्री, तर पक्का मीठा फल आदि। भोजन सहजे पर सवेरे कच्चे दूध में पानी मिलाकर लस्सी बना पीना। नदी या तालाब में स्नान।

रूक्ष पदार्थ, भारी पदार्थ, खटाई, दही, गुड, उर्द की दाल, लाल मिर्च, शाक, मैथु घोड़ा, साइकिल या ऊँट की सवारी, कसरत, मल-मूत्र का वेग रोकना, तेज़ शराब पी चिंता, रात्रि-जागरण इस रोग में हानिकर हैं।

प्रमेह, मधुमेह, शुक्रमेह—दिन को पुराने चावल का भात, मूँग, मसूर, चने की दा परवल, गूलर, सैजन का डंठल, केले का फूल, कच्चा केला आदि की तरकारी, काग़ज़ी नीबू, र को रोटी-पूरी, तरकारी, थोड़ा दूध (कम मीठा मिलाकर) कड़ुआ और कसैला रस फ़ायदे है। जल-पान में गन्ना, सिंघाड़ा किशमिश, बादाम, खजूर, अनार, भीगा चना, थोड़े मीठे मोहनभोग आदि आहार करना, सहन पर स्नान।

अधिक दूध, मट्ठा, लाल मिर्च, शाक, खटाई, उर्द की दाल, दही, गुड, लौकी तथा अन कफ-वर्धक वस्तु, शराब, मैथुन, दिन मे सोना, रात में जागना, धूप में फिरना, मत्र-वेग-धार धूम्र-पान हानिकर है।

शीत पित्त—कड़वी चीजें, कच्ची हल्दी और नीम का पत्ता खाना उपकारी है। इस अतिरिक्त वात-रक्त में जो आहार-विहार है, वह इस रोग में भी समझना। गर्म पानी स्नान और गर्म वस्त्र से शरीर को ढाँपे रखना उपकारी है।

अम्लपित्त—शूल रोगोक्त पथ्यापथ्य हा इस रोग मे उपकारी है। वातज अम्लपित्त चीनी और शहदके साथ धान की खीलो का चूर्ण खाना चाहिए। जौ और गेहूँ की लपसी भी लाभदायक है।

सब प्रकार के भारी पदार्थ, अधिक नमक, मिठाई, चरपरे और खट्टे रस तथा तेज़ चीज का खाना, दिन में सोना रात को जागना, मैथुन और मद्यपान निषेध है।

विसर्प विस्फोटक—वात-रक्त और कुष्ट-रोग के अनुसार पथ्यापथ्य जानना।

चेचक—प्रथम साबूदाना, दूध, और उसके बाद ज्वरादि के अनुसार पथ्यापथ्य। परवल, बैंगन, कच्चा केला, गूलर आदि की तरकारी, अनार, किशमिश, नारंगी, अनन्नास आदि। बदन पर मोटा कपड़ा रखना, घर हवादार और बिछौना साफ़ रखना।

गर्म चीज़ें, भारी पदार्थ, तेल मलना, हवा लगना निषिद्ध है। यह रोग उड़कर लगने वाला है।

नासा-रोग—पीनस, जुकाम आदि रोगो मे (कफशामक) द्रव्य देना, थोड़ा भी कफ हो तो भात न देकर रोटी देना, मूँग की धुली दाल, रूखा गेहूँ का फुलका प्राय. समस्त नासा रोगों में हितकारी है। पक जाने आदि पर रक्तपित्त के समान पथ्य देना। ज्वर हो तो भात न देना।

नेत्र-रोग—अभिष्यंद-रोग मे हल्का, रूक्ष और कफ-नाशक द्रव्य भोजन करना, ज्वरादि हो तो लंघन करना, मास, शाक, उर्द, दही, और भारी चीज़ें खाना, दिन में सोना, पढ़ना, स्त्री-प्रसंग, धूप में फिरना हानिकारक है। दृष्टि-दौर्बल्य और रतौंधी-रोग मे पुष्टिकर, स्निग्ध और वायु-नाशक द्रव्य भोजन करना। रूक्ष पदार्थ, व्यायाम, तेज़ रोशनी, परिश्रम आदि से बचना।

शिरोरोग—कफज, क्रिमिज और त्रिदोषज शिरोरोग के सिवा सभी शिरोरोगों में वायु प्रधान है। इसलिये वातव्याधि कथित पथ्यापथ्य उन सब रोगों में विचार कर देना। मधुर आहार, स्नान, दिन में सोना, भारी पदार्थों का सेवन हानिकर है। क्रिमिज शिरोरोग में क्रिमि-रोग की तरह पथ्यापथ्य पालन करना।

स्त्री रोग—प्रदर-रोग मे दिन को पुराने चावल का भात, मूँग, मसूर, चने की दाल, केले का फूल कच्चा केला, करेला, गूलर, परवल, पेठा आदि की तरकारी। दो-तीन दिन के अंतर में सहने पर स्नान। ज्वराश हो, तो केवल दूध का पथ्य।

कफजनक द्रव्य, मिठाई, लाल मिर्च, अधिक नमक, दूध, आग मे तापना, धूप मे फिरना, ओस मे बैठना, दिन मे सोना, रात को जागना, अधिक परिश्रम, घूमना, शराब, चढ़ना-

प्रकरण ६

परिचारक

जो पुरुष या स्त्री रोगी के पास उसे दवा, पथ्य आदि देने और उसकी हर तरह सेवा करने को हर समय हाज़िर रहे, उसे परिचारक कहते हैं।

परिचारक कोई घर का आत्मीय बंधु, जैसे माता, पिता, भाई और स्त्री-पुत्र आदि अथ भक्तिमान् शिष्य या नौकर होना चाहिए। नए, मूर्ख और टके के बदले काम करनेवाले प चारक जहाँ तक बने न रखना चाहिए।

जहाँ तक बने परिचारक का भार स्त्री को देना चाहिए। रोगी की धर्मपत्नी और मा सर्वश्रेष्ठ परिचारक हैं। और स्त्री रोगी के लिये माता और पिता सर्वश्रेष्ठ परिचारक हैं। पु की अपेक्षा स्त्री का स्वभाव कोमल, मधुर और प्रेम-पूर्ण दयार्द्र होता है, इसलिये वह रो के लिये पुरुष की अपेक्षा अधिक आत्मत्याग कर सकती है।

अँगरेज़ी अस्पतालों में परिचारिका स्त्रियाँ होती हैं, जो नर्स कहाती हैं, इन्हें रोगी सेवा का काम सिखाने के बड़े-बड़े स्कूल हैं, जहाँ इन्हें वर्षों यह विद्या सीखनी पड़ती है ये इतनी योग्य और चतुर होती हैं कि इन्हें देखकर, इनकी बात सुनकर ही रोगी का आधा रोग उड़ जाता है।

परिचारक के गुण

(१) रोगी को सच्चे मन से प्यार करनेवाला हो। नहीं तो मन लगाकर रोगी की सब तरह की सेवा न करेगा। (२) रोगी की रक्षा में तत्पर हो। नहीं तो बदपरहेज़ी से रोगी को न रोक सकेगा। इसके सिवा सन्निपात की बेहोशी मे या दस्त-पेशाब की हाजत में रोगी चाहे जब शीत हवा में उठ खड़ा होगा और नुकसान उठावेगा। (३) रोगी से घृणा न करनेवाला हो। नहीं तो उसके मल-मूत्र, थूक आदि न उठावेगा। ऐसी दशा में रोगी और भी मैला और घृणित हो जायगा। (४) बलवान् हो, नहीं तो दिन-रात जागने से ही फिर तुरत उसकी एक खाट रोगी की खाट के पास पड़ने की नौबत आएगी। न वह वक़्त-बे-वक़्त दौड़-धूप कर सकेगा। (५) हँसमुख हो। जिसे देखते ही रोगी के मन में उत्साह आ जाय, वह अपने रोग की भयंकरता, दुःख की अकुलाहट सबको भूल जाय। नहीं तो उसको मोहर्रमी सूरत देखते ही रोगी और उदास हो जायगा। (६) धैर्यवान् हो। रोग-जैसे भयंकर शत्रु के साथ युद्ध करने के लिये बड़े धैर्यवान् की आवश्यकता है। रोगी की दशा चाहे बिगड़ती ही चली जाय, पर शांति के साथ चिकित्सक के आज्ञानुसार काम कि

से उठ-बैठ नहीं सकता। वायु भड़कने से या अन्य वेगों से रोगी थक जाता है। जब पू थकान और पस्ती आती है, तो सिवा समझदार परिचारक के और कोई नहीं समझ सक कि अब रोगी प्रकृतिस्थ है।

सच बोलना सहज काम नहीं है। जो लोग झूठे नहीं हैं, वे भी प्रायः झूठ बोल करते हैं, और मज़ा यह कि वे यह नहीं जानते कि वे झूठ बोल रहे हैं। उनके सामने को बात हो रही हो, तो वह उसका सच्चा उत्तर देने के स्थान में मनमाना देंगे या अधूरा दें अथवा कह देंगे कि मुझे मालूम नहीं है। असल बात यह है कि उन्होंने उस घटना को ध्यान से नहीं देखा, जब वह घटना हो रही थी, तब उनका ध्यान और कहीं था, जिस परिचारक में यह मन चले पनकी बीमारी हो, वह रोगी की जान का गाहक होता है, वह बैठा तो रहता है रोगी के पास, पर मन उसका लाल मुँह के बंदर की तरह दुनिया में ऊधम मचाता रहता है, ऐसी दशा में बिना कान पर ढोल बजाए तो वह सुनने से रहा। रोगी की मिनिन मिनिन तो एक ओर रही। दूसरे एक और झक्की आदमी होते हैं, जो सेर को मन, राई को पहाड़ बना देते हैं, बिना लंबी-चौड़ी भूमिका और नमक-मिर्च के उनके मुँह से बात तक नहीं निकलती। कभी-कभी अपनी चोरी छिपाने को रोगी के संबंध में चिकित्सक को बहका देते हैं। जैसे किसी को नींद आ गई, पड़कर जो चित हुए, तो पहर दिन चढ़े उठे। रात-भर रोगी चिल्लाया किया, अंत में स्वयं उठकर पेशाब करने गया, मनमाना पानी पिया, और क्रोध किया, छटपटाया, अब चिकित्सक ने पूछा—कहो, रात को रोगी को नींद कैसी आई? तो "आप मरे जग प्रलय" की मसल पर आपने फ़ौरन् कहा—"जी हाँ, ख़ूब नींद आई, अभी उठा है।" इसके अनंतर चिकित्सक ने रोगी को देखा, नाड़ी बेचैन है, आँखें चढ़ी हैं हरारत है इत्यादि। तो बस अनर्थ हो गया, और रोगी आराम होने में के बजाय १५ दिन पीछे फेंक दिया गया।

भूख कैसी है? या कितना खाया? यह जानने की अपेक्षा यह जानना ठीक है कि क्या खाया? क्योंकि बहुत खाने या कम खाने का आधार भूख पर नहीं है, पसंद पर है। भाती हुई वस्तु और की अपेक्षा अधिक खाई जाती है। कितनी ही बार रोगी पूछने पर कहता है कि "मुझे भूख नहीं है।" पर इसके कारण कई हैं? रसोई अच्छी नहीं बनी या उसे पथ्य से अरुचि है, या बेवक़्त खाया था, या भूख कम है, इन चारों कारणों को रोगी 'भूख नहीं है' इस एक वाक्य में प्रकट करता है, पर वास्तव में ये चारों कारण भिन्न-भिन्न हैं, और एक ही उपाय से दूर नहीं हो सकते। पर इन चारों की खोज करने ही से इनकी बारीकी का पता चलेगा।

कुछ लोगों का ख़याल है कि परचारक का काम यही है कि रोगी को शारीरिक श्रम से बचावे, पर मैं यह कहता हूँ कि शारीरिक श्रम तो उससे कराना भी चाहिए, पर मानसिक श्रम से सर्वथा बचावे और देखे कि उसके शरीर में जो अचानक फ़र्क़ पड़ा है, उनका कारण मानसिक परिश्रम तो नहीं है।

बच्चों की सँभाल में और भी विचार और मानसिक शक्ति ख़र्च करनी पड़ती है। वे

प्रकरण ७

आवश्यकीय ज्ञान

इस प्रकरण मे उन बातो का साधारण ज्ञान बताया जाता है, जिनको जानना रो की सेवा करनेवालो को ज़रूरी है।

नाड़ी

नाडी पुरुष की दाहने हाथ की और स्त्री की बाएँ हाथ की देखी जाती है, क्योंकि पुरुष दाहने और स्त्री मे बाएँ अंग की प्रधानता है *।

नाडी देखने की विधि यह है कि अँगूठे की जड मे ३ उँगली रखकर देखना चाहिए।

इसकी परीक्षा कठिनतर है, बड़े-बड़े अनुभवी वैद्यों को भी नहीं आती, पर ह आवश्यक तथा साधारण ज्ञान लिखते है—

तंदुरुस्त मनुष्य की नाड़ी हल्की, साधारण और समान गति से चलती है।

तंदुरुस्ती की दशा मे उम्र के हिसाब से नाड़ी की गति इस प्रकार होती है—

आयु		नाडी की चाल १ मिनट मे			
तुरंत का जन्मा बालक—	१४०	से	१३०	बार	तक
१ वर्ष तक का	१३०	से	११५	,,	,,
२ ,, ,, ...	११५	,,	१०५	,,	,,
३ ,, ,, ...	१०५	,,	९५	,,	,,
४ से ७ तक... ...	१००	,,	९०	,,	,,
८ ,, १४ ,, ...	९०	,,	८०	,,	,,
१५ ,, २१ ,,..... ..	८०	,,	७५	,,	,,
२२ ,, ५० ,, ...	७५	,,	७०	,,	,,

बुढ़ापे मे ७० से कम चला करती है।

यह एक मोटा-सा हिसाब है। एक ही उम्र के बलवान् और दुर्बल व्यक्ति की नाड़ी में थोड़ा अंतर हो सकता है। पुरुष और स्त्रियों की नाड़ी मे भी थोड़ा भेद होता है। इससे

* पैर के टखनों, कठ, नाक और लिंगेंद्रिय में भी नाडी ज्ञान होता है, जब मुमूर्षावस्था में हाथ की नाड़ी साफ न दीखे, तो इन नाडियों को टटोलना चाहिए।

लकीरों के बीच में चार छोटी लकीरें बनाकर ५ बराबर फ़ासले बनाए गए हैं। ऐसे फ़ासले से २ दशमलव या डिग्री का पाँचवाँ भाग प्रकट होता है। उससे गर्मी इस तरह जाती है—

बग़ल में यदि थर्मामीटर लगाया जाय, तो बग़ल का पसीना पोछकर ऐसे ढंग से बगल में लगाओ कि पारेवाला भाग अच्छी तरह दबा रहे। दाहनी बग़ल में लगाओ और तक थर्मामीटर लगा रहे, रोगी को चुपचाप पड़े रहने को कह दो। जितने समय का थर्मा हो, उतने समय के बीतने पर निकालकर गर्मी देख लो।

मुँह में लगाने की तरकीब यह है कि पारेवाला भाग ज़बान के नीचे दबाया जाय होठ बंद रक्खे जायँ। बग़ल की अपेक्षा मुँह में एक डिग्री गर्मी ज़्यादा होती है। ५ डिग्री ऊपर गर्मी होने से रोगी के प्राण-नाश की सभावना होती है।

अरिष्ट-ज्ञान

प्राचीन सिद्धर्षियों ने अत्यंत गहन अरिष्ट-लक्षण बताए हैं, जिनके द्वारा पहले ही रोगी की मृत्यु का ज्ञान हो जाता है। हम संक्षेप से ऐसे कुछ लक्षण लिखते हैं—(१) जिस रो के केश-रोम विना तेल लगाए ही ऐसे हो जायँ, मानो तेल-मालिश की गई है, वह रोगी नहीं सकेगा। (२) जिसके नेत्र चंचल, स्तब्ध अथवा गढ़े में धस जायँ, या बाहर निकल पड़ें टेढ़े हो जायँ या फैल जायँ, सिकुड़ जायँ, जिसकी भौं सिकुड़ जाय, जिसकी दृष्टि उद्भ्रात जाय, कम दीखने लगे या अधा हो जाय, नेवले के समान जिसके नेत्र हो जायँ या कबूतर समान हो जायँ, जिनमें से पानी बहने लगे, पलक के बाल झड़ जायँ, जिसकी नाक फै जाय, सिकुड़ जाय या टेढी हो जाय, अथवा नाक में फुंसियाँ हो जायँ, पैरो से सूजन शु होकर ऊपर शरीर पर फैले, जिसके होठ फैल जायँ, अर्थात् मुँह बंद न हो सके, होठों का र पके हुए जामन के समान हो जाय, जिसके दाँत फीके, काले, लाल और मैल से भरे हुए हो जायँ, अचानक विना कारण जिसके दाँत गिर जायँ, जिसकी जीभ टेढी, मोटी, काली, सु और लिपी-सी हो जाय, वह रोगी अवश्य मरेगा। (३) जिसकी गर्दन टूट जाय, जिसक पीठ टूट जाय, अर्थात् जो बैठ न सके, जिसके मुँह में भोजन का कौर दिया जाय, तो उसे चबा न सके, वह रोगी मरेगा ही। (४) जिसके अंग विना कारण ही हल्के या भारी हो जायँ, जिसके रोम-कूपों से ख़न निकलता हो, जिसकी लिंगेंद्रिय लकड़ी के समान हो गई या सिकुड़ गई हो, जिसके अंडकोश बिल्कुल लटक जायँ, उपर्युक्त सब रोगी १५ दिन से अधिक नहीं जी सकते। (५) जिस पुरुष के माथे में विना कारण दूज के चंद्रमा के समान टेढी रेखाएँ पड़ जायँ, अथवा जिस पुरुष के शरीर पर स्नान करने या जल मे तैरने के समय पानी कमल के पत्ते की तरह अलग दीखे, उनकी ६ मास की आयु शेष समझना। (६) जिसके शरीर की नसें हरी हो जायँ, और रोम-कूप सिकुड़ जायँ, और वह खट्टी चीज़ पर रुचि करे, तो उसे मृत्यु के मुख में ही समझना चाहिए। (७) जिसके मुख

रक्त-पित्त—रक्त-पित्त उस रोग को कहते हैं, जिसमें मुँह, नाक, कान, नेत्र, गुदा, इन मार्गों से ख़ून जाना है। ऐसे रोगी का रक्त काला, रग-बिरंगा, ताँबे के रग का, ह रंग का, हरा हो, या रोम-कूप से रक्त निकले, कठ, मुँह और हृदय एक ही समय में हो जायँ, कपडे पर से दाग न छुटे, रक्त में सड़ी गध आवे, ख़ून भयंकर वेग से आवे, वृद्ध हो अथवा उसे ज्वर, पाडु, उल्टी, खाँसी, सूजन या दस्तों की बीमारी हो, तो वचना असभव है।

श्वास, खाँसी, ज्वर, उल्टी, प्यास, दस्त ये लक्षण एक साथ जिस रोगी को होंगे, कदापि बच नहीं सकेगा।

क्षय—क्षय के रोगी को पसली में दर्द, अफारा, ख़ून की उल्टी, कंधों में जलन लक्षण हों, तो उसकी मृत्यु होगी।

अतिसार—मास के धोवन के समान दस्त हों, तेल, घी, चर्बी, दूध, दही, शराब समान दस्त हों, स्याही, मवाद, पानी और शहद के समान दस्त हों, तो रोगी नहीं बच सक

पथरी—पेशाब रुक जाय। अंडकोष सूख जायँ, दर्द ज्यादा हो, तो बचना कठिन है

गुल्म—जिसके दस्त, पेशाब और अपान वायु बंद हो जायँ, श्वास, सूजन, हिच भ्रम, मूर्च्छा, वमन, अतिसार हो, रोगी दुर्बल हो, आँखों के नीचे सूजन आ गई हो, लिंगों टेढ़ी पड गई हो, चमडी और शरीर शिथिल हो गया हो, जुलाब देने से अफारा कम हो फिर फ़ौरन् ही अफारा हो जाय, ऐसा गुल्म-रोगी नहीं बच सकता।

पांडु-रोग—सूजन तमाम शरीर पर हो, आँख और नाख़ून पीले हों, वह नहीं बचेगा

सूजन का रोगी—तद्रा (झपकी), दाह, अरुचि, उल्टी, मूर्च्छा, अफारा, अतिसार हो। जिस पुरुष की सूजन पैर से ऊपर को चली हो और स्त्री की मुख से पैर को चली गुप्तांग और कोख में भी सूजन हो, शरीर पर रंग-बिरंगी रेखाएँ दीखने लगें, वह रो मरेगा।

कुष्ठ—जिसके अग गल गए हो, नेत्र लाल हो गए हों, स्वर बैठ गया हो, अग्नि मद हो कीड़े पड गए हों, प्यास और पतले दस्त होते हों, शरीर सुन्न हो गया हो, वह कोढ़ी आरा नहीं होगा।

वायु की बीमारी के रोगी, मृगी के रोगी, कोढ़ के रोगी, रक्त-पित्त के रोगी, उदर-रोगी क्षय-रोगी, गुल्म-रोगी, प्रमेह-रोगी, इनका रोग यदि कम भी हो, परंतु कमज़ोर हो गए हों तो भी इनके बचने की आशा नहीं रहती। कफ-ज्वर के रोगी को पौ-फटने के समय ख़ू पसीना टपके, तो उसका जीवन दुर्लभ समझना चाहिए।

भगंदर—जिसके मल, मूत्र और अपान वायु के साथ कीड़े निकले, ऐसे भगदर-रोगी की मृत्यु निश्चय है।

वमन के अयोग्य रोगी—गर्भिणी स्त्री, भूखा, रूखे शरीरवाला, दुखी बाल दुर्बल, मोटा, हृद्रोगवाला, चोट लगने से कमज़ोर, प्रथम ही से वमन करता हुआ, बीमारीवाला, रतौंधीवाला, जिसके पेट में कीड़े हों, जिसे सूखी डकार आती हो, जिस बैठ गया हो, जिसे पेशाब जलन से आवे, पेट के रोगी, वायगोलेवाले, बवासीरवाले भूखवाले, अफरे में, भ्रम-रोगी, अष्ठीला और पसली में दर्दवाले तथा वायु के रोगी को न करावे।

ऐसे रोगी अजीर्ण से परेशान हो या इन्होंने विष खा लिया या इनका कफ बढ़ र तो इन्हें मुलहठी के पानी या ऐसी ही किसी हल्की वस्तु से वमन करावे।

विरेचन के योग्य रोगी—वायगोला, बवासीर, फोड़ा-फुंसी, झाईं, कम (पीलिया), जीर्णज्वर, पेट के रोग, विष-रोग, वमन, विद्रधि, रतौंध, फूला, जाला, प कृमि, वात-रक्त, नाक-मुखादि से रक्त बहना, क़ब्ज़ और आतशक के रोगी को जुला अच्छा है।

विरेचन के अयोग्य रोगी—मंदाग्नि, चोट या ज़ख़्म की दशा में, अतिसार में, अधोमार्ग से रक्त आने पर, शोष रोगी, कठिन कोठेवाले, ये विरेचन के योग्य नहीं हैं।

स्वेदन के योग्य रोगी—श्वास, कास, ज़ुकाम, हिचकी, अफारा, बध, स्वर-भेद, रोग, भारीपन, कफ के रोग, हड्फूटन, कमर, पार्श्व, पसली, कोख और ठोढ़ी के जकड़ पर, अंडकोष के बढ़ने पर, आमवात, मूत्रकृच्छ्र, गाँठ (अर्बुद), रसौली आदि रो स्वेदन अर्थात् बफारा देने से गुण होता है।

स्वेदन के अयोग्य रोगी—बहुत मोटे, रूखे अंगवाले, कमज़ोर, बेहोश, चोट से ज़ोर, शराबी, आँख और पेट की बीमारीवाले। विसर्प, कोढ़ और प्रमेह के रोगी, गर्भ रजस्वला और प्रसूति इनको बफारा न दे।

दाँतन के अयोग्य रोगी—अजीर्ण, उल्टी, श्वास, खाँसी, ज्वर, लकवा, प्यास, मुँह हृदय, नेत्र, सिर और कान के रोगवालो को दाँतन नहीं करनी चाहिए।

स्नान के अयोग्य रोगी—ज्वर, अतिसार, नेत्र-रोग, कान के रोग, बादी के अफारा, ज़ुकाम, अजीर्ण इन रोगों मे तथा भोजन के बाद सदैव स्नान निषिद्ध है।

पान न खाने योग्य रोगी—ज़ख़्मी, पित्त का रोगी, जिगर का बीमार, जिसका निकल गया हो, रूखा हो, आँखे दुख रहा हों, ज़हर खाया हो, बेहोश हो, नशा पिया शोष रोगी हो, उसे पान न खाना चाहिए।

तेल-मालिश न कराने योग्य रोगी—कफ के बीमार, जुलाब लिए हुए या फ़स्त खु वाए हुए तथा बदहज़मी के बीमार को पांडु रोगी को तेल-मालिश नहीं करना चाहिए।

रोगी की शारीरिक स्वच्छता

रोगी के शरीर को साफ़ रखना रोग मिटने के लिये अत्यावश्यक है। शरीर से हमे

रोगी के स्नान के विषय में एक बात विचारने की यह है कि पीने के पानी में सावधानी की जाती है, वही स्नान के पानी के विषय में होनी चाहिए। पीने के लिये और हल्का पानी पसंद किया जाता है, उसी तरह स्नान के लिये भी हल्का पानी होना चाहिए। खारी पानी मे चूने का खार ज़्यादा है, इसलिये उसमें नहाने से बदन खु लगता है। बदन का मैल भी दूर नहीं होता। ज़ख्म धोने के लिये खारी पानी लिया तो उसका भरना तो दूर रहा, वह और बिगड़ेगा। जहाँ हल्का पानी न मिले, वहाँ भ का या बरसात का पानी लेना चाहिए। उबालकर पानी को ठंडा करने से उसका भारीपन नष्ट हो जाताहै, भारी पानी से यदि साबुन लगाकर स्नान किया जाय, तो सा का तेल, पानी का चूना, पसीना मिलकर शरीर स्वच्छ होने की अपेक्षा उस पर इन पद के मिश्रण का एक वार्निश हो जाता है।

रोग-मुक्त होने पर

अब तक हमने यह बताया है कि रोगी होने की दशा मे रोगी कीकै सी-कैसी सम्ह रखनी चाहिए। अब रोग-मुक्त होने पर कैसी सम्हाल रखनी चाहिए, यह बताते हैं। जो मनु इस बात पर ध्यान नहीं देते, वे पिछड़-पिछड़कर कई बार रोगी होते है। नीचे लिखी बा पर ध्यान देना चाहिए।

बीमारी की दशा मे यदि रोगी का मन किसी चीज़ पर चले और वह उसे दे जाय, तो कुछ ज़्यादा नुकसान नहीं होता, परंतु बीमारी के बाद की कमज़ोरी में दे देने मे भा हानि होती है।

रोग से उठने पर रोगी को खाने ही की लग जाती है। जो चीज़ उसे पसंद होती है, उस लिये उसका जी ललचाने लगता है। मिलने पर भी थोडे से उसकी तृप्ति नहीं होती। इसक फल यह होता है कि रोग का लौटकर भयानक आक्रमण होता है। इसलिये बिन चिकित्सक के पूछे आराम होने के बाद भी जब तक कि पूर्ण रीति से शक्ति न आ जाय, कोई चीज़ रोगी को खाने को न दी जानी चाहिए।

रोगी की दशा बच्चे के समान हो जाती है। यह बिल्कुल धैर्य-हीन और आत्माभिमान-शून्य हो जाता है। वह बच्चों और नौकर-चाकरो से ख़ुशामद करके और चुरवाकर चीज़ें मँगाकर खा जाता है।

दूसरी बात यह है कि रोगी खाट मे पड़े-पड़े बिल्कुल तंग हो जाता है, इसलिये आराम होते ही अपनी शक्ति की परवा न कर ख़ूब घूमना शुरू करता है। खुली हवा में नंगे बदन बैठता है। घंटों गप्पें मारता है। कोई नाविल पढने लगा, तो ४-४ घंटे पढ़ता ही जाता है। उसे गर्म कपडे पहनने की भी चिंता नहीं रहती। फलत शरीर मे जल्दी शक्ति नही आती। इसलिये अशक्त रोगी को बच्चों की तरह सम्हालना चाहिए। उसका शरीर और मन दोनो कमज़ोर हो जाते हैं, इसलिये जब तक दोनो बलवान् न हो, उसे सम्हालना चाहिए।

अध्याय अठारहवाँ

तपेदिक़

प्रकरण १

क्या तपेदिक़ असाध्य है?

तमाम दुनिया में हर साल १० लाख ९५ हज़ार स्त्री-पुरुष इस भयंकर रोग में
हैं। यानी प्रतिदिन ३००० और फी मिनट २ मनुष्य इस महारोग मे घुल-घुलकर अत्यत का
प्राण खोते है। इस रोग की असाध्यता इतनी प्रसिद्ध हो गई है कि ज्यों ही रोगी या उ
घरवालों को मालूम हुआ कि वह इस पाप-रोग में फँस गया है, तो वे जीवन से एकदम नि
हो जाते हैं।

कुछ दिन पहले संसार के बड़े-बड़े चिकित्सकों की भी यही राय थी कि इस रोग
फँसा हुआ रोगी किसी तरह नही बच सकता, परंतु निरंतर की खोज और परिश्रम
अब हाल ही मे यह भली भाँति सिद्ध हो गया है कि सब प्रकार का तपेदिक न केवल
ही सकता है, बल्कि अनेक हालतों मे बिल्कुल दूर भी हो सकता है। जगत् के बड़े-
चिकित्सक जो पचासों वर्षों से निस्स्वार्थ भाव से जी-जान लडाकर इस मनुष्य-मात्र के शत्रु
युद्ध कर रहे थे, बहुत कुछ सफल हुए है। प्रत्येक देश के विद्वान्, मूर्ख, धनी और निर्ध
वैद्य और डॉक्टरों को उचित है कि सब स्त्री-पुरुष इस सर्व-साधारण के शत्रु से होशियारी
लडना सीखें, और आवश्यक होने पर दृढ़ता से लड़े।

तपेदिक क्या है?

यह एक पुरानी बीमारी है, जो फेफड़ों में बहुत सूक्ष्म कीटाणुओं की शकल में पै
होती है। ये कीटाणु गोल होते है, और कभी-कभी बिना ख़ुर्दबीन के भी देखे जाते हैं
किसी-किसी रोगी के शरीर मे तो ये करोड़ों की गिनती में होते है। फेफड़ों मे घाव डाल
डालकर ये उसे धीरे-धीरे नष्ट कर देते हैं। इनसे एक विकराल ज़हर उत्पन्न होता है, जि
"टोक्सिन" कहते हैं। ख़ुर्दबीन से ये कीडे थूक मे गोल डंडियों के आकार के पाए जाते है
इनके साथ ही एक और रंगीन-सा पदार्थ देख पड़ता है।

तपेदिक के प्रधान चिह्न

खाँसी, कफ थूकना, ज्वर (हरारत सूरज छिपने के समय बढ़ती है), साँस लेने मे

प्रकरण २

सौंदर्य के लिये आवश्यक बातें

सौंदर्य-वृद्धि के लिये सबसे प्रधान आवश्यकता दूर देशस्थ स्त्री-पुरुषों के रक्त-सम्मेलन की है। अत्यंत प्राचीन काल में काले अनार्य और गौर वर्ण आर्यों के सम्मेलन से अति रूपवान् नस्ल उत्पन्न होने लगी थी। इधर सैकड़ों वर्षों से भारत जाति-पाँति के बंधनों का शिकार हो रहा है, और इस कारण प्रत्येक जाति के रक्त-सम्मिश्रण की कमी के कारण उसका सौंदर्य नष्ट हो रहा है।

यदि बंगाली कन्याएँ पंजाबी युवकों को ब्याहें, तो वे ऐसी प्रतिभाशाली, सुंदर और मेधावी संतानें उत्पन्न कर सकती हैं, जिनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि काश्मीर और उत्तर-प्रदेश के पहाड़ी प्रदेशों की कन्याएँ दक्षिण के मेधावी कृष्णवर्ण युवकों को ब्याही जायँ, तो एक ऐसे मनोहर सलोने रंग का प्रादुर्भाव हो जाय कि जिसे देखकर आश्चर्य हो। आफ्रिका की हबशी स्त्रियों से जिन योरपियन पुरुषों ने विवाह-संबंध किए, उनकी संतान बहुत सुंदर हुई।

सौंदर्य-वृद्धि में बौद्धिक उन्नति भी परम सहायक है। शिक्षा, सभ्यता और शिष्टाचार भी सौंदर्य को परिमार्जित करता है। विद्या के प्रकाश से ही सद्विचारों का मन में उदय होता है, और उससे जो वदनच्छाया बनती है, उसका रूप पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है।

इन दो प्रमुख बातों के सिवा सौंदर्य की दृष्टि से शरीर में सम विभाग होना अति आवश्यक है। एक ओर का गाल चपटा और दूसरी ओर का गाल नहीं होना चाहिए। एक आँख छोटी, और दूसरी बड़ी नहीं होनी चाहिए। एक आँख छोटी और दूसरी बड़ी नहीं होना चाहिए। यही बात प्रत्येक इंद्रिय के विषय में भी समझ लेनी योग्य है। मन बिगाड़ के सिवा अंगों का सुडौलपन भी बड़े महत्व की चीज है, कुबड़ा या बौना व्यक्ति किसको भला प्रतीत होता है।

चौथी बात सौंदर्य के लिये औषधि है। नैतिक निरूपण शरीर के सौंदर्य को बढ़ाता है। जिस रोग का कोई भी अंग अच्छा नहीं लगता, आँख, माथा, कान, नाक, मुँह आदि कोई भी किसी अंग को न सोहिए।

इसलिए शरीर के सौंदर्य के लिये चरित्र सुधारना चाहिए। काले रंग में रंगों का सूक्ष्म उतार-चढ़ाव नहीं प्रकट होता। शरीरों में गालों की मुद्रा की बनावट का मानसिक भावों के साथ घनिष्ठ संबंध होता, उससे सौंदर्य में सजीवता पैदा करता है।

कभी-कभी बेबस दस्त-पेशाब निकल जाता है। यह रोग शुरू में बेतकलीफ-सा मालूम देता है, पर धीरे-धीरे जोड निष्क्रिय हो जाते हैं और हड्डियाँ पककर घुलने लगती हैं। कभी-कभी अंग कटवाने पडते हैं। प्रारंभिक लक्षण ये हैं कि जिस बाँह व टाँग मे इसका आक्रमण हो वह डुंडी हो जाती और काम करते समय जल्द थक जाती है। जोडों पर ज़रा भी ज़ोर पडा कि तत्काल सख्त पीडा होने लगती है। कमर के बाँस पर जहाँ रोग के कीड़े लगते हैं, वहीं रोग के लक्षण दीखने लगते हैं। जैसे यदि गर्दन पर आक्रमण हुआ है, तो निगलने तथा श्वास लेने में कष्ट होगा या सूखी खाँसी सताएगी। यदि पीठ के भाग में बाँस की किसी कशेरुका में कीड़ा लगा है, तो ऐसा मालूम होगा कि छाती को किसी ने कसकर बाँध दिया हो। साथ ही पाचन-शक्ति भी नष्ट हो जायगी। यदि कमर के नीचे के भाग में बाँस मे रोग हुआ है, तो मूत्राशय तथा निचली अँतडियो मे दर्द होने लगता है। पेशाब ज़्यादा आने लगता है और पुट्ठो की ओर दर्द हो जाता है।

यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि इनमें से कोई लक्षण प्रकट हों, तो तत्काल उत्तम चिकित्सा करने ही से असाहिज होने से बचाव हो सकता है।

हड्डी और कंठमाला के दिक का ज़ोर ख़ासकर बाल्यावस्था में ही होता है। कंठमाला से पीडित बालक प्राय पीले रंग, पिलपिली त्वचा और ढीली मांस-पेशियोंवाला होता है। कंठ में गिल्टियाँ सूजी रहती हैं। चमडी पर फोडा-फुंसियों का निकलना, आँखें दुखना, कान बहना इत्यादि लक्षण अधिक पाए जाते हैं। ये बच्चे प्राय स्वभाव ही से सुस्त रहते हैं। कोई घबराहटवाले या चमक उठनेवाले होते हैं। इनकी चमडी के भीतर नसें चमक करती हैं। कुछ बालकों को ज्वर आने लगता है।

आँतों की दिक— यह रोग बहुत फैल रहा है। बंबई तो इस रोग का घर है। यह रोग अतिशय भयंकर और कष्टसाध्य है। इस रोग मे— शुरू मे—दस्तों में कब्ज, मसूढे और दाँतों में ख़ून, पीब जाना, गले और ज़बान पर छाले पडना, छाती जलना और कभी कभी खट्टी डकार या खट्टी वमन। अपचन और अंत में संग्रहणी का स्वरूप हो जाना, आवाज़ देकर कुछ चिकना, कुछ पतला मल आना। मूत्र की कमी, कभी कभी रात्रि मे ज्वर, मिज़ाज चिड़चिड़ा, शरीर रूखा, नाखन सफ़ेद और उन पर लकीरों का उभर आना। अंतिम अवस्था में पैरों या मुख से शुरू होकर सर्वांग शोथ।

सर्वांग क्षय— इस रोग मे छोटे-छोटे असख्य दाने सर्वांग में फैल जाते हैं। ये दाने बाजरे के समान होते हैं। प्रारंभ में मधुर ज्वर (मोतीझरा) के सब लक्षण मिलते हैं। शरीर निढाल रहता और सदा तप्त बना रहता। यह रूप भी बहुधा घातक होता है।

पुश्तैनी तपेदिक

लोगों का यह ख़याल झूठ है कि अक्सर तपेदिक माता-पिता से सीधी बच्चों को हो जाती है। और लोगों का यह विश्वास भी ग़लत है कि पुश्तैनी तपेदिक आराम ही नहीं

[illegible] होना न होना इस बात पर [illegible]
[illegible] सकती। असल बात यह है कि रोग का [illegible] [illegible] किया है।
[illegible] निर्भर नहीं है कि उसने रोग मा-बाप से विरासत में पाया है या [illegible] कारण और हैं। वे
कुछ बच्चों को मा-बाप से क्षय लगना पाया ज़रूर जाता है, पर [illegible] [illegible] रहा है [illegible]
हैं—जैसे बालक मा-बाप को [illegible] में उनके पास [illegible] [illegible] रहा है, [illegible]
मुँह चूमते रहे हैं। अथवा यह गंदे, [illegible] [illegible] फर्श पर [illegible] [illegible]
मा-बाप ने अक्सर थूक दिया है और वह थूक वहीं सूख गया है

तपेदिक पैदा होने के कारण

(१) नशे की चीज़ें ज़्यादा इस्तेमाल करने से। (२) [illegible] का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] किसी
[illegible] से। (३) गंदे और बीमारियों से, जो शरीर को दुर्बल बना देते हैं। [illegible] [illegible]
[illegible], मोतीझरा (टाइफ़ाइड ज्वर), चेचक, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] (कारबंकल) वग़ैरह-वग़ैरह। (४) [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] बनाना और उन तमाम धंधों से, जिनमें [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] है, या नाना प्रकार की धूल [illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible], सिलनहारे, सुनार, बोरी बनानेवाले, [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] करनेवाले, लकड़ी तथा पत्थर या धातु का काम करनेवाले। (५) [illegible] [illegible], उसके बच्चों का
[illegible], उसके पास सोने, सहवास करने, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करने, उसके बच्चों का

तपेदिक उत्पन्न करने के साधन

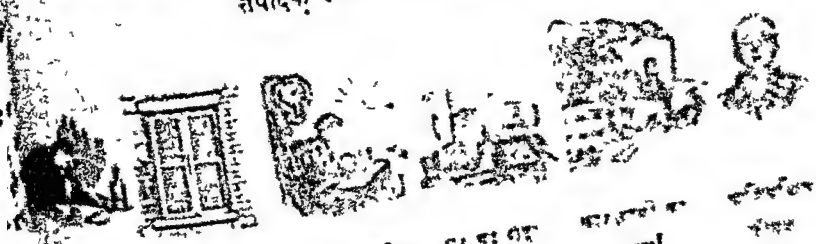

[illegible] गंदे घर रात्रि को [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] इस्तेमाल करने, [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] लिए, भोजन करने [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] इसी रोग के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
(६) [illegible] से भी यह रोग हो जाता है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हैं, और [illegible]
[illegible]। क्योंकि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] (७) [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] का कारण है। यदि [illegible] एक ही [illegible] के [illegible] [illegible]

कराना मुसलमानों का धर्म-कृत्य है, पर इससे बहुत जानें व्यर्थ चली जाती हैं। यदि होशिय और शीघ्रता से सुन्नत की जाय, तो यह एक मामूली बात है, पर बाद में अंग को चूमने जो किया है, वही हानिकर है। यदि चूमनेवाला रोगाक्रांत है, तो वह तत्क्षण रोग का बच्चे के ताज़े घाव में डाल देगा। (८) कुछ रोगी अपने थूक को निगल जाते हैं। वड़ा भयंकर है। ऐसा करना अँतड़ियों में तपेदिक के कीड़े पहुँचाना है। थूक निगलने अवश्य अँतड़ियों का दिक हो जाता है।

तपेदिक के कीड़े किस तरह जिस्म मे पहुँचते हैं

१ श्वास के साथ फेफड़ों में पहुँचकर।

२ ऐसे भोजन, फल आदि खाने से जिसमें रोग के कीड़ों का असर हो।

३ किसी घाव के द्वारा कीड़े रुधिर मे मिलने से।

दिक के रोगी जब तक ज्यादा बीमार नही हो जाते, चलते फिरते और काम धं करते रहते है। रोग चाहे कितना ही कम क्यों न हो, रोगी फिर भी थूक के साथ लाखों क बाहर फेकता है। अक्सर वह लापरवाही से चाहे जहाँ थूक देता है। वह सूखकर चूर्ण जाता और ज़रा-सी हवा लगने से धूल में मिल जाता है। जो मनुष्य ऐसी धूल-मि हवा में श्वास लेता है, वह अवश्य रोग का शिकार हो जाता है। अगर उसका शरीर उ नष्ट करने में समर्थ न हो।

तपेदिक फैलने के साधन

लापरवाही से थूकना — लापरवाही से झाड़ू देना — जूठा खाना — जूठा खाना

बेपरवाही से पड़े रहनेवाले थूक से उत्पन्न ख़तरे के सिवा रोगी की सूखी खाँ अथवा जल्दी वा ज़ोर से बोलने अथवा छींकने से जो अंश थूक का बाहर जाता है, भी रोगी के पास रहनेवालों के लिये ख़तरनाक है।

चाहे माता-पिता के दोष से, चाहे ज्यादा नशीली चीज़ों के सेवन से या और किसी रो की पीड़ा से शरीर यदि थोड़े समय के लिये निर्बल हो जाता है, वही इन कीटाणुओं शिकार हो जाता है।

१ किसी खुली जगह में एँड़ियों को मिलाकर शरीर को सीधा करके और हाथों को पहलू से लगाकर सीधी स्थिति में खड़ा करो। मुख बंद करके नाक से धीरे-धीरे साँस ले, जितनी हवा खींची जाय, खींचो। साथ ही भुजाओं को उठाकर कंधों के बराबर सीधा फैला लो। श्वास के द्वारा इस प्रकार खींची वायु को कोई ३-४ सेकंड तक रोके रहो। जब हवा को बाहर फेंको, तो बाहों को पहली हालत में ले आओ। बाहर हवा ज़ोर से फेंकनी चाहिए। इस कसरत का पूरा अभ्यास होने पर दूसरी करनी चाहिए।

२ इसमें भुजाओं को सिर की ओर ऊपर को उठाकर मिला दो, और पहली के समान श्वास की क्रिया करो।

३ यह कसरत हवा में तैरने के समान है। सीधे खड़े होकर अपने हाथ आगे को फैलाओ। जैसा तैरने के समय फैलाते हैं। दोनों हाथ मिले रहें, श्वास लेते समय भुजाओं को बाहर की ओर घुमाकर कमर पर दोनों हथेलियों को मिलाओ। कुछ सेकंड इसी तरह रहो। हवा को भीतर रोके रहो। जब श्वास को बाहर निकालो, तो हाथों को फिर आगे की ओर ले आओ। शुरू-शुरू में श्वास लेते समय पैरों की उँगलियों के बल उठने तथा उकसने और निकासी के वक्त उतरने में कुछ आसानी रहेगी।

४ नौजवान लड़के-लड़कियों तथा उन लोगों की, जिन पर दिक् का शक हो, बहुधा कमर झुक जाया करती है। उन्हें यह कसरत करनी चाहिए कि तनकर खड़े हो जायँ और अपने हाथ कमर पर इस तरह रक्खें कि अँगूठे आगे को रहें। फिर श्वास खींचता हुआ धीरे-धीरे पीछे की ओर झुकता जाय, जितना झुक सके। इस स्थिति में जितना श्वास रोका जाय, रोककर श्वास छोड़ता हुआ जल्दी से सीधा खड़ा हो जाय।

ध्यान में रखना चाहिए कि हमेशा आसान कसरतों से शुरू करो और जब तक वे अच्छी तरह न होने लगें, भारी कसरतों को मत करो। मश्क तब तक जारी रक्खो, जब तक कि श्वास लेना स्वभाव में न दाख़िल हो जाय। थके हुए हो, तो कसरत मत करो, न इतनी करो कि थक जाओ।

मुख से श्वास लेना—बालकों में और कभी-कभी बड़ों में भी मुख से श्वास लेने की आदत पड़ने का कारण बहुधा कंठ में व नाक में एक प्रकार के माहे का पैदा होना व कंठ का फैल जाना है। इन्हें किसी सर्जन से तुरंत दूर कराना चाहिए। ये आपरेशन बिल्कुल बेखटके हैं और इन माहों के रहने से बच्चों की सुनने और विचारने की शक्ति तथा शारीरिक उन्नति को बड़ा धक्का लगता है। श्वास की उपर्युक्त कसरतें ऐसे रोगियों के आपरेशन के बाद ही कराने से विशेष उपयोगी होंगी।

गाना और जोर से पढ़ना—कंठ और फेफड़ों को पुष्ट करने के लिये खुली हवा में गाना और ज़ोर से पढ़ना अत्युत्तम कसरतें हैं।

रात्रि में वायु की शुद्धि—बहुत लोगों का झूठा ख़याल है कि रात को हवा ख़राब

कमजोर मनुष्य कैसे दिक के हमले से बच सकता है ?

वे सब लोग जो नशा करने या दुराचार के कारण अथवा कठिन रोगों, आघातों से लहीन हो गए हों अथवा तंदुरुस्ती बिगाड़नेवाले रोज़गारों की तकलीफें भोग रहें हों, भी दिक के मरीज़ के पास न रहें। नशेबाज़ और विषयी लोगों के लिये इसके सिवा कोई लाज नहीं कि वे अपनी आदत बदल डालें। यदि उन्हें कोई मूत्र-रोग हो गया है, तो न बाँधकर उसे निर्मूल करें, जिससे दुबारा उसका हमला शरीर पर न हो। शुरू में मस्त मूत्र-रोग अच्छे हो सकते हैं। ये रोग अत्यंत संक्रामक और भयंकर हैं, जो तपेदिक के ोड़ों के पक्के मित्र हैं।

तपेदिक को नष्ट करने के साधन

ानी से स्वच्छ भोजन पौष्टिक खाद्य हाथ की स्वच्छता साफ़ बर्तन स्वच्छ हवादार शय्या
थूकना

तपेदिक के रोगी के थूकने का प्रबंध

तपेदिक का रोगी अपने थूक को बड़ी होशियारी से त्यागे और इस कार्य को धर्म-तुल्य मझे। छोटे-छोटे बच्चो के पास बहुत कम रहे, उनका मुँह न चूमे। उसे जानना चाहिए ि दिक का रोग चाहे कम हो या ज़्यादा, उसका थूक बीमारी फैलाएगा, अगर वह खकर चूर्ण बनने से प्रथम ही न नष्ट कर दिया जायगा। यदि रोगी चलता-फिरता है, उसे धातु या रबर के जेबी थूकदान हमेशा पास रखने चाहिए, और वे दिन में दो तीन र तेज़ गर्म पानी या किसी कीटाणुनाशक द्रव से धो लेना चाहिए, और उसमें आधा नी या कोई कीटाणुनाशक द्रव भरा रहना चाहिए।

घर पर या दूकान पर अथवा दफ्तर मे जहाँ उसे ज़्यादा बैठना है, ढकनेदार थूकदानों वंदोबस्त होना चाहिए। और वे धरती से कम-से-कम ३ फीट ऊँचे रक्खे रहें, जिससे मेंं कुत्ता-बिल्ली मुँह न डाल सकें, और मक्खी-मच्छरों से भी बचाव रहे।

मक्खियाँ थूक पर यदि बैठने दी जायँ, तो वे तीन प्रकार से बीमारियाँ फैलावेंगी। प्रथम क के कण अपने पाँवों में लगाकर ले जाती है और भोजन आदि पर बैठकर वहाँ ोड़ देती हैं। दूसरे यदि उसने थूक खा लिया है, तो मौक़ा पाकर वह खाने की चीज़ों पर

मित्र, कुटुंबी तथा नौकर आदि ज़रूरत से ज़्यादा रोगी के पास बहुत न रहें। उचित है कि खाँसते तथा छींकते समय अपने मुख या नाक के सामने सदा रूमाल रख

रोगी के समस्त वस्त्र (चादर, तकियों के गिलाफ, बनियान, जाकट, अँगौछा, इत्यादि) आवश्यकता से अधिक हाथ मे नहीं रखना चाहिए, बल्कि वे रोगी के पलँग से ही जल मे डाल देना चाहिए। इन कपड़ों को प्रथम अलग धोकर तब धोबी को देना च

तपेदिक का इलाज

क्या तपेदिक का भी इलाज है ? इस सवाल का जवाब गंभीरता-पूर्वक दिया जा है कि "हाँ", परतु यह रोग अताइयों से, पेटेंट दवाओं से, ऊट-पटाँग लटकों से या अन औषधियों से अच्छा नहीं हो सकता। वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर स्वच्छ ज धूप, श्रेष्ठ भोजन और आरोग्यकर रहन-सहन तथा ख़ास-ख़ास औषधियों की यता नितांत आवश्यक है।

रोगी की पूरी ख़बरगीरी करना, यदि नए लक्षण उत्पन्न हो जायँ अथवा पुराने ब या शीघ्र नष्ट न हों, तो तत्काल इलाज मे हस्तक्षेप करना, रोगी के खाने-पीने का प्रबंध करना सुयोग्य चिकित्सक का कर्तव्य है।

कभी-कभी रोगी आराम होकर बिना चिकित्सक की राय के संसार के सुख-भोग काम-धंधों मे तंदुरुस्त मनुष्य की तरह लग जाते हैं, उन पर फिर बहुधा रोग का आ होता है, जो अति भयकर होता है।

खुली हवा में दिक के रोगी को दिन-रात रहने का अभ्यास बढ़ाना चाहिए। आँग छत पर, बराडे या चबूतरे पर, बेत की आराम कुर्सी पर लेटे रहना या धीरे-धीरे ट रात को गर्मी मे खुली छत पर और बरसात-सर्दी मे खिडकी खुली छोडकर सोना आ है। थोड़े ही दिन में रोगी को खुली हवा मे रहने का अभ्यास हो जायगा और मौसम तबदीली, शीत-वर्षा आदि का उस पर कुछ भी प्रभाव न होगा। रोगी को कम से कम रात मे ६-७ घटे खुली हवा मे रहना ज़रूरी है।

आयुर्वैदिक दवाइयों मे स्वर्ण, मोती, अभ्रक-भस्म, च्यवनप्राश, द्राक्षासव, द्राक्षादि छाग-घृत, लक्ष्मीविलास रस, कनकसुंदर रस, राजमृगाक रस, हीरा-भस्म, वासावलेह, प्राश, सितोपलादि चूर्ण, स्वर्णमालती वसत आदि औषध तपेदिक पर भिन्न-भिन्न अवस्था मे अपना उचित प्रभाव दिखाती है।

यूनानी औषधियों में जवाहरात ख़ास तौर पर इस रोग मे इस्तेमाल होते हैं।

डॉक्टरी चिकित्सा मे कॉडलीवर आइल, सीरप ऑफ फ़ॉस्फेट ऑफ़ लाइम, और वस्तु दी जाती है। साथ ही नवीन शोध द्वारा कुछ इंजेक्शन भी प्रचलित हैं। भारत मे भु (नैनीताल के पास) और धर्मपुर (शिमले के पास) तपेदिक के लिये सेनीटोरियम भी जहाँ बहुधा रोगी जाते हैं।

अध्याय उन्नीसवाँ

हैज़ा

प्रकरण १

हमारे प्राचीन विचार और अंध-विश्वास

भारतवर्ष मे हैजा एक बहुत पुराना रोग है, और इसके नाम से लोग बहुत ही डरते हैं। मेरे ख़याल मे प्लेग को छोडकर और कोई ऐसा रोग नही है, जो हैज़े के बराबर भय उत्पन्न करता हो। भारतवर्ष मे मलेरिया, त्रिदोष, निमोनिया, संग्रहणी, चेचक आदि अनेक ऐसे रोग है, जिनसे लाखो मनुष्य प्रतिवर्ष मरते है। इन सबके मुक़ाबले मे हैज़े से होनेवाली मृत्यु-सख्या बिलकुल थोडी है, परंतु फिर भी लोग इसके नाम से काँपते है। कई बार अनेक ज़िलो मे इसका इतना ज़ोर हुआ है कि गाँव-के-गाँव इससे उजड गए हैं। कभी-कभी तो मुर्दों की इतनी भारी संख्या हो जाती है कि उनको उठाने और दाह करने के लिये मनुष्य नहीं मिलते। बहुधा ऐसा देखा गया है कि हैज़े से मरे एक आदमी का दाह करके लौटे कि तत्काल घर के एक और आदमी को हैज़ा हुआ, इससे कुटुंब की हिम्मत टूट जाती है। एक जवान हट्टे-कट्टे आदमी को आप अभी हँसते-खेलते देखे और कुछ घटों पीछे उसकी मृत्यु को ख़बर सुने, तो बेशक आपका शरीर ढीला हो जायगा। कभी-कभी यह रोग २-३ घटे में ही मनुष्य को मार डालता है। जो इसकी चपेट में आया, उसका बचना कठिन ही है। यही कारण है कि लोग इसके नाम से इतने भयभीत रहते हैं।

अफसोस की बात है कि हमारे देश के बहुत कम लोग इस महारोग फैलने के वास्तविक कारणों पर ध्यान देते हैं कि यह रोग ख़राब हवा, ख़राब पानी और ख़राब ऋतु के कारण फैलता है, पर लोग इस बात को न समझकर देवी-देवताओं को पूजते और यज्ञ-होम करते हैं। कहीं-कही काली आदि के मदिर में बकरे काटे जाते है और लोग समझते है कि इससे रोग भाग जायगा। देहातो मे देखा गया है कि जहाँ आस-पास के गाँव में हैज़ा फैला कि नीच जाति के लोग जो बहुधा भगत या स्याने कहाते हैं, पास के किसी देवी या चामुडा के मंदिर में इकट्ठे होकर अनेक पाखड करते हैं, उनमें एक तो सर हिलाता और मस्ती में बकता है, तब सब लोग समझते हैं कि देवी इसके सिर आ गई, तब सब लोग भक्ति-भाव से कहते हैं कि माता, हमारे ऊपर क्यों कोप किया है? तब वह हुंकार भरकर कहता है कि इस

का द्वार खुल गया, और योरपवासियों की अधिक आमदरफ्त होने लगी, फिर भी दो या तीन सौ वर्ष तक यह रोग योरप में नहीं गया। उन दिनों 'केप ऑफ़ गुडहोप' के रास्ते योरपवाले आते-जाते थे। पर ज्यों-ज्यों मुसाफिरी को सरल करने के रास्ते सोचे और खोजे गए और सीधी मुसाफ़िरी होने लगी, मिश्र और अरब समुद्र के रास्ते यह रोग योरप मे घुसा। फिर स्वेज नहर खुलने के बाद तो योरप में भी हमारी ही तरह यह रोग ख़ूब प्रचलित हो गया।

सन् १४३८ मे गुजरात के बादशाह अहमदशाह ने मालवे के एक शहर का घेरा किया। उस समय उसकी सेना मे यह रोग ऐसा फैला कि बंटाधार कर दिया, और उसे वहाँ से घेरा उठाकर भागना पडा। तब से अँगरेज़ी राज्य होने तक इस रोग के लिये कोई बडा बंदोबस्त नहीं किया गया। अँगरेज़ी सरकार ने इस रोग की जाति पर विशेष ध्यान दिया।

सबसे प्रथम सन् १७८१ ई० मे सरकार का ध्यान इस ओर गया। इस साल कर्नल पीयर्स बंगाल के ५ हज़ार सिपाही लेकर दक्षिण की तरफ सर आयर फूट की सेना से मिलने के लिये निकला। मार्ग मे ही फौज मे हैज़ा फूट पडा और ११४३ सिपाही इस रोग की भेंट चढ़े। कर्नल पीयर्स ने अपनी डायरी मे लिखा है कि ऐसी भीषण रीति से यमदूतों ने कहर बर्पा किया कि सब कोई यह समझता था कि प्रत्येक इस महामृत्यु के पल्ले पड़ेगा। इसी साल बंगाल में ख़ूब ज़ोर का हैज़ा फैल रहा था।

सन् १७८३ में हरिद्वार का कुंभ भरा, इसमें ऐसा भयंकर हैज़ा फैला कि २० हज़ार मनुष्य इसके चपेट में पिस मरे। इन दिनों मद्रास में इसका बडा ज़ोर था।

सन् १८१७ मे बंगाल के जैसोर परगने में ख़ूब हैज़ा फूटा, जिससे १० हज़ार मनुष्य मर गए। उसका आँखो देखा वर्णन डॉक्टर टिटलर लिखते है—

"बाज़ार में मरी फैल रही है। इसमे रोगी के प्रत्येक अंग मे दर्द और ऐंठन होती है, फिर चक्कर, बेहोशी, उल्टी और दस्त लगते है। रोगी का चेहरा चितातुर और शरीर अत्यंत निर्बल हो जाता है, और नाड़ी खो जाती है। जो ऐसे रोगी को प्रथम 'केलोमेल' की भरपूर मात्रा और पीछे अफ़ीम न दी जाय, तो रोगी २४ घंटे मे मर जाता है।"

उसी साल के नवंबर मास में तत्कालीन गवर्नर जनरल वारन हेस्टिंग्स की फौज में हैज़ा फैल गया। इन दिनों मराठों से अँगरेज़ों की लडाई हो रही थी और बुंदेलखंड में सिंध के किनारे उसका पडाव था, उस समय का वर्णन वारन हेस्टिंग्स ने अपनी डायरी मे इस तरह लिखा है—

"ता० १३वीं नवंबर, १८१७—कलकत्ता और दक्षिण के प्रांत में भयंकर हैज़ा फैल रहा है। छावनी में भी वह फूट निकला है। गंगा नदी के रास्ते चढ़कर यह रोग पटना, गाज़ीपुर, काशी और कानपुर तक पहुँच गया है। यहाँ तालाबों का पानी ही ज़्यादा पिया जाता है, जो कि

न हुआ था, वहाँ से चारो तरफ फैला। मोरीशस के पास 'आइल ऑफ़ फ्रांस' का टापू है। वहाँ के गवर्नर की चेष्टा से यह रोग वहाँ फैलने से रुक गया।

सन् १८२३-२४-२५ के साल में हैज़े का ज़ोर बहुत कम रहा। सिर्फ़ बंगाल मे थोड़ा-बहुत उपद्रव चलता रहा।

सन् २६ में फिर इसने जोर पकडा। सबसे ज्यादा ज़ोर दक्षिण बंगाल मे, ख़ासकर कलकत्ते के आस-पास के प्रदेश में, हुआ।

१८२७ ई० में वायव्य प्रात मे उसका ज़ोर बढ़ा, और राजपूताना और पजाब भर में फैल गया। उसके बाद भारत-भर मे जगह-जगह फैला, और अँगरेज़ी फौज मे बहुत स्थानों पर ख़ूब ज़ोर से फूट निकला।

१८२९ में लेफ्टिनेंट कोलिन, जो उस वक्त हिरात में था, लिखता है—"हैज़े का ज़ो तमाम अफगानिस्तान मे फैल रहा है। यह ख़ुरासान से ईरान में दाख़िल हुआ है। ईरा की राजधानी तेहरान बर्बाद हो गई है। बुख़ारा भी चौपट हो रहा। वहाँ से यह रोग रू की सरहद के औरतवर्ग नगर मे आने-जानेवाले व्यापारियो के द्वारा फैला है।"

सन् १८३० मे ईरान मे रोग का ख़ूब ज़ोर रहा, वहाँ से वह कास्पियन-समुद्र के रास्ते ताब्रीज और रेशी नगर मे दाख़िल हुआ। उसके पीछे टिफलिख और आस्ट्राखान में आया। वहाँ से मास्को और पश्चिमी रूस मे घुसा, इन दिनो पोलैंड और रूस मे युद्ध हो रहा था। इस सुअवसर पर पोलैंड मे भी इसके चरण पहुँच गए।

सन् १८३१ मे समस्त रूस मे हैज़ा फैल रहा था। वहाँ से स्वीडन मे उसका प्रवेश हुआ, शीघ्र ही आस्ट्रिया और जर्मनी की राजधानियों मे भी उसका प्रवेश हो गया। इन दिनो उत्तर-जर्मनी में कबूतर, हिरन और कुछ नदियो मे मछलियाँ धडाध मर रही थीं। यह अगस्त मास के लगभग की बात है। ऑक्टोबर के अत मे यह रोग हेबर्ग के रास्ते जहाज़ मे चढ़कर इँगलैंड पहुँचा। वहीं सैडरलैंड बदर मे जो लोग जहाज़ पर माल लादते-उतारते थे, उनमे फैला। फिर इँगलैंड मे जगह-जगह फैल गया। सन् १८३२ के जनवरी मे एडिनबरा मे, फर्वरी में लंडन मे और मार्च मे डब्लिन मे दाख़िल हुआ। इँगलैंड से केले के रास्ते फ्रांस में प्रवेश किया। इन दिनो पैरिस मे एक-एक दिन में ४-५ सौ मनुष्य मरने लगे। जून मे यह रोग डब्लिन से केनेडा के करीब के शहर मे फैला। डब्लिन से एक जहाज़ १७३ यात्रियो के साथ एप्रिल में चला। कार्क बदरगाह से निकलते ही उसमे हैज़ा फूट निकला। जिनमें ४१ मनुष्य क्वीबेक पहुँचते-पहुँचते मर गए। इन लोगो को क्वीबेक से थोड़े फासले पर एक टापू मे उतारा गया था, पर क्वीबेक से लोगों का जाना-आना बने रहने से यह रोग वहाँ फूट पडा। वहाँ से यूनाइटेड स्टेट्स न्यूयार्क और फिलडेलाफिया मे फैल गया। वर्ष के बीतते-बीतते अमेरिका के अधिकांश मे फैल गया।

१८३१ की बाबत—लेफ्टिनेंट वेल्स जो उस समय अरब-समुद्र की जाँच में लग रहे

वहाँ से यह रोग यूफ्रेटीस और टाइग्रीस नदी के ऊपर के देशों मे फैलता हुआ योरप में चला गया। उधर साल-भर से बुख़ारा और अफग़ानिस्तान मे जो बीमारी फैल रही थी, वह फैलते-फैलते लगभग इन्हीं दिनों में योरप मे पहुँची। तारीख़ ४ जुलाई १८४७ मे आस्ट्रा-खान में रोग के चिह्न देखे गए। वहाँ से औरनवर्ग, विन्नि, नधगोरोड, मास्को वगैरा शहरों में पहुँचा, और पीछे रूस के विशाल देश में चारो तरफ फैल गया।

सन् २८ में क़रीब-क़रीब तमाम योरप मे यह रोग देख पड़ता था। इसी साल रूस के कोसटाट बंदर से एक जहाज़ इंगलैंड के लीथ बंदर पर आया। इस जहाज़ के ख़लासि मे रास्ते ही में हैजा फैल गया था, उनके ही कारण थोडे ही दिनो मे तमाम स्काटलैंड मे रोग फैल गया। उसी तरह से हैंबर्ग से निकला हुआ एक जहाज़ इंगलैंड के सैंडरलैंड ब पर आया। उस पर भी ख़लासियो में हैज़ा फैला हुआ था। इसी साल आयलैंड मे रोग का लक्षण दीख पड़ा। एक आदमी जो कि एडिनबरा से आया था, उसे वेलसफ़ास्ट वर्कहाउस मे दाख़िल किया गया। सबसे पहले उसे यह रोग लगा, और उसके बाद व हाउस के दूसरे लोगो में और वहाँ से तमाम आयलैंड में फैल गया।

सन् १८३३ से १८४८ तक १५ वर्ष तक अमेरिका मे हैज़ा बिलकुल नहीं दीख पड परतु इसी साल के नवंबर मे फ्रांस के न्यू आर्लियंस को जाते हुए एक जहाज़ के यात्रियों बीमारी फैली। उनमें से कुछ को वहाँ के अस्पताल मे रक्खा गया। उनसे यह न्यू आर्लि यस मे फैल गया, और वहाँ से मिसिस्पी-नदी के किनारे बसे नगरों मे फैला। दूसरे सा United States मे फैला। इस साल रोग का ज़ोर एशिया, योरप, अमेरिका और यो के और-और हिस्सों मे जिस-जिस भाग मे दिखाई दिया, वहाँ वह अत्यंत भयंकर था, औ लाखों मनुष्यो का संहार किया।

सन् १८५० मे यह रोग तमाम हिंदोस्तान में बड़े ज़ोर से फूटा। अकेले बंबई में इस साल मे ४७२६ और सन् ५१ में ४००० मनुष्य मरे। बंबई से यह रोग जहाज़ों के द्वारा बसरे मे फैला। सन् ५४ में लंदन के कुछ हिस्सों में इस रोग का ज्यादा ज़ोर रहा।

इस बार लंदन के पीने के पानी में ही इस रोग का असर ज्यादा था। नल की मार्फ़त जिस-जिस भाग में गंदा पानी आता था, उसी भाग में हैज़े का ज़ोर दिखाई पडा। और जहाँ-जहाँ पानी छनकर आता था, वहाँ बीमारी का ज़ोर बिलकुल नही था। यह बात ध्यान में आते ही पार्लियामेंट ने एक क़ानून बनाकर वाटर कंपनी को इस बात पर मजबूर किया कि वह शहर के लोगो को रेत से छानकर पानी पहुँचाए। और ज्यो ही साफ पानी मिलने लगा, त्यो ही रोग का ज़ोर वहाँ बहुत कम हो गया।

सन् १८५६ में मारिशस में यह रोग फैला। जनवरी मास में ही दो जहाज़ कलकत्ते से मारिशस को रवाना हुए थे। इन दिनो कलकत्ते मे बीमारी का ज़ोर था। इससे इन दोनो जहाज़ों के ख़लासियो मे रोग फूट पडा। मारिशस के अधिकारियो ने इन लोगों को

बहुत कम देखी गई थी। लोगों मे एक अफवाह इस समय उड रही थी कि अब से आगे गंगा का माहात्म्य नष्ट हो जायगा। इसलिये अंतिम बार गंगा के पवित्र जल में स्नान करने लाखों मनुष्य आए थे। अनुमानतः ३० लाख मनुष्य इस मेले में इकट्ठे थे। हरिद्वार-जैसे छोटी बस्ती मे न इतने मनुष्यो को रहने, न खाने का बंदोबस्त था। ये लोग कोसों तक बाहर जहाँ-तहाँ पड़े रहते, दिन-भर भटका करते। कच्चा-पक्का खाते, रात्रि को ज़मीन पर पड रहते। ऐसी दशा मे हैज़ा क्यों न फैलता? ११वी एप्रिल को बदली हुई, और रात-भर प बरसा। अगले दिन अर्थात् १२वीं तारीख़ को पर्व-दिन था, दोपहर के समय स्नान मुहूर्त था। हर को पैडी पर, जो ६५० फ़ुट लंबी और ३० फ़ुट चौडी थी, इस एक समय मे ३० लाख मनुष्य नहाने को इकट्ठे हो गए। हद से बाहर लोग न जा सकें, लिये चारो तरफ कटहरा लगा था, और उस स्थान पर मरे हुए संबधियो की राख, हड्डी डा जाती थी। पानी अत्यंत गदा और घृणित हो गया था, परंतु स्नान करती बार प्रत्येक य को उसी में आचमन करना पडता था।

परिणाम यह हुआ कि अगले ही दिन १३ ता० को हैज़े का उपद्रव शुरू हुआ। ज एकदम फूट निकला, १५ ता० को लोग भागने लगे। इनमे से अधिक यात्री पजाब अ वायव्य कोण के थे। शीघ्र ही इनसे समस्त पजाब मे ज़ोर का हैज़ा फूट पड़ा और वहाँ अफ़ग़ानिस्तान, आस्ट्राबाद, ख़ीव वग़ैरह शहरों में दाख़िल हुआ। वहाँ से रूस मे पहुँ और रूस से योरप में। इस झपाटे मे काबुल में ८ हज़ार, रूस में २४१८०० और यो में लगभग १० लाख मनुष्य मरे। हिंदोस्तान की मृत्यु-संख्या गिनी नहीं जा सकी।

१८६९ में बंबई इलाके मे इसका ज़ोर हुआ। इस साल बरसात अधिक हुई थी, प अनाज महँगा था, इस कारण दक्षिण मे अधिकांश लोग भूखों मर रहे थे। इस कार दक्षिण कोकण, गुजरात और सिंध मे कुल १०४६३२ आदमी मरे।

इसके बाद सन् ७५ से सन् ८१ तक ६ वर्षों मे बंबई इलाके के भिन्न-भिन्न प्रांतों क़रीब पौने ४ लाख मनुष्य हैज़े से मरे, जिनमे अनुमानतः दो लाख सिर्फ़ दक्षिण प्रांत मे ह मरे। सन् १८७७ में ३½ लाख से ऊपर मनुष्य मर गए, जिनमे अनुमानतः २ लाख सि दक्षिण-प्रांत में ही मरे।

सन् १८८२ मे एक जहाज़ ५०१ हाजियो को लेकर बंबई रवाना हुआ। रास्ते ही में हैज़ा फूट निकला, इनमें कई तो मार्ग ही में मर गए। शेष के मक्के पहुँचते ही शहर में हैज़ा फैला, वहाँ से कुछ लोग मिश्र को भागे। मिश्र में इतना ज़ोर का हैज़ा फूटा कि २ या ३ मास में ही ५० हज़ार मनुष्य मर गए।

मिश्र में ऐसी भयंकर मरी सुनकर जर्मनी, फ्रांस और अमेरिका ने अपने-अपने डॉक्टरों को इस रोग की विशेष जानकारी के लिये मिश्र भेजा। जर्मनी की तरफ से डॉ० कार्क आया था, उसने बहुत खोज-जाँच की। फिर वह हिंदोस्तान में आकर बंबई और कलकत्ता गया

प्रकरण ३

केश सौंदर्य

सारे सिर पर १ लाख से १॥ लाख तक कुल बाल होते हैं, और एक इंच स्क्वायर १ हजार होते हैं। साधारणतः बालों की लंबाई, यदि वे न काटे जायँ तो, ५० इंच १ गज तक होती है, पर बढ़ाए जाने पर ७ फुट तक और कभी-कभी इससे भी अधिक देखे गए हैं। सिर के बालों का व्यास $\frac{1}{500}$ से $\frac{1}{600}$ इंच तक होता है।

नरम, लंबे, घने और चिकने बाल होना स्वास्थ्य का चिह्न है। स्वस्थ स्त्री-पुरुषों ही सिर पर ऐसे सुंदर और मजबूत बाल रहते हैं। यद्यपि आजकल बालों को छाँटकर छोटे करने का रिवाज सभी जातियों में हो गया है, यहाँ तक कि विलायत में तो स्त्रियाँ भी बाल कटाने लगी हैं। फिर भी बालों का शृंगार और उनका मोह संसार के सभी स्त्री-पुरुषों को है।

भारतीय जनों के केश घने-काले होते हैं। ये केश उष्णता को चूसते और मस्तिष्क को उससे बचाते हैं। केश की बनावट हम पीछे एक अध्याय में विस्तार से बयान कर आए हैं। बालों में विद्युत्-धारा भी है, और ज्ञान-तंतुओं पर उनके द्वारा बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है, स्नेह और प्रेम की भावना से बालों पर हाथ फेरने से ज्ञान-केंद्र में बड़ी स्थिरता आती है। और गंभीर विचार करने के समय बालों पर हाथ फेरने से स्मृति का विकास होता है।

जिन स्त्री या पुरुषों के बाल नरम, सुंदर, मजबूत और चमकीले न हों, तो उन्हें उत्तम स्वास्थ्य का न समझना चाहिए। ईश्वर ने जिन्हें उत्तम केश दिए हैं, उन्हें उचित है कि वे उन्हें खूब सँभालकर यत्न से रखें।

बाल धोने की रीति

कम-से-कम प्रति सप्ताह केशों का धोना स्त्रियों और प्रति दूसरे दिन पुरुषों के लिये आवश्यक है। देहातों और कस्बों में पुरानी रीति के अनुसार दही और मुलतानी मिट्टी, बेसन या औंले से बाल धोए जाते हैं। यह मिट्टी या दही आदि बहुत बालों में रह जाता है। अच्छी तरह बालों में से उसे निकाला नहीं जाता। इससे केश मैले और दुर्गंधित हो जाते हैं। इसके सिवा मुलतानी मिट्टी का तह यदि बालों की जड़ में जम गई, तो उससे और भी हानि होती है। इन चीजों से मस्तिष्क में तरावट रहती है, और केशों में बल भी आता है। इसलिये गर्मी-सर्दी में एकाध बार प्राकृतिक गर्मी की ऋतु में इन चीजों को बालों में लगाया जा सकता है। पर यह अत्यंत आवश्यक है कि उन्हें खूब अच्छी तरह साफ करके जड़ से ही निकाल डाला जाय।

चीन आदि देशों में यह रोग निरंतर बना रहता है। इन भागों में इसका उपद्रव मानो घर कर गया है। भारत के ये भाग नीचे और तर हैं। इन स्थलों में क्वाँर-कार्त्तिक या अगहन के महीनों मे अथवा चैत्र-वैशाख मास मे रोग का ज़ोर विशेष रहता है। बाक़ी महीनों मे थोड़ा-बहुत चलता ही रहता है। इन स्थलो मे जो तीर्थ-यात्री जाते हैं, उनमें अधिकाश कसार, गुडधानी, लड्डू, मुरमुरे आदि बाँधकर साथ ले जाते हैं। और उन्हें ही महीनों खाया करते हैं। और अधिकांश मे उसके शिकार होते हैं। योरप और अमेरिका मे अभी तक यह रोग निरंतर बना रहता नही दीखा है।

२—भारत के अन्य भागो में यह रोग महामारी की तरह फैलता है। और एक स्थान से दूसरे स्थान पर आनन-फ़ानन पहुँचता है, और जहाँ पहुँचता है, सफाया कर देता है। योरप और अमेरिका मे भी जहाँ-जहाँ यह रोग फैला, महामारी के रूप में फैला, और अधिकांश मे यही से गया। कभी-कभी योरप मे ख़ूब ज़ोर का हैज़ा फूटा ज़रूर है, पर इससे जितनी मृत्यु हमारे देश में होती हैं, इतनी योरप मे नही होती, और न योरप-अमेरिकावाले इस रोग से इतना भयभीत ही होते हैं।

३—कभी-कभी हैज़े का एकाध रोगी देखने में आता है। किसी-किसी बस्ती में दो-चार केस होकर रह जाते है, और रोग का ज्यादा ज़ोर नही होता। इसका कारण यही हो सकता है कि ऐसे रोगी कही बाहर से रोग का बीज लेकर आए, परंतु उस स्थान में रोग के फैलने के कारण न होने से महामारी के रूप मे हैज़ा नही फैला।

इसमें तो संदेह नही कि रोग उड़कर लगनेवाला है, और इसकी छूत नदियों अथवा स्थल के रास्ते भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलती है। अब विचारणीय विषय यह है कि यह छूत किस प्रकार की है। इसकी उत्पत्ति का स्थान और कारण क्या है? किस तरह इसका एक स्थान मे फैलाव होता है। और किस-किस पदार्थ के द्वारा शरीर में प्रवेश करता है। इस पर भिन्न-भिन्न विद्वानो के भिन्न-भिन्न मत हैं, किन्ही का मत है, इस रोग की छूत हवा में है, किसी का मत है, पानी मे कोई कहते हैं कि गंदगी से यह छूत उत्पन्न होती है। किसी का मत है, श्वास-नलिका में होकर इस छूत का विष शरीर मे जाता है। किसी का मत है कि इस रोग का असर पहले आमाशय पर होता है। अब इन सब पर विचार करना चाहिए।

किसी बस्ती मे जब हैज़ा फूटता है, तो उसके फूटने के कारणों का वहाँ के प्रत्येक निवासी पर समान ही असर पडना चाहिए। क्योंकि हवा, पानी, धरती, ख़ुराक सबकी एक-सी ही होती है, और इन्ही में रोग की उत्पत्ति के कारण भी रहने चाहिए। बहुधा देखा गया है कि प्रारंभ में कुछ मनुष्यों को हैज़ा हुआ और फिर एकदम उसकी संख्या बढ़ गई।

अब इस बात पर विचार करना चाहिए कि हवा मे हैज़े की छूत है या नहीं। आम तौर से यह रोग चैत्र, वैशाख और ज्येष्ठ में, अथवा क्वार, कार्त्तिक या अगहन में फैलता है।

ही अधिक मात्रा मे होता रहता है । पहले जब रेलें नहीं थीं, कलकत्ते से दिल्ली तक महीनों का रास्ता था, परंतु रेलों के कारण अब तो घंटों मे दिल्ली-कलकत्ता का आना-जाना हो रहा है । यदि इस प्रकार मनुष्यों के साथ ही यह फैलता हो, तो कलकत्ते में रोग फैलने के ७-८ दिन बाद ही दिल्ली मे, दिल्ली से २-४ दिन में लाहौर में, वहाँ से पेशावर आदि मे, इस तरह तमाम हिंदोस्तान मे थोड़े ही दिनों में फैल जाना चाहिए । परतु ऐसी घटना दीख नहीं पडती । देश-भर में सर्वत्र रेलो का जाल फैला रहने और नित्य लाखों मनुष्यों का निरंतर आवागमन रहने पर भी हैजे का उतनी तेज़ी से फैलाव नहीं देखा जाता है । एक बार जब कि सन् १८९२-९३ मे रूस और जर्मनी में ख़ूब ज़ोर का हैज़ा फैल रहा था, उन दिनों सैकडों मनुष्य इँगलैंड जा रहे थे, पर इँगलैंड में रोग का कुछ भी प्रभाव न पडा । इन जानेवालो में इँगलैंड पहुँचने पर किसी-किसी को रोग का आक्रमण हुआ भी, पर देश मे रोग फैला नही । हमारे यहाँ भी बहुधा ऐसा ही देखने मे आया है । इससे पता लगता है कि मनुष्यों के स्पर्शास्पर्श और आवागमन से भी यह रोग फैलता नही है । सबसे बडा उदाहरण इसका एक यह भी है कि यदि ऐसा होता, तो एक घर में ज्यों ही कोई रोगी होता, त्यों ही घर-भर में से किसी का भी बचना कठिन था, साथ ही डॉक्टर, सेवक, नौकर-चाकर वगैरा किसी की भी रक्षा न हो सकती थी । परंतु ऐसी घटनाएँ शायद ही देखने मे आती हों ।

यह बात सत्य है कि एक मनुष्य से दूसरे को हैज़े की बीमारी उडकर लगती है, परंतु इसका कारण स्पर्शास्पर्श नही । इसके अन्य गंभीर कारण हैं । रोगी के नज़दीक रहनेवाले व्यक्तियो मे जो रोगी के काम में आई हुई वस्तुओ का सेवन करते है, और अपने शरीर और कोष्ठ की सफाई का ठीक ध्यान नही रखते, उन्हीं पर इस रोग की छूत उडकर लगने का भय रहता है । इसलिये रोगी के पास रहनेवालों को अपने बचाव का बहुत ही सावधानी से प्रबंध करना चाहिए । सफाई के अभाव से यह रोग किसी तरह फैलता है । इसका एक उदाहरण स० १८८९ के लेसेंट-नामक एक मेडिकल मासिक में छपा था ।

पेनिस्यूलर और ओरिसेंटेल कंपनी के स्टीमर प्रति सप्ताह सिंगापुर के तिलक भंग बंदर मे जाया करते हैं । सन् १८८४ में इस कंपनी के एक मुसलमान यात्री को हैज़ा हुआ । तिलक भग पहुँचकर वह मर गया । उसके बाद गाँव मे केस होने लगे । इस रोग के फैलने के मूल कारण जब खोजे गए, तब मालूम हुआ कि मुसलमानी धर्म के अनुसार उस मुर्दे को नहलाया गया और जिस-जिसने उसे नहलाया, उनमें से कुछ को हैज़ा हुआ । मुर्दे को स्नान कराते वक्त उसके मल-मूत्र से भरे हुए अंगों को धोना भी पडा था । और उन्होने अपने हाथों को और शरीर को भी पीछे सावधानी से नहीं धोया था । फल स्वरूप ये लोग रोग की चपेट मे आ गए । जो लोग मरते गए, उन्हें इसी प्रकार नहलाना

में रहते हैं और बिल्कुल तंगी से अपनी गुज़र करते हैं। उनके मकानों के आस-पास भी बड़ी गंदगी रहती है। बहुधा धनवान् घरों में भी स्वच्छता की तरफ बहुत ही कम ध्यान देखा गया है। बाहर गाँव देहात में बहुधा देखा गया कि घर के बाहर ही कूड़े-करकटों के ढेर लगे रहते हैं। उन्हीं पर मल-मूत्र पड़ता और सड़ता रहता है। पशुओं का गोबर बहुधा खाद के लिये सड़ाया जाता है। दिल्ली-जैसे शहर में प्राय. पाख़ाने ऐसे देखने को मिलेंगे, जो मकान में घुसने के मार्ग में हैं और वहाँ की दुर्गंध और अँधेरा कभी भी दूर नहीं होता। जयपुर में पाख़ाने और मोरी का ऐसा गंदा प्रबंध देखने को मिला कि जिसका बयान नहीं हो सकता। ऐसे पाख़ाने कभी साफ नहीं किए जा सकते और उनकी गंदगी पास के कुओं, बावड़ियों पर असर डालती है। जयपुर में मोरी के बहने का कोई बंदोबस्त नहीं है। प्रत्येक घर के साथ एक कुंड है और उसमें गंदा पानी जमा होता रहता है। गली-भर सड़ी रहती है। पेशाब का छिड़काव प्रत्येक गली में देखा जा सकता है। बहुत-से घरों में रसोई का गंदा पानी व नहाने और कपड़े धोने का गंदा पानी घर के इधर-उधर इकट्ठा होता रहता और सड़ता है। अभी हाल में एक केस मेरे सामने आया। एक गाँव में प्लेग फैल रहा था, एक १४-१५ साल की लड़की पर, जिसका विवाह ५-६ दिन प्रथम ही हुआ था, प्लेग का आक्रमण हुआ और दो दिन बाद वह मर गई। कारण खोजने पर मालूम हुआ कि प्लेग-आक्रमण के दिन उसने एक पकौड़ीवाले के घर जाकर दही-बड़े खाए थे, उसके घर की मोरी की दुर्गंध सदा तमाम मुहल्ले में रहती है, जब कभी हैज़ा, प्लेग होता है, सबसे पहले इसी घर में उसके चिह्न दिखाई पड़ते हैं। पिट्ठी और रोटाई का पानी, दही-काँजी आदि बासी होने पर नित्य मोरी में फेंक दी जाती थी और बारहो मास उनकी मोरी सड़ी रहती थी।

बंबई में पाख़ानों की गटर की व्यवस्था है। वहाँ मल को भंगी उठा नहीं ले जाता, वह पानी की गटर में बह जाता है। उसका अधिकांश वहीं जमता रहता है। इन गटरों के पास रहनेवाले चाहे भी किसी मनुष्य को बड़ी आसानी से ऐसे छूत के रोग लग जाते हैं, और थोड़े ही कारणों से रोग का भरपूर विस्तार हो जाता है। क्योंकि रोग-उत्पादक कारणों की भरपूर ख़ुराक मिल जाती है। यह बात निश्चय है कि ऐसे रोग गंदी जगह में इस तरह फैलते हैं, जैसे बारूद में आग लगा दी हो।

यदि किसी गाँव या घर में मुद्दत से गंदगी रही है, और उसमें किसी छूत के रोग का आक्रमण भी न हुआ हो, तो इसका यह अर्थ कदापि न लगाना चाहिए कि वहाँ गंदगी हानिकर नहीं है। हैज़े-जैसे छूत रोग को सहारा देनेवाली वस्तु गंदगी को छोड़ दूसरी नहीं है। सन् १८८४ में योरप में हैज़ा फैला। उस समय जो गाँव ज़्यादा गंदे थे, वे उसके झपाटे में आ गए, फ्रांस का टुलोन नगर योरप-भर में गंदा मशहूर है। पर वहाँ कभी हैज़ा नहीं फैला था। सन् १८८४ में जब योरप में हैज़ा फैला, तब एक जहाज़ वहाँ गया, उस पर

पंजाब और राजपूताने की धरती अधिकांश मे रेतीली, सूखी और ऊँची है, इसलिये वहाँ हैज़े का प्रकोप ख़ासकर राजपूताने में बहुत ही कम दीखता है।

एक बात और विचारने योग्य है कि जब-जब अनाज की मँहगी हुई और अकाल पडे, तब-तब हैज़े का भी देश मे प्रकोप हुआ। सन् १८६४ ई० में बंबई मे बरसात की कमी से अकाल पडा, उसके अगले ही साल वहाँ ख़ूब हैज़ा फूटा, और सन् ६९ मे अधिक वृष्टि से खेत सड जाने से अनाज का भाव चढ गया, लोग भूखे मरे, इससे प्रबल हैजे का प्रकोप हुआ। सन् ७६ और ७७ में भारत के अधिकांश मे अकाल पडा, और लाखों मनुष्य भूखे मरे, साथ ही हैजा भी फैला। इन दो वर्षों में अँगरेज़ी राज्य में ही दस लाख मनुष्य हैज़े से मर गए थे।

ऐसा देखा गया है कि जिस साल बरसात कम होती है, उससे आगामी वर्ष वर्षा शुरू होने पर आषाढ़, श्रावण के मास मे हैज़े का प्रकोप होता है।

बरसात की कमी के कारण ग्रीष्म में धरती शीघ्र सूख जाती है। उस सूखी धरती पर बरसात अधिक ज़ोर से पडे, हवा में फिर भी गर्मी बनी रहे, तो हैज़े के उत्पादक कारण उत्पन्न हो जायँगे। ऐसी हवा कभी-कभी गर्मी में भी देखने मे आती है।

वर्षा की कमी या ज्यादती से जब कभी-कभी अन्न का भाव चढ़ जाता है, और गरीब लोग भूखों मरने लगते है, और पूरी ख़ुराक न मिलने से या कदन्न खाने से उनकी तदुरुस्ती बिगड जाती है। वे दुर्बल, दुखी, रोगी होने से भूख-प्यास तथा सर्दी-गर्मी सहन करने में असमर्थ होते है। अकाल में कच्चा-पक्का, जो थोडा-बहुत अन्न या सड़े-गले फल-फूल-पत्ती जो मिल जाते है, खाकर निर्वाह करते है। इससे इनका आमाशय और अँतड़ियाँ कमज़ोर हो जाती है। और रोगोत्पादक जंतु उत्पन्न हो जाते है, ऐसी ही दशा मे इन्हे प्रायः पेट के लिये दूर देश की यात्रा और कडा परिश्रम करना पडता है। इससे उनका स्वास्थ्य और भी बिगड जाता है, ऐसी अवस्था में उनका शरीर रोग के विष को तुरंत ग्रहण कर लेता है।

अकाल के दिनो में जो वायु चलती है, वह भी बिलकुल नीरोग वायु नहीं होती, क्योंकि अकाल की अधिक सभावना अनावृष्टि, अतिवृष्टि पर होती है, इससे प्रायः इन दिनों दिन और रात्रि की सर्दी-गर्मी मे बहुत बडा अंतर रहता है। प्राय. दिन में कडी गर्मी और रात्रि में कडी सर्दी पडती है, साथ ही हवा गीली चलती है। इससे शरीर ढीला और निस्तेज हो जाता है। इसलिये उन दिनों हैज़े को पोषक-तत्त्व मिलता है।

निस्सदेह यह रोग ग़रीबो का रोग है। कभी-कभी भले ही अमीर लोग इसके झपाटे में आ जायँ, यह दूसरी बात है।

नीची और गीली धरती में हैजे का ज़ोर प्राय. वैशाख और ज्येष्ठ महीने मे होता है, और ऊँची तथा सूखी जगहो में वर्षा ऋतु में होता है। इन दिनो में दिन और रात्रि की गर्मी में विशेष अंतर रहता है। इस कारण हवा मे ज्यादा गीलापन रहता है। गुजरात, दक्षिण,

मनुष्यों के मल-मूत्र को साफ करने का भी ठीक प्रबंध नहीं होता। इससे हवा दूषित हो जाती है। इसके सिवा जगन्नाथपुरी का पानी साधारण रीति से रोगोत्पादक है।

ऐसी बस्तियों में जब लाखों मनुष्यों का जमघट भर जाता है, तब वहाँ का पानी पीने के योग्य ही नहीं रहता, उसके पीने से बहुधा ऐसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कुछ लोग जगन्नाथपुरी में मंदिर के पास जो एक टंकी है, उसी का पानी पीते हैं। जगन्नाथ की मूर्ति के पास भोग रखने पर वह स्थान पानी से धो डाला जाता है, वही धोवन उस टंकी में जाता है, धर्मांध लोग इस धोवन को अतिशय पवित्र समझते हैं और जब तक वहाँ रहते हैं, उस पानी को पीते हैं।

हर हालत में चाहे किसी रोग के प्रभाव से, या अकाल, गरीबी, यात्रा या अन्य कारण से यदि मनुष्य की अँतड़ियों या आमाशय में ठीक कार्य करने की शक्ति नहीं होती, तो हैज़े का विष शरीर में प्रवेश करता है। उस समय यदि आब-हवा में भी इसके चेप को बढ़ने और पोषण होने के कारण हों, तो फिर वह फूट निकलता है। अगले अंक में हम 'हैज़े के चेप' का विस्तृत वर्णन करेंगे।

हैज़े का ज़हर

यह बात पिछले प्रकरणों में बता दी गई है कि हैज़ा हिंदोस्तान में किन-किन स्थानों में निरंतर बना रहता है, और उसका विष किस ढंग से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचता है, कैसी आबोहवा में यह विष ज़ोर पकड़ता है और कैसी प्रकृति के मनुष्यों पर उसका ज्यादा असर होता है। अब हम यह बतलाना चाहते हैं कि यह ज़हर किस प्रकार का है। डॉ० एन्० सी० मेकनामारा जो बंगाल में कई वर्ष तक हैज़ेवाले स्थानों में रहे, और जिन्होंने वर्षों तक अनुभव करके बारीकी से इस बात की खोज करके कई पुस्तकें और लेख लिखे थे, उन्होंने सन् १८६६ के साल में ऐशियाटिक कालेरा-नामक एक पुस्तक छपाई थी, उसमें वे लिखते हैं—

अमुक जाति का सेंद्रिय पदार्थ मनुष्य के कमज़ोर आमाशय और अँतड़ी में प्रवेश करता है, जिसके असर से मनुष्य पर हैज़े का आक्रमण होता है। और जब आमाशय और अँतड़ी आरोग्य होती हैं, तब वह पदार्थ आमाशय के पाचक-रस (गेस्टिक ज्यूस) में मिलकर कमज़ोर हो जाता है। यह सेंद्रिय पदार्थ किस वस्तु से बना है, यह जानने के लिये उक्त डॉक्टर साहब के समय में उपयुक्त साधन नहीं थे। परंतु इस संबंध में बहुत दिन तक विचार-विवेचन होते-होते दूसरे विद्वानों ने भी इस पदार्थ को स्वीकार किया, उन्होंने खोज करके जाना कि अच्छी तंदुरुस्तीवाले मनुष्य के शरीर में यह विष प्रवेश नहीं कर सकता। कदाचित् ऐसे मनुष्य पर रोग का हमला भी हो, तो उस पर उसका विशेष ज़ोर नहीं होता। इसका कारण यह है कि आमाशय का पाचक रस अम्ल होने के कारण हैज़े के विष को मिटा कर देता है। पर जिन मनुष्यों के आमाशय ख़राब होते हैं, तथा जिनके आमाशयों में क्षार पदार्थों का ज़्यादा संग्रह होता है, उन्हीं को आम तौर से हैज़े का आक्रमण होता है। क्षार रस हैज़े

जाते है । यदि किसी वस्तु में उक्त जंतुओं के लगे रहने का संदेह है, तो उस वस्तु को अच्छी तरह धूप देने पर उनका नाश हो जाता है । हैज़े के रोगी के कपड़े गर्मी की ऋतु में दिन-भर धूप मे पडे रहने दिए जायँ, तो फिर उनके सब कीड़े मर जाते है । रज़ाई, कंबल आदि के दोप को दूर करने के लिये ३-४ दिन तक धूप मे डालना चाहिए । ये जंतु सूखे अन्न पर नहीं रह सकते, पके हुए पर अवश्य वृद्धि पा सकने हैं ।

खारी पानी मे हैजे के कीडे मिले रहने का भय है । इसलिये खारी पानी के कुएँ, तालाबों के पानी का हैजे के दिनों इस्तेमाल करना अत्यंत भयानक है । जिन जलाशय या नदियों का जल सेंद्रिय पदार्थ से शुद्ध हो—जैसे गगा आदि का—वैसे जल में थोडी-बहुत मात्रा में ये जंतु मर जाते है । हिमाचल पर्वत से उतरते ही बर्फ गलकर जो पानी शीतल रहता है, उसमे प्रवेश करते ही इन कीडो का नाश हो जाता है ।

दूध एक ऐसी वस्तु है, जो प्रत्येक जाति के जंतुओं को अपनी तरफ बड़ी तेज़ी से आकर्षण कर लेता है । दूध दुहने के बाद यदि थोड़ी देर तक उसे आस-पास की हवा मे खुला रक्खा जाय, तो उसमे ज़रूर ऐसे जंतुओ का प्रवेश हो जायगा । हैज़े के जंतुवाले पानी से धोए हुए बर्तन मे दूध दुहने से कभी-कभी उसमें रोग के जंतु प्रवेश पा जाते और बडी शीघ्रता से बढ़ जाते है । हैज़ा जहाँ फूट रहा हो, ऐसे ठिकानों मे थोडी देर प्रथम दुहे हुए दूध को यदि ख़ुर्दबीन से देखा जाय, तो कभी-कभी उसमे उक्त जंतु दीख पडेंगे । यदि यह दूध चार-छः घटे रक्खा रहे, और उसमे खटाई उत्पन्न हो जाय, तो उससे इन जंतुओं का नाश हो जायगा । दुहकर तत्काल गर्म किए दूध मे इन जंतुओं को प्रवेश का मौका नहीं मिलता ।

हैज़े के समान ही लक्षण कभी-कभी अतिसार मे या संखिया खा लेने के बाद दीख पड़ते है । बहुधा ऐसा होता है कि हैज़े के दिनो में यदि किसी को एकाध भारी दस्त हो जाय, तो उसे हैज़ा ही समझा जाता है । इसके विरुद्ध कभी-कभी हैज़े के आक्रमण को साधारण अतिसार समझकर बेफिक्री मे लोग बैठे रहते हैं । इस भूल का कभी-कभी खेद-जनक परिणाम देख पडता है, क्योंकि उसकी उचित चिकित्सा होती ही नहीं ।

कभी-कभी ऐसा होता है कि हैज़े के जतु शरीर मे प्रवेश कर चुकने पर भी हैज़ा नहीं होता । कई दिन तक रोग के चिह्न प्रकट नहीं होते । परंतु शरीर मे सुस्ती, बेचैनी आदि चिह्न अवश्य दीख पड़ते है । इस अवसर पर फौरन् सावधान हो जाने की बडी भारी ज़रूरत है । थोड़ी भी सावधानी से मनुष्य के प्राण बच जाते हैं ।

कभी-कभी हैज़े का रोगी आराम होने पर रोग फिर से उलट पड़ता है । वास्तव में बात यह है कि रोगी के शरीर में आराम होने पर भी कुछ दिन जंतुओं का जोर अवश्य बना रहता है । इसलिये जब तक रोगी बिलकुल आरोग्य न हो जाय, उसे बहुत ही सावधानी से रहना उचित है । साथ ही उससे दूसरे लोगों को भी छूत का भय है, इसलिये उन लोगों को भी इससे कुछ दिन बचकर रहना चाहिए ।

पर ज्यादा प्रभाव नहीं पडता। शरीर में जाते ही वे नष्ट हो जाते हैं। जिन स्थानों में रो सदा बना रहता है, जहाँ ये जंतु कभी नष्ट नहीं होते, थोडे-बहुत बने रहते हैं, ज्यों उन्हें अनुकूल हवा और ख़ुराक मिलती है, तत्काल बढ़कर रोग फैला देते है। यदि कि कुएँ मे भरपूर बलवान् जतु उत्पन्न हो गए हों, तो उन पर जंतुनाशक दवा भी पूरा अ नहीं करती। हाँ, कुछ कमी ज़रूर हो जाती है।

केवल यही बात नहीं कि जिस पानी मे ये जंतु हो, उसके पीने ही से रोग शरीर प्रवेश करता है, परतु ऐसे पानी में बर्तन या वस्तु धोने पर भी रोग शरीर में प्रवेश क का भय रहता है। एक बार आगरे में, शाहगंज मुहल्ले में, हैज़ा फैला। उस समय ए डॉक्टर ने, जिसे सरकार ने इसकी खोज को नियत किया था, जाँच करके पता लगाय कि यहाँ कुल १६ मर्द और ११ स्त्रियों को हैज़ा हुआ, जिनमे एक हिंदू और २६ मुसलमा थे। ये सब पास-पास रहते थे। ये सब ग़रीब लोग थे, और पास के एक कच्चे कुएँ क पानी पीते थे। बहुत बारीकी से पता लगा कि उस कुएँ के पानी में कुल्ला-दतौन करने औ बासन माँजने तथा वहाँ का पानी पीने से उन पर रोग का आक्रमण हुआ था। उसमें रोग के जतु थे। आख़िर कुएँ में 'पर्मेगनेट ऑफ़ पोटाशियम' डालकर उस कुएँ तथा अन्य कुओं का भी पानी शुद्ध किया गया। इसके बाद शीघ्र ही रोग का उपद्रव शात हो गया।

यह कहा जा सकता है कि यदि हैज़े का विष पानी ही के द्वारा शरीर में पहुँचता है, तो जितने लोग इस जल को पीते है, उन सब पर क्यों नहीं रोग का आक्रमण होता? इसका कारण क्या है?

इसका कारण यह है कि जिनके शरीर मज़बूत हैं, ख़ासकर जिनकी पाचन-शक्ति अच्छी है, उनके शरीर मे ये जंतु जाते ही नष्ट हो जाते हैं। क्योंकि तंदुरुस्त पाचनाशय में जब वहाँ पाचन-क्रिया होने लगती है, तो एक प्रकार का रस पैदा होता है। यह रस स्वाद में खट्टा होता है, इसके प्रभाव से ये जतु तत्काल नष्ट हो जाते है। परंतु जिनकी पाचन-शक्ति कमज़ोर होती है, और जिनकी अँतडी भी ठीक काम नहीं कर सकती, उनके शरीर में ये जंतु ख़ूब वृद्धि पाते हैं।

जिस जल में मल-मूत्र मिलता रहता है, उसो मे इन जंतुओं को विशेष पोषण मिलता है, और वे उसमे ख़ूब बढ़ते है। मैले पानी मे अधिक जंतु रहते हैं। इसलिये यदि इस पानी का थोडा अंश भी पेट में जाय, तो हैज़ा हो जाता है। गगा और यमुना के जल में ये जंतु बहुत कम जीवित रह सकते है।

यह भी देखा गया है कि जो लोग पानी को अच्छी तरह छानकर पीते हैं, उन्हें कोई खटका नहीं होता। देखा गया है कि एक ही गाँव में एक ही जलाशय का पानी भिन्न-भिन्न लोगों ने लिया, और जिन्होने उसे छानकर या पकाकर पिया, उन पर रोग का आक्रमण नहीं हुआ, और जिन्होने इस बात पर ध्यान नहीं दिया, उन पर हैज़े का आक्रमण हुआ। सब

यह भी एक बात है कि ग़रीब और अमीरों पर इस रोग का एक-सा प्रभाव न पड़ता। ज्यादातर ग़रीब लोग ही इसके शिकार होते हैं, जिन्हें भर-पेट ख़ुराक नहीं मिलती परंतु जो पुष्टिकर आहार करते हैं, उनकी अँतड़ी तक उक्त जंतु प्रायः नहीं पहुँचते। अकाल के समय यद्यपि अमीर-ग़रीब सब एक ही जल वर्तते हैं, तो भी ज़्यादातर गरीबों पर रोग का आक्रमण होता है। प्रायः देखा गया है कि जब-जब अकाल पड़ा है, गरीबों मे हैज़ा फैला है। जिस साल मे बरसात और पाक की कमी होती है, उस वर्ष में नदी और तालाब जल्दी सूख जाते हैं। कुओं का पानी भी गहरा हो जाता है। इसीलिये बहुत-से लोग जल की स्वच्छता का बिना विचार किए जो जल सरलता से उन्हें मिल सके, उसी का उपयोग करते हैं। बहुधा हैज़े के दिनो में ग़रीब लोग नंगे बदन खुली हवा मे रात को सोते हैं, और कच्चा-पक्का भोजन, जो मिल जाय, खाते हैं, इससे वे बिलकुल कमज़ोर हो जाते हैं, और यदि उनके शरीर में रोग ने प्रवेश किया, तो उनका बचना कठिन हो जाता है।

हैज़ा केवल पानी ही के द्वारा फैलता है, इसी पर न भूलना चाहिए। पानी के कारण उसका प्रसार अधिक तो अवश्य होता है, और वही हैज़ा फैलाने का मुख्य कारण भी है, परंतु पानी के सिवा ख़ुराक, दूध, कपड़ा आदि के द्वारा भी इस रोग के जंतु शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं, और रोग फूट निकलता है। प्रायः प्रथम इन्हीं वस्तुओं द्वारा रोग के जंतु पानी मे मिलते हैं, और पानी से फिर उनका फैलाव सर्वत्र होता है।

सन् १८९४ मे गर्मी के दिनों मे कानपुर केंप मे बड़े ज़ोर का हैज़ा फूटा, जिसमें बस्ती का सत्तरहवाँ भाग नष्ट हो गया। प्रोफेसर हेनकिन ने छावनी मे आकर रोग के मूल-कारण की जाँच की। पानी, ख़ुराक, दूध और सब सामान की जाँच की गई। पानी में जंतु नहीं मिले, पर ख़ुराक, दूध और रसोई-घर के पानी मे पाए गए। यह भी पता लगा कि वहाँ के कुछ रसोइए नगर के उस हिस्से मे रहते थे, जिसमे बीमारी फैल रही थी। उन्हीं के साथ रोग की छूत छावनी में आई।

दूध के द्वारा भी रोग फैलने के बहुत-से प्रमाण देखने को मिलते हैं। सन् १८९५ की अगस्त में शाहजहाँपुर-छावनी मे दो अँगरेज़ सिपाहियों को हैज़ा हुआ। जो ग्वाला वहाँ दूध पहुँचाता था, वह गाँव के नज़दीक रहता था। उस गाँव मे उस समय हैज़ा फूट रहा था, और उस दूध में रोग के जंतु थे, उसी से रोग का आक्रमण हुआ।

एक बार ऐसा हुआ कि एक अँगरेज़ डॉक्टर के पास किसी गाँव से कुछ फल आए। डॉक्टर और घर के दो-तीन आदमियों ने उन्हें खाया, और उसी रात को उन्हें हैज़ा हुआ। कारण खोजने से मालूम हुआ कि जो मजूर फल लेकर आया था, वह रास्ते मे एक गाँव में कुछ देर ठहरा था, वहाँ हैज़ा फूट रहा था, उस गाँव के एक कुएँ से थोड़ा पानी लेकर उसने फलों पर छिड़क दिया था और वही रोग का कारण था।

बहुधा मक्खियों के द्वारा भी हैज़ा फैलता है। रोगी के मल, मूत्र, थूक और उल्टी पर

शक्ति कम होने पर दस्त और उल्टी कम हो जाती है। चेहरा बहुत उतर जाता है और नाडी बिलकुल सुस्त हो जाती है। कमज़ोरी ज्यो-ज्यो बढ़ती है, चमडी का रग काला और आँखें गढ़े मे होती जाती है। गाल पिचक जाते हैं और होठ-दाँत काले हो जाते है। इतनी अधिक प्यास किसी भी दूसरे रोग में देखी ही नहीं जाती। मुँह बिलकुल बद नही हो सकता, दाँत खुले दीखते रहते हैं। अंतिम अवस्था में साँस का ज़ोर और शरीर से तीव्र दुर्गंध आने लगती है। इसके बाद उस शरीर मे प्राण बहुत ही कम देर ठहर सकते हैं।

इस रोग में नाड़ी बडी जल्दी क्षीण हो जाती है। रोग शुरू होने के थोड़ी देर बाद ही उसकी चाल ९०-१०० हो जाती है। हृदय की गति में भी उसी तरह अतर पड़ जाता है और कभी-कभी उसकी धडकन इतनी तेज हो जाती है कि फिर उसकी गिनती हो ही नहीं सकती। रोग यदि सुधार की दशा में होने लगे, तो अंत.करण और नाड़ी की गति में सबसे प्रथम सुधार दीख पडता है।

तंदुरुस्त शरीर की उष्णता ९८॥ से कुछ नीचे रहती है। इस रोग में उष्णता अत्यंत कम हो जाती है और ९६-९५ अथवा इससे भी कम हो जाती है।

कभी-कभी ९० और ८८ तक पहुँच जाती है। बेहोशी होने पर गर्मी फिर बढ़ने लगती है, पर अंत में वह भी उतर जाती है। परंतु कभी-कभी विपरीत देखने मे आता है, अर्थात् गर्मी बढ़ने लगती है। और वह बडी तेज़ी से बढ़ती है। कभी-कभी १०७-१०८ तक गर्मी बढ़ते देखी गई है। और इतनी गर्मी बढ़ने पर फिर रोगी के बचने की आशा नही रहती।

इस रोग में श्वास की नली मे बहुत अंतर पड़ जाता है। प्रारभ मे २०-२२ श्वास चलते है। ज्यों-ज्यों कमज़ोरी बढ़ती जाती है, साथ ही श्वास भी बढ़ता जाता है। कभी-कभी उसकी गर्मी ३०-३५ तक पहुँच जाती है। श्वास कष्ट से आने के कारण छाती उभरने लगती है और नसे फूल उठती हैं। दम घुटने लगता है। और इसीलिये ख़ून शुद्ध नहीं रह सकता। और काला पड जाता है। साथ ही होठ, आँखें और हाथ, पैर और उगली सब काले पड जाते हैं। श्वास नली में भरपूर हवा न जा सकने से रोगी इधर-उधर तड़पता रहता है। यद्यपि श्वास-नली मे या फेफडो में कोई ख़राबी नहीं होती, फिर भी श्वास अटकता है। यह इस रोग की ख़ासियत है। ज्यों ही रोग आराम होने लगता है, सब तकलीफ़ें भी कम होने लगती हैं।

इस रोग मे आवाज़ भी बैठ जाती है। रोगी की बोली नज़दीक के बैठे मनुष्य भी मुश्किल से सुन सकते हैं। ज्ञानेंद्रियो पर रोग का भरपूर असर होता है। रोग का सपूर्ण वेग होने पर रोगी आँख से नही देख सकता, न कान से सुन सकता है और न सूँघ सकता है, समझने की शक्ति भी कम हो जाती है।

उपर्युक्त संपूर्ण लक्षण होने पर रोगी का बचना मुश्किल हो जाता है। कभी-कभी

है। कभी-कभी आमाशय में से रक्त-स्राव भी होने लगता है। यह स्राव रक्त की कोई फट जाने से होता है।

अँतडी का प्रारंभिक भाग, जो आमाशय के साथ जुड़ा रहता है, उसमें कभी-कभी का जमाव हो जाता है और कभी-कभी उसके भीतर का पिंड (ब्रनर्स ग्लेंड) कुछ बढ़ ज है। पर बहुत करके इसमें अधिक परिवर्तन नहीं होता है। रोग का मुख्य प्रभाव अँतड़ी पीछे के भाग के श्लेष्मावरण में होता है। वहाँ थोड़ा-बहुत रक्त अवश्य जमा हो जाता उस पर चावल के माँड के समान पदार्थ लिपटा हुआ मालूम होता है। इसके मलाशय के निकट का जो अन्य भाग है, उस पर हैज़े का सबसे अधिक प्रभाव होता है। भाग के तमाम अंशों में श्लेष्मावरण में लोहू जम जाता है और जहाँ छोटी और अँतडी का मेल होता है, उससे ज़रा ऊपर के भाग में यह जमाव और भी अधिक होता किसी-किसी मनुष्य का इस भाग का श्लेष्मावरण बिलकुल सूख जाता है। किसी-किसी सड़ जाता है। यदि रोगी ३-४ दिन रोगी रहकर मरता है, तभी सड़ाव होता है। कभी-क अँतडी की रक्त-नली फट जाने से रक्त-स्राव हो जाता है। और दस्त के साथ ख़ून आता है

जब तक रोग का प्रभाव कम रहता है, तब तक श्लेष्मावरण में सिर्फ़ सूजन रहती है पर ज्यों-ज्यों सूजन बढ़ती है, त्यों-त्यों वह भाग निर्जीव होकर श्लेष्मावरण से छुटकर अँत के प्रवाही दस्त से मिल जाता है। इस मिश्रण का रंग चावल के माँड़ के समान होता है यदि यह सूजन देर तक रहती है और गहरी हो जाती है, तब एक दूसरे के दबाव के कारण की गति मंद हो जाती है और अंत में सड़ाँद उत्पन्न हो जाती है। और वहाँ ज़ख़्म हो जा है। कभी-कभी मलाशय इन ज़ख़्मों से भर जाता है। इनमें अधिकांश श्लेष्मावरण तक गह होते हैं, अँतडियों में छेद हो जाते हैं। वह गल जाती है। ऐसी दशा में रोगी के बचने की आशा नहीं रहती। कभी-कभी अँतड़ियों के सड़ने के बदले सूजे हुए रज-कणों की श्लेष्मा वरण पर पपड़ी-सी जम जाती है। यह पपड़ी कभी-कभी अँतडी से अलग रहती है। कभी चिपकी रहती है। यदि अलग रहती है, तब तो अँतडी और उसके बीच में एक प्रवाही पदार्थ भरा रहता है। यदि रोग देर तक चलता रहे, तो यह पपड़ी इतनी मोटी और कठोर हो जाती है कि अँतडी का मार्ग ही रोक लेती है, ऐसी दशा में दस्त भी रुक जाता है, और भयंकर कष्ट होता है।

हैज़ा होते ही अँतड़ी के प्रारंभिक भाग में चावल के माँड़-जैसा सफ़ेद खारा, प्रवाही पदार्थ मिला हुआ आता है। उसमें कभी-कभी रक्तांश भी मिला आता है। यदि रोग देर तक चलता रहे, तो पित्त फिर बनने लगता है। ऐसी दशा में उस प्रवाही का रंग नीला होने लगता है।

२—बहुधा हैज़े के रोगी के कलेजे में भी रक्त जम जाता और वह बढ़ने लगता है। यह रक्त काले रंग का होता है। पित्ताशय पित्त से भरा रहता है, परंतु जिस तरह बहुतसे

इसी मतलब के लिये मिलता है, उससे बाल बहुत जल्द सूखते हैं। सिर के एकदम के बालों को सावधानी से सुखाना चाहिए।

जो लकड़ी या सींग की देशी कंघियाँ हमारे घरों में स्त्रियाँ काम में लाती हैं, अनेक दोष होते हैं। कारीगर लोग हाथीदाँत या जालों की कारीगरी तो उन पर बारीकी से करते हैं, और उनका दाम भी २-४ रु० तक हो जाता है। पर जिस की आवश्यकता कंघी में होना चाहिए, वह उनमें नहीं है। कंघी के दाँत जड़ तक रहने चाहिए, जिससे उनमें बाल उलझें नहीं, और मैल जमे नहीं। दूसरे वे नोकीले कर गोल होने चाहिए कि बालों को तोड़ें नहीं। विलायती कंघियों में ये दोष नहीं इसलिये वे कंघियाँ अधिक परिमाण में बालों का दान सकती हैं। ब्रुश का रिवाज पढ़े-लिखे लोगों में है, यह भी बहुत कम। अस्तु। कंघा या ब्रुश खूब साफ परमावश्यक है। बहुधा स्त्रियाँ कंघा या ब्रुश करने का उद्देश्य यह समझती हैं कि सीधे हो जाते हैं, किंतु कंघा करने का असली उद्देश्य तो बालों की कसरत है, जिससे बढ़ते और सुंदर होते हैं। प्रत्येक स्त्री-पुरुष को दिन में कई बार कंघा या ब्रुश करना चाहिए। यदि यह संभव न हो, तो दिन में दो बार तो अवश्य ही करना चाहिए।

कंघा करने में इस बात का सावधान रखना चाहिए कि उसका रगड़ चमड़ी पर न लगे, उससे सिर्फ बालों को सुलझा दिया जाय। फिर ब्रुश से चमड़ी की सतह को साफ रखा जाय और बालों को हलके हाथ से झटका दिया जाय। इस प्रकार ब्रुश और कंघे द्वारा बाल और उनकी जड़ों को स्वच्छ और मल-रहित बनाया जाना चाहिए। इसकी सावधानी से जाँच करनी चाहिए कि सिर पर बालों की जड़ में चकट या मैल तो नहीं जम गई है। यदि ऐसा हो, तो ब्रुश का प्रयोग और भी सावधानी से करना चाहिए। कंघी करने में कम-से-कम १० मिनट का समय लगाना चाहिए। जो स्त्रियाँ अपने बालों को सुंदर और मजबूत बनाना चाहती हैं, उन्हें उचित है कि वे प्रातःकाल उठकर सामने आने वाले बालों को ५ मिनट तक कंघी करें।

कंघी और ब्रुश को खूब सावधानी से साफ रखना बहुत जरूरी है। प्रतिमास कंघे को काम में लाने के बाद गर्म पानी में बहुत अच्छी तरह धोकर सुखा लेना चाहिए। इससे मैल व रोग-जंतुओं के उत्पन्न हो जाने का बहुत भय रहता है। इसलिये कंघा को पहले साबुन या सोडा से धो डालें, फिर गर्म पानी से उसे साफ कर डालें।

कंघियाँ ब्रुश होने के लिये सोडाफ्रो का चूर्ण चूर्ण पानी में घोलकर डालना चाहिए। ब्रुश न बहुत सख्त हो, न बिल्कुल नरम। कंघा या ब्रुश प्रत्येक बार काम के बाद कम-से-कम ३० बार फेरना चाहिए। यह काम जल्दी-जल्दी करना चाहिए।

केश

[illegible]

होता है, यह निश्चय समझना चाहिए। और उसमें १०० भाग में १ भाग मल और शेष भाग प्रवाही अंश रहता है। पिछले दस्तों में इतना भी मल नहीं होता। इस रोग में १५ से २० तक दस्त एक दिन में आते है। दस्त अल्प-मात्रा में होने पर भी शरीर बिलकुल निचुड़ जाता है। और चेहरे पर ६ महीने के रोगी के समान चिह्न दीखने लगते हैं।

दस्त का यह प्रवाही भाग रक्त में से आता है, उसमें क्षार का भी कुछ अंश होता है। चूँकि शरीर में से प्रवाही अंश बहुत निकल जाता है, इसलिये रक्त का गुरुत्व बढ़ जाता है। तंदुरुस्त हालत में रक्त का गुरुत्व १०५६ होता है, इस रोग में १०८१ तक हो जाता है। नलियों में से जो प्रवाही भाग निचुड-निचुडकर अँतडियों में और अँतडियों मे दस्त के रास्ते बाहर जाता है, उस स्थान की पूर्ति स्नायु, चर्बी आदि का द्रव भाग करता है। इस कारण शरीर के समस्त अवयव का प्रवाही भाग दस्त के रास्ते थोड़े ही काल में निकल जाने से शरीर बिलकुल शुष्क और अशक्त हो जाता है।

हैज़े के दस्त में एक विशेष प्रकार की गंध होती है। वह गंध दस्त के साथ आनेवाले एक विशेष पदार्थ की होती है, यह पदार्थ सिर्फ़ हैज़े के ही दस्त में आता है। इसमें यदि शोरे का तेज़ाब मिलाया जाय, तो इसका रंग लाल हो जाता है। रोग ज्यों-ज्यों कम पड़ता जाता है, त्यों-त्यों यह पदार्थ भी कम होता जाता है। और उसके बदले पित्त का भाग दस्त में अधिक आने लगता है।

५—कभी-कभी अँतडी और गुर्दे की तरह फेफडा, हृदय और स्नायु में से भी रक्त-स्राव होने लगता है। यह वात रोग के अत्यंत ज़ोर होने पर होती है, इससे कमज़ोरी और बेहोशी बढ़ जाती है। यदि रोगी जल्दी मर गया हो, तो चीरने पर उसका फेफडा सूखा, चिमड़ा और वज़न में हल्का मालूम पड़ता है। उसे यदि काटा जाय, तो उसमें ख़ून या और किसी प्रवाही पदार्थ की एक बूँद भी नहीं निकलेगी। फेफड़े पर असर इस रोग में ख़ासकर ठंडे देशों में होता है। सन् १८६२ में जब जर्मनी के हेंबर्ग नगर में हैज़ा फैला था, तब १५२ मनुष्यों की लाशें चीरकर देखी गईं, इनमें से ६२ मनुष्यों के फेफड़ों में सूजन थी।

६—गर्भाशय के श्लेष्मावरण में कुछ सूजन हो जाती है और कभी-कभी उसके भीतर का भाग ख़ून से भर जाता है। इससे कमज़ोरी हो जाती है और शरीर ठंडा होने लगता है। बहुधा रक्त-स्राव होने लगता है। सगर्भा स्त्री के ऊपर तथा गर्भ के ऊपर इसका ख़ास असर पड़ता है। अधिकांश में गर्भपात हो जाता है। सगर्भा स्त्री की मृत्यु होने पर गर्भस्थ जीव की भी मृत्यु हो जाती है।

७—इस रोग में मस्तक में भी थोड़ा-बहुत रक्त जमा हो जाता है। यदि रोग ज्यादा दिन तक ठहरे, तो सिर की नसें फूली हुई मालूम पड़ती हैं। यदि ज़्यादा रक्त चढ़ता है, तो बेहोशी हो जाती है। यदि मस्तिष्क में ख़ून न चढ़ा हो, तो भी कभी-कभी सिर्फ़ पेशाब की रुकावट के कारण बेहोशी हो जाती है।

में जमने लगता है। ज्यों-ज्यों रक्त अँतडी में जमा होता है, त्यों-त्यों दस्त ज्यादा होते हैं। यह गोला यदि देर तक रहे, तो जीवन ठहरना कठिन है। पर अधिकांश में यह फिर प्रवाही बन जाता है। ऐसा होने पर फिर हृदय की चाल ठीक ठीक सुनाई पड़ने लगती है। यह बात कही गई है कि इस रोग में एकदम कमज़ोरी आ जाती है, और श्वास रुकने लगता है, तथा नाडी खो जाती है। इन सबका कारण फेफड़े में यथेष्ट रक्त का न पहुँचना ही है। धमनियो में रक्त की कमी से नाडी सुस्त पड जाती है। शिराओं में रक्त की कमी से चेहरा उतर जाता और काला पड जाता है। हर हालत में सभी मनुष्यों पर एक-सा प्रभाव नही पडता। यदि किसी की अँतडी पर ज़्यादा प्रभाव पडता है, तो दस्त, उल्टी ज्यादा आती है। यदि दूसरे अवयवो पर जहर का प्रभाव होता है, तो दुर्बलता बढ़ती है। जब गुर्दे पर प्रभाव पडता है, तब पेशाब बंद हो जाता है। मस्तिष्क पर असर पडने से बेहोश और हृदय पर असर होने से शरीर की मग्नावस्था हो जाती है। किसी वक्त सख्त ज्वर आता है, किसी का शरीर बिल्कुल ठडा पड जाता है। परंतु इसका ख़ास चिह्न चावल के माँड के समान रंगवाला दस्त होता है।

हैज़े की चिकित्सा

यह कहा जा सकता है कि हैज़े की कोई अमोघ दवा नही ईजाद हुई है। परंतु अब तक अँगरेज़ी, यूनानी और आयुर्वैदिक तथा होमियोपैथी जो उपचार उत्तमोत्तम प्रचलित हैं, उनका उल्लेख हम यहाँ करते हैं—

हैज़े का सर्वप्रथम बाह्य चिह्न दस्त है। हैज़े के दिनों मे चाहे जिस कारण से किसी को दस्त लग जायँ, तो भी तत्काल उसका उचित उपचार फ़ौरन् करना चाहिए। हैज़े के दिनो में आँव, मरोड, अतिसार होना अत्यत ख़तरनाक हैं। शुरू से ही उनका ठीक-ठीक इलाज होना उचित है, जिससे रोग रुके, और शरीर कमज़ोर न पड़े। हैज़े का आक्रमण कमज़ोर शरीर पर ज्यादा पडता है। इसलिये इस ऋतु मे शुरू से ही शरीर को सँभालना और रोग का उपचार यथावत् करना चाहिए।

दस्त होने के अनेक कारण हो सकते हैं। कभी-कभी रोग के परमाणु-युक्त और कच्चा अन्न खा लेने से, कभी-कभी अँतडी में पुराने एकत्रित मल के कारण से। कभी-कभी रक्त के दोष से दस्त होने शुरू हो जाते हैं। अस्तु। दस्त चाहे भी जिन कारणों से हो, उन्हें बंद करने से प्रथम आमाशय और अँतडियो में इकट्ठा हुआ मल निकालना बहुत ज़रूरी है। जब तक ये पदार्थ अँतडी में रहेंगे, तब तक रोगी ख़तरे में रहेगा।

यह बात कही जा चुकी है कि हैज़े के दस्तों का मुख्य कारण हैज़े के कीटाणु हैं। और ये कीटाणु ख़ुराक और पानी के साथ पेट में पहुँच जाते हैं। वहाँ से रक्त में प्रवेश करते हैं। आमाशय और अँतडी में ज़हरी रसादि इकट्ठा हो जाता है। दस्त और उल्टी का कारण यही ज़हरी रस है। दस्त, उल्टी के रास्ते यही ज़हर बाहर आता है। यानी प्रकृति शरीर में से बल-पूर्वक इस

योरप में जब सन् १८९२ में हैज़ा फैला, तब जर्मनी, इटली और रूस के डॉक्टरों ने विशेषकर अफ़ीमवाली दवाइयाँ देनी शुरू की। परंतु पीछे की खोज और अनुभवों ने यह बताया है कि जब तक शरीर में रोग का विष बाकी रहे, तब तक अफीम-जैसी चीज़ देनी उचित नहीं। इस ढंग से उपचार करने से संतोष-जनक परिणाम हुआ है। जर्मनी के डॉक्टरों ने रोग के प्रारंभ में 'केलोमल' और एरंडी का तेल रोगियों को दिया, और उत्तम परिणाम पाया। रूस के एक प्रख्यात डॉक्टर का कथन है—हैज़े का ज़हर दस्त के द्वारा ही शरीर से बाहर निकलता है। इसलिये दस्त को एक अंदाज़ से जारी रखना ख़ास तौर से उत्तम है। सन् १८२९ में जो योरप में हैज़ा फैला था, उस वक़्त इँगलैंड की सरकार के कहने से "रॉयल कॉलेज ऑफ़ फिज़ीशियंस" ने हैज़े के रोगियों पर अनुभव करके जो सूचनाएँ समय-समय पर प्रकट की थी, उनका अभिप्राय यह था—

हर हालत में विष शरीर में रहते हुए अफीम-मिश्रित दवा देनी हानिकारक है। परंतु जब देखा जाय कि विष निकल गया है, तब बेशक अफ़ीम की दवा देनी चाहिए।

अफ़ीम-मिश्रित दवाइयाँ, जो हैज़े पर अचूक काम करती हैं, इस प्रकार हैं—

१—जायफल (बड़े) हरएक के दो टुकडे करके एक में गड्ढा खोदकर ३ माशे शुद्ध सिंगरफ़ और दूसरे में २ माशे अफीम भर दे। फिर दोनो को मिलाकर कपरौटी करे। फिर ताँबे की देगची में ७ छटाक घी डालकर वे गोलियाँ उसमें डाल दे। देगची में भी मज़बूत कपरौटी कर दे। नरम आँच से २ घंटे बराबर पकावे। जब कपरौटी सुर्ख़ हो जाय, फिर गोलियों को निकाल पीसकर रख ले। एक रत्ती से ३ रत्ती तक उचित अनुपान से दे। शद्भुत है।

२—अफ़ीम, हींग, कपूर, काली मिर्च, लाल मिर्च के बीज। सब बराबर ले मटर प्रमाण गोली बनावे, अर्क़ गुलाब से दे।

३—महुए की शराब १२॥ सेर, अफ़ीम १६ तोला, जायफल, इंद्रजौ, इलायची प्रत्येक ८ तोला १ महीने बंद कर रक्खे, पीछे २० से ४० बूँद तक काम में लावे।

४—कपूर, इंद्रजौ, सुहागे का फूला, मिरच काली, हिंगुल शुद्ध, मोथा, अफ़ीम सब बराबर ले पानी से गोली चने प्रमाण बनावे। इन्हें काम में ले, उत्तम है।

डॉक्टर लोग जो दवा ऐसे मौक़े पर देते हैं, उनके भी कुछ उत्तम नमूने लिखे जाते हैं—

एरंडी का तेल ६ माशा।

टिंचर ऑफ़ ओपियम १५ बूँद।

पानी शुद्ध २॥ तोला।

इस दवा से ऐंठन फौरन् बंद होती है। दस्तों का वेग कम होता है। एक बार पेट साफ होने पर फिर विष सचय होने का भय है, इसलिये इसको मात्रा अत्यंत उपयोगी है।

हैज़े के रोगी के हाथ-पैर ऐंठते हैं, उससे उसे बड़ी घबराहट होती है। जब तक शरीर

कभी-कभी इस रोग में ख़ून आता है। इसका कारण अँतडी की एकाध नस का जाना है—यह ख़ून आना अत्यंत भयंकर है। यदि वह जारी रहे, तो रोगी की जान जोखि समझना चाहिए। रक्त देखते ही एरंडी का तैल बंद करके नीचे की दवा प्रति घंटे दे उचित है।

तारपीन का तेल २० बूँद, गोंद का पानी १ बूँद, पानी शुद्ध २॥ तोला—अथवा कुरजारि ६ माशा, पानी शुद्ध २॥ तोला, अहिफेनासव १० बूँद।

रोग आराम होने पर कुछ दिन तक खिचडी, साबूदाना, दूध, भात, दाल का पा इत्यादि देना और कोई पाचक वस्तु जैसे गंधकवटी, लवणभास्कर आदि भोजन के पीछे दे रहना।

कभी-कभी रोगी की हालत सुधरते-सुधरते ज्वर चढ़ आता है। और पेशाब बंद हो जा तथा बेहोशी आने लगती है। यह बात बहुधा रोग की प्रारंभिक अवस्था में अफीम वरांडी देने से हो जाती है।

इस अवसर पर ज्वर उतारने और पेशाब लाने को यह अँगरेजी दवा देनी चाहिए- सिडलिट्ज पौडर २ ड्राम, पानी १ औंस।

इसके बाद प्रत्येक आधे घंटे पर यह दवा दे—नीबू की सिकंजबीन ६ माशा, अर्क़ गुल २॥ तोला, अर्क़ सौंफ़ २॥ तोला। (३ मात्रा)

यदि पेशाब बंद हो या थोडा आता हो, तो गुर्दों पर फौरन् जोंक लगवाकर ख़ून नि लवा डालना चाहिए। या भरी हुई सींगी लुडवानी चाहिए।

होमियोपैथी पद्धति मे भिन्न-भिन्न लक्षणों और उपद्रवों का इस तरह प्रतिरोध लिखा है-

(१) अधिक कै-दस्त होने और कपाल पर ठंडा पसीना आने पर, 'वेराट्रम ६' देना।

(२) हाथ-पैर की अधिक ऐंठन पर 'किउआम ६' देना।

(३) क़ै-दस्त के साथ प्रबल प्यास, गात्र-दाह होने पर भी रोगी वस्त्र से शरीर ढँक रखने की इच्छा करे, शरीर निढाल हो जाय, दुर्बलता और अस्थिरता दिखाई दे, 'आरसेनिक ६' देना।

(४) क़ै-दस्त के साथ पेट में ज्वाला या तीव्र वेदना और मृत्यु-भय तथा छटपटा अधिक हो, तो 'एकोनाइट रेडिक्स मादर' देना।

(५) निरंतर वमनोद्वेग, वमन होने पर भी शांति न हो, तो 'इपीकाक ६' देना।

(६) पर वमन होते ही वमनेच्छा की शांति हो जाय, तो 'आटिम टार्ट ६' देना।

(७) गर्म दस्त, गर्म क़ै, प्रबल प्यास या प्यास बिल्कुल न हो, तो 'पडो फ्राइड ६' देना।

(८) शीतांग हो, पर भीतर दाह हो, बेहोशी हो, तो 'सिकेली ३' देना। हिमांग सर्व शरीर नीलवर्ण, दस्त, कै और पसीने की अल्पता और अंतर्दाह पर 'कैफ़र' देना।

परंतु जहाँ उपर्युक्त व्यवस्था न बन सके, वहाँ दस्त पर राख या मिट्टी डालकर बस्ती से दूर ऐसे ढंग से ज़मीन मे गाड देना चाहिए कि जिससे बस्ती में उसका कुछ बुरा प्रभाव न हो। दस्त को जलाशय के पास डालना या जलाशय में रोगी के दस्त, उल्टी के कपड़े धोना अत्यंत भयंकर है। दस्त उठानेवाले मनुष्य के हाथ गर्म पानी और कार्बोलिक साबुन से तुरत धुला देने चाहिए।

जिस ज़मीन पर या बर्तन में रोगी ने दस्त किया हो, उसे ख़ूब साफ करना चाहिए और गर्म अंगारे या गर्म राख डालनी चाहिए। धरती पर यदि हुआ हो, तो जगह साफ करके वहाँ पर कार्बोलिक पौडर डालना चाहिए। अगर फर्श पक्का हो, तो उस पर २ अंगुल मोटी मिट्टी बिछी रहने देना चाहिए, पर यदि धरती कच्ची हो, तो उसकी सफाई की ज़्यादा चिंता करनी चाहिए। सबसे अच्छी बात तो यह है कि वहाँ से एक-एक बालिश्त मिट्टी खोदकर नई मिट्टी भरकर गोबर से लीप देना चाहिए। मिट्टी शहर से दूर फेंकी जाय। इस प्रकार मिट्टी खोदना ख़तरे से खाली नहीं है। चाहिए तो यह कि जिस कमरे में रोगी रहा हो, या उसने दस्त-उल्टी की हो, वहाँ १०-२० दिन न जाना चाहिए। और उसके बाद उसे साफ करना चाहिए।

खुराक—पके हुए भोजन मे हैज़े के कीटाणु बहुधा प्रवेश कर सकते हैं। उन दिनों में किसी को ठंडा या बासी पदार्थ नहीं खाना चाहिए। तुरंत का पकाया हुआ गर्म भोजन करना चाहिए। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि इन दिनों में गुड, मिठाई, शक्कर आदि जिन चीज़ों पर मक्खियाँ पहुँच सकती हों, उनका बिल्कुल उपयोग नहीं करना चाहिए, बल्कि इन चीज़ों को पास भी नहीं रखना चाहिए। कच्चे अनाज में इन जंतुओं का बहुत कम प्रभाव होता है। यदि कुछ प्रभाव होता भी है, तो पकाते वक्त वे नष्ट हो जाते हैं। घर के प्रत्येक मनुष्य को नियमित रीति से पचन हो सकने योग्य हल्की खुराक लेनी चाहिए।

जल—जिस घर मे हैज़ा हुआ हो, वहाँ का तमाम पानी फेंक देना चाहिए। तमाम मिट्टी के घड़े फोड़ देना, और ताँबे-पीतल के बर्तनों को काम में लाना चाहिए। उन्हें भी अच्छी तरह तपा लेना चाहिए। जिस कुएँ या तालाब का पानी घर में आता हो, उसकी जाँच करानी चाहिए। और जहाँ का पानी शुद्ध हो, वहाँ से मँगाकर काम मे लेना चाहिए। नल का पानी प्रायः ऐसे मौक़े पर शुद्ध रहता है। पानी पीने और खाने के बर्तन भी थोड़ी देर आग या गर्म राख में रखने चाहिए।

मोरी और नावदान—मोरी और नावदानों को कार्बोलिक पौडर या कलई, चूना डालकर साफ़ रखना चाहिए। उसमें हर वक्त फ़िनाइल की गोली पडी रहनी चाहिए। गंदा पानी घर के बाहर कभी जमा न रहना चाहिए।

रोगी के काम में आए हुए कपडे, बिस्तरे बिना अच्छी तरह स्वच्छ किए कदापि काम में न लाने चाहिए। इन कपड़ों को उबलते पानी में आध घंटे तक रखने से उनमें के तमाम

सुगंध द्रव्य—हैज़े के दिनों में रोग-नाशक द्रव्यों से जलानेवाली धूप तैयार करनी चाहिए। लोबान, गूगल, कंकोल, सफ़ेद चंदन, गिलोय, बालछड़, छारछड़ीला, मोथा, कपूर, कचरी, लौंग, जायफल, जावित्री आदि सुगंधित पदार्थों की धूप बनानी और घर में जलानी चाहिए।

म्युनिसिपैलिटियों का कर्तव्य

स्थानीय म्युनिसिपैलिटियों का यह मुख्य कर्तव्य है कि वह नगर के पीने के पानी की सद्व्यवस्था कायम रक्खें। उसे साफ करने का भरपूर बंदोबस्त करें।

जिन बस्तियों में हैज़ा फैल रहा हो, वहाँ से यदि कोई मनुष्य अपनी बस्ती में आवे, तो उसे जलाशय पर नहाने, कपड़े धोने या बासन धोने की मनाही कर देना चाहिए। क्योंकि उनके शरीर और वस्त्रों में रोग के जंतुओं का लगा रहना अत्यधिक संभव है। ऐसे लोगों के लिये जल लेने के लिये प्याऊ का बंदोबस्त करा देना चाहिए। म्युनिसिपैलिटियों का यह भी कर्तव्य है कि यदि बस्ती के निकट का जल गंदा हो गया हो, तो नल के ज़रिए दूर का पानी बस्ती में लावे। और ज्यों ही उसे यह संदेह हो कि अमुक कुएँ का पानी ख़राब है, उसे तुरंत ही उसका पानी बंद करा देना चाहिए। जलाशय को शुद्ध रखने के लिये नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना चाहिए—

(क) पानी भरने को आनेवाले मनुष्यों के हाथ, पैर, कपड़े और बर्तन में रोग की छूत लगने का संदेह हो, तो उन्हें जलाशय के पास नहीं जाने देना चाहिए।

(ख) म्युनिसिपैलिटियाँ अपने आदमियों को तैनात करें, जो ऐसे लोगों को अपने डोल भर-भरकर पानी अलग से दे दिया करें।

(ग) जिस पानी को लोग पीने के काम में लेते हों, उसमें कोई नहाने या कपड़े धोने न पावे, न वहाँ कोई बासन माँजने पावे।

(घ) जिन गाँवों में नदी, तालाब के ऊपर जंगल जाने, वहीं दाँतन-कुल्ला करने और लोटा साफ करने का रिवाज है, वहाँ अगर हैज़ा फैल रहा हो, तो उन्हें रोकना चाहिए।

(ङ) बड़े-बड़े मेलों में जहाँ लोग ठहरें, वहाँ गंदगी न हो, पानी स्वच्छ और ख़ुराक अच्छी मिले, और यदि कोई रोगी हो जाय, तो फौरन् अस्पताल में ले जाया जाय। और यदि मेले में हैज़ा फूट निकले, तो यात्री अपने साथ रोग की छूत न ले जायँ, इसका पूरा-पूरा प्रबंध करना चाहिए।

(च) जब बस्ती में रोग फैलने का भय हो, तो प्रत्येक कुएँ का पानी निकलवाना और उसमें 'पर्मेंगनेट ऑफ़् पुटेशियम' डालना चाहिए। एक कुएँ के लिये २॥ तोला 'पर्मेंगनेट ऑफ़् पुटेशियम' काफ़ी है, जिसकी क़ीमत तीन-चार आना होती है। इस दवा के पानी में पड़ने से पानी का रंग जामनी हो जाता है। पानी में डालने के आध घंटा तक

उसका रंग वैसा
ही में दवा का
देनी चाहिए।

यह दवा प
है। बहुधा गाँव
पानी छोड़कर

'पर्मेंगनेट'
दवा घोल लेनी
तब बाहर खींच
आयगा। फिर
पानी में मिल
रंग न हो, तो

अगर पर्मेंग
कुओं में डुबा जा
चाहिए। इसके
इस तरह ॥॥ घ
जिसे जिस कुएँ
चाहिए। साधारण

किसानों में भी पानी साफ़ [illegible]
है। एक कुएँ के लिये [illegible]
[illegible] है कि एक बर्तन में [illegible]
[illegible] में डुबाकर दिया [illegible]

अध्याय बीसवाँ

प्लेग

प्रकरण १

प्लेग का इतिहास

हिंदोस्तान मे सन् १८९६ में प्लेग पहलेपहल बंबई शहर मे शुरू हुआ। दो-चार दिन तो लोगों का इस तरफ ध्यान ही न गया, परंतु शीघ्र ही इससे चटापट मृत्यु होने लगीं, और बडी तेज़ी से रोग शहर में फैलने लगा। तब लोगों ने समझा कि यह एक भयकर छूत का रोग है।

प्लेग एक प्राचीन रोग है, और इसकी जन्म-भूमि मिश्र देश है। मुसलमानी धर्म-प्रचार से प्रथम यहाँ यहूदियों की बडी बस्ती थी। वे लोग इसे ईश्वर का कोप मानते थे। उनके पास इसका कोई उपाय न था। वे इसे 'दोज़ख़' कहकर मानते थे। प्रसिद्ध बादशाह डेविड के समय मे मिश्र मे इसका भयंकर ज़ोर हुआ था। उसने इसकी रोक-थाम के लिये कई क़ानून भी बनाए थे, पर उससे कुछ हुआ नहीं। लाखो मनुष्यो ने मिश्र देश छोड़कर अन्य देशों में रहना स्वीकार किया था।

एथेंस, रोम, क़ुस्तुंतुनिया आदि बड़े-बडे नगरों मे यह रोग समय-समय पर फैलता रहा है। सन् ५४२ ई० के बाद योरप और एशिया मे इसका फैलाव हुआ। मिश्र से एक तरफ़ सीरिया, ईरान और हिंदोस्तान में उधर यूनान और इटली मे फैला। शीघ्र ही इस महारोग ने, जहाँ गया, आधी बस्ती का संहार कर दिया। इतिहासकार गिबन का कहना है कि एक ही समय में जस्टीनियन राजा की प्रजा के ऊपर युद्ध, अकाल और इस महारोग का हमला हुआ। तब से अब तक भी उस सुंदर देश की प्रजा-संख्या पूरी न हुई।

सन् ६३९ में सीरिया मे बडा भारी अकाल पडा था। उसके बाद ही प्लेग फैला, शीघ्र ही आस-पास के देशों मे भी रोग आँधी, तूफ़ान की तरह फैल गया। अमीर-ग़रीब जो चपेट में आया, स्वाहा हो गया। बहुत कम लोग बचे। एक अरब-सरदार ने शहर-के-शहर उजडवाकर ऊँचे स्थानों पर फिर से नगर बसवाए, पर उससे भी कुछ हुआ नहीं।

सन् १३३१ और १३६८ में इँगलैंड मे भयंकर प्लेग फैला। इसके बाद सन् १५६३-६४ में फैला। इस पिछले साल में लंदन के एक ही क़ब्रस्तान में ५००००० मनुष्य गाड़े गए थे।

कुटुंब-के-कुटुंब स्वाहा हो गए। कहीं-कहीं तो लाश उठाने को मनुष्य नहीं मिले, और कि को मुर्दे श्मशान में पहुँचाने पड़े। जलाने के लिये ईंधन का भी तोडा पड़ गया। और लो ने घर की ईंटें और किवाडे उतारकर मुर्दे जलाए। इस मरी में अहमदाबाद की १ ल आबादी मे से ५० हज़ार मर गए थे।

सन् १८ ४ में वडी भारी वरसात हुई थी। १८१५ की मई में कच्छ में रोग फैला शीघ्र ही रोग का प्रचंड रूप हो गया। रोगी की वग़ल में गाँठ होती थी, कोई-कोई पत्थर के समान सख्त होती थी। इस समय तेली लोगों को यह रोग विलकुल न हुआ था।

सन् १८२६ में रोग वागड मे आया, और वर्ष के अंत तक संपूर्ण सिंध में फैल गया।

सन् १८३६ में फिर यह रोग राजपूताने में आ दाख़िल हुआ। सबसे पहले 'पाल गॉव मे केस हुए। वहाँ से इधर-उधर फैला। उस समय उसका नाम 'पाली प्लेग' ही म हूर हो गया था। इसके बाद धीरे-धीरे रोग पंजाब, उत्तर-हिंदोस्तान और हिमालय की तर मे समय-समय पर दीखता रहा। अंतिम बार सन् १८७७ में कुमायूँ-ज़िले में रोग फैला।

परंतु इन सबसे अधिक भयंकर मरी लंदन में, सन् १६६४-६५ मे, फूट निकली थी उस समय भारत की तरह वहाँ भी वड़े वहम चलते थे। लोगों का यह विश्वास हुआ कि शनि और मंगल के संयोग के कारण ही यह प्रजा-संकट आया है। कुछ लोगो का विश्वा था कि इसकी उत्पत्ति पूँछले तारे के कारण हुई है। जैसे जोशी वावा आजकल यहाँ लंद तिलक-छाप लगाए घूमते है, वैसे ही उस समय वहाँ घूमते थे।

पहले यह रोग वर्ष के अंत मे वेस्ट मिनिस्टर-विभाग में रहनेवाले एक परिवार में दाख़िल हुआ। उसके २-३ मनुष्य मरे। यह छूत का रोग है, यह पडोसी जान गए थे। कितने ही घ छोड़ शहर के दूसरे भागो मे फैल गए। फलत. तमाम शहर मे रोग फैलने लगा। इस रोग में प्रायः जॉघ मे जायफल के समान गाँठ होती थी, और उसके आस-पास काले रंग का च रहता था।

रोग फैलते-फैलते कड़ी सर्दी पडने लगी। दिसंवर का महीना था। ३ मास तक नदी का पानी जमा रहा। इतनी सर्दी मे रोग विलकुल शात रहा, पर ज्यों ही वर्फ गलने लगा कि रोग ने फिर ज़ोर वाँधा। मई के महीने में रोग भडका। सितंवर महीने में २५ हज़ार मनुष्य मरे। लाशों को उठानेवाला कोई न रहा। घर-घर लाशें सडने लगी। वहुधा मैदानी ज़मीन में वडा भारी गढ़ा खोदकर २०-३० मुर्दे उसमें डाल दिए जाते थे। प्रायः ऐसा होता था कि आज जो मुर्दे को उठाकर गढ़े मे डाल आया है, कल उसी को उसी गढ़े में डाला जाता।

ऑक्टोबर में सिर्फ़ १० हज़ार मनुष्य मरे, और दिसंवर में रोग शात हो गया। उस समय लंदन की आवादी २। लाख के लगभग थी, जिसमें उस साल ६७ हज़ार से ऊपर मनुष्य मरे थे। शायद ही कोई रोगी जीता वचा होगा। वहुधा स्त्रियाँ विस्तरे में अपने वच

की ही ऋतु मे प्लेग बहुधा होता देखा गया है। इससे यह बात माननी पड़ती है कि हवा भी प्लेग के जंतुओं का पोषण अवश्य करती है। इस हवा को ऋतु में एक घ दूसरे घर और दूसरे से तीसरे घर इस प्रकार रोग-युक्त हवा फिरती रहती है, फिर जहाँ विशेष गदगी देख पड़ती है, वही उसका आक्रमण हो जाता है। उसका विस्तार चूहे रोगी के वस्त्र और मल-मूत्र से होता है।

उस समय शहर की सफाई का प्रबंध अच्छा न था, और शहर का यह भाग तो अ गंदा और दुर्गंधित रहता था। वहाँ बहुत-से मकान गंदे, अँधेरे और सील भरे थे। जाने-आने की उनमें गुंजाइश नहीं थी। गटर और गदे नालों का पानी बहुत कम निकल था। वह वहीं ज़मीन में जज़्ब होता था। म्युनिसिपैलिटी की तत्कालीन रिपोर्ट में लिखा कि उस साल नित्य १२॥ लाख मन पानी आमद की अपेक्षा कम निकलता था। यही का था कि इतना पानी ज़मीन मे सूखने से कुओं का पानी ३-४ फ़ुट ऊँचा चढ़ आया था। रो शुरू होते ही गटर साफ़ होने शुरू हुए, और लाखों मन सडी कीचड बाहर निकाली गई यह जब धूप मे सडी, तब अनेक प्रकार के रोग की ज़हरी गैस बनी, और रोग का ज़ोर बढ़ा प्लेग के साथ अन्य प्रकार के भी ज्वर बढ़ने लगे। अभिप्राय यह कि जिस समय बबई में रो फैला, उस समय रोग फैलने के तमाम कारण नगर में थे, सिर्फ उसके कीटाणु-प्रवेश की दे थी, और कीटाणु आते ही रोग बुरी तरह फूट पडा।

कभी-कभी ऐसा भी मालूम होता है कि ऋतु-परिवर्तन के साथ-साथ प्लेग-जैसे संक्रा मक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। वर्षा-ऋतु में वर्षा ठीक-ठीक हो और पानी का निकास यथा वत् हो, तो जो गंदगी दूसरी रीति से निकलना कठिन है, वह आसानी से निकल जाती है। परंतु जब बरसात कम पडती है, तब इसके विपरीत होता है। अर्थात् मैल और गंदगी वहीं गीली होकर सडती रहती है, निकलती नहीं। पीछे तेज़ धूप पड़ने से उसमें से गैस पैदा होने लगती है। नियमित रीति से रोग प्रथम चूहे के शरीर में प्रवेश करता है, और फिर रोगी के वस्त्र, मल-मूत्र के स्पर्श से सर्वत्र फैलता है।

प्लेग के जंतुओं को गर्मी की ऋतु प्रतिकूल है। गर्मी मे बहुत-से रोग-जंतु नष्ट हो जाते हैं, जो शेष रहते हैं, वे निर्बल हो जाते हैं। एक बडे अस्पताल के चीफ मेडिकल ऑफिसर डॉक्टर एन्० एच्० चौकसी ने प्लेग-कमीशन के सम्मुख बयान दिया था कि उनके अस्पताल मे, मई और जून मास में, प्लेग के फ़ीसैकडा ५६-४० रोगी मरे थे, जिनमें अधिकांश अशक्त और कंगाल थे।

प्लेग का विष नीची और गीली धरती मे या नीचे के मकानों मे ज्यादा होता है और ऊँचे तथा हवादार घरों में कम। यह रोग भंगियों को अधिक लगना संभव है। परंतु यदि वे खुलासा हवा में रहें, तो उनका बचना बहुत संभव है। बड़े-बड़े शहरों मे उन्हीं लोगों का प्लेग का आक्रमण होता है, जो नीचे के अँधेरे घरों में रहते हैं। बंबई के प्लेग-कमिश्नर के

जाता है। कभी-कभी तो १०६°, १०७°, १०८° तक हो जाता है। बच्चों और मज़बूत आदमियों मे रोग का वेग प्रबल होता है।

कभी-कभी ज्वर तेज़ न होने पर भी रोग बहुत मालूम पड़ता है। साधारणतया प्रातःकाल की अपेक्षा शाम को ज्वर एकाध अंश अधिक होता है। जिन्हें आराम होना होता है, उन्हें ६-७ दिन तक ज्वर आकर फिर धीरे-धीरे उतर जाता है। १०वें दिन बिलकुल उतर जाता है। पर यदि गाँठ पकने लगे, तो ज्वर जल्दी नहीं उतरता, पकने पर उतर जाता है। कभी-कभी ज्वर एकदम उतरने लगता है, इससे रोगी की दशा प्रायः ख़तरे में पड़ जाती है। रोगी प्रायः बेसुधी की अवस्था में मृत्यु पाते हैं। किन्हीं-किन्हीं रोगियों को तीन-चार दिन ज्वर आने पर गाँठ पक जाती है, इससे बहुत कुछ ज्वर कम हो जाता है। अगर गाँठ का ज़ोर कम हो, तो उसके चीरने से ज्वर का वेग कम हो जायगा, और रोगी सुधरने लगेगा। अगर गाँठ का ज़ोर अधिक होगा, तो ज्वर फिर तेज़ हो जायगा, और वह इसी तरह उतरता-चढ़ता रहेगा, जब तक कि रोग की प्रबलता न कम हो जाय।

कभी-कभी एक गाँठ होने पर दूसरी गाँठ और उठ खड़ी होती है। कभी-कभी फेफड़ों में सूजन आ जाती है। ऐसा होने पर ज्वर बहुत दिन तक ठहरता है, और इसमें से शायद ही कोई बचता है।

प्लेग की गाँठ ख़ासकर जाँघ की जड़ में, बग़ल मे और गले में उत्पन्न होती है। बहुधा ज्वर और गाँठ एक साथ ही देखे जाते हैं। कभी-कभी यह गाँठ पहले देख पड़ती है और ज्वर पीछे मालूम पड़ता है। कभी-कभी इसके विपरीत भी होता है। गाँठ की जगह पहले दर्द होता है, और फिर वह जगह मोटी होती जाती और दर्द बढ़ता जाता है। कभी-कभी गाँठ छोटी होती है। फिर भी उसमें इतना सख्त दर्द होता है कि ऐसा भयंकर दर्द शायद ही कहीं देखने मे आता हो। वास्तव में इधर की चमड़ी का जहाँ ज़्यादा तनाव-खिचाव होता है, वहीं अधिक दर्द होता है। सूजन की जगह हाथ नहीं लगाया जाता। बेहोश रोगी भी वहाँ छूते ही चमक पड़ता है।

यह ध्यान करने योग्य बात है कि गाँठ के चारो तरफ यथेष्ट सूजन रहती है। बहुत से रोगियों की जाँघ में यदि गाँठ हुई, तो लगभग आधी जाँघ सूज जाती है। बग़ल में यदि गाँठ हुई, तो बग़ल के आस-पास और छाती तक भी सूजन आ जाती है। पीठ पर भी सूजन चढ़ जाती है। कभी-कभी गले के दोनो ओर का भाग तथा माथा भी सूज जाता है। गले की सूजन ख़तरनाक होती है, पर जाँघ की सूजन उतनी भयानक नहीं होती, क्योंकि यह सूजन ख़ासकर रक्त-नलियों में रक्त-स्राव उत्पन्न होने से होती है। सूजन के फैलाव होने पर रोगी यदि ज़िंदा रहे, तो वह पत्थर के समान सख़्त और पीड़ा-युक्त हो जाती है। इस जगह पर यदि फस्त दी जाय, तो बहुत थोड़ा रक्त निकलता है। पर इससे रोग शायद ही कम होता है। सूजन बहुत ज़्यादा होने पर शायद ही कभी रोगी को आराम होता है।

(३) तिल या नारियल का १ सेर तेल लेकर २ तोला नखी (यह दवा पंस मिलेगी) खूब बारीक पीसकर प्रथम १ छटाँक तेल के साथ कलछी में खूब तेल में डाल दीजिए, फिर उस बर्तन का मुख बंद करके ४ दिन तक रख छो नित्य २-३ बार हिलाइए। ४ दिन बाद छान डालिए, तैल शुद्ध-पतला और निर्म जायगा।

(४) नारियल का १ सेर तेल लीजिए। उसमें २ छटाँक सोडा (साधारण) पानी में घोलकर मिला दीजिए, और आग पर पकाइए। जब आधा पानी जल ठंडा कर लीजिए और हाथ से खूब मथिए। मक्खन के समान हो जायगा। ४ दिन भाँति रहने दीजिए, फिर तेल से चौगुना पानी डालकर मथिए, सब सोडा पानी में जायगा। अब मक्खन के समान तेल को आग पर पकाइए। और जब पानी का अंश जाय, तब उतारकर उसमें २॥ तो ा हलका गंधक का तेजाब डाल दीजिए। २ दिन रख दीजिए। बीच-बीच में हिला दिया कीजिए। सब तेल फटकर तेजाब और गोंद नी जायगा, तेल को निथार लीजिए। और एक बार फिर पका लीजिए जिससे तेजाब का अंश भी उड़ जाय।

इस प्रकार तेलों को शुद्ध करके अब उन्हें नीचे लिखी रीति से जैसा पसंद हो, कर लीजिए।

१—भाँगरे का रस ४ सेर, शुद्ध तिल का तेल १ सेर, मजीठ ५ तोला, लो तोला, चंदन सफेद, खरेटी, हल्दी, गेरू, दारु हल्दी, मेहँदी, मुलहठी, नागकेसर, ५-५ तोला सबको बकरी के दूध में भंग की तरह पीसकर लुगदी बना लें।

इसके बाद तेल, भाँगरे का रस और १ सेर दूध बकरी का तथा यह लुगदी आग पर चढ़ाकर मंदाग्नि से पकाइए। जब देखिए कि पानी का अंश जल गया, तब लुगदी लेकर उँगली से बत्ती बनाइए, जब बत्ती बनने लगे, उतारकर वैसा ही रख दीजि ३ दिन बाद छानकर काम में लाइए। आवश्यकता हो, तो ब्लाटिंग पेपर से छानना चाहि यह तेल बाल काले करता है, और मस्तिष्क की तरावट के लिये उत्कृष्ट है। यह तेल सि की भी उत्कृष्ट औषध है।

२—मेहँदी ५॥, लाल चंदन ५-, गुलाब के फूल ५-, विकना ५-, सबको जौकुट कर सेर पानी में पकाइए। जब १ सेर पानी रह जाय, तो उतारकर मल छान लीजिए। यह काढ़ा, ५॥ सेर आँवले का रस, ५॥ सेर भाँगरे का रस, १ सेर तिल का तेल मिल पकाइए। जब पक जाय, तो उतारकर छान लीजिए। इसके बाद ५- कड़ू का तेल, १ सेर मिलाकर दो दिन शीशे बंद करके रख दीजिए। यह तेल बालों के लिये बड़ा लाभदायक है।

३—तिल का शुद्ध तेल १ सेर, आँवले का रस ५, हरे आँवले का रस १ सेर, ब

प्लेग में मरे हुए रोगियों के फेफडे, हृदय, गुर्दा, मग़ज़, आमाशय, अँतडी, कलेजा आदि अवयवों में कम या ज्यादा रक्त-स्राव दिखाई पडता है।

चिकित्सा

१—प्रत्येक २ घटे बाद टिंचर आइडिन ४-४ बूँद रोगी को पानी में मिलाकर देते रहो। खाना मत दो। पानी ख़ूब पिलाओ। गिल्टी को या तो सोना गर्म करके दाग दो या जोंक से उसका ख़ून निकलवा दो। टिंचर आइडिन की पिचकारी भी लगानी उत्तम है।

२—अन्य चिकित्सा सन्निपात या अभिन्यास ज्वर के अनुसार करनी चाहिए। रोग भयानक है। उत्तम है कि उच्च कोटि के डॉक्टर को रोगी सौंप दिया जाय। क्योंकि अभी तक इस रोग की अव्यर्थ दवा नही मिली है।

३—केसर, बीजाबोल, एलुआ तीनो चीज़ें सम भाग लेकर गुलाब-जल मे घोटकर चने के समान गोलियाँ बनाओ, और प्लेग के दिनों मे नित्य रात्रि को एक गोली खाते रहो, तो प्लेग का आक्रमण होने का भय न होगा।

अध्याय इक्कीसवाँ

कुछ महत्त्व-पूर्ण रोग

प्रकरण १

मोतीझरा या टाइफ़ाइड ज्वर

उत्पत्ति और लक्षण

यह ज्वर एक रोग-कृमि से होता है। साधारणतया यह ज्वर [illegible] सप्ताह तक रहता है। [illegible] कभी-कभी ७ से १० दिन के भीतर ही उतर जाता है।

इसके प्रारंभिक लक्षण अशांति, सिर-दर्द और [illegible] हैं। [illegible] तथा [illegible]

[illegible] रहता है। बहुधा आरंभ में जाड़ा लगता है।

प्रायः शुरू में प्रातःकाल ज्वर १०२ ।° [illegible] रहता है और संध्या को १०४ या १०५ [illegible] हो जाता है। नाड़ी ८०-९० प्रति मिनट चलती है। बहुत बार यह होता है कि [illegible] तक [illegible] जाता रहता है, और लगभग ८-१० दिन तक [illegible] जाता [illegible] रोगी [illegible] पर नहीं लेटता।

रोग में प्रथम कुछ दिन पीछे ज्वर १०३ ।° [illegible] रहने लगता है। [illegible] के लिए [illegible] होता है, जीभ पर [illegible] जम जाता है। भूख नहीं लगती, [illegible] हो जाती है, [illegible] तन जाता और दुखता है। [illegible] हो जाता है [illegible] रोगी देर तक सोता रहता है।

रोग के दूसरे सप्ताह में रोगी का ज्वर अधिक होता है। [illegible] के कारण [illegible] [illegible] पर दिखाई देते हैं। होंठ और [illegible] रंग का [illegible] हैं। ऐसे रोगियों में से एकाध की नाक से रक्त निकलता है। [illegible] निकलता है कि [illegible] को [illegible] रंग का कर देता है। और [illegible] होता है। रोगी कभी-कभी [illegible] की दशा में हो जाता है। [illegible] होता है।

[illegible] सप्ताह में ज्वर धीरे-धीरे घटने लगता और रोग [illegible] होने के [illegible] दिन के [illegible] तक उतर जाता है, [illegible] हो जाता है। [illegible] का [illegible] होने का [illegible] सोलहवें सप्ताह के अधिक रहता है।

उसकी छूत

इस रोग की छूत रोगी के जूठे पानी, दूध तथा ख़ुराक से दूसरे पुरुष को लगती है। इस रोग का ख़ास प्रभाव अँतड़ियों पर होता है। इसलिये इस रोग का दस्त बहुत सावधानी से नष्ट करना चाहिए। उसमें इस रोग के अधिक जंतु होते हैं। इस रोग की छूत हवा द्वारा एक दूसरे पर नहीं लगती।

उत्पत्ति का कारण

इस रोग की उत्पत्ति एक ख़ास प्रकार के कृमि द्वारा होती है, जो रोगी के दस्त में पाए जाते हैं। यदि यह दस्त कुएँ, तालाब या खुली जगह में फेंक दिया जाय, तो उससे यह रोग दूसरे पुरुष को भी लग सकना संभव है। प्रायः हमारे देश में एक ही टट्टी में, बिना साफ़ किए, दूसरे व्यक्ति टट्टी चले जाते हैं, ऐसी दशा में यह भयानक रोग आसानी से लग जाता है, और बहुधा ऐसा होता देखा भी गया है।

यह रोग १५ से ३० वर्ष की आयुवाले व्यक्तियों को अधिक लगता है।

उपाय

इस रोग में औषध की बहुत कम ज़रूरत है। अधिकतर तो ठीक-ठीक सेवा टहल और उचित भोजन ही लाभदायक है। रोगी को एक साफ हवादार कमरे में लिटाना चाहिए, और उसे प्रारंभ ही से पूरा विश्राम देना चाहिए। जब तक संपूर्ण नीरोग न हो जाय, हलने चलने न दो। दस्त, पेशाब भी वहीं कराओ। दस्त बर्तन या बेडपेन में कराओ, और उस पर तत्काल 'कार्बोलिक-पौडर' या कोई जंतुनाशक दवा बुरक दो।

ख़ुराक में कोई सफ़ील चीज़ न दो। बिलकुल नरम भोजन दो। दूध, साबूदाना, बार्ली, दलिया, दाल का जूस आदि। दूध के साथ थोड़ा सोडा या लाइम वाटर देने से अच्छा रहता है। दिन में १ बार तमाम शरीर तथा हाथ, पैर और मुख ३-४ बार गुनगुने पानी में धो डालो। इससे उसकी प्रकृति ठीक रहेगी तथा ज्वर नरम होगा।

यदि पेट में ज़्यादा दर्द हो, तो उस पर अलसी की पुलटिस बाँधो, या गर्म जल में थोड़ा तारपीन का तेल डालकर सेंक कर दो।

इस रोग में एकदम दस्त बंद करना ठीक नहीं। हाँ, यदि दस्त अधिक हों और रक्त आवे, तो योग्य चिकित्सक की सम्मति से दवाई दे।

गुनगुने पानी में कपड़ा भिगोकर शरीर को १५-२० मिनट तक पोंछो, फिर उसे सूखे तौलिए से न रगड़ो, पंखा करके सुखाओ। यह उत्तम चिकित्सा है, क्योंकि इससे ज्वर उतरता है, और रोगी की तबियत सुधरती है। ऐसे स्नान से सर्दी लगने का भय न करो। यदि ज्वर ख़ूब तेज़ हो, तो यह स्नान दिन में दो-तीन बार करो।

यदि सिर में दर्द ज़्यादा हो, तो एक कपड़ा बर्फ़ के पानी में भिगोकर और निचोड़कर

रोगी के सिर पर लगाओ। इस कपड़े को ३-६ मिनट के अन्तर से बार बार भिगो कर [illegible] करना उचित है।

यदि टट्टी में रक्त दिखाई दे, तो १०-१२ घंटे तक [illegible] भी भोजन न दो। [illegible] पोटली बाँधकर पेट पर रक्खो।

रोगी के इस्तेमाल की प्रत्येक वस्तु पृथक रक्खी जाय। जो [illegible] रोगी की [illegible] में हों, उन्हें 'पर्मेंगनेट ऑफ़ पुटास' के पानी से साफ़ धोने चाहिए।

रोग दूर होने पर एक डॉक्टरी दवा यूरोटोपिन १० [illegible] देनी चाहिए।

मोतीझरा रोकने के उपाय

मोतीझरा के जंतु पेट में मुँह से ही भीतर से घुसते हैं, तो [illegible] के साथ चले जाते हैं। भारत में प्रायः रोगों में [illegible] रोगों में भी फैल जाते हैं। [illegible] से भी रोग [illegible] हैं।

गाँवों में प्रायः एक ही कोठरी में [illegible] रहते हैं, [illegible] वही पानी पिया जाता है। [illegible] रोगों को [illegible] हैं।

मक्खियाँ मोतीझरा ज्वर फैलाने में [illegible] हैं। [illegible] सुरक्षित रक्खो।

[illegible] ही में इस रोग का एक नया [illegible] है। [illegible] वैज्ञानिक विचारों से [illegible] में [illegible] हैं, [illegible] सुरक्षित रहता है।

प्रकरण २

इन्फ़्ल्युएंज़ा और ज़ुकाम

इन्फ्ल्युएंज़ा इंगलैंड का रोग है। महायुद्ध के बाद भारत के २० लाख मनुष्य इसकी भेंट हुए थे। तब से यह प्रतिवर्ष होता है, और इसके लक्षण प्रथम साधारण ज़ुकाम जैसे होते हैं, पर तत्काल ही बढ़ जाते है। प्रारंभ में नाक बंद हो जाती है, छींकें आती हैं, नेत्रों से पानी गिरता है, सिर में दर्द होता है, पीठ में पीड़ा होती है, सूखी खाँसी होती है और कुछ ज्वर भी आता है। ज्वर १०५F तक हो जाता है।

यह अति शीघ्र उडकर लगनेवाला रोग है। दूसरे को खाँसते, छींकते, साँस लेते समय यह रोग लग जाता है।

रोगी को पूरा विश्राम करना चाहिए। टाँगों और पैरों का गर्म स्नान करना चाहिए, जो कि हम आगे ज़ुकाम के प्रकरण में यही बताएँगे। रोगी को जल ख़ूब पीना चाहिए। पैर गर्म रखना, नरम और द्रव भोजन करना चाहिए।

नीचे लिखा अँगरेज़ी नुस्ख़ा बहुत फ़ायदा करता है—

सोल्यूशन ऑफ़् ऐसी टेट ऑफ़् एमूनिया ६ ड्राम, सालिसिलेट ऑफ़् सोडा २० ग्रेन, शर्बत १½ ड्राम, पानी शुद्ध ३ औंस, ⅓ भाग दिन में ३ बार देना चाहिए।

यदि दस्त में कब्ज़ियत हो, तो उसी दवा में ३ ड्राम सल्फेट ऑफ़् मगनेशिया मिलाना। देशी दवाइयों में संजीवनी वटी अजवायन के अर्क में लेने से बहुत फायदा दिखाती है।

ज़ुकाम

जितना अधिक लोग इस रोग से पीड़ित रहते हैं, उतना और किसी रोग से नहीं।

यह ज़ुकाम एक प्रकार के कीडे के द्वारा होता है। यह रोग भी उड़कर लगनेवाला है। यह भूल है कि ठंड लगने से ज़ुकाम होता है। बर्फ़ीले स्थानों में देर तक रहनेवालों को ज़ुकाम नहीं होता।

यह वास्तव में संसर्ग से होता है। एक आदमी को ज़ुकाम हुआ कि फिर सभी को हो गया।

इस रोग में प्राय मृत्यु नहीं होती, परंतु कभी-कभी क्षय रोग या पीनस आदि रोग लग जाते हैं।

रोक-थाम

ज़ुकाम रोकने के ये उपाय हैं—

१—उचित भोजन और प्रतिदिन व्यायाम।

अब यह देखना चाहिए कि बालक की गर्दन और कानों के पीछे कुछ गाँठें तो नहीं हो गई हैं। यदि हों, तो उनको निकाल देना परम आवश्यक है।

वास्तव में इन गाँठों मे और बढ़े हुए गदूद में विषैले कृमि होते हैं। वे रक्त द्वारा हृदय में पहुँचकर हृदय का रोग उत्पन्न कर देते हैं। तथा जोड़ों में पहुँचकर गठिया-रोग उत्पन्न कर देते हैं।

इस रोग के लिये—चाहे वह बालक के शरीर में हो, या बड़े आदमी के, एक ही उपाय है कि उसका चतुर डॉक्टर से आपरेशन करा दिया जाय, और अति शीघ्र इसकी व्यवस्था कर दे, देर करना बच्चे के लिये ख़तरनाक है।

---

(६) दशमूल का काढ़ा छोटी पीपल के चूर्ण की चुरकी डालकर दिन में दो या तीन बार दो। यह अव्यर्थ महौषध है।

(७) आरोग्य होने पर केवल दूध ही पथ्य दो। इस रोग की चिकित्सा और फेफड़ों की परीक्षा किसी योग्य डॉक्टर से करानी उचित है। ख़ासकर जब इसमें उपद्रव हो।

बच्चों की पसली चलना

यह भी निमोनिया ही है। इसका सर्वोत्तम उपचार यह है—

(१) उसारे रेवन—२ से ३ रत्ती तक बालक की अवस्था के अनुसार दूध या जल में घोलकर दिन मे एक या दो बार दो। इससे एक वमन और एक दस्त हो जायगा। ५-६ दिन तक यह औषध देने से ९० प्रतिशत बच्चे आराम हो जाते है।

(२) बच्चे के हाथ-पैर गर्म रक्खो।

प्लूरिसी

फेफड़ों के चारो ओर एक पतली झिल्ली लिपटी हुई है। वह छाती की भीत की भीतरी ओर लगी हुई हैं। इसमे जब सूजन हो जाती है, तब उसे प्लूरिसी रोग कहते हैं। निमोनिया की प्रत्येक दशा में इस झिल्ली पर सूजन हो जाती है, और रोग शांत होने पर भी वह बनी रहती है।

कभी-कभी छाती पर चोट खाने से भी यह रोग हो जाता है। इस रोग का मुख्य लक्षण पसली की पीडा है। जिस ओर रोग होता है, उस ओर रोगी लेट नहीं सकता। कुछ काल बाद झिल्ली की तह में एक द्रव पदार्थ बन जाता है, तब पीडा मिट जाती है।

बहुधा इस रोग मे ७ से १० दिन तक ज्वर रहता है। यदि रोगी को दोपहर बाद दो-तीन सप्ताह तक तथा संध्या-काल में बुरा लगे या गर्मी मालूम हो, तो स्पंज करना चाहिए।

इस रोगी के लिये भी स्वच्छ वायु की बडी आवश्यकता है। और इस रोगी को केवल द्रव पदार्थ खाने को देने चाहिए।

एक पट्टी तीन इंच चौडी छाती पर लगाओ, रोगी से श्वास बाहर निकलवाओ, और जब फेफड़े ख़ाली हो जायँ, तब छाती के संकुचित होने पर पट्टी कसकर लपेट दो। इससे पीड़ा घट जायगी। गर्म पानी से सेंकना भी उत्तम है। एक गर्म पानी की थैली एक कपड़े में, जो गर्म पानी में डुबोकर निचोडी हो, लपेटकर सेंकने के बदले छाती पर लाकर रख दो। कभी-कभी रोगी को एरंडी के तेल का जुलाब दो। यदि गर्म सेक सहन न हो या अनुकूल न पड़े, तो ठंडा सेक करो।

इस रोगी को सदैव ही क्षय होने का भय है, इसलिये सुयोग्य चिकित्सक को दिखाओ।

जाने प

इन दोनो मच्छरों को इस भाँति पहचाना जा सकता है।

१—क्यूलेक्स मच्छर अपने अडे किसी गढ़े में सटाकर देता है। यह अंडों का गुच्छा-सा रहता है। पर एनाफेलीज़ के अंडे बिखरे हुए रहते हैं।

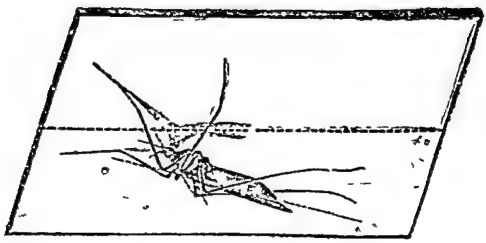

मच्छर एनाफेलीज़

२—क्यूलेक्स का बच्चा प पर धड ऊपर और सिर नी किए तिरछा पडा रहता है, एनाफेलीज़ का बच्चा पानी सतह के बराबर आडा प रहता है।

३—यदि ऐसे मच्छरों के प देखे जायँ, तो एनाफेलीज़ के पं पर काले-काले धब्बे दीख पड़ेंगे

४—दोनो मच्छरो के बैठने का ढग भी पृथक् है। क्यूलेक्स की कमर झुकी रहती है बैठने के समय शरीर के दोनो सिरे ज़मीन की तरफ रहते हैं। और टेढ़ी कमर ऊपर। एन फेलीज़ का शरीर सीधा रहता है। बैठने के समय उसका मुँह ज़मीन की ओर और सि ऊपर की ओर रहता है।

५—एनाफेलीज़ का रंग स्लेट के रंग का सा होता है, तथा गर्दन के दोनो ओर एक-ए गहरी रेखा होती है। क्यूलेक्स कुछ भूरा होता है।

मलेरिया के कीटाणु

जब किसी आदमी को ऐसा मच्छर काटता है, तब उसके थूक के साथ कीटाणु रक्त म पहुँच जाते हैं। शरीर में ये कीटाणु पहुँचकर जब इनकी किसी रक्ताणु से भेंट हो जाती है तो कीटाणु उसमें घुस जाता है। कीटाणु पहले तो छोटे-छोटे तंतुओ की तरह होते हैं, प रक्ताणु मे पहुँचकर धीरे-धीरे मोटे और गोल होने लगते है। यहाँ तक कि कुछ समय के बाद वे सारे रक्ताणु को खाकर उसके बराबर ही हो जाते हैं। पूरे तौर पर बढ़ चुकने के बाद वह कीटाणु धीरे-धीरे छोटे-छोटे खंडों में कटने लगता है। इस तरह प्रत्येक कीटाणु के बहुत से कीटाणु बन जाते हैं। जब बहुत से टुकडे हो जाते हैं, तो भीतरी दबाव के कारण रक्ताणु फट जाता है। बहुत से कीटाणु-खंड उसमें से निकलकर इधर-उधर रक्त मे तैरने लगते हैं। कुछ समय के बाद इन खंडो के दो रूप देख पड़ने लगते हैं। कुछ तो गोल रहकर आकार में थोड़ा बढ़ जाते

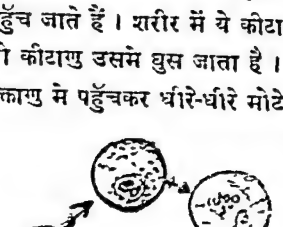

मलेरिया के कीटाणुओं की वृद्धि

और कुछ वैसे ही रहकर पलते-पलते कृमि निकालते [illegible] कह सकते हैं, और जो तंतु निकालते हैं, उनको नर। [illegible] लिए और लंबा कुछ के वीर्याणु होते हैं, उनका प्रकार के [illegible] चले हैं, वे ही देखने में तनु-जैसे जान पड़ते हैं।

थोड़े समय के बाद नर और मादा-[illegible] का संयोग [illegible] में प्रवेश कर जाते हैं, केवल कुछ बाहर रह जाता है, [illegible] होते हैं।

जब तक कीटाणु मनुष्य-शरीर के भीतर थे, वे [illegible] करते रहे थे, परंतु जब मनुष्य-शरीर [illegible] था। यदि वे इसी प्रकार रक्त में रहें, तो [illegible]

मलेरिया कैसे [illegible]

मलेरिया का नाश करने के लिए [illegible] जाय, और मच्छरों [illegible] होते हैं। नाश करने योग्य [illegible] है, एक [illegible] तीन के पौधे में, एक [illegible] है। ये पौधे दो [illegible] और पोखरों के किनारे [illegible] होते हैं।

मच्छरों का बढ़ने से रोकने के लिए [illegible] मच्छर नहीं [illegible] है, या मच्छरों का [illegible] होना।

[illegible]

[illegible]

हों, उनमें मिट्टी का तेल छिड़कना चाहिए। इस बात का एहतियात रखना ज़रूरी है कि पु
पुराने टीन के बर्तनों, घड़ों, छतों की नालियों या कूड़े-कचरे में न एकत्र होने पावे।

मलेरिया से बचने की एक सुंदर रीति यह भी है कि नित्य मच्छरदानी में सोया जा
मलेरिया के मच्छर दिन में बहुत कम काटते हैं। ये बहुधा सूर्य अस्त होने पर काटा करते
मच्छरदानी की जाली महीन होनी चाहिए। और उसे अच्छी रीति से लगाना चाहिए, जि
मच्छर भीतर न घुसने पावें। बच्चों को भी मच्छरदानी में सुलाओ।

लक्षण

मलेरिया के साधारण लक्षण सभी जानते है। जाड़ा लगना और ज्वर चढ़ना। पसी
आना और सिर-पीड़ा। पहले जाड़ा पीठ के नीचे के भाग में होता है। जाड़ा चढ़ने से
रोगी को निर्बलता-सी प्रतीत होती है। कभी-कभी जी मिचलाता और क़ै भी हो जा
है। बच्चों को कभी-कभी ऐंठनी भी होती है। ठंड लगने के पीछे ज्वर १०३ या १०४ डि
चढ़ जाता है। ज्वर दो या तीन घंटे चढ़ा रहता है, तब पसीना निकलने लगता है। अ
फिर ज्वर उतर जाता है। यह ज्वर प्रतिदिन आ सकता है। परंतु साधारणतया प्रत्येक दूस
दिन चढ़ता है। या दो दिन छोड़कर चढ़ता है। कभी-कभी नियमानुसार भी नहीं चढ़ता
हफ्ते मे और कभी-कभी महीने में दो बार चढ़ता है। मलेरिया कई प्रकार का होता है
मलेरिया के कोई-कोई रोगियों के लक्षण मोतीझरा ज्वर से मिलते-जुलते होते हैं। किसी
किसी रोगी को भयानक सिर-पीड़ा होती है। बालको मे कभी दस्त और निर्बलता के लक्षण
होते हैं।

धीरे-धीरे रोगी की सूरत में अंतर आने लगता है। चेहरा पीला या नीला, चमड़ा सूखा
और ढीला-ढाला, उँगलियाँ सफ़ेद और नाख़ून नीले हो जाते हैं। आँखों के चारो ओर
नीला रंग छा जाता है। साफ पानी-जैसा बहुत-सा पेशाब होता है। शरीर का ताप ९८°
से लेकर १०३° तक रहता है। यह दशा एक घंटे से लेकर दो घंटे तक रहती है। परंतु गर्म
देशों में इसके भीतर ही दूसरी अवस्था शुरू होने लगती है।

दूसरी अवस्था में बड़ा ताप मालूम होता है। जान पड़ता है, गरमी अंदर से शुरू
होकर शरीर-भर में फैल रही है। शरीर का चमड़ा सूखा, लाल और गर्म हो जाता है।
नाड़ी ज़रा हल्की, पर तेज़ हो जाती है। जो नाड़ियाँ दिखलाई पड़ती हैं (जैसे मस्तक के
कोनों के पासवाली नाड़ियाँ), वे ज़ोर से चलती मालूम होती हैं। तिल्ली का भारीपन
बढ़ता ही जाता है। मूत्र बहुत कम और गहरे रंग का आता है। प्यास बहुत मालूम होती है।
रोगी को सोचने-समझने की शक्ति कम हो जाती है। यह अवस्था एक से तीन घंटे तक
रहती है।

इसके बाद तीसरी अवस्था शुरू होती है। इसमें पसीना निकलता है। अक्सर ऐसा
होता है कि इस अवस्था को पहुँचते-पहुँचते रोगी सो जाता है। जागने से तबीयत कुछ

हैरान थे। कोई उपाय नहीं सूझता था। एक दिन रोगी के कमरे से बाहर निकलते सम
उन्होंने देखा, एक अँधेरे कोने में कुछ मच्छर बैठे हैं। उन्हें चट योरपियन विद्वानों
अनिश्चित मत स्मरण हो आया। उसी समय बड़े परिश्रम के साथ एक दर्जन ज़िंदा मच्छ
उन्होंने पकड़े। उसके बाद एक बक्स में कुछ कबूतर बंद किए। बक्स में कुछ छेद कर
बारीक कपड़े से उन्हें ढक दिया। उसके बाद वे मच्छर उसमें छोड़ दिए। कबूतरों के दान
पानी का प्रबंध बराबर होता रहा। कई दिन के बाद देखा गया कि उन कबूतरों में से कोई भ
नीरोग न था। जब उनके रक्त की परीक्षा की गई, तो उसमें मलेरिया के कीटाणु पाए गए।

कर्नल रॉस के एक और मित्र डॉक्टर मांसन थे। रॉस ने अपने अन्वेषण का हाल मित्र को
बतलाया। मासन को विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने कर्नल रॉस से कुछ वैसे ही मलेरिया ग्रस्त
मच्छर माँगे। उन्हें विश्वास तो था ही नहीं, दूर ढूँढ़ने न जाकर पहलेपहल अपने पुत्र ही
पर उनका प्रयोग किया। मच्छर काटने के तीसरे ही दिन उसे ज्वर आ गया, और कई हफ़्ते
बीमार रहकर एक दिन वह चल बसा! बीमारी की दशा में जब उसके रक्त की परीक्षा की
गई, तो उसमें मलेरिया के कीटाणु निकले।

अब तो मासन को भी रॉस के कथन की सत्यता पर विश्वास हो गया। परंतु यह विश्वास
उन्हें बड़ा महँगा पड़ा। इस प्रकार सन् १८९८ में इस भयंकर प्रयोग के फल ने डॉक्टर रॉस के
मत का समर्थन किया! दोनों एकमत हो गए। फिर मांसन की सहायता से, बहुत परिश्रम के
बाद रॉस ने एक नया तत्त्व और खोज निकाला। उन्होंने देखा, यद्यपि बहुत-से मच्छर रोगी
को काटते और रोग के कीटाणुओं को ग्रहण कर लेते हैं, परंतु उन सभी मच्छरों के काटने से
नीरोग आदमी रोगी नहीं हो जाता। यह बात ऐसी थी कि उनके सिद्धांत में लोगों को संदेह
होने लगता था। अंत को, चारों प्रयोग करने पर, यह मालूम हुआ कि एक विशेष जाति के
मच्छर ही में यह शक्ति है कि वह कीटाणु ग्रहण करके उन्हें दूसरे मनुष्य के शरीर में पहुँचा दे।

१९०० ई० में लंदन के डॉक्टर सैंबन और डॉक्टर लॉ ने मलेरिया का अनुशीलन आरंभ
किया। उन्होंने देखा, यदि मच्छर के काटने से ही यह रोग होता है, तो रोगी और नीरोग,
दोनों को मच्छर के काटने से बचाने पर उनकी रक्षा जरूर होगी। इसी विश्वास पर ये दोनों
इटालियन विद्वान् साइनर टर्जी के साथ इटली गए। इटली के कंपैनिया-नामक प्रांत में उन
दिनों बड़े ज़ोर का मलेरिया था। इन तीनों महाशयों ने दो इटालियन नौकरों की सहायता
से वहाँ कुछ झोपड़ियाँ बनवाईं। झोपड़ियाँ ऐसी थीं कि उनमें प्रकाश तथा वायु तो ख़ूब आ-
जा सकता था, परंतु हरएक दरवाज़ा और खिड़की तार की बारीक जालियों से ढकी थीं। इन
लोगों ने यह नियम कर लिया था कि अँधेरा होते ही अपनी-अपनी झोपड़ी में जाकर साव-
धानी से दरवाज़ा बंद कर लिया जाय, और उजियाला होने तक हरगिज़ न खोला जाय।
इस तरह इन लोगों ने मच्छर का काटना बिलकुल असंभव कर दिया। रात को विशेष साव-
धानी इसलिये की गई कि मच्छर अँधेरे में ही निकलते हैं।

प्रकरण ५

संग्रहणी और अतिसार

अतिसार

यह रोग बहुधा लोगों को कभी-कभी साधारण कारणों से भी हो जाया करता है इसका मुख्य लक्षण पतले दस्त आना है। इस रोग में शरीर का रस, रक्त, जल, पसीना मेद, मूत्र आदि मल के साथ मिलकर गुदा-द्वार से बाहर आ जाता है।

कारण

भारी और गरिष्ठ भोजन करना, अतिस्निग्ध, रूक्ष, ठंडे, बासी भोजन करना, सयोग-विरुद्ध तथा बिना प्रथम के भोजन पचे और भोजन करने से यह रोग हो जाता है। कभी-कभी भय, शोक से भी रोग होते देखा गया है। बहुधा मासाहारियों को इस रोग का ज़्यादा भय रहता है। मक्खियाँ इस रोग के विष को गदी जगहों से लाती हैं। दूषित जल पीने से भी रोग उत्पन्न हो जाता है।

लक्षण

पतला और पीला दस्त बारंबार पेट में गुडगुड शब्द करके निकलता है। हृदय, नाभि और गुदा तथा उदर में सुई गडाने के समान दर्द, प्यास, गुदा में दर्द और कभी-कभी मूर्च्छा। आमातिसार मे पेट में अधिक दर्द होकर कच्चा मल निकलता है। कभी-कभी रक्त-मिश्रित या श्लेष्म-मिश्रित भी निकलने लगता है।

उपचार

बारंबार दस्त आने से यह तो स्पष्ट है कि जो दूषित द्रव्य जमा हो गया है, उसे बारंबार निकालने की चेष्टा आँतें कर रही है। यदि दस्त थोड़ा-थोड़ा दर्द के साथ चिकने अंश के साथ बारंबार होता है, तो उत्तम है। एक एनीमा ले डालो, जिससे सभी दूषित अंश एक बार मे ही निकल जाय, और अतडियाँ शुद्ध हो जायँ। एक मात्रा एरंड-तेल पी लेना भी उत्तम है। जल के स्थान पर चावल का भिगोया पानी या सोडे का पानी या बर्फ का पानी पीना उत्तम है। आमाशय पर ३-४ घटे के अंतर से मृदु सेक करना भी उत्तम है।

सब प्रकार के दस्तो में यह अत्यंत आवश्यक है कि रोगी चुपचाप बिस्तर में लेटा रहे। जब तक दस्त बंद न हो जायँ, उसे कुछ भी भोजन न लेना चाहिए। आवश्यकता होने पर चावलों का माँड या खीलों का पेय लेना चाहिए। जब तक दस्त बंद न हों, एक फ़लालेन का कपड़ा उसके पेट पर लपेट देना चाहिए।

ताज़ा एवं गौ का होना चाहिए। यह भी छाछ की भाँति १०-१५ सेर तक प्रतिदिन खाया जा सकता है।

दूध पर रहना ज़रा अधिक नाज़ुक, परंतु सर्वोत्तम है। इसका सेवन-विधान हम दुग्ध-चिकित्सा में वर्णन करेंगे।

६—इस रोग पर दाँतों का ख़ास प्रभाव पड़ता है। यदि दाँतों में कोई रोग हो, तो सुयोग्य दंत-वैद्य से उसका उपचार सर्वप्रथम करा लेना चाहिए। वरना रोग दूर होना कठिन है। यह रोग मुख के द्वारा ही उत्पन्न होता है, इसलिये यदि मुख आपके वश में है, वह स्वच्छ है, और पथ्य एवं स्वच्छ भोजन और जल का आप व्यवहार करते हैं, तो इस रोग से आपको भय का कोई कारण नहीं।

इस रोग से सुरक्षित रहने के कुछ उपाय ये हैं—

१—साफ़ जल पियो, और गंदी टट्टी में—ख़ासकर जहाँ ऐसा रोगी टट्टी गया हो—मत टट्टी जाओ।

२—जब तक हाथ अच्छी तरह शुद्ध न कर लो, भोजन या पीने का जल हाथ से मत छुओ।

३—थालियाँ और बर्तन बिना भली भाँति साफ़ किए उनमें भोजन की सामग्री मत रक्खो।

४—मक्खियों से समस्त भोजन को स्वच्छ रक्खो। मक्खियों को नष्ट कर दो। एक-एक मक्खी लाखों रोग-जंतुओं को लिए फिरती है।

५—भोजन को सदैव ही अच्छी तरह पकाओ। सड़ी-गली, बासी साग-सब्ज़ी का लोभ मत करो, उसे फेंक दो। यदि खीरा, ककड़ी या फल बिना पकाए खाने हों, तो उन्हें भली भाँति धोकर पोंछ लो।

६—बाज़ार से तराशे हुए तरबूज़ या ख़रबूज़े न ख़रीदो, इनसे भयानक रोग फैलते हैं।

७—यदि घर में किसी को यह रोग हो जाय, तो उस रोगी का खान-पान, रहन-सहन पृथक् कर दो। तथा उपर्युक्त नियमों का सख़्ती से पालन करो।

ज्यों ही दस्त में पतलापन हो, तत्काल विश्राम करो। भोजन त्याग दो और आवश्यकता हो, तो योग्य चिकित्सक से सलाह लो।

यथा—(१) चमड़ी स्वच्छ रक्खी जाय। (२) प्रतिदिन बारंबार कंघी करना। (३) मुर्दे बालों को निकाल देना। स्मरण रखना चाहिए कि मुर्दा बाल यदि बना रहने दिया जाय, तो वह और बालों की जड़ों को भी काला कर देगा। बहुत लोग जिनके बाल कमज़ोर होते हैं, बाल उखड़ने के भय से ज़ोर से कंघी नहीं करते, यह उनकी भूल है। उन्हें उचित है कि खींच-खींचकर मुर्दार और कमज़ोर बाल को बाहर निकाल डालना चाहिए। इसके सिवा नीचे-लिखी रीति से बालों का व्यायाम करना चाहिए।

१—उँगलियों को खोपड़ी में जमाकर सम्पूर्ण सिर पर जल्दी-जल्दी घुमाओ। २—बालों को लटें उँगलियों में लपेटकर खींचो। ३—समस्त बालों को मुट्ठी में भरकर खींचो। ४—बालों की जड़ों में उँगलियों की कंघी लगाकर धीरे-धीरे ऊपर तक लाओ। ५—ब्रुश को सिर पर अच्छी तरह रगड़ो। यह बाल बढ़ाने का एक बढ़िया नुस्खा है—

जौ पिसे हुए ८ तोला आँवला २ तोला ३ पाव पानी में काढ़ा करो। १ पाव शेष रहने पर १० तोला बनफ़सा का तेल, तिल के पत्ते, बर्ग ग़लमी बर्ग कद्दू प्रत्येक ३-३ तोला पकावे। रात को तेल लगाकर सुबह नीबू डालकर गुनगुने पानी से धोवे। बड़ी-बड़ी पगड़ियाँ बाँधना या भारी-भारी टोपियाँ पहनना भी बालों को कमज़ोर करता है। जो स्त्रियाँ बच्चों के सिर पर भारी-भारी टोपे लादे रहती हैं, उन्हें इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि सिर जितना खुला रहेगा बालों को पुष्टि मिलेगी।

बालों को उड़ने से रोकने के लिये एक अंगरेज़ी लोशन का नुस्ख़ा जो फ़ायदेमंद है, यहाँ लिखते हैं। इसे सप्ताह में एक या दो बार आवश्यकतानुसार लगाया जा सकता है—

टिंचर आफ़ कैथरायडीज़ ½ औंस। ग्लेसरीन ४ औंस ट्रिपल एसेंस आफ़ रोज़ ½ औंस सोल्यूशन आफ़ एमोनिया ½ औंस वैरम आफ़ पाइट सबको मिलाकर छान लेवे।

बाल उड़ जाने के बाद यदि खाल खोपड़ी निकल आवे, तो उसके लिये यह अँगरेज़ी नुस्ख़ा बहुत मुफ़ीद है—

१—ट्रिआर्बोरेट आफ़ मारफ़िया ½ औंस इथियोल १ ड्राम वेनोलिन ½ औंस मिलाकर कई दिन में सुबह शाम मलो।

२—देशी औषध में लाल चाँदी बीच से काटकर खोपड़ी में मलवाना, यहाँ तक कि चमड़ा लाल हो जाय। फिर कोई तेल लगा देना। ३ घंटे बाद गुनगुने पानी से धोना चाहिए।

४—[illegible] बालों पर उन्नाव घिसवावे।

५—[illegible] के कारण बहुधा बाल उड़ जाया करते हैं। उसके लिये यह नुस्ख़ा बहुत उपयुक्त है। इसमें [illegible] निकलते हैं—

[illegible] के पत्ते, [illegible] को जड़ सबको चौगुने पानी में काढ़ा करो। [illegible] पानी [illegible] में [illegible] रहा है। पानी [illegible] [illegible]

३—सब प्रकार की मिठाइयाँ और भारी चीज़ें त्याग दीजिए। अचार और मिर्च-मसाले भी छोड दीजिए।

४—दालें बहुत कम खाइए। अधिकतर शाक-सब्ज़ी, फल, नींबू, अदरख खाइए।

५—ताज़ा छाछ अवश्य भोजन के साथ लीजिए।

६—यदि आप सब कुछ खाना छोडकर केवल दूध पर कुछ दिन रह सकते हैं, तो यह बहुत उत्तम है।

७—भोजन में मोटे आटे की रोटी, बिना माँड निकाला हुआ चावल।

यदि अजीर्ण मालूम पड़े, छाती जले और खट्टी डकारें आवे, तो २४ घंटे तक लंघन करो। प्रातःकाल उठते ही एक प्याला अति गर्म पानी पियो। इसी प्रकार रात्रि को सोने के समय पियो। दूसरे दिन अति लघु आहार लो।

बद्धकोष्ठ

कब्ज़ की शिकायत प्राय. ९० फ़ीसदी मनुष्यों को है। प्रायः लोग टट्टी साफ़ उतरने के लिये चाय, हुक्का और जुलाब की गोलियाँ खाया करते हैं। ऐसे लोगों की जीभ मैली, सिर भारी, मुँह में दुर्गंध और मेदे में बेचैनी रहती है।

बद्धकोष्ठ का कारण नशीली चीज़ों का व्यवहार करना, समय पर दस्त की हाजत को रोकना या लगातार जुलाब की दवाइयाँ खाए जाना है। प्रायः स्त्रियाँ दस्त की हाजत को रोक लेती हैं और फिर जब मल आँतों मे लौट जाता है, तब फिर दस्त की इच्छा भी नहीं रहती और घोर बद्धकोष्ठ हो जाता है।

उपचार

इसके दूर करने का मुख्य उपाय तो यह है कि वे कारण दूर कर दिए जायँ, जिनसे कब्ज़ हुआ है। प्रतिदिन व्यायाम करना चाहिए। बाग़ीचे मे खुदाई करना सबसे उत्तम है, या दो मील चलकर टट्टी जाया जाय। क़ब्ज़ को दूर करनेवाला एक व्यायाम हम लिखते हैं। चित लेट जाओ। कमर के नीचे कबल तह करके या और कुछ कपडा रख लो। दोनों पैरों को सीधे ऊपर उठाओ और एक लंबी साँस खींचो। उसी हालत मे कुछ देर पड़े रहो। जल्दी न करो। टाँगें घुटनों पर से मुड़ने न पावें। फिर धीरे-धीरे टाँगो को बिना मोड़े नीचे लाओ। एकदम न गिरने दो। यह क्रिया २०-३० बार प्रात काल करो, तब टट्टी जाओ। इससे आमाशय के पट्ठे पुष्ट होते हैं, और क़ब्ज़ दूर होता है।

प्रातःकाल नाक से बासी पानी पीना भी क़ब्ज़ को दूर करता है। जिन्हें क़ब्ज़ रहता हो, उन्हें प्रतिदिन ख़ूब पानी पीना चाहिए। फलों का रस भी उनके लिये उत्तम है।

किसी-किसी क़ब्ज़ के रोगी का मल सफ़ेद रंग का होता है। इसका अर्थ यह है कि कलेजे ने ठीक काम नहीं किया है, तब क़ब्ज़ हुआ है। ऐसी दशा में ३ माशा सोंफ़ कूटकर ज़रा-सी मिश्री मिलाकर फंकी गर्म पानी से ले ले।

प्रकरण ७

इस देश के छूत के रोग

चेचक

यह रोग अत्यंत संक्रामक है। जिस जगह इस रोग से बचने का प्रबंध नहीं किया जाता, वहाँ इसके फैलने पर ५० प्रतिशत रोगी मर जाते है। इस रोग मे रोगी को अत्यंत कष्ट होता है। इससे शरीर और मुख सदैव के लिये कुरूप हो जाता है। ससार में जितने अंधे दीख पड़ते हैं, उनमें से अधिकांश इसी रोग की बदौलत है। यह रोग बालक, वृद्ध, गरीब-अमीर, दुर्बल-सबल किसी को भी परवा न कर जो कोई इसके चपेट में आ जाय, उसी को धर पटकता है।

चेचक का विष

चेचक का विष रक्त में, उसके दानों में, सूखे हुए दानों की पपड़ी में, श्वास में तथा पसीने में होता है। इन्हीं के द्वारा वह एक से दूसरे मनुष्य में फैलता है। यह रोग भयानक सक्रामक है। और उसका प्रभाव देर तक रहता है। रोगी के वस्त्रों मे भी उसका विष रम जाता है, और वह दीर्घ काल तक जीवित रहता है। इसलिये रोगी के काम में आई हुई वस्तुओं, वस्त्रों, चारपाइयों तथा मकान को जतु-नाशक दवाई के पानी से खूब धोकर उनका उपयोग करना चाहिए।

लक्षण

इस रोग का विष लगभग १२ दिन तक शरीर में गुप्त रह सकता है। इस बीच में शरीर सुस्त रहता है। रोग के प्रारंभ में सर्दी लगकर ज्वर चढ़ता है और दाने फूटने से प्रथम १०४ तथा इससे भी ऊपर पहुँच जाता है। साथ ही बड़ी भारी बेचैनी हो जाती है। तमाम शरीर में और खासकर पीठ और पेट में अधिक दर्द होता है। वमन होता है। कभी-कभी सन्निपात, अनिद्रा, बेहोशी अथवा ऐंठन हो जाती है। बहुधा गला आ जाता है और जुकाम की शिकायत हो जाती है।

ज्वर चढ़ने पर दाने तीसरे दिन और कभी-कभी चौथे दिन दीख पड़ते हैं। ये दाने प्रथम कपाल और मुख पर दीख पड़ते हैं। इसके बाद ही एक-दो दिन में छाती, पेट तथा शरीर के दूसरे भागों मे दीख पड़ते हैं। बहुधा दाने मुख पर अधिक दीख पड़ते हैं। ये दाने प्रारंभ में अति बारीक और लाल रंग के होते हैं, पीछे धीरे-धीरे ऊपर को उठते हैं, और बड़े होते जाते हैं। इस समय छूने से वे बहुत कड़े देख पड़ते हैं।

डॉक्टर एडवर्ड जेनर ने जब इस बात पर ध्यान किया कि जिन लोगों पर दूध काढ़ती सम
हाथ में चेप लगने से गो-शीतला का असर हुआ, उन्हें फिर वह रोग हुआ ही नहीं। इस
बहुत लोग इस भयानक रोग के झपेटे में आने से बच गए। उन्होंने यह भी जाना कि गो
शीतला और मनुष्य को होनेवाली चेचक परस्पर विरोधी रोग हैं। इस पर उन्होंने य
निश्चय किया कि मनुष्यों को चेचक से सुरक्षित रखने के लिये उनके शरीर में गो-शीतला
रोग का प्रवेश कराना चाहिए। हाल ही में जो संशोधन इस संबंध में हुए हैं, उनके आध
पर टीका लगाए हुए मनुष्य का चेप ही अन्य पुरुष के शरीर में प्रवेश करा दिया जाता है।

वर्तमान में चेचक के टीके लगाने की जो रीति है, वह यह है कि मनुष्य की बाँह प
चमड़ी पर खरोंच करते है। फिर उस पर चेचक के टीके लगाए हुए मनुष्य के फफोलों
निकला हुआ रस ग्लेसरीन मे मिलाकर लगा देते हैं। इसको प्रथम ही से तैयार रखते है
ग्लेसरीन मिलाने से उसमे ख़राबी नही पैदा होती।

कम-से-कम टीके के तीन चिह्न करने चाहिए। चार हो, तो और भी अच्छा है, क्योंकि
एक या दो निशानों से शीतला का पूरा वेग शमन नहीं होता। इस शस्त्र-क्रिया में तकलीफ
कुछ भी नही होती, और यदि ज़रा ध्यान से की जाय, तो किसी बात का अंदेशा उसमें
नहीं होता। बच्चा यदि स्वस्थ है, तो उस पर कुछ भी हानिकर प्रभाव नहीं पड़ता। टीक
लगाने के ३ दिन बाद उस स्थान पर फुंसियाँ निकली हुई मालूम देती हैं, जो बाद में लाल
होती जाती है। इसके बाद ही इनके भीतर स्वच्छ रस मालूम पडने लगता है। इसके बाद
इनकी आकृति फफोलों के समान हो जाती है, जो ८वें दिन परिपूर्ण दशा मे पहुँचते हैं
इसके बाद यह रस पीब बन जाता है। इसके बाद इस पर खुरंड जम जाता है, और लग
भग तीसरे सप्ताह के अंत तक वह सूखकर छुट जाता है, तथा टीके का चिह्न पड़ जाता है।

इस टीके के संबंध में खोज करने के लिये जो प्रमुख डॉक्टरों का रॉयल कमीशन नियुक्त
हुआ था, उसने जाँच करके निश्चय-पूर्वक यह प्रकट किया है कि इस सादी क्रिया से शीतला
से बहुत कुछ बचाव होता है। यदि शीतला निकलती भी है, तो उसका विष बहुत कम
होता है। मृत्यु-घटनाएँ कम होती हैं, तथा रोगी को कष्ट भी बहुत कम होता है।

टीके की सँभाल

परंतु ध्यान में रखने योग्य बात तो यह है कि टीका लगवाने की यह क्रिया बहुत साव
धानी से करानी चाहिए तथा जिस बाँह पर टीका लगाया जाय, उसकी हिफाज़त भी बहुत
सावधानी से करनी चाहिए। उसमें धूल, मैल न लगे, ऐसी कोई बात न हो, जिससे उसमें
जलन या दर्द पैदा हो जाय। इसका सबसे सरल उपाय यह है कि उस स्थान को 'बोरिक
टेड-गॉज़' (विलायती दवा बेचनेवालों से मिलेगा) अथवा नरम खद्दर से लपेटकर ढक दो।
और उस पट्टी को दिन में दो बार बदलते रहो। जब ८ दिन बीत जायँ, तब 'बोरिक' का
मरहम लगाते रहो। और जब तक खुरंड न उतर जाय, इसे बंद न करो।

मुँह और कंठ वार वार कुल्ला करके स्वच्छ रक्खो।

चेचक की चिकित्सा

(१) प्रार भ मे बनगोभी (भाँतल) १॥ माशा, काली मिर्च ५ दाने घोट-पीसकर १-२ तोला जल में दिन में २-३ वार पिलाओ। यह मात्रा ३-४ वर्ष के बच्चे के लिये है। छोटे बड़े के लिये इसी हिसाब से घट-बढ़कर लेना चाहिए।

(२) यदि चेचक भली भाँति निकल आई हो, तो घिसा हुआ चंदन ३ माशा, हुल-हुल का रस ६ माशा, पानी २ तोला घोलकर थोडा-थोडा दिन-भर में २-३ वार पिलावे।

(३) यदि रोगी को दाह और बेचैनी बहुत हो, तो सफ़ेद चंदन, अडूसा, मोथा, गिलोय और मुनक्का सब बराबर-बराबर दो-दो तोला ले शकोरे में रात को १ पाव पानी में भिगो दो। सुबह मल छान मिश्री मिलाकर पिला दे।

(४) पीने के लिये पीपलकंठी का पानी तथा खाने को मूँग की दाल (धुली), परवल, लौकी, पालक आदि दे। सेधानमक अति अल्प।

पीपल की सूखी छाल को जलाकर जब वह निर्धूम अंगार हो जाय, तब मिट्टी की कोरी हँडिया में जल भरकर उसमें उन्हें बुझा दो। राख भी इसी में डाल दो, फिर निथारकर वह पानी पिलाया जाय, यही पीपलकंठी का पानी है।

(५) नीचे-लिखी अँगरेज़ी दवा पसीना लाने के लिये इस रोग में अत्युत्तम है—

कार्बोनेट ऑफ़ एमोनियम ५ ग्रे०, वाई कार्बोनेट ऑफ़ पोटेशियम १५ ग्रे०, एसीटेट ऑफ़ एमोनिया (द्रव) २ ड्राम, सीरप ऑफ़ आरेंज ½ ड्राम, शुद्ध जल १½ औंस।

यह दवा प्रतिदिन प्रति ४-४ घंटे पर पिलानी। इसमें प्रति वार १५ ग्रेन साइट्रिकएसिड मिलाना।

(६) यदि ज्वर तेज़ हो और चमडी सूखी हो, तो गुनगुने पानी में परमेंगनेट ऑफ़ पोटाश मिलाकर उससे दिन में २-३ वार शरीर को स्पंज करना।

(७) दानों पर यूक-लिप्टिस आइल, कार्बोलिक आइल अथवा आइडोफ़ार्म और वेसलीन का मरहम लगाना चाहिए।

(८) दस्त में कब्ज़ हो, तो जुलाब देना।

खसरा

यह अति साधारण रोग है। प्राय. असाध्य नहीं समझा जाता। पर जिस बालक को खसरा निकले, उसकी सार-सम्हार सावधानी से होना चाहिए। नहीं तो खसरे के बाद भयानक रोग हो जाने का भय है।

यह रोग अति शीघ्र फैलता है। यदि कोई बालक रोगी बालक को छुए, या उसके कमरे में खेले, तो संभव है, १०-१२ दिन में उसे भी खसरा निकल आवे। इसका प्रथम लक्षण नाक में सर्दी, नाक बहना, आँखों की लाली तथा कुछ ज्वर है। रोग प्रारंभ होने के

प्रकरण ८

विदेशों से आए हुए छूत के रोग

टाइफस

कारण

यह ज्वर उन लोगों को होता है, जिन्हें पुष्टिकर आहार नहीं मिलता। और जो घनी आबादी में रहते हैं, तथा जिन्हें स्वास्थ्य के साधन प्राप्त नहीं। यह बात निश्चय रीति से मान ली गई है कि यह ज्वर जुओं और जमजुओं द्वारा फैलता है। खटमलों द्वारा भी इसका लग जाना संभव है। इस ज्वर के रोगी के मल-मूत्र आदि यदि जल या भोजन को दूषित कर दें, तो भी यह रोग फैल जाता है।

यह रोग वास्तव में ठंडे देशों का रोग है। ख़ासकर इंगलैंड, स्काटलैंड और आयर्लैंड में यह रोग अधिक होता है। भारतवर्ष में कभी-कभी यह रोग हो जाता है। इसकी ख़ासियत प्लेग-जैसी है। अर्थात् प्लेग की भाँति यह रोग भी देर तक रोगी के पास रहने से अन्य लोगों को लग जाता है। जिस प्रकार प्लेग-रोगी के श्वास और छूत से घर की वायु अशुद्ध हो जाती है, उसी प्रकार इस रोग से भी हो जाती है।

लक्षण

इस रोग के जंतु शरीर में दाख़िल हुए पीछे १२ दिन के बाद रोग के चिह्न प्रकट होते हैं। परंतु १२ दिनों के अंदर ही किसी-किसी रोगी को बदहज़मी अथवा ज़ुकाम-जैसे चिह्न दीखने लगते हैं।

इस रोग का ज्वर १४ दिन तक जारी रहता है, और आम तौर से यह १४ दिन का ज्वर कहाता है। प्रथम के २-३ दिन सर्दी देकर ज्वर चढ़ता है, और शरीर बिलकुल ढीला पड़ जाता है। रोग का इसके सिवा कुछ और उपद्रव नहीं नज़र पड़ता, इससे रोगी अपना काम किए जाता है। तीन दिन के बाद एकदम कमज़ोरी बढ़ जाती है, और ज्वर ख़ूब तेज़ हो जाता है। शरीर दुखने लगता है। अंग काँपने लगते हैं। आँखें लाल हो जाती हैं, और उनमें जल निकलता है। सिर में दर्द, चक्कर और भ्रम, तंद्रा, सन्निपात ये लक्षण प्रकट होते हैं। ज्वर १०० F. डिग्री या १०५ F अथवा १०६ F तक हो जाता है। शरीर का रंग काला हो जाता है, तथा रोगी जहाँ-का-तहाँ बेसुध पड़ा रहता है। प्रायः दस्त, पेशाब बंद हो जाता है। यदि कोई दुर्घटना न हो, तो ज्वर ४-६ दिन बाद प्रात:काल को कम तथा शाम को १०३ F. डिग्री या १०४ F डिग्री तक बढ़ जाता है। १४ दिन बाद ज्वर उतरता है। तब अत्यंत पसीना आता है।

यह रोग मच्छरों द्वारा फैलता है। मच्छर के काटने के ३ से ६ दिन के भीतर यह रोग बढ़ता है। बहुधा यह रोग एकदम आक्रमण करता है, प्रथम ठंड लगती है, फिर शरीर के भागों में तीक्ष्ण पीडा होती है। विशेषकर हाथ, पाँव और पीठ या सिर में। सिर मे नेत्रों के सामने और पीछे की ओर अति तीक्ष्ण पीडा होती है। नेत्रों से जल बहता है, नेत्र लाल हो जाते हैं। ज्वर F.१०३ से १०५ F.डिग्री तक चढ़ता है। भूख नहीं लगती। जी मचलाता है और वमन भी होता है। बच्चों को तो सन्निपात हो जाता है। और हाथ-पाँ ऐंठने लगते हैं। तीसरे दिन ज्वर बहुत-सा पसीना आकर उतर जाता है। कभी-कभी बहु सा मूत्र होता है। और कभी-कभी बहुत-से दस्त आते है। इसके बाद रोगी एक या दो दि को अच्छा हो जाता है, फिर दर्द होने लगता है, और फिर ज्वर चढ़ आता है। हा धड और टाँगों पर कुछ दाने निकल आते है, परंतु कभी-कभी। दूसरी बार जब ज्वर चढ़ है, तो केवल थोडी देर रहकर उतर जाता है।

उपचार

रोगी को रात-दिन मच्छरदानी में रक्खो, जिससे उसे मच्छर न काटे। क्योंकि जो मच्छर उसे काटेंगे, वे अन्य मनुष्य को काटकर रोग के कीटाणु उस पुरुष में पहुँचा देंगे रोगी को अत्यंत लघु भोजन दो। प्रारंभ ही में एक मात्रा एरंड-तैल देना अच्छा है। ठ पानी का कपडा सिर पर रखने से दर्द मिटेगा। रोगी को उबालकर ठंडा किया पानी पी को दो। दर्द के स्थानों को सेको। संतरे का रस या नीबू की शिकंजबीन भी अच्छी है पसीना लाने की सदा चेष्टा करनी चाहिए। ज्वर उतरने पर शक्ति-वर्द्धक दवाइयाँ देनं उचित है।

डिप्थीरिया या कठरोहिणी

यह बच्चों का अति असाध्य रोग है। यह रोग भी योरप का है। यह बडी छूतवाला रोग है। यह कृमि द्वारा होता है। ये कृमि गले और नाक में न केवल घाव उत्पन्न करते हैं, प्रत्युत एक प्रकार का विष भी पैदा करते है, जो हृदय के लिये अति हानिकर है।

यह रोग चम्मचों और प्यालो तथा जूठे खाद्य पदार्थों से एक दूसरे बच्चे को लगता है। प्रायः सीटी-बाँसुरी या और ऐसे खिलौनो से, जिनको बच्चे मुँह में डालकर खेला करते है, यह रोग उत्पन्न होता है। बच्चे पेंसिल या उँगली प्रायः मुँह में डाल लिया करते हैं। इससे भी यह रोग हो जाता है।

ऐसा बालक जिसे यह रोग हो गया है, खाँसने के साथ लाखों कृमि उस कमरे में फेंकता है। यदि कोई दूसरा बालक उस कमरे में हो, तो उसे यह रोग अवश्य लग जाता है।

लक्षण

इस रोग का प्रथम लक्षण गला दुखना है। यह रोग लगने के दो दिन से लेकर ७ दिन में होता है। रोग के प्रारंभ में आलस्य, अरुचि, हलका ज्वर और कमज़ोरी होती है। फिर

पानी और फलों का रस जितना पिला सकते हो, पिलाओ। यद्यपि यह काम दुस्तर है। अनन्नास का रस इस रोग की अव्यर्थ ओषधि है, जिसका विधान फलाहार-चिकित्सा के प्रकरण में हमने लिखा है।

गले की सूजन के लिये यह उपचार करो—

१—नाइट्रेट ऑफ़ सिलवर का द्रव (किसी अँगरेज़ी दवाख़ाने से बनवाकर) और ग्लेसरीन लगाओ।

२—रोग़न गुल लगाओ।

३—गले पर बनफशे की पुल्टिस बाँधो।

४—फिटकरी के फूले को पानी में घोलकर ग़रारे कराओ।

इस रोग में बहुधा साँस रुककर मृत्यु होती है। ऐसी दशा में एक-मात्र उपाय यही है कि श्वास-नली में चतुर डॉक्टर से छेद करा दिया जाय।

यदि यह रोग फैल रहा हो, तो अपने बच्चों को नित्य ऐसा प्रयोग करो कि एक पेंसिल के टुकड़े पर रुई लपेट उसे नमक के पानी में भिगोकर गले मे लगा दो। यदि उसे एक बार पूर्वोक्त दवा की सुई लगवा दो, तो और भी उत्तम है।

पीला ज्वर

यह रोग 'वेस्टइंडीज़' के टापुओं का रोग है। और वहाँ से कभी-कभी जहाज़ द्वारा बंदरगाहों के नगर मे आ पहुँचता है। यह रोग टाइफ़ाइड की भाँति मल-मूत्र द्वारा उड़कर लगता है।

यह ज्वर अति भयानक है। प्रथम एक-दो दिन साधारण ज्वर आकर कम हो जाता है। पर पीछे एकदम ज़ोर कर आता है। इससे शरीर पीला पड़ जाता है, और भीतरी अंगों में लोहू जम जाता है। तेज़ ज्वर में अशक्ति और बेहोशी हो जाती है। किसी-किसी को वमन और दस्त मे काला रंग का लोहू आता है। इस रोग मे बहुधा ६ से ९ दिन तक रोगी मर जाता है।

उपचार

इस रोग का अभी तक कोई उत्तम प्रतीकार नहीं प्राप्त हुआ। यह रोग इस देश में बहुत कम देख पड़ता है। इसकी चिकित्सा वातोल्वण सन्निपात की भाँति होनी चाहिए। और एक क्षण भी नष्ट न करके योग्य चिकित्सक की सहायता लेनी चाहिए।

अकाल ज्वर (रिलेप्सिंग-फ़ीवर)

यह रोग भी एक प्रकार के कीटाणुओं द्वारा उत्पन्न होता है। यह ज्वर जिस घर में घुसता है, उसके सभी निवासी उसकी चपेट में आ जाते हैं। इस रोग की छूत शरीर और श्वास से निकलती है। जो कोई भी रोगी के पास देर तक रहता है, उसी को रोग लग जाता है। इस रोग के जंतु रोगी के रक्त में उत्पन्न होते हैं, और जब ज्वर चढ़ता है, तब उनकी वृद्धि हो जाती है।

लाली आ जाती है। सूखी खाँसी चलती है। इस प्रकार लगभग ८-१० दिन इसी प्रकार रहने पर ज्वर हल्का पडता है। और काली खाँसी का असली रूप प्रकट होता है। दर्द कम होता है, पर देर तक खाँसना पडता है। यह खाँसी घंटे मे ४-५ बार उठ खडी होती है। रात में इसका विशेष वेग होता है। जब तक खाँसी चलती है, साँस रुक जाती है, और फेफडों में हवा नहीं जा पाती। इससे रक्त ठीक-ठीक शुद्ध नहीं हो सकता। और शरीर का रंग कलौंस लिए हो जाता है। कभी-कभी बच्चा खाँसते-खाँसते बेहोश हो जाता है, खाँसी बंद होने पर हवा तेज़ स्वर के साथ फेफडे में जाती है; और रोगी शीघ्र सचेत हो जाता है। बहुधा छाती मे से चिकना बलगम निकलता है, तब ज़रा चैन पडता है। कभी-कभी उसके साथ उल्टी हो जाती या दस्त-पेशाब निकल जाता है। इस प्रकार ४-५ सप्ताह चल रोग नर्म पड जाता है। फिर बलग़म आसानी से छूटने लगता है।

छोटे बच्चों को जब यह खाँसी वेग से उठती है, तब कभी-कभी उनकी जीभ दाँतों जाने से उसके नीचे के भाग मे घाव हो जाता है। कभी-कभी नाक, आँख और कान में से निकलने लगता है। यह रोग जीवन में एक बार ही होता है।

उपचार

इस रोग का वेग शीत-ऋतु मे ही होता है, इसलिये बच्चों को गर्म वस्त्र पहनाने का पूरा ध्यान रखना चाहिए, और बिना बच्चों का पूरा बदोबस्त किए उन्हें खुला फिरने देना चाहिए।

इस रोग का एक अच्छा उपाय यह है कि एक लोहे की कलछी को ख़ूब लाल करके उ एक ड्राम कार्बोलिक एसिड डालना, और उसे रोगी बालक के बिस्तरे से थोडे अत रखकर उसमें से जो धुआँ निकले, उसे उसकी साँस के साथ जाने देना। इससे इस रो जंतुओं का नाश हो जाता है। यह क्रिया दिन मे ८-१० बार करनी चाहिए।

'क्रोमो फ़ार्म' एक अँगरेज़ी दवा है, वह इस रोग मे विशेष उपयोगी सिद्ध हुई एक वर्ष के बच्चे को २ से ४ बूँद तक किसी शर्बत के साथ दिन मे ३ बार देना चाहि अधिक आयु के बच्चे को इसी अनुमान से कुछ अधिक दवा देनी चाहिए। इस खाँसी एक उम्दा नुस्ख़ा यह है—

अनार से छिलके, काली मिरच, साम्हर नमक, बहेड़े का छिलका सब बराबर लेकर प के रस में गोली बनाओ। यह गोली बड़े बच्चों को मुख मे हर वक्त रखकर रस चूसना और छोटों को घोलकर पिलाना चाहिए।

६—यदि किसी के शरीर में रोग के चिह्न देख पड़ें, तो रोगी को तत्काल अस्प में चला जाना चाहिए।

७—जिस वैद्य या डॉक्टर के पास कोई छूत का मरीज़ आ जाय, तो इसकी सू इस संबंध के अधिकारी को तत्काल देनी चाहिए।

छूत की बीमारी का अस्पताल

१—हरएक नगर और कस्बेवालों का यह फ़र्ज़ है कि वे जब यह देखें कि वस्त कोई छूत की बीमारी फैल रही है, तो उस बीमारी के लिये ख़ास अस्पताल स्थापित क और नगर के स्त्री-पुरुषों तथा डॉक्टरों व वैद्यों को उसमें ख़ास तौर से स्वयंसेवक के भाग लेना चाहिए। इस अस्पताल में रोगी की चिकित्सा, सेवा और आराम का बहुत अ प्रबंध होना चाहिए। ज्यों ही कोई बीमार हो, तत्काल उसको अस्पताल पहुँचा दे चाहिए। और अस्पताल की तरफ़ से घरों को वैज्ञानिक रीति से शुद्ध करें, इससे रोग फैलने की बहुत कुछ रोक-टोक हो सकती है।

२—यह बात तो बहुत ही स्पष्ट है कि हैज़ा, प्लेग और छूत की दूसरी बीमारियों इलाज और उसका प्रबंध घर पर होना बहुत मुश्किल है। थोड़ी ही ग़फलत से रोग घर और लोगों को भी प्राय. लग जाता है, इसलिये ऐसे रोगी को ऐसे अस्पतालों में रखना सबसे उत्तम है, जहाँ पर हर किस्म के सुबीते तैयार हो सकते हों। जिनको खानगी घरों मिलना मुश्किल है, ऐसे अस्पतालों को बनाने और चलाने में बहुत भारी ख़र्चा उठाना अवश पड़ता है, परंतु इनसे जो लाभ होता है, उसके मुक़ाबिले यह ख़र्च कुछ नहीं। ऐसे अस्पताल बस्ती से कुछ फासले पर होने चाहिए। परंतु इतनी दूर भी न होने चाहिए कि जिसमें मरीज़ को ले जाने में तकलीफ़ और देर हो। इन अस्पतालों में नीचे-लिखी बातों का ख़ास तौर से ख़याल रखना चाहिए—

१—हरएक रोगी के लिये कम-से-कम दो हज़ार घन फ़ीट जगह मिलनी चाहिए।

२—कमरे में हवा की काफी गुंजाइश होनी चाहिए। मकान और फ़र्श पक्का होना चाहिए। पानी निकलने के लिये पक्की मोरियाँ होनी चाहिए, और अस्पताल में जल का यथेष्ट बंदोबस्त होना चाहिए।

३—अस्पताल के आस-पास सौ फ़ीट तक जगह रहनी चाहिए। दाइयों और नौकरों के रहने की जगह पचास फ़ीट दूर रहनी चाहिए। दवाख़ाना अस्पताल ही में रहना चाहिए, जिससे कि तत्काल रोगी को दवा वग़ैरह दी जा सके।

४—दवाख़ानों का बंदोबस्त थोड़े ही फ़ासले पर होना चाहिए। रोगी के कपड़े-जूते धोने का प्रबंध अस्पताल ही के नज़दीक होना चाहिए। रसोई चालीस फ़ीट दूर रहनी चाहिए।

से तेल का बर्तन उसमें छोड़ दो—पानी पर तेल तैर जायगा। उसे हाथ से उठाकर काम में लो।

उपर्युक्त दोनो चीज़ों मे से किसी एक को लगाकर तीन दिन तक न स्नान करो, न कपडे बदलो। प्रतिदिन दो बार दवा ख़ूब मसलो। तीन दिन बाद गर्म पानी से साबुन से स्नान कर लो, सब साफ़ हो जायगा। परंतु इसके साथ ही दो काम और करने चाहिए—

१—प्रारंभ में ही एक अच्छा जुलाब ले लो।

२—शाहतरा, चिरायता प्रत्येक ६-६ माशा रात को भिगो दो, और प्रातःकाल मसल छानकर शहद मिलाकर १ सप्ताह तक पियो। घी ख़ूब खाओ। मिर्च-मसाले छोड़ दो।

अलाइयाँ या मरोरियाँ

ये नोकदार फुंसियाँ गर्मी में बहुतायत से होती और बड़ी तकलीफ देती हैं। ये पसीना निकलने से होती हैं।

चिकित्सा

१—चमड़ी को गीले कपड़े या तौलिया भिगोकर पोंछो। और उस पर कोई भी पोडर जो बाज़ार में मिलता है, छिड़क दो। कुछ न मिले, तो मैदा ही मल दो।

२—आधे गिलास पानी में ३ बडे चम्मच पकाने के सोडा के घोलो। इसमें १५-२० बूँद कार्बोलिक एसिड डालकर उसमें कपड़ा भिगोकर मरोरियों को पोंछ दो, जलन और खाज बंद हो जायगी।

३—मुलतानी मिट्टी या चंदन का लेप करने से भी अलाइयाँ मर जाती हैं।

एग्ज़िमा या छाजन

यह बड़ा दुष्ट रोग है। इससे त्वचा पर चकत्ते पड़ जाते हैं। लाली, खाज और एक प्रकार का रस उस स्थान से निकलता है, पीछे पपड़ी पड़ जाती है। यह रोग चेहरे, खोपड़ी या जोड़ों के पास त्वचा की तहों में होता है।

चिकित्सा

१—यह रोग बड़ी कठिनाई से दूर होता है। मांसाहार और शराब इसके लिये हानिकर है। ख़ूब पानी पीना और फल खाना अति आवश्यक है। नीबू की शिकंजबीन पीने से लाभ होता है। दस्त साफ़ होना ज़रूरी है। यदि रोगी को कोष्टबद्ध है, तो उसका आरोग्य होना कठिन है।

२—रोगी स्थानों में साबुन और पानी नहीं लगाना चाहिए। स्वच्छ नारियल का तेल वेसलीन को पिघलाकर चुपड़ने से पपड़ी नहीं पड़ती। खुजाना नहीं चाहिए। छोटे बच्चों के हाथों को कपड़े से लपेट दो कि वह खुजा न सकें।

३—एक बड़ा चम्मच भरकर पकाने का सोडा १ गिलास गर्म पानी में डालो। और

जब बिल्कुल घुल जाय, तब २ औंस पानी मिलाकर रख लो। यह हुआ नं० २। लगाने की विधि यह है कि बालों को गर्म पानी से धोकर भली भाँति साफ़ करो, और फिर अच्छी तरह सुखा लो। इसके बाद शीशी नं० १ को दवा सफ़ेद ब्रुश से सिर्फ़ बालों पर सावधानी से लगाओ। फिर काले ब्रुश से नं० २ की दवा लगाओ। चमड़ी पर दवा न लगने पाए, वरना काला दाग पड़ जायगा। देशी खिजाब का एक उत्तम नुस्खा यहाँ लिखा जाता है—

पाव-भर मामूली इस तरह भून लिए जायँ कि न कच्चे रहें और न जलने पावें। ताम्र-चूर्ण ६ तोला आठ माशा, कसीस ६ माशा, काली हरड़ ३ तोला ४ माशा, तूतिया ६ माशा नौसादर १ तोला आठ माशा सबको कूटकर रात को आँवलों के पानी में भिगोवे। प्रातःकाल घोटकर गोली बना ले। जब ज़रूरत हो, लोहे की कड़ाही में घिसकर लगावे। बाल ख़ूब स्याह हो जायँगे।

पोस्त स्याह, जोज़दम, मासफ़रास, गुलनार, मस्तगी, तबाशीर, प्रत्येक १०-१० तोला, वर्ग बम्मा, वर्ग मेहँदी, पोस्त हलैला ज़र्द, बुरादा लोहा, कबूतर की बीट, मुनक़्क़ा प्रत्येक २० तोला, वर्ग आस, वर्ग जामुन, वर्ग शहतरा प्रत्येक ३० तोला सबको कूट-छानकर १० सेर पानी में पकाया जाय। २ सेर बाक़ी रखकर छान ले। उसमें ३ पाव तिल का तेल मिलावे और ८ दिन तक गेहूँ के ढेर में दबा दो, फिर धूप में रक्खो। तीन-चार दिन बाद पकाओ। छानकर तेल तैयार लो। गर्म पानी में नाबू निचोड़कर सिर धोना चाहिए। जब ख़ूब सूख जाय, यह तेल लगाया जाय। कुदरती स्याही आवेगी। अजीरह, नज़ला, ज़ुकाम, डाँडरा सब नष्ट होगा। तेल की वस्तु, दिन में सोना, आग तापना, बालों में साबुन लगाना निषिद्ध है।

बालों को घुँघरवाले बनाना

इस काम के लिये एक विलायती यंत्र आता है, जिसे Hair curler कहते हैं। इससे बाल घुँघराले बन जाते हैं। हाथ से भी बालों को नरम करके छल्लेदार या घुँघरवाले बनाया जा सकता है। यह सब अभ्यास और परिश्रम की बातें हैं। ललाट पर सुंदर लटें लटकाने से कुछ-कुछ सौंदर्य बढ़ जाता है। माँग-पट्टी निकालने या बालों को ऐसा-वैसा बनाए रखने के लिये इन चीज़ बालों में लगाई जाती हैं। जिनमें से एक चीज़ का नुस्ख़ा हम यहाँ देते हैं—

गूँदा (भिगोकर निचोड़ा हुआ) २ औंस, गोंद बबूल साफ़ १ औंस, गरम पानी १० औंस मिलाकर भिगो दो। ठंडा होने पर ३० औंस स्प्रिट ख़ूब मिलाओ। इसे शीशे की बोतलों में रक्खा जा सकता है।

इसकी चिकित्सा के लिये सिर के बाल मूड लेने बहुत ज़रूरी हैं इसके बाद उपर्युक्त औषध सेवन की जा सकती है। पर यदि इससे लाभ न हो—और गंजे को अलामतें हो गई हों, तो यह उपाय करे—

१—प्रथम जोंक लगवाकर ख़ून निकलवा दे।

२—नीम की छाल गो-मूत्र मे पीसकर लेप करे, और प्रतिदिन धो दे।

फोड़े और घाव

बच्चों को बहुधा घाव या फोड़े हो जाया करते हैं, जिनका कारण उनका मैलापन होता है। यदि उन्हें प्रतिदिन स्नान कराया जाय और उनके अंगो को स्वच्छ रक्खा जाय, तो उन्हें यह रोग कभी न हो। साथ ही गंदे रहने के कारण ही बच्चों के शरीर पर मच्छर और मक्खियाँ अपना विषैला प्रभाव छोड़ जाती हैं, जिससे उनके फोड़े-फुंसी निकल आते हैं।

जो बच्चे गली की धूल या गर्द मे नंगे पैर घूमते हैं, उनके शरीर मे किसी-न-किसी प्रकार के फोडे-फुंसी अवश्य निकल आने का अंदेशा रहता है।

उपाय

१—यदि बालको के खरोच लग गई है, और या वह कुचल गया है, तो चोट लगे स्थान को धोकर स्वच्छ कर दो। फिर उस स्थान को सुखाकर थोडा-सा बोरिक एसिड का पौडर छिड़को या उस पर टिंचर आइडिन लगा दो। यदि घाव से जल निकलता है, तो उस पर टिंचर आइडिन न लगाकर बोरिक एसिड का पौडर या आयोडाइन लगा दो।

२—यदि चमडी पर फुंसियाँ निकल आई हैं, तो गंधक पीसकर वेसलीन में मिलाकर मलहम बना लो और उस पर लगा दो।

यदि फुंसियों का मुँह सफ़ेद हो गया है, और उनमें पीव भर गया है, तो उन्हें सुई की नोक से तोडकर पीव निकाल दो। और तब एक फुरहरी रुई की बनाकर उन पर लगा दो, और स्वच्छ कपड़े की पट्टी बाँध दो।

यदि फोडा है, तो उसमें नश्तर दिलवा दो या तेज़ चाकू से स्वयं खोल दो। परतु इसमे पूर्व चाकू को पानी मे अच्छी तरह उबाल अवश्य लो, और उपर्युक्त मलहम लगा दो। यदि रोगी को बार बार फोड़े होते है, तो उसे एक अँगरेज़ी दवा "केलसियम-सलफाइड" दिन में ३ बार ½ ग्रेन प्रति बार दो।

यदि घाव कच्चा, बडा और खुला हुआ है, तो उसके लिये सर्वोत्तम उपाय यह है कि एक चम्मच नमक १ प्याले पानी में घोलकर उसमें कपडा भिगोकर उसकी गद्दी घाव पर लगाओ, और उस पर तेलिया काग़ज़ रखकर पट्टी बाँध दो। प्रति ३ घंटे में यह पट्टी बदल दिया करो।

परिशिष्ट ११

कृमि-रोग

मनुष्य के शरीर में बहुत प्रकार के [illegible] रहते हैं। इनमें [illegible] रहते हैं, उनका हम यहाँ एक प्रकार से [illegible]

केंचुए

पेट के केंचुए का शरीर [illegible] और [illegible] होता है। [illegible] ये ४-६ इंच लंबे होते हैं। [illegible] सकते हैं। कभी-कभी ये [illegible] बालक के [illegible] का दम घुटकर या [illegible]

तब किसी बालक के पेट [illegible] होता है, पेट में पीड़ा होती है। [illegible] बालक के मल में ये [illegible]

[illegible]

छोटे बालक के [illegible] और [illegible] को [illegible] है। फिर [illegible] है। इसके दो [illegible] दो। इसके [illegible] बालक के [illegible] है। [illegible] [illegible]

और ये अंडे मल के साथ बाहर निकलते है। फिर ये भूमि में फैल जाते और नदि तालाबों और बगीचों की हरियाली पर जम जाते हैं।

ये कृमि कुत्तों एवं बिल्लियों की आँतों मे भी पाए जाते हैं। जब वह कुत्ता बिल्ली बालक का हाथ चाटता है, तो कृमि के अंडे बालक के हाथ में लग जाते हैं। यदि वह बालक अपनी उँगलियाँ अपने मुख में डाले या उसी हाथ से भोजन करे, तो कृमियों के अडे मुँह में चले जाते है। इसलिये कुत्ते, बिल्ली पालने के शौकीनों को ज़रा बात का ख़याल रखना चाहिए।

कद्दूदाना

यह श्वेत, गोलाकार, लंबा, बारीक सूत के समान जंतु है। वह तिहाई इंच आधे इच तक लंबा और सीने के सूत के बराबर मोटा होता है। यदि साधारण सफेद को प्रायः आध इच के छोटे-छोटे टुकडो मे काटकर डाल दिया जाय, तो वे कद्दूदाने की भ दीखने लगेगे। ये छोटे कृमि बच्चो और युवको दोनो के शरीर में प्रवेश करते हैं। कभी-कभी संख्या मे कम अर्थात् १० या २० ही होते है और कभी-कभी अधिक भी हो जाते हैं। क इनकी संख्या हज़ारो तक पहुँच जाती है। वे 'आँत की भीतरी पर्त' में चिपक जाते है और को चूसते रहते हैं। वे केवल रक्त ही नही चूसते, बल्कि वहाँ एक घाव भी बना देते जिनसे रक्त रिसता रहता है। इस लगातार रक्त के रिसते रहने से और उस विष से कद्दूदानो से उत्पन्न होता है, मनुष्य निर्बल और पीला पड जाता है। शारीरिक शक्ति इत घट जाती है कि और रोग, ख़ासकर क्षय-रोग, सुगमता से लग जाता है। ऐसे बच्चे जिन्हें कृमि होते है, पीले पड़े रहते हैं, और प्राय. छोटे ही रहते हैं। उनकी शारीरिक और मानसि गति दोनो रुक जाती है। शारीरिक उन्नति में तो इतनी बाधा होती है कि १८ या २० व का युवक १०-१२ वर्ष का बालक जँचने लगता है। ऐसे बच्चे पढ़ भी नहीं सकते।

मुख्य लक्षण

त्वचा का पीला पड जाना। आलस्यता, आमाशय के भागों में कभी-कभी पीड़ा और मानसिक सुस्ती, मिट्टी और चूना खाने का अभ्यास ये इस बात का प्रमाण है कि बालक शरीर मे कद्दूदाने उत्पन्न हो गए है। यदि मल के थोडे-से हिस्से को डॉक्टर खुर्दबीन से देखे तो वह उन कृमियों को स्पष्ट देख सकता है।

पाँव के तलुए और अँगूठों के बीच खुजलाना इस बात का चिह्न है कि ये कीटाणु पैर की त्वचा द्वारा शरीर में प्रवेश कर रहे हैं।

इनके फैलने की रीति और रोकने का उपाय

कद्दूदाने आँतों में असंख्य अंडे देते हैं, जो मल के साथ पेट से बाहर निकलते है। जहाँ मल फैल जाता है, वहाँ ये फैल जाते हैं और दस दिन में छोटे-छोटे कीडे बन जाते है। वे आँगन में, बगीचों में, खेतों में रेंगने लगते हैं। साग, तरकारी और पानी में भी हो सकते हैं,

[illegible] उनके द्वारा शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। [illegible] शरीर में लग जाते हैं। ये सूक्ष्म [illegible] मिट्टी से [illegible] बढ़ जाते हैं, और चूहों की [illegible] रक्त पर [illegible] पाते हैं। ये रक्त में छेद करते घुसते ही [illegible] हैं। [illegible] हैं। यहाँ ये आँतों के भीतरी परत में [illegible]

इस रोग को रोकने के लिये [illegible] हैं, तो मिट्टी का गड्ढा होना [illegible] से मुख, कुत्ते, सुअर, [illegible] इस [illegible]

[illegible] होना चाहिए। यदि [illegible] है—

[illegible] के [illegible] अनुसार एक [illegible] हो। [illegible] के किनारे पर [illegible] हो, [illegible] दिया जाय। [illegible] हो और [illegible] मरे [illegible]

[illegible] मिट्टी में [illegible] में [illegible] ।

[illegible]

[illegible] रोगी को [illegible] हो। [illegible] के [illegible] ([illegible]

चुनमुने

ये कीड़े महीन, सफ़ेद, साधारणतया आँत के निचले भाग में रहते हैं। इससे गुदा के मुख पर और उसके चारो ओर बहुत जलन और खाज मची रहती है, जिससे बालक अत्यंत परेशान हो जाता है। ये कीडे मल द्वारा निकल आते हैं, और आँतों से निकलकर कपड़ों में भी आ जाते हैं। लड़कियों को जब होते हैं, तब योनि में घुस जाते हैं। वहाँ खुजली होती है और पानी-सा निकलता है। ये कीड़े बहुधा कमज़ोर और गंदे बच्चों के होते हैं।

उपचार

इन बारीक कीड़ों से बचने के लिये बच्चे के भोजन पर अधिक ध्यान देना चाहिए। भोजन स्वच्छ, पुष्टिकर और सुपाच्य हो, तथा वह नियत समय पर दिया जाय।

प्रथम थोड़ा एरंड-तेल पिलाओ, और तब एनीमा द्वारा गर्म जल ½ सेर थोडी कुनाइन (२० ग्रेन) घोलकर या २ चम्मच नमक घोलकर आँतों में चढा दो। जितनी देर जल रुक सके, उत्तम है। यह क्रिया १ सप्ताह तक प्रतिदिन रात्रि के समय करो।

यदि खुजली हो, तो १ तोला मक्खन या वेसलीन में ५ बूँद कार्बोलिक एसिड डालकर गुदा पर मलहम की भाँति लगा दो।

यदि बालक गुदा के मुख को खुजलाता या मलता है, तो उसकी उँगलियों और नखों में कीड़ों के अंडे घुस आवेंगे। इसलिये ऐसे बालकों के हाथ बारंबार धोना और नखों को स्वच्छ रखना और काट भी देना चाहिए। चूतड प्रतिदिन नियमित रीति से धोए जाने उचित है। यदि ऐसा न किया जायगा, तो बालकों को बारंबार यह रोग होगा।

अंडकोष उतर आना

बहुधा मूत्राशय के रोगों में अंडकोष की गोली नीचे उतर आती है। उससे ३ वेदना होती है। इसका सरल उपचार यह है—खाने की तंबाकू का एक पत्ता ज़रा करके आधी छटाक गुड में कूटकर गोली पर कसकर लँगोट से बाँध दो। गोली चढ़ जा

पोस्त के डोंडों का सेंक करके बैलाडोना का प्लास्टर बाँधना भी लाभदायक है।

जोड़ों का दर्द और गठिया

१—सब प्रकार की ठंड से बचो। गर्म और तर खान-पान करो।

२—योगराज गूगल (प्रसिद्ध दवा) और नारायण तैल की मालिश करो।

३—संतरे मीठे ख़ूब खाओ। कब्ज़ मत होने दो।

मृगी या हिस्टीरिया

इस रोग मे रोगी हठात् बेहोश होकर गिर पड़ता है। हँसता, भयभीत होता या बकता है। स्त्रियों को यह रोग ख़ासकर गर्भाशय की बाधा के कारण होता है।

ऐसे रोगी को सभी प्रकार के नशे या मानसिक चिंताएँ त्याग देनी चाहिए।

उपचार

१—यदि रोगी होश में न आवे, तो एक फ़लालैन का टुकडा या गुलूबंद ख़ूब तेज़ गर्म पानी में भिगोकर और जल्दी से ख़ूब निचोडकर उस पर तारपीन का तेल छिड़क दो और गले के चारो ओर लपेट दो। थोडी देर में रोगी होश में आ जायगा।

२—ब्राह्मी बूटी प्रतिदिन १ माशा, ११ काली मिर्च मिलाकर ठंडाई की भाँति पीना चाहिए। नीबू की शिकंजबीन बहुत गुणकारी है। क़ब्ज़ कभी न होने देना चाहिए।

अन्य वस्तु निगल जाना

कभी-कभी बच्चे बटन, पैसा, इकन्नी, दुअन्नी आदि निगल जाते हैं। इससे अधिक भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। क्योंकि ये चीज़ें स्वयं ही शरीर से निकल जाती हैं, इसके लिये जुलाब न देना चाहिए। पर रोटी, दलिया, हलुआ आदि बहुत-सा भोजन करा देना चाहिए कि आँतों में ढेर होकर उसके साथ वह चीज़ भी निकल जाय।

शूल

कुपथ्य भोजन करने से कभी-कभी उत्कट शूल-रोग होता है। इसका सर्वोत्तम उपाय यह है कि तत्काल २-३ बार एनीमा दे डालो। और एक-दो दिन केवल दूध ही खाने को दो। शूल के लिये एक उपचार यह है—एक मिट्टी का दोवला आग में लाल करके उसमें १ तोला घृत डालकर १ माशा हींग भूनो, और १ पाव दूध में छोड़ दो। वही दूध रोगी को पीने दो।

ओत-प्रोत होकर ब्रह्मांड पर भासित होती हैं, और इन्हीं के द्वारा वनस्पति, प्राणी और उद्भिज-जगत् का उत्पादन होता है। संसार के भिन्न-भिन्न पदार्थों में जहाँ-जहाँ जिस-जिस वस्तु का जो-जो रंग होता है, उस-उस वस्तु में उसी ग्रह का स्वभाव ख़ासकर होता है। लोहा, ताँबा, राँगा, पारा आदि धातुओं मे इन्हीं का रंग है, मनुष्य-शरीर मे भी सप्त रंगों का मिश्रण सप्त धातुओं में है।

रंगों का शरीर पर प्रभाव

रंगों में जो रासायनिक पदार्थ है, वे सभी लगभग शरीर मे रहते हैं।

ये सभी तत्त्व प्रतिदिन के प्रकाश द्वारा मनुष्य को मिलते हैं। इनकी कमी या अधिकता ही मनुष्य को रोगी बनाती है। उन्हीं के सम रहने से शरीर मे जीवनी शक्ति का संचार रहता है। सूर्य की किरणों का प्रभाव रक्त और हृदय की गति पर सीधा पड़ता है। यह जीवनी शक्ति निरंतर चुपचाप चराचर जगत् को सूर्य से मिलती रहती है। यदि आप एक पौदे को धूप और प्रकाश से बचाकर रक्खें, तो वह अवश्य सूख जायगा। यही दशा किसी भी प्राणी की हो सकती है। यदि १०-१२ दिन निरंतर बादल रहे, तो मनुष्यों का चित्त उदास, शरीर निस्तेज और आलस्य-युक्त रहता है। जब-जब हैज़ा या प्लेग की बीमारी फैलती है, ऐसे ही घरों और मुहल्लों से फैलती है, जहाँ सदा अंधकार रहता है।

शरीर में नाभि-स्थल में मणिपुर-चक्र है, यह स्थान व्यान-नामक वायु का अधिष्ठान है। प्रश्वास द्वारा जब प्राणी सूर्य की किरणों को पाता है, तब इसी मणिपुर-चक्र में सूर्य की श्वेत रश्मि का संचय होता है। प्राणायाम द्वारा वह अधिकाधिक सींची और एकत्र की जाती है, फिर भिन्न-भिन्न अवयवों में वह विभक्त हो जाती है। और तब उसके रंग भी भिन्न-भिन्न हो जाते हैं। और जिस-जिस अवयव का जो-जो रंग है, वही-वही उसे प्राप्त हो जाता है।

जब मनुष्य रोगी होता है, तब उसके नेत्र, नाख़ून, मल-मूत्र, त्वचा इनके रंग में अवश्य अंतर पड़ जाता है। इसे ध्यान से देखने पर आप समझ सकते हैं कि किस रंग की अधिकता और किसकी कमी हो गई है। लाल रंग की कमी से सुस्ती, आलस्य, नींद, मंदाग्नि, क़ब्ज़ आदि की शिकायतें हो जाती हैं।

नीले रंग की कमी से क्रोध, चंचलता, उत्तेजना आदि हो जाती है। आँखों में सुर्ख़ी के डोरे आ जाते हैं।

पीले रंग की कमी से मंदाग्नि, अरुचि, शरीर-दर्द, नींद न आना, जम्हाई आती है। दस्त का रंग स्याही माइल होता है। मूत्र लाल, नख, त्वचा में ख़ुश्की रहती है।

आसमानी रंग की कमी से अतिसार, पित्तज्वर, पेशाब में जलन, हैज़ा, पांडु रोग आदि हो जाते हैं। मूत्र लाल आता है। पसीना आता है। दस्त पतला और कभी-कभी हरा रंग लिए आता है।

नारंगी—पुराने कब्ज़ में इस रंग के पानी का तत्काल प्रभाव पड़ता है। पर प्रतिदिन १ बार ही पीना चाहिए, अधिक नहीं। कुष्ठ और आतशक रोग में यह बहुत लाभ पहुँचाता है, पर १०-१२ मास तक उसका सेवन करना चाहिए, और सांय-प्रातः ही पीना चाहिए।

शीतज्वर, नज़ला, खट्टी डकार, फेफड़े की ख़राबियाँ, हिस्टीरिया, मलेरिया आदि रोग भी इससे दूर होते हैं।

उज्ज्वल नील—श्वास में बहुत लाभदायक है। आँतो की निर्बलता तथा क्षय की प्रारंभिक अवस्था मे यह विशेष लाभकारी है। फेफड़े के और सभी रोगों के लिये यह महत्त्व-पूर्ण है। काली खाँसी और अजीर्ण एव अम्लपित्त मे लाभकारी है।

हरा—शांतिदाता और लगभग आसमानी रग के अनुसार है। इसकी शक्ति नासूर को दूर करने मे बड़ी अपूर्व है। दिमाग़ी ख़राबी भी इससे दूर होती है। अनिद्र-रोग मे भी गुणकारी है। ज़ुकाम, स्वर-भंग, विसर्प, उपदंश, नेत्र-रोग, मासार्बुद में इससे बहुत लाभ होता है।

बैंजनी रंग—ठंडा, काविज़ और शामक है, वमन को रोकता है। प्रमेह, ज्वर, सिर दर्द में इसका जल बहुत गुण करता है।

खास-खास रंगों का खास-खास रोगों पर प्रभाव

आसामनी	नीला	पीला	हरा	लाल	नारंगी	बैंजनी
पित्तज्वर, दस्त, त्रिदोष, मतली, वमन, अम्लपित्त, रक्तार्श, पाँडु, उन्माद, गुर्दे की सूजन, चोट, पथरी, सुज़ाक, घाव, वीर्यस्राव, स्वप्नदोष, मसूड़े और दाँतों के रोग, खाज, गर्भावस्था के रोग	वातज्वर, सिर-दर्द, मलेरिया, इंफ्ल्युएंज़ा, काली खाँसी, अजीर्ण, क्षय, कास, जीर्ण ज्वर भंग, नेत्र-रोग, रोहे, अग्निदाह दंश	मदाग्नि रक्तपित्त शून्यवात मधुमेह	बिगड़ा हुआ ज़ुकाम, सिर-दर्द नज़ला फोड़ा-फुंसी घाव	नाड़ी शैथिल्य ऊर्ध्वांग-वात, चेचक की प्रारंभिक दशा	कफज्वर, उदर-शूल, मेद-रोग, खट्टी डकार, अम्लपित्त, अफारा, अर्श, श्वास, अपस्मार, वातव्याधि, पक्षाघात, नष्टार्तव, कष्टार्तव, हिस्टीरिया, रक्तगुल्म	सर्व ज्वर क्षय

प्रकरण २

उपवास-चिकित्सा

हमने पिछले अध्यायों मे बता दिया है कि शरीर की बनावट ही ऐसी है कि वह शरीर भर ऐसे द्रव्यों को जो शरीर के विरोधी विष है, स्वयं निकाल बाहर करता रहता है। साँस थूक, पसीना, मल मूत्र, छींक, डकार आदि सब इसी मतलब को हल करते है। यदि किसी कारण शरीर यह क्रिया ठीक-ठीक न कर सके, तो वह रोगी हो जायगा।

वैज्ञानिकों का मत है कि जन्म से मृत्यु तक शरीर मे एक प्रकार का विष बनता रहता है। उसका तत्काल नाश यदि शरीर न करे, तो शरीर का अनिष्ट हो जायगा। हम प्रथम कह आए हैं कि शरीर मे असंख्य जीव-कोष है। ये पुराने प्रतिक्षण नष्ट होते और नए बनते रहते है। नष्ट हुए जीव कोष ही विष-रूप हो जाते है। और शरीर भिन्न-भिन्न मार्गों से उन्हें निकालता रहता है।

परिश्रम करने से ये जीव-कोष नष्ट होते और विश्राम से बनते है। तथा आहार से पोषित होते है, इसलिये आहार और विश्राम जीवन के लिये परमावश्यक हैं।

मनुष्य के शरीर में सबसे अधिक रोग उत्पन्न होने का कारण यही है कि वह प्रकृति के नियमों का बहुत उल्लंघन करता है। वह बहुत-से नशे के पदार्थ जैसे भंग, अफ़ीम, शराब आदि खा लेता है, जिन्हें पशु कभी नहीं खा सकते। इसी प्रकार वह भोजन में भी बहुत कुछ सीमा से बाहर हो जाता है। वह बहुत अधिक अन्न खाता और उसके साथ मिर्च, मसाले, अचार, चटनी आदि ऐसी चीज़ें खा जाता है, जो शरीर मे बहुत-सा विष पैदा कर देती है।

विद्वान् डॉक्टरों ने खोज करके इस बात की जाँच की है कि अधिक भोजन करना जल्दी मृत्यु को लाना है। साधारणतया जितना भोजन मनुष्य नित्य करते हैं, उतना वे पचा नहीं सकते और उसका बहुत-सा अंश कच्चा ही अँतड़ियों मे चला जाता है। इससे जहाँ आमाशय और अँतड़ियों को बहुत अधिक काम करना पड़ता है, और वे कमज़ोर हो जाती हैं, वहाँ दूषित अंश शरीर में रह जाने के कारण रक्त और अन्य धातु भी ख़राब हो जाती हैं। यही अनेक रोगों के उत्पन्न होने का मूल-कारण है। एक विद्वान् का कथन है कि अकाल में भूखे रहकर इतने आदमी नहीं मरते, जितने ख़ूब ठूँसकर खाने से मरते हैं।

बहुत लोग यह समझते है कि यदि हम ख़ूब ठूँस-ठूँसकर न खायँगे, तो हम कमज़ोर हो जायँगे। यह बड़ी भूल है, ऐसे लोगों को उत्तम भोजनों में भी स्वाद नहीं आता। और प्रायः बिना भूख के ही वे खाया करते हैं।

मुग़ल बादशाह शाहजहाँ बहुत कम आहार खाते थे। बड़े-बड़े तपस्वी, दीर्घायु योगी अल्पाहार और उपवास से ही नीरोग रहते रहे हैं। पशु रोगी होने पर बिना आहार के कई दिन पड़े रहते हैं। साँप केंचुली बदलने के समय सप्ताहों निराहार रहता है। बहुत-से जन्तु जाड़े-भर निराहार रहते हैं। बर्फ़ीले प्रदेशों में बिच्छू ४ मास निराहार पड़े रहते हैं।

रोग और उपवास

सब प्रकार के ज्वरों में प्रारंभ में उपवास करना सबसे उत्तम है। आगे चलकर चिकित्सक की सम्मति से भोजन परिमित किया जा सकता है। आयुर्वेद में लिखा है—"आहारं पचति शिखि दोषानाहारवर्जितः।,, अर्थात् अग्नि आहार को पचाती है, पर जब आहार नहीं रहता, तो वह दोषों को पचाती है। योरप में उपवास ही से सब रोगों की चिकित्सा करने के अनेक अस्पताल खुले हैं। और उनमें आशातीत लाभ हुआ है। उपवास से मन पर भी काफ़ी प्रभाव होता है। धर्म-शास्त्रों का मत है कि उपवास से मन और आत्मा की शुद्धि होती है। जब कोई मनुष्य उपवास शुरू करता है, तो उसका शरीर दुर्बल होने लगता है, और अंततः वह हड्डियों की ठठरी रह जाता है। इसका कारण यही है कि शरीर का समस्त फालतू भाग शरीर के पोषण में ख़र्च होने लगता है। उपवास से मृत्यु का भय तभी होगा, जब कि शरीर के आवश्यक अंगों से शरीर का पोषण होने लगेगा। पर जब तक आवश्यक अंग नहीं ख़र्च होते, मनुष्य केवल दुबला होता है, और उससे कोई हर्ज नहीं होता। उपवास-काल तभी तक माना जाना चाहिए, जब तक कि शरीर का पोषण उसके फालतू पदार्थों पर होता रहे। प्रारंभ में उपवास करने पर भोजन के समय पर थोड़ा उद्वेग होता है, पर ज्यों ही शरीर का फालतू पदार्थ पचने लगता है, उद्वेग नष्ट हो जाता है। यह स्थिति २-३ दिन से अधिक नहीं ठहरती। भारी और मोटे आदमियों को उपवास से बढ़कर अन्य कोई उत्तम वस्तु नहीं। यदि ठीक विधि से उपवास किया जाय, तो शरीर की शक्ति कदापि नहीं कम होती।

ध्यान रखने की बात यह है कि उपवास से मस्तिष्क में कोई विकार नहीं उत्पन्न होता। क्योंकि मस्तिष्क का पोषण जिन पदार्थों से होता है, वे स्वयं मस्तिष्क ही में रहते हैं। हमेशा मस्तिष्क तभी अच्छा काम करेगा, जब पेट हल्का रहेगा। मस्तिष्क से काम करनेवालों को सदा अल्पाहार करना चाहिए।

उपवास की रीति

उपवास के दिनों में केवल जल को छोड़कर अन्य कुछ पदार्थ नहीं लेना चाहिए। चाहे भी जिस ऋतु में उपवास किया जा सकता है। प्रारंभ के एक या दो दिन कष्ट से व्यतीत होंगे। घबराहट, आँखों में अँधेरा, सिर में चक्कर, क़ै आदि उपद्रव मालूम देते हैं और यह मालूम देता है, मानो शरीर एकदम ख़ाली हो गया है। और भी कई बातें मालूम देती हैं, पर दो तीन दिन बाद ये सभी विकार आप ही शांत हो जाते हैं।

कते नहीं। जो लोग ८-९ घंटे सोते हैं, वे यदि उपवास-काल में ३-४ घंटे सोवें, तो फ़ी है।

जल उपवास-काल में यथेष्ट पीना चाहिए। इससे बहुत लाभ होगा। जिनका मुँह क बाद उपवास-काल में बिगड़ जाय, उन्हें और भी अधिक जल पीना उचित है। कभी-कभी ज़ में नीबू का रस मिलाया जा सकता है। यदि पकाया हुआ जल पीना हो, तो भी व ठा करके ही पीना चाहिए।

एनीमा

उपवास-काल में बीच-बीच में सिर्फ़ गर्म पानी का एनीमा लेने से पेट, पेड़ू और आँत ी सफ़ाई होती है। इससे साँस अच्छा आता है और जीभ की रंगत अच्छी हो जाती है

उपवास न करने योग्य

क्षय के रोगी तथा पूर्ण नीरोग युवक और युवती स्त्रियों को उपवास नहीं करन चाहिए। गर्भवती को भी उपवास न करना चाहिए। इसके सिवा अत्यंत दुर्बल, मूर्च्छा-रोग आदि भी उपवास न करें।

विशेष बात

उपवास में प्राय. कृत्रिम दुर्बलता प्रतीत होती है, पर उसकी परवा न कर धीरे-धीरे हलना आदि जारी रखना चाहिए। उससे शरीर की शक्ति जाग्रत् रहेगी। यदि परिश्रम न किया जायगा, तो शरीर दुर्बल अवश्य हो जायगा।

उपवास की समाप्ति

उपवास की समाप्ति पर सावधानी की आवश्यकता है। उपवास के बाद बहुत कुछ खाने की इच्छा होती है, पर ऐसा कदापि न करना चाहिए। उपवास के बाद शरीर अत्यंत नाज़ुक हो जाता है। लंबे उपवास करनेवालों को ख़ास तौर पर इन बातों का ध्यान रखना चाहिए। उपवास छोड़ने पर प्रथम कुछ फलों का रस लेना चाहिए। यह रस थोड़ी चीनी मिलाकर थोड़ी-थोड़ी बार लेना चाहिए। एकदम से बहुत-सा रस न पीना चाहिए। दिन में ३-४ बार से अधिक रस न पीना चाहिए। २-३ दिन बाद ताज़ा गर्म दूध पीना चाहिए। फिर धीरे-धीरे उसकी मात्रा बढ़ानी चाहिए। साथ ही खट्टे रस के फल खाने चाहिए। ३ सप्ताह में धीरे-धीरे अपना साधारण भोजन करना चाहिए, पर कम मात्रा में। दूध थोड़ी-थोड़ी देर में बारंबार पीना चाहिए। इस रीति से बड़ी जल्दी वज़न बढ़ जाता है। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि यदि इन दिनों क़ब्ज़ रहे, तो एनीमा का उपयोग किया जाय। अंगूर और संतरा का रस उपवास छोड़ने के लिये सबसे उत्तम वस्तु है। कुछ काल तक भोजन यथासंभव कम खाया जाय।

उपवास के अनुभव

डॉक्टर बरनर मैकफ़ेडेन जो अमेरिका के प्रख्यात डॉक्टर थे, लिखते हैं—

जल भी नहीं पिया था। इसी समय में उन्होंने एक दौड़ में बाज़ी जीती। अंत में वे पूर्ण हृष्ट-पुष्ट और नीरोग रहे।

अमेरिका के एक होटल के स्वामी ने ६० दिन का उपवास किया था। उस समय उसका वज़न ५ मन के लगभग था। उसका वज़न अंततः १०० पौंड घट गया। वह बराबर १५ मील घूमा करता था।

महात्मा गांधी ने अनेक बार उपवासों का अनुभव किया है। पिछली बार उन्होंने २१ दिन का उपवास किया था, और उसका अनुभव उन्होंने इस प्रकार लिखा था—

मुझे आरंभ में ही मेरे दूसरे अधिक दिनों के उपवास के समय जो हानिकारक बात हुई थी, उसका प्रथम उल्लेख कर देना चाहिए। यह उपवास १९१४ में दक्षिण-आफ्रिका में किया था, और यह १४ दिन का उपवास था। उपवास खुलने के बाद दूसरे ही दिन यह जानकर कि उससे मेरी कुछ भी हानि न होगी, मैंने तीन मील तक चलने का बड़ा परिश्रम किया। दूसरे या तीसरे ही दिन टाँग की मांस-हीन पिंडलियों में बड़ा दर्द होने लगा। उसका कारण न समझकर जैसे ही यह दर्द बंद हुआ कि मैंने फिर चलना शुरू किया। इसी हालत में मैं दक्षिण-आफ्रिका छोड़कर विलायत गया, और वहाँ मुझे डॉ० जीवराम मेहता ने देखा। उन्होंने मुझे यह चेतावनी दी कि यदि तुम इसी प्रकार चलना कायम रक्खोगे, तो ज़िंदगी-भर के लिये पंगु बन जाओगे। तुम्हें कम-से-कम १५ दिन लेटे रहना चाहिए, और आराम लेना चाहिए, लेकिन यह चेतावनी बहुत देर के बाद मिली, और मेरी तंदुरुस्ती बिगड़ गई। इसके पहले मेरा स्वास्थ्य बड़ा अच्छा था। मैं १० मील तक बिना थकावट के जा सकता था। उन दिनों में २० मील चलना तो मेरे लिये कुछ बात न थी। अपने अज्ञान के कारण मैंने अपने शरीर को जो अधिक श्रम पहुँचाया, उसी के कारण मुझे पसली के दर्द का रोग हुआ था। उसने मुझे बड़ी पीड़ा पहुँचाई, और मेरे स्वास्थ्य को जो पहले अच्छा था, बिगाड़ दिया। मेरे जीवन में मेरे ऊपर यह किसी बड़े रोग का पहला ही आक्रमण था। इतना मूल्य देकर मुझे जो अनुभव हुआ, उससे मैंने यह सीखा कि उपवास के दिनों में शरीर को संपूर्ण आराम देना चाहिए, और उपवास के बाद भी उपवास के दिनों के प्रमाण में कुछ दिन आराम लेना अत्यंत आवश्यक है। यदि इतने से सादे नियम का ही यथायोग्य पालन किया गया, तो फिर किसी दूसरे बुरे परिणाम की आशंका रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। बेशक, मेरा यह विश्वास है कि नियमित तौर पर किए गए उपवास से शरीर को लाभ ही होता है। उपवास के दिनों में शरीर में से बहुत कुछ अशुद्धियाँ निकल जाती हैं, गत वर्ष उपवास के दिनों में और इस समय भी, पहले के उपवासों के नियम के विरुद्ध, मैं नमक और सोडा डाल कर पानी पीता था। उपवास के दिनों में पानी के प्रति मुझे अरुचि हो गई थी। नमक और सोडा डालने ही से मैं कुछ पी सकता था। बहुत-सा पानी पीने से पेट साफ़ रहता है, और मुँह में नमी रहती है। तीन छटाँक या पाव-भर पानी में २ रत्ती नमक और उतना ही

नेत्र

नेत्रों का सौंदर्य उनके रंग, चमक, आकृति और भाव-सूचक चांचल्य पर निर्भर है। नेत्रों का सफ़ेद भाग बिलकुल सफ़ेद होना चाहिए। इस भाग में पीलापन होना पित्त की वृद्धि और यकृत की ख़राबी का परिचायक है। नीलापन या मैलापन ज्वर, मद्यपान और दुराचार से हो जाता है। इन कारणों को यत्न-पूर्वक दूर करने ही से नेत्रों को फिर से स्वच्छ बनाया जा सकता है।

सुंदर नेत्र

नेत्रों के प्रांत भाग में जो लाल डोरे होते हैं, उनका रंग विशुद्ध गुलाबी होना चाहिए। नेत्रों में चमक उत्पन्न होना, और उनका पूर्ण विकसित होना, उनमें सजीवता लाता है। नेत्रों पर जितना अधिक प्रकाश का प्रभाव होगा, उतनी ही नेत्रों में चमक अधिक आवेगी। हृदय के आनंद, तुष्टि और उत्साह से नेत्रों का पूर्ण विस्तार होता है, और वे अधिक चमकते हैं। भीतर धँसी हुई आँखों की अपेक्षा उभरी हुई आँखें अधिक चमकती हैं। नेत्रों की ऊपर की भी सफ़ेदी यदि चमकने लगे, तो नेत्र कुरूप और भयानक दीखने लगते हैं। सुंदर नेत्र की लम्बाई एक कान से दूसरे कान तक जितना अंतर होता है, उसका सातवाँ भाग होना चाहिए।

नेत्रों की सुंदरता को नष्ट करनेवाले रोगों में नेत्रों से पानी आना सबसे बुरा है। इसका सर्वोत्तम उपाय यह है कि बोरिक एसिड १८ रत्ती ४ औ० पानी में मिलाकर बारम्बार उससे नेत्र धोए जायँ। यदि प्रातःकाल पलक चिपक जायँ, तो जिंक सल्फेट २० ग्रेन, जल १० औंस में मिलाकर रख लिया जाय, और रात को आँखों में डाला जाय।

[illegible] स्पीरिट को आँखों में डालने से नेत्रों का दूषित जल निकल जाता है, और [illegible] निर्मल हो जाती है। त्रिफले के पानी से नेत्रों को नित्य धोने से भी आँखें शुद्ध [illegible]। शुद्ध शहद जो नेत्रों में आँजने से नेत्र साफ़ हो जाते हैं।

नेत्रों को सुंदर और नीरोग रखने का एक उत्तम नुस्ख़ा हम यहाँ लिखते हैं—

दूध की हरएक ख़ुराक में केवल आधी छटाँक पानी ही मिलाया जाता है। कोई डेढ़ दिन तक मैंने केवल ख़ालिस दूध ही पिया था, लेकिन उससे कुछ भारीपन मालूम होने लगा, और उसका कारण ख़ालिस दूध को ही समझकर दूध में पानी मिलाना फिर आरंभ किया है।

उपवास खोलने के बाद आज यह बारहवाँ दिन है, जब कि मैं यह लिख रहा हूँ। अब तक मैंने कोई भी वज़नदार ख़ुराक नहीं ली है। अब भी फल का कुछ हिस्सा तो उसके रस के रूप में ही लेता हूँ, और आख़िरी तीन दिनों में तो मैंने अनार, चीकू और अरंड-ककड़ी लेना भी शुरू किया है। अधिक-से-अधिक दूध जो मैंने अब तक लिया है, २ सेर के क़रीब है। साधारण तौर पर १॥ सेर दूध पीता हूँ, और कभी-कभी मैं उसके साथ थोड़ी सी डबल रोटी या हलकी-सी चपाती भी खाता हूँ। लेकिन महीने-के-महीने मैं दूध और फल खाकर ही रहता हूँ, और अपने को हमेशा स्वस्थ हालत में रखता हूँ।

जेल से निकलने के बाद अधिक-से-अधिक १७२ पौंड तक मेरा वज़न पहुँच गया था। इन सात दिनों के उपवास में कोई ९ पौंड वज़न कम हो गया था। अब मैंने खोया हुआ तमाम वज़न फिर प्राप्त कर लिया है, और अब मेरा वज़न १०३ पौंड से भी कुछ अधिक है। अब दो दिन से तो मैं सुबह-शाम नियमित कसरत भी कर रहा हूँ, और उसमें मुझे कुछ भी श्रम नहीं मालूम होता है। समान ज़मीन पर चलने में भी मुझे कोई कठिनाई नहीं मालूम होती है। लेकिन अब भी सीढ़ियाँ चढ़ने या उतरने में कुछ श्रम मालूम होता है। दस्त भी ठीक-ठीक साफ़ होते हैं, और रात को मैं जब चाहता हूँ, निद्रा ले सकता हूँ।

मेरी राय में तो उन २१ दिनों के उपवास के कारण या इन सात दिनों के आख़िरी उपवास के कारण मेरे शरीर को कुछ भी हानि नहीं पहुँची है। इन सात दिनों में वज़न का घट जाना कुछ भयप्रद और चिंता-जनक अवश्य था। लेकिन प्रारंभ के साढ़े तीन दिनों में मैंने जो बड़ा श्रम किया था, वही उसका कारण था। थोड़ा और आराम कर लेने पर मैं अपनी मूल-शक्ति जिससे कि मैंने उपवास का प्रारंभ किया था, फिर प्राप्त कर लूँगा, और शायद कुछ में मैंने जो शक्ति और वज़न गँवाया था, वह भी बिना कठिनाई के प्राप्त कर सकूँगा।

एक औसत दर्जे के आदमी की दृष्टि से और केवल शरीर की दृष्टि से मैं जो लोग किसी भी कारण से उपवास करना चाहें, उनके लिये कुछ नियम यहाँ लिखता हूँ—

१—उपवास के दिनों में पूर्ण विश्राम करना चाहिए।

२—नमक और सोडा डालकर या बिना सोडा या नमक के ही ठंडा पानी जितना भी हो सके, थोड़ा-थोड़ा करके पियो (पानी खौलाकर ठंडा किया हुआ होना चाहिए)। नमक और सोडा से नहीं डरना चाहिए। क्योंकि बहुत-से प्रकार के पानी में स्वतंत्र नमक रहता है।

३—रोज़ाना गरम पानी के कपड़े से शरीर साफ़ करना चाहिए।

४—उपवास के दिनों में रोज़ाना नियमित रूप से 'एनीमा' लेना चाहिए। रोज़ाना जो मल निकलेगा, उसे देखकर तुम्हें बड़ा आश्चर्य होगा।

५—जितना भी हो सके खुली हवा में निद्रा लो।

६—सुबह धूप में बैठो। धूप और हवा में [illegible] जितना कि स्नान करना।

७—उपवास के सिवा और सब बातों का विचार [illegible]

८—किसी भी उद्देश्य से उपवास [illegible] अपने रचयिता का, उसके साथ [illegible] चाहिए। इसने मुझे ऐसी-ऐसी बातें मालूम [illegible]

इस डॉक्टर मित्र से मैंने [illegible] रोगों के लक्षणों का संक्षेप [illegible] के निम्न लिखित लिखा [illegible] (१) [illegible] का होना, (२) [illegible] का होना, (३) [illegible] होना, (४) [illegible] का होना।

यदि इन लक्षणों पर उपवास [illegible] खाने को [illegible] न रहेगा।

[illegible]

[illegible]

प्रकरण ३

दुग्ध-चिकित्सा

दूध मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है, और उसमे जहाँ शरीर को सर्वथा पोषण करने की शक्ति है, वहाँ रोगो के बीज को निर्मूल करने की भी शक्ति है।

यदि तुम्हारा शरीर दुर्बल हो गया हो, अन्न पचता न हो, शरीर में शुद्ध रक्त न बनता हो, तो दूध ही तुम्हें आरोग्य प्रदान कर सकता है। बहुत लोग समझते हैं कि बड़ी आयु के लोग दूध पर सर्वथा नही रह सकते। यह भ्रम है। योरप में बल्गेरिया-निवासी अधिक दीर्घजीवी होते है। और इसका कारण यही है कि वे दूध का अधिक प्रयोग करते हैं। बहुत लोगों का ख़याल है कि दूध उन्हें मुआफ़िक नही होता। पेट में हवा पैदा करता है। पर उसका कारण वास्तव में कुछ और ही है। दूध मे यूरिक एसिड बिल्कुल नहीं होता। अतः यूरिक एसिडवाले लोगो के लिये दूध बहुत उत्तम वस्तु है। यदि दूध पेट में जाकर उल्टी हो जाय, तो समझना चाहिए कि रोगी के शरीर में अम्ल की कमी हो गई है। पहले उसे पैदा करें, तब दूध सेवन करें।

दूध की चिकित्सा शुरू करनेवालों को इन बातों का ध्यान रखना चाहिए—

१—वे दूध के अतिरिक्त और कुछ भी न खायँ। पूरा-पूरा विश्राम किया जाय। चित्त को प्रसन्न रक्खा जाय।

२—दूध-चिकित्सा प्रारंभ करने के पूर्व २-४ दिन उपवास करना आवश्यक है। उपवास-काल में ५-७ सेर पानी नित्य पीना चाहिए।

३—दूध की मात्रा रोगी के बलाबल पर निर्भर है। प्रारंभ में बहुत कम दूध लेना चाहिए। धीरे-धीरे यह दूध २०-२५ सेर तक नित्य पिया जा सकता है।

४—दूध गाय का लेना चाहिए। वह ताज़ा हो, और स्वच्छ पात्र में १-२ उफान उबाला जाय, फिर चौड़े मुँह की बोतल में भरकर रक्खा जाय। यदि गर्मी हो, तो बोतल को जल के पात्र में रख दो, और ऊपर बारीक गीला वस्त्र ढक दो। यह दूध १-१ घंटे में १-१ छटाक से प्रारंभ करो। दूध चूसकर धीरे-धीरे पीना चाहिए या चम्मच से लेना चाहिए। मुँह में डालकर दूध को थोड़ी देर मुख में रोको, और तब उसे उतारो। धीरे-धीरे दूध की मात्रा बढ़ने दो, यह दूध ४ बजे तक काम में लाकर इसके बाद ६ बजे ताज़ा दूध लेना चाहिए। ८ बजे के बाद फिर दूध नहीं लेना चाहिए। दूध में मीठा नहीं मिलाना चाहिए।

५—एक सप्ताह तक दूध का परिमाण धीमे वेग से बढ़ाना चाहिए। अधिक-से-अधिक

[illegible] सेर दूध प्रतिदिन पीना चाहिए। [illegible] परिमाण [illegible] सेर दूध पिया जा सकता है। पर यह ध्यान [illegible] रहना चाहिए।

६—चौथे सप्ताह शरीर में [illegible] दूध का परिमाण १२ सेर तक [illegible] चाहिए। [illegible] सप्ताह १५ सेर तक दूध पर [illegible] जाता है।

७—साधारण दूध यदि तीन बार [illegible] साथ तक दिया जा सकता है। [illegible] है। प्रतिदिन ३ से ४ पौंड तक [illegible]।

८—उपवास चिकित्सा [illegible] यदि [illegible] कारण आरम्भ-जनक होगा।

९—जिनके पेट में दूध [illegible] पेट [illegible] जाना में [illegible] चाहिए। जिन्हें दूध पर [illegible] चाहिए।

१०—यदि दूध की [illegible] तक [illegible] १० से २ घंटे तक [illegible] ([illegible])

११—शुरू में संख्या-[illegible] चाहिए। धीरे-धीरे [illegible] देना चाहिए। [illegible] है। यदि [illegible] निरोग [illegible]

१२—यदि [illegible] तो [illegible]

१३—(१) [illegible] (२) [illegible]

प्रकरण ४

अन्य चिकित्सा

मिट्टी की चिकित्सा

मिट्टी को सब जानते हैं, इसलिये उसका विशेष परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। केवल अपना शरीर ही नहीं, परंतु इस समस्त स्थूल जगत् की उत्पत्ति पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पाँच तत्त्वों से है।

जहाँ तक तत्त्व उचित परिमाण में, शरीर की उचित स्थिति में व्याप्त है, वहाँ तक ही आरोग्यता रहती है। इनमें एक भी तत्त्व विकृत होने से वह तत्त्व रोगी हो जाता है। इसलिये उसकी शांति के लिये, उसको प्रकृत अवस्था में लाने के लिये प्रकृति के अक्षय कोष में से मूल-तत्त्वों की सहायता लेना यह आरोग्य-रक्षा का उत्तम-से-उत्तम मार्ग और उत्तम-से-उत्तम पद्धति है।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और विद्युत्-स्वरूप आकाश, पाँच तत्त्व रोग-निवारण के लिये इतने उपयोगी हैं कि जिनका विवेक-पूर्वक उपयोग किया जाय, तो किसी प्रकार के रोग को दूर करने के लिये कड़ुई, खट्टी बेस्वाद, विषमय और दुर्गंध-युक्त सड़ी-गली औषधियों को खाने की आफ़त न उठानी पड़े। रोग-निवारण के लिये पाँचो तत्त्वों के उपयोग की आवश्यकता है, तो भी प्रत्येक वस्तु का जन्म पृथ्वी-तत्त्व में से ही होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में पृथ्वी-तत्त्व अर्थात् मिट्टी का भाग ही विशेष परिमाण में रमा हुआ है। इसलिये बहुत-से रोगों की उत्पत्ति पृथ्वी-तत्त्व में विक्रिया होने से ही होती है। और इसी से उनका निवारण भी हो सकता है।

रोग-निवारण के कार्य में पृथ्वी-तत्त्व जिस क़दर उपयोगी हैं, प्रकृति ने उसे मिट्टी के स्वरूप में अनंत परिमाण में निर्माण कर रक्खा है। सर्वशक्तिमान परमात्मा आजकल के डॉक्टरों, वैद्यों और हकीमों-जैसा लोभी और स्वार्थी नहीं हैं। परंतु समस्त विश्व का चिर कल्याण हो, ऐसी मंगल कामना-युक्त हैं। जिससे जगत् का कल्याण हो, वैसी कोई भी वस्तु गुप्त न रखकर सारे संसार के सम्मुख उसने रख दी है। उसी प्रकार यह मिट्टी भी घर बैठे ही आसानी से मिल सकती है। परंतु हमारी बुद्धि इतनी मलिन हो गई है कि विज्ञापन-संसार के मन-मोहक, भाँति-भाँति के विज्ञापन देखकर, प्रकृति की इस अमूल्य वस्तु को भूले हुए हैं। और बाज़ारों में से सुंदर रंगीन छपे हुए लेबिलवाली सुंदर शीशियों में भरी हुई विषैली अनेक प्रकार की पेटेंट औषधियाँ लाकर आशा और प्रेम से पान करके तन, मन, धन और जीवन को नष्ट करते हैं।

साँप का ज़हर उतारने का मिट्टी में कितना असर है । यह बात ऊपर के उदाहरण से अच्छी तरह जानी जा सकती है। अच्छी चिकित्सा न होने से सर्प-दंश से लाखों मनुष्य देश में प्रतिवर्ष मरते हैं। यदि इस उपाय की योजना की जाय, तो कितने प्राणों की रक्षा हो। किसी भी प्राणी को यदि साँप काट ले, तो ऊपर लिखी क्रिया करने की हम राय देते हैं। इस लड़की को २४ घंटे तक ज़मीन मे दबा रखने का कारण यह था कि उसके शरीर में, रग-रग में, विष व्याप गया था। परंतु तुरंत काटा हुआ रोगी एक-दो घंटे में ही ठीक हो सकता है। सर्प-दंश के अतिरिक्त यदि किसी ने विष खा लिया हो अथवा बिजली गिरने से मुर्दे के समान हो गया हो, तो ऐसे प्रसंगों पर गर्दन का भाग बाहर रखकर तमाम शरीर को मिट्टी में दाब देना चाहिए। चौबीस घंटे में रोगी तंदुरुस्त हो जायगा। हैज़ा और मोती झरे के ज्वर के रोगियों के लिये भी यह अक्सीर उपाय है। परंतु यह ध्यान रहे कि जिस ज़मीन में रोगी को दबाया जाय, वह गरम या सूखी न हो, बल्कि गीली और ठंडी होनी चाहिए। ततैए, मधु-मक्खी आदि थोड़े ज़हरवालों के डंक लगने पर तमाम शरीर को मिट्टी में दाबने की ज़रूरत नहीं, बल्कि जिस स्थान पर डंक लगा हो, उसी स्थान को ज़मीन में दबाना चाहिए। या उस पर गीली मिट्टी की पुलिटस बाँधनी चाहिए।

सर्प दंश की तरह कुत्ते के काटने पर भी यह उपचार बहुत लाभदायक है। इसके लिये, यदि तुरंत का काटा हुआ हो तो, दंशित भाग को ही मिट्टी में दबाना काफ़ी होगा। यदि काटे हुए ज़्यादा देर हो गई हो, तो गर्दन का भाग छोड़कर सारा शरीर मिट्टी में दाब देना चाहिए।

कुत्ते के काटे ज़हर को नष्ट करने में इस प्रयोग की प्रामाणिकता के विषय में एक डॉक्टर लिखते हैं—

"The skill of Professor Paster is entirely uncertain and unreliable, but the skill of the great Master, Nature never fails us."

"कुत्ते के विषय में प्रोफ़ेसर पेस्टर का निकाला हुआ इलाज अनिश्चित और अविश्वास करने योग्य है। परंतु प्रकृति का यह इलाज (मिट्टी से बना) बिलकुल विश्वस्त और आशा-जनक है।" शरीर पर कुष्ट के दाग, हरएक प्रकार के फोड़े, फुंसी, फफोले आदि चमड़ी के कुल रोगों के लिये गीली मिट्टी एक बहुत ही उत्तम प्राकृतिक दवा है। क्योंकि शरीर की मिट्टी सड़ जाने से ही उसमें कुष्ट आदि रोग हो जाते हैं। और इसीलिये सड़ी मिट्टी पर नई मिट्टी पड़ने से घाव अच्छे हो जाते हैं। चमड़ी के रोग होने का मूल-कारण यह है कि रक्त में अनेक प्रकार के दुर्गंध-युक्त विषैले तत्त्व संचित हो जाते हैं। वे गीली मिट्टी के लेप से अच्छे हो जाते हैं। क्योंकि अंदर के भागों में इकट्ठे हुए दोषों को बाहर निकालने में मिट्टी अद्भुत शक्ति रखती है।

दाँत के दर्द के लिये बाहर दुखती जगह पर गाल या जबड़े पर मिट्टी की पट्टी बाँध देनी चाहिए। सिर के दर्द पर गर्दन और गले पर मिट्टी बाँधनी चाहिए।

गठिया और लकवे के रोगी को कुछ गर्म बालू में गर्दन तक दबा देने से बड़ा लाभ होता है।

साधारण चिकनी मिट्टी से शरीर को कई बार रगड़कर धोने से चमड़ी नरम, निर्मल और सुंदर एवं रोग-रहित हो जाती है। इस काम के लिये मुलतानी मिट्टी बहुत लाभदायक है। इसका उपयोग बढ़िया-से-बढ़िया साबुन से भी अधिक लाभदायक है। ख़ासकर स्त्रियों को तो सिर के बालों को इसी मिट्टी से सदा धोना चाहिए। क्षार पदार्थों से बाल कमज़ोर और सफ़ेद हो जाते हैं।

कल्कि-पुराण में लिखा है —

"मिट्टी से लिंग को दो बार, नाभि से ऊपर-नीचे तीन बार, शरीर को ६ बार, कमर को तीन बार, हाथों को ७ बार शुद्ध करना चाहिए।"

बारीक चलनी से छानी हुई मिट्टी ठंडे पानी में भिगोकर और उसे आटे की तरह गूँद-कर मलहम-सा नरम बना लेना चाहिए। फिर यथावत् बाँधकर सेफ़्टीपिन या डोरी से सिरा ठीक-ठीक बाँध देना चाहिए।

आँख और योनि पर बाँधते बार इस बात की बिलकुल परवा न करनी चाहिए कि मिट्टी अंग के भीतर जा कर हानि करेगी। पट्टी खोलने पर सूखी मिट्टी के कुछ कण किसी अंग या घाव में लगे रहें और छुटाने में तकलीफ़ हो, तो लगा रहने दो, कुछ हानि नहीं।

अध्यात्म-चिकित्सा

कुछ रोग ऐसे हैं, जिनका मूल-कारण मन है, और इसीलिये प्राय वैद्य, डॉक्टर उन्हें नहीं आराम कर सकते। इसके लिये पाश्चात्य विद्वान् मानसोपचार करने लगे हैं। अमेरिका में तो यह चिकित्सा का अंश मान लिया गया है। प्राचीन भारत में भी इसका प्रचार था।

ऐसे रोगियों को प्रायः प्रकट में कोई रोग नहीं प्रतीत होता, पर वे अपना जीवन भार-स्वरूप समझने लगते हैं। शरीर में बेचैनी बनी रहती है। एक प्रकार की चिंता सदा बनी रहती है, उससे सिर-दर्द, निद्रा-नाश, मंदाग्नि, अतिसार, नपुंसकता, मूत्र, हृद्रोग आदि भी उत्पन्न हो जाते हैं। ये रोग वर्षों चला करते हैं, और जब तक मूल-कारण ज्ञात न हो, आराम नहीं हो सकते। ऐसे रोगियों की अध्यात्म-चिकित्सा होनी चाहिए।

इस चिकित्सा का प्रथम काम तो यह है कि रोगी की बात ख़ूब ध्यान से सुने, जिससे उसे सांत्वना मिले।

कुछ ऐसी चिंताएँ हैं, जिनसे रोगी दूर नहीं हो सकता। जैसे किसी स्त्री से प्रेम हो, और विवाह न हो सके, नौकरी छूटने या व्यापार में हानि का भय हो, या किसी के मरने का

सोसाइटियों और ऐसी पुस्तकों का अध्ययन कराया जाय, जो इस विषय पर सरलता से प्रकाश डालती हों।

बालक के स्वभाव पर माता-पिता की वयस का प्रभाव

प्रो० रेडफ़ोल्ड ने अभी-अभी एक अत्यंत चित्ताकर्षक भेद ज़ाहिर किया है, जिसका यह भाव है कि जिन बालकों के माता पिता बड़ी वयस के होते है, उनकी दिमाग़ी शक्तियाँ जवान माता-पिता के बालकों से अधिक उन्नत होती है। संसार के महापुरुषों मे से अधिक वही हैं, जो पक्की उमर के माता-पिता से उत्पन्न हुए हैं। आपने कुछ अंक भी एकत्रित किए है, जिनके अध्ययन से पता चलता है कि पचास साल से अधिक उमर के माता-पिता के बालकों में महापुरुषों की औसत-संख्या सामान्य रूप से सबसे अधिक है। छोटी उमर के माता-पिता के लड़के प्राय. कठोर, दुष्ट और विषय-वासनाओं के दास होते हैं। आजकल ९० प्रति सैकड़ा अभ्यस्त अपराधी नौजवान माता-पिता से उत्पन्न होते हैं। यह आवश्यक नहीं कि नौजवान माता-पिता के सभी बालक ऐसे ही हों। हाँ, यह ज़रूर है कि वयस्क माता-पिता के बालकों की प्रवृत्ति अपराध की ओर कम ही हुआ करती है। नौजवान माता-पिता से बालक जवानी का जोश, बेपरवाही, अनधिकार चेष्टा और वासनाओं की एक अच्छी सख्या विरसा मे लेता है, और यही इसके स्वभाव बनाने मे अधिक भाग लेते हैं। इसी कारण ऐसे बालकों का वीर, अपराधी अथवा सफल सिपाही बनने की ओर अधिक झुकाव होता है। इसके विरुद्ध वयस्क माता-पिता से बालक का शांति, बुद्धिमत्ता, मितव्ययता और उत्तम स्वभाव का विरसा मिलता है।

इन्हीं प्रोफ़ेसर साहब ने अपने अंकों के आधार पर एक नक्शा तैयार किया है, जिससे पता चलता है कि भिन्न-भिन्न प्रकार के पुरुष कितनी-कितनी वयस के माता-पिता के यहाँ उत्पन्न हुए। नेपोलियन ग्राट (अमेरिकन प्रधान), सिकंदर आज़म, रुज़वैल्ट और फ्रेडिक दी ग्रेट ३१ साल से कम वयस के पिताओं के यहाँ पैदा हुए। चित्रकार, लेखक और सूक्ष्म विद्याओं के आचार्य प्राय ३१ से ४० साल के माता-पिता के बालक होते हैं। गेटे, स्पिज़र, शेक्सपियर, रैफ़ल, एंबार्ड, मैकाले, गोल्डस्मिथ इत्यादि इसी भाग मे शामिल किए जा सकते हैं। ४१ से ५० वर्ष की वयस के बीच प्रायः देश के नेता पैदा होते हैं। यथा—बिस्मार्क, क्रामवेल, ग्लेडस्टोन और कीटो इसी वयस के माता-पिता के यहाँ पैदा हुए।

स्कूली शिक्षा

आप अपने प्राणों से प्यारे गुलाब के फूल के समान सुंदर और कोमल बच्चों का प्रातःकाल उठते ही जल्दी से ठंडा, बासी खिला, और कपड़े पहनाकर स्कूल भेज देने मे बड़ी तत्परता दिखाते हैं। पर आप यदि कभी उस स्कूल में जाकर देखें, तो आपको दीखेगा कि वहाँ के एक मनहूस-से कमरे में सीलन-भरी धरती पर लकड़ी की बेंचें पड़ी हैं, और आपका बच्चा अपने साथियों के साथ, नीची गर्दन किए, मैली पुस्तक पर दृष्टि गाड़े अपने दुबले-पतले

स्तंभ-रूप व्यास, वशिष्ठ और कपिल-जैसे महातपोनिष्ठ, महाप्राण पुरुष थे, जिन्होंने जगत् से परे भी कुछ जान लिया था, जो सदैव अगोचर द्रव्यों को देखते थे, जिनके लिये कुछ भी दुर्लभ न था।

वे भारत के बच्चे, जो इन गुरुजनों के चरणों में बैठकर अपना भविष्य निर्माण करते थे, आज १५), २०) के वेतनभोगी, अपढ़, अनाड़ी, क्रूर और तन-मन से मैले मास्टरों के बेत के भय से अक्षराभ्यास करते हैं! हाय भारत की तकदीर!!

संसार-भर के स्कूलों में जाकर देखिए कि वहाँ बच्चों को कैसी सुंदर रीति से, कैसे मनोरंजन ढग से, कैसे प्रेम, आदर और सरलता से पढ़ाया जाता है कि सुनकर हैरानी होती है। बच्चों का घर में जी नहीं लगता, वे दौड़कर स्कूल जाते और बहुत ख़ुश रहते हैं। अध्यापक को वे मन से प्यार करते हैं। वे बच्चे अपने खिलते हुए मस्तिष्क से शीघ्र ही संसार के सिर पर राज्य करते हैं।

मानव-समाज का उत्कर्ष और विकास न केवल धन, बल और योग्यता की घुड़-दौड़ में बाज़ी मारने का है, प्रत्युत उसे मौलिकता और आत्मावलंबी बनना भी आवश्यक है। और यह तभी हो सकता है कि उसका शरीर पूर्ण स्वस्थ और आत्मा पूर्ण शिक्षित हो।

नागरिक जीवन की सम्हाल

यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि देहातों की अपेक्षा कस्बों और नगरों में युवक लड़के-लड़कियाँ अधिक बिगड़ते हैं। नगरों में भी पुराने निवासियों पर वहाँ की चमक-दमक का उतना आकर्षक प्रभाव नहीं पड़ता, जितना कि किसी देहाती पर—एकाएक नगर में आ जाने पर।

गाँव के सीधे-सादे लड़के अपने गाँव के छोटे स्कूल की पढ़ाई समाप्त करके जब निकट के क़स्बे के टाउन स्कूल में आते हैं, तो उन्हें वहाँ कुछ चमत्कार-सा दीखता है। अच्छी इमारत, मेज़-कुर्सी, ठीक तराश के कपड़े और चटपटे शहरी साथी और चाय-पानी। वे प्रथम कुछ संकोच में रहते हैं, फिर सबमें मिल जाते हैं। शहर के कुछ लुच्चे लड़के अपना उल्लू साधते, कुछ ठगने या उनसे अप्राकृत व्यभिचार करने के लिये उनसे मीठी-मीठी बातें बनाकर दोस्ती जनाते, उनके लिये कुछ ख़र्च करते, और उन्हें फाँसकर अपने रंग में रँग देते हैं। पतन का मार्ग इतना सरल है कि एक बार आदमी उस पर पड़कर फिर रुक नहीं सकता, चला ही जाता है। ये लड़के शीघ्र ही उनमें मिल जाते और दुर्गुणों में फँस जाते हैं। क्योंकि ये प्रायः भोले होते हैं, इन्हें कुछ तजुर्बा भी नहीं होता। माता-पिता की तरफ़ से सावधान भी नहीं किए जाते, और कोई हितैषी सम्हाल भी नहीं रखता। बोर्डिंग में रहनेवाले लड़के परस्पर प्रीति करने लगते स्पर्धासर्प बढ़ाते, एक शय्या पर सोते, परस्पर छेड़ते और अन्त में अप्राकृत दुर्व्यसनों में फँस जाते हैं।

जाते हैं। बहुधा उन्हें अपनी कोठरियों मे ले जाते हैं, और उन्हें कुत्सित चेष्टा सिखाते हैं, और उनसे अप्राकृत व्यवहार करते हैं। ये बालक फिर सदा इन नौकरों से डरते, और इनके अधीन रहने लगते हैं। मालिकों को इन पर कड़ी दृष्टि रखनी चाहिए।

इसी श्रेणी की घर में आने-जानेवाली स्त्रियाँ कुमारी विधवा बहू-बेटियों की दूती बनकर बदमाशों का सदेश देती और फुसलाती हैं। और अंत में भगा ले जाती हैं। इन स्त्रियों को कभी जवान बहू-बेटियों से एकांत मे बात नहीं करने देना चाहिए। और इनके चरित्र की पूरी-पूरी परताल रखना चाहिए।

कन्याएँ स्वभाव से ही पक्षी की तरह चपल और प्रसन्न रहनेवाली होती हैं। स्वच्छ नेत्रों से हर किसी की तरफ़ बिना संकोच देखने लगना पवित्र कौमार्य का एक लक्षण है। एकाएक कन्या सकुचीली, भयभीत तथा गंभीर हो जाय, तो अवश्य उसके कारणों की जाँच करनी चाहिए। हमजोलियों का भी अभिभावकों को पूरा ध्यान रखना चाहिए, और गाने-बजाने आदि मे कभी उन्हें मर्यादा से अधिक स्वातंत्र्य नहीं देना चाहिए।

बहुत बड़े-बड़े नगरों मे, जहाँ छोटी-छोटी जगहों में बहुत-से स्त्री-पुरुष एकत्र रहते हैं, सबसे अधिक अनुचित घटनाएँ हुआ करती है। प्रायः कुछ लंपट लोग यदि किसी घर में कोई सुंदर स्त्री को देखते हैं, तो बड़ी आव-भगत से उस घर में आते-जाते, मित्रता बढ़ाते, त्योहारों पर उपहार भेजते, और बच्चों से बहुत ही घरौआ जताते है। फिर ये लोग मर्दों को भोजन का निमंत्रण देते है, स्वयं निमंत्रण स्वीकार करते हैं, धीरे-धीरे स्त्रियों का आना-जाना जारी करते और अवसर पाकर अपना काम बनाते हैं। इन अनावश्यक मित्रों से खूब सावधान रहना चाहिए। ये नीच प्राय. कुमारी कन्याओं पर भी कुदृष्टि रखते हैं। इनका ईमान-धर्म कुछ नहीं। ये स्त्रियों को सुनाने के इरादे से ज़ोर-ज़ोर से हास्य-विलास करते, स्त्रियों को दिखाने के लिये बच्चों को छाती लगाते है। एकाएक वे उन स्त्रियों से ऐसे रिश्ते निकाल लेते हैं, जिनमे वे किसी कर्म मे पाप नहीं समझते। बहुधा वे मित्र को भाई बनाते हैं, सिर्फ़ इसलिये कि उनकी स्त्रियों को भाभी कहकर पुकार सकें। ये लोग मित्र के रोगी होने पर बारंबार घर में आने, देर तक बैठे रहते, और उस अवसर को स्त्री से घनिष्ठता बढ़ाने का ग़नीमत अवसर समझते हैं। ऐसे कमीन मित्रों से सदा बचते रहो। और उचित तो यह है कि जब तक बच्चे या कोई बूढ़ी घर की स्त्री साथ न हो, जवान स्त्री को लेकर कदापि परदेश मे ऐसी बिचपिच जगह में मत रहो।

शहरों में बहुत दुराचारी पुरुष रसोई करने या नौकरी करने को जवान स्त्रियों को ढूँढते रहते हैं। बहुत-सी बदमाश आवारा स्त्रियाँ भीख माँगने, नौकरी करने या कुछ बेचने के बहाने इसी तलाश में घूमती रहती हैं। कुछ दुष्ट मकानवाले अपने घर मे किसी विधवा को बसा लेते हैं—उसे पैसा उधार देकर ऋणी बनाते हैं, पीछे दबाकर धर्म बिगाड़ते—और मत न स्वयं दलाल बनकर व्यभिचारियों को लाने और कमाई करते हैं।

सदाचार

मानव-समाज की सबसे बहुमूल्य वस्तु आचार है। लोग यह कहते हैं कि संसार में विद्या सबसे श्रेष्ठ है, विद्या के सम्मुख संसार की समस्त संपदाएँ और शक्तियाँ झुक जाती हैं। परंतु मैं कहता हूँ कि आचार एक ऐसी वस्तु है, जिसके सम्मुख विद्या का मस्तक झुक जाता है। प्रारंभ में लोग धन, शक्ति या विद्या द्वारा सम्मान पाते हैं—परंतु यदि वे आचारवान् नहीं निकलते हैं, तो शीघ्र उनका पतन होता है, और उनकी शक्ति, विद्या और धन किसी तरह उन्हें सम्मानित नहीं कर सकता। संसार का सबसे अधिक नीच दुराचारी रोम का बादशाह नीरो था, जब रोम महानगरी जल रही थी, तब यह मज़े से बाँसुरी बजा रहा था। इसने अपनी माता, पुत्री और बहन तक से भी व्यभिचार किया। लाखों मनुष्यों को सिंह आदि जंतुओं से फड़वा डालना इसका नित्य का मनोरंजन था। तिस पर भी यह पिशाच उस समय का समस्त रोम-भर में सबसे श्रेष्ठ विद्वान् और तत्त्ववेत्ता था! रावण के विषय में प्रत्येक हिंदू जानता है—यह व्यक्ति महात्मा पुलस्त्य ऋषि का नाती और कुबेर का संबंधी था। उच्च श्रेणी के ब्राह्मण-वंश में था। राजनीति और वेदों का धुरंधर पंडित था। इसने वेदों पर अलौकिक भाष्य किया है। भगवान् राम ने आग्रह-पूर्वक लक्ष्मण को इसके पास मृत्यु-काल में नीति-शिक्षा प्राप्त करने भेजा था। इसके परिवार में विभीषण-जैसे धर्मात्मा और सुलोचना-जैसी पतिव्रता स्त्रियाँ थीं। इसकी सामर्थ्य और वैभव की तो कोई हद ही न थी। फिर भी यह आदमी घोर दुराचारी था, लंपटता के कारण वह श्रेष्ठ कुल का होने पर भी राक्षस कहलाया, और बंधु-बांधवों के सहित मारा गया।

भगवान् राम एक सच्चे आचारवान् पुरुष थे, उन्होंने कठिन-से-कठिन समय पर भी अपना बड़प्पन प्रकट किया था। कृष्ण को भी मैं परम श्रेष्ठ आचारवान् समझता हूँ। जो पुरुष घन-घोर युद्धस्थल में घोड़ों को मल दलकर पानी पिलाने की हिम्मत रखता है, जो विकट युद्ध-प्रसंग के अवसर पर गीता का परमतत्त्व कहने की योग्यता और धैर्य रखता है, जिसके हृदय में भगिनी-प्रेम की महाप्रतिष्ठा है—जो पाप और अनाचार के विध्वंस करने के लिये प्रभास और कुरुक्षेत्र के मैदानों का सूत्रधार बन सकता है, वह कभी इंद्रिय का गुलाम नहीं हो सकता।

शंकर, बुद्ध और दयानंद वास्तव में कुछ अलौकिक विद्वान् न थे। यह संभव है कि उस काल में उनसे अधिक श्रेष्ठ विद्वान् संसार में हों। स्वयं शंकराचार्य के गुरु श्रीमत्पादगोविंदा-चार्य की उतनी पूजा नहीं हुई, जितनी उनकी। इसका मुख्य कारण सिर्फ इन महापुरुषों का आचार ही था। आचार के ही बल पर उन्होंने वह सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त की। लोकमान्य तिलक बी० ए०, एल्-एल्० बी० थे, और महात्मा गांधी बैरिस्टर हैं। परंतु इन दो तुच्छ व्यक्तियों की पूजा इनकी विद्या के कारण नहीं हो रही है। इनका उत्कृष्ट चरित्र-बल ही उनकी इस पूजा का कारण है। मनुष्य को चाहिए कि वह हर तरह अपने सदाचार की रक्षा करे। शास्त्रकार कहते हैं—"आचारः प्रथमो धर्मः।" आचार सबसे मुख्य धर्म है।

भौंह

भौंह धनुषाकार और अलग-अलग होनी चाहिए, यदि वे सीधी होती हैं, तो चेहरे पर परेशानी और मूर्खता प्रकट होती रहती है। घनी और पतली भौंहें सुंदर होती हैं। परस्पर मिली हुई भौंहें मनुष्य को निर्दयी और क्रोधी सिद्ध करती हैं।

यदि भौंहें यथेष्ट काली और अर्धचंद्राकार न हों, तो पेंसिल से स्याही लगाकर उन्हें रंग दिया जाता है। रोज़ गरी का तेल लगाने से बाल उग आते हैं। भौंहों पर सदा नाक से कान की ओर को ब्रुश करने से भौंहें सुंदर बनती हैं।

यदि पलकें और भौंहें काली न हों, तो गोलाई वाटर से धोकर निम्न-लिखित औषध लगावें—पारद १ भाग, चर्बी ४ भाग, वेसलीन २ भाग।

यदि आप शीशा सामने रखकर स्थिर स्नेह-भरी दृष्टि से देखते रहने का अभ्यास करें, और उसी भाँति आप देखा करें, तो आपकी दृष्टि में सम्मोहक-शक्ति उत्पन्न हो सकती है।

नाक

नाक यदि भद्दी हो, तो चेहरा चाहे भी जितना सुंदर हो, मुख कुरूप प्रतीत होगा। नाक की बनावट बहुत नरम हड्डी से है, इसलिये चेष्टा करने से नाक आसानी से सुडौल की जा सकती है। इस काम के लिये एक यंत्र अँगरेज़ी दवा बेचनेवालों के यहाँ मिलता है। इसे सोने के समय गर्म जल से नाक को अच्छी तरह धोकर और ज़रा सा वेसलीन लगाकर लगा लिया जाय, और प्रातःकाल उतारकर धोकर रख लिया जाय, तो ६ मास में नाक की आकृति इच्छानुसार सुडौल हो जाती है। प्रायः छोटे बच्चों की आकृति शीघ्र बदल जाती है। सौंदर्य-नाशक नाक वह है, जो आँखों के पास से नीचे बैठी हुई हो, और जिसके नथुने बहुत फूले हुए हों। हमारे देश में स्त्रियाँ नकबेसर, कील, बुलाक या नथ आदि नाक में पहनकर नाक के स्वाभाविक सौंदर्य को नष्ट कर देती हैं। हमारा सम्मति में स्त्रियों के नाक छेदने की प्रथा नष्ट कर देना चाहिए, नाक में उँगली दिए रहने की गंदी आदत भी छोड़ देनी चाहिए।

जो मनुष्य वाणी और मन से शुद्ध और सुरक्षित रहता है, वह सब ज्ञानों के फलों को प्राप्त होता है।

ब्रह्मचर्य-पूर्वक यम और नियमों का पालन करना, स्वाध्याय और आत्मचिंतन करना ही संयम है।

ब्रह्मचर्य शारीरिक यत्न, मानसिक अध्यवसाय, नैतिक न्यायपरता—इन तीनों के समवाय से संपन्न होता है। शास्त्रकार कहते हैं—

स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्। संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेव च॥
एतन्मैथुनमष्टांगं प्रवदंति मनीषिणः। विपरीतं ब्रह्मचर्यमेतदेवाष्टलक्षणम्॥

स्मरण, कीर्तन, केलि, प्रेक्षण, गुह्यभाषण, संकल्प, अध्यवसाय और क्रियानिर्वृत्ति ये आठ प्रकार के मैथुन हैं, इनसे बचने का नाम ब्रह्मचर्य है।

स्मरण—विषय की पुन:-पुनः चिंता करना। पूर्वकृत दुष्कार्यों को फिर-फिर याद करना, प्रेम-पात्र पर आसक्त हो उसके दर्शन, चुंबन, आलिंगन या उपयोग के लिये व्यस्त रहना, या इसी प्रकार की विषय-चिंता में निमग्न रहना, एक प्रकार का मैथुन है। इससे रक्त से वीर्य को पृथक् होने में मदद मिलती है। शरीर में सनसनी और उष्णता उत्पन्न होकर मन में अस्थिरता और मलीनता उत्पन्न हो जाती है। ऐसी चिंता करते-करते स्त्री-पुरुष अंत में विषय-वासना में फँस जाते हैं।

बुराइयों का बारंबार स्मरण करना ही अधःपतन का चिह्न है। जिन्हें इस प्रकार के विचारों की लड़ी बँध जाती है, वे उसमें ऐसे जकड़ जाते हैं कि किसी तरह उनका उनसे छुटकारा ही नहीं होता। ऐसे लोग बहुधा रीति-नीति, शिष्टाचार, लज्जा, भलमंसाहत और समाज-भय से भी उच्छृंखल होते देखे गए हैं। इनमें कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो अपने आपको समझते हैं, पर उनके लिये उस निर्बलता से निकलना असाध्य हो जाता है।

वेद बारंबार कहते हैं "तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु"। वेदों में बराबर 'मन शुद्ध संकल्पवाला हो' लिखा है। कुचिंताओं के उत्पन्न होते ही उसको रोकने का प्रयत्न करना चाहिए। यदि यह कुछ काल के लिये मन में रह जायगी, तो वह मस्तिष्क में अमिट रूप से वास करने लगेगी। आरंभ में कुचिंताओं को कुचल देना उतना ही सरल है, जितना उनका अभ्यास हो जाने पर उनको दूर करना कठिन है।

कीर्तन—शास्त्रकार कहते हैं—'यन्मनसा ध्यायति, तद्वाचा वदति; यद्वाचा वदति, तत्कर्मणा करोति।" अर्थात् मन से जो विचार किया जाता है, वह मुख से कहा जाता है, जो मुख से कहा जाता है, वही हाथों से किया भी जाता है। जब मन में बुरी विचारें पूरा ज़ोर पकड़ लेती हैं, तो फिर उसी ढंग की बातचीत इष्ट-मित्रों से करने की इच्छा होती है—और फिर उसी एक मज़मून की बातचीत प्रायः हुआ करती है। इस प्रकार की

नहीं करने की आज्ञा दी। श्वेतकेतु १५ दिन तक पिता के आज्ञानुसार निराहार रहकर १६वें दिन पिता के पास गए। उद्दालक ने पूछा—तुम्हें ऋक्, यजुः, साम कंठस्थ है? ज़रा सुनाओ तो। श्वेतकेतु ने कहा, मुझे कुछ भी स्मरण नहीं है। इसके बाद पिता की आज्ञा से उन्होंने भोजन किया, और उनकी बुद्धि यथावत् हो गई।

ईश्वर पर अगाध भक्ति रखना, उसका चिंतवन करना बड़ा पवित्र और पुण्य कार्य है। जो मनुष्य सदा अपना मन इधर लगाते रहते हैं, उन्हें कभी कुचिंताएँ नहीं व्यापतीं। पवित्रता देवता का गुण है, जो मनुष्य मन, वचन, कर्म से पवित्र है, वे भी देवता ही है।

मन का स्वभाव ही कुछ-न-कुछ उलट-पुलट करने का है, इसलिये यह उत्तम है कि किसी कुचिंता को मस्तिष्क से हटाने के लिये कोई दूसरी उत्तम विषय की चिंता को मस्तक में जगह दी जाय। मस्तक कभी विचारों से ख़ाली नहीं रह सकता। हठ और आग्रह-पूर्वक बुरी वासनाओं को दूर करके सद् वासनाएँ मस्तक में भरी जायँ। यह बहुत ही उत्तम बात है।

कहावत है कि "ख़ाली बैठना शैतान का काम है।" बात बिलकुल सच है। जो पुरुष सदा आत्मचिंतन और सद्भावनाओं का चिंतन किया करते हैं, कुचिंताएँ उनके पास नहीं फटकती हैं। यदि कदाचित् किसी पुरुष के मन में किसी ढंग के बुरे विचार उत्पन्न हो भी जायँ, तो उचित है कि तत्काल वह उठकर कहीं चला जाय, या किसी काम में लग जाय। बहुत लोग ऐसे समयों पर निर्जन वास करना पसंद करते हैं, परंतु जब तक मन में प्रौढ़ता न हो, निर्जन वास नहीं करना चाहिए। जिन मनुष्यों का मस्तक इतना निर्बल है कि बारंबार उन्हें कुचिंताएँ घेरती हैं, उन्हें चाहिए कि वे सदा मनुष्यों, मित्रों और परिजनों से घिरे रहें, और किसी काम में लग जायँ।

कभी-कभी कुचिंताओं के कारण मनुष्यों को बहुत कष्ट में पड़ना पड़ता है। कुचिंताओं के वशीभूत होकर जो लोग बुरे कर्मों में फँसकर कष्ट पाते हैं, उन्हें उन विपत्तियों की घटना को लिखकर अपने बैठने के कमरे में टाँग लेना चाहिए, जिससे उन पर दृष्टि पड़ती रहे, और उस समय के कष्ट और अपमान की याद आती रहे। जैसे कोई मनुष्य वेश्यागामी है, या गुप्त व्यभिचार में उसका मन लगा है, वह उसे स्वयं बुरा समझता है, पर जब भूत सिर पर चढ़ता है, तो वह किसी तरह मन को नहीं रोक सकता। ऐसे पुरुषों का कहीं-न-कहीं अपमान हो ही जाया करता है। ऐसे ही किसी अपमान की तारीख़-मात्र ही लिखकर दीवार पर टाँग देनी चाहिए, जिससे उस दिन की उसे याद बनी रहे। और भविष्य में सावधानी की चेतावनी देती रहे। एक डायरी में भी अपनी ऐसी मूर्खता-पूर्ण कुचेष्टाओं का विवरण लिखते रहना चाहिए, और जब वैसी दुर्भावनाओं और दुश्चिंताओं का तार बँधे, तो उन्हें पढ़ जाना चाहिए।

इस पतनशील भूत के रोग से बचने के यही उपाय हैं कि जहाँ इस प्रकार की चर्चा

की सैर करना —प्राकृत सौंदर्य निरीक्षण करना। उसे परखना—समझना—घर में वैसे ही चित्र रखना।

बहुत लोगों का ख़याल है कि बिना विलास के आराम नहीं मिल सकता। परंतु विलास और आराम भिन्न-भिन्न वस्तु है। स्नान करना, स्वच्छ वस्त्र पहनना, घर में आराम की सब वस्तुओं का संग्रह करना बुरा नहीं, बल्कि ज़रूरी है।

गुह्यभाषण—स्त्रियों से संकेत द्वारा एकांत में मिलना या मिलने को इच्छा प्रकट करना, मिलने पर काम-वासना-संबंधी अभिसंधि प्रकट करना, इस प्रकरण के अंतर्गत हैं। एक तो लोक-निंदा और लोकापमान की मात्रा ही इस विषय में इतनी ज़बरदस्त है कि हर तरह से यह नीच मार्ग त्याग देना चाहिए। प्रत्येक आत्माभिमानी को इन बातों से घृणा करना और इस प्रवृत्ति से दूर रहना चाहिए।

बहुधा ऐसा होता है कि सफलता के पूरे साधन नहीं मिलते हैं, और घटनाओं को लेकर भयानक काड हो जाते हैं। ख़ून-ख़राबी, हत्या तक की नौबत पहुँचती है। यह न भी हो, तो सीधी-सादी, शांत, पवित्र पराई स्त्री या कन्या के मन में लालसा की यह आग भड़काकर उन्हें अपने पति और परिवार से अविश्वासिनी और झूठी बनाना कितने पाप और निष्ठुरता का कार्य है।

संकल्प।—चाहे जो हो, परंतु अमुक स्त्री से तो व्यभिचार करूँगा ही—यह धारणा ही संकल्प है। पूर्वोक्त पाँचों वृत्तियाँ जब भीतर-ही-भीतर ज़ोर पकड़ती हैं, उनका निरोध नहीं होता है, तब यहाँ तक दशा पहुँचती है। यह वह दशा है, जहाँ आदमी अंधेपन की दशा को पहुँच जाता है। चोरी और ख़ून, नदी-नाले लाँघना, अपनी जान हथेली पर रखना, सब उसके लिये नगण्य वस्तु हो जाते हैं। हज़ारों बोतलों का नशा चढ़ जाता है। यही वह अवस्था थी, जब तुलसीदासजी ने चढ़ती नदी मुर्दे द्वारा पार की थी। सर्प के द्वारा महल पर चढ़े थे।

यह ऐसी भयानक स्थिति है, जहाँ संकल्प पूर्ण होना, और निष्फल हो जाना, दोनों ही बातें भयानक हैं। पूर्ण होने पर तो पतन और पाप का भरपूर कुंड है—और निष्फल होने में क्रोध, प्रतिहिंसा और उसके राक्षसी परिणाम।

परंतु जिनके भीतरी अंतस्तल में सच्ची मनुष्य की आत्मा सोई हुई होती है, वह तुलसीदास ही की तरह इस अवसर पर केवल मलामत की एक ही ठोकर से जाग उठती है। कहा जाता है कि विष की दवाई विष ही है। इस सिद्धांत के आधार पर संकल्प से ही संकल्प को नाश करना चाहिए। 'तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु' यह बात इस अवसर पर विचारनी चाहिए। भीष्मपितामह-जैसे दृढ़ पुरुषों के महान् जीवनों का अनुशीलन और अनुगमन करना चाहिए।

अध्यवसाय—संकल्प के अनुसार चेष्टा करना। जिसमें ज्ञान, शील, लज्जा आदि गुणों को फाँसी लग जाती है, और मनुष्य राक्षस होकर उचित-अनुचित सब कृत्य करता है।

५—ईश्वरप्रणिधान—ईश्वर में अटल भक्ति रखना, और सदा उसका चिंतन रखना। ये पाँच प्रकार के नियम योगशास्त्रों में कहे गए हैं—

इस विषय मे मनु महाराज एक गंभीर बात कहते हैं। उनका वचन है—

यमान् सेवेत सततं न नियमान् केवलान् बुधः।
यमान् पतत्यकर्वाणो नियमान् केवलान् भजन्।

(मनु० अ० ४। २०४)

इस श्लोक का अभिप्राय यह है कि बुद्धिमान् पुरुष को चाहिए कि वह निरंतर यमों का सेवन करे, केवल नियमों का ही सेवन न करे, क्योंकि यमों का पालन न करने और केवल नियमों का पालन करने से मनुष्य का पतन हो जायगा।

विना अहिंसा कोई मनुष्य शुद्ध पवित्र नहीं हो सकता, जिसके मन से हिंसा, वैर, द्वेष दूर हो गए है, वही शुद्ध कहाता है, और जिसके मन मे गाँठ पड़ी होती है, वैर-भाव बना रहता है, उसे लोग मन का मैला कहते हैं। और जो सरल वृत्ति का होता है, उसे मन का साफ़ कहा जाता है। इस प्रकार अहिंसा, यम और शौच (शुद्धि) नियम दोनो का पालन करना ही उत्तम है। सतोष भी विना सत्य के स्थिर नही रह सकता। जो पुरुष सच्चे हैं, वे ही संतोषी होते हैं। इसी प्रकार अस्तेय के विना तप, ब्रह्मचर्य के विना स्वाध्याय और अपरिग्रह के विना ईश्वरप्रणिधान व्यर्थ हैं, तथा न निभने योग्य है।

इसलिये मनुष्यों को यम-नियम का सतत पालन करके यथावत् संयम से जीवन व्यतीत करना चाहिए।

प्रकरण २

व्यभिचार का शरीर पर प्रभाव

स्पष्ट प्रभाव—जननेंद्रिय को आघात पहुँचकर उसके आकार और शक्ति में ह्रास हो जाता है। अंडकोष ढीले पड जाते और नीचे लटक जाते हैं। लिंगेंद्रिय को जड़ पतली पड जाती है। और नसों में पानी भरकर वे नीली पड जाती हैं। एकाध नस टूट जाने से इंद्रिय टेढ़ी पड़ जाती है। इंद्रिय का छिद्र चौडा हो जाता है। उत्तेजना कम हो जाती है। और स्त्री को छूते ही या कुछ देर में बिना स्खलित हुए वह जाती रहती है—अथवा होती ही नहीं है। धीरे-धीरे पुरुष नपुंसक हो जाता है। ये परिणाम इसी क्रम से होते हैं, जिस क्रम से लिखे गए है।

अप्रकट प्रभाव—पट्ठों की निर्बलता, रक्त-वमन, मृगी, पागलपन, अधरंग, मूर्च्छा, आँखों की निर्बलता, प्रमेह, स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, कमर का दर्द, हृदय की धड़कन, श्वास, दर्दगुर्दा, दर्दजिगर, मंदाग्नि, आलस्य, चित्त की भ्रांति, सिर-दर्द, ज़ुकाम, नजला, संधिवात आदि।

आमाशय पर प्रभाव—कब्ज़ सदा बना रहता है। कभी-कभी आँव मिले दस्त आते हैं। भूख कम हो जाती है, जी मचलाता है। इस प्रकार की क़ब्ज़ में कुछ वैद्य लोग बिना समझे जुलाब दे देते हैं, जिसका बुरा परिणाम होता है।

मूत्राशय पर प्रभाव—मूत्राशय को मसाना कहते हैं। यह एक थैली है, जिसमें पेशाब भरा रहता है। वह इतना निर्बल हो जाता है कि बार-बार पेशाब आता है, रुकावट कुछ भी नहीं होती। ज़रा ठंडा मौसम होने से पेशाब सफ़ेद और ज़ोर से आने लगता है। लिंग के अग्रभाग में सदा सुरसुरी तथा चिपचिपाहट बनी रहती है, क्योंकि वीर्य-स्राव निरंतर होता रहता है।

रीढ़ की हड्डी—के नीचे के भाग में और कमर में दर्द बना रहता है। टाँगों की निर्बलता। प्राय निचले भाग में अर्द्धांगवायु सदा कुपित रहता है।

मस्तिष्क पर प्रभाव—निर्बलता, विचारों में भ्रांति और कर्तव्य-ज्ञान तथा साहस की कमी। चित्त की अस्थिरता, मन वश में नहीं रहता। देखने-सुनने की शक्ति कम हो जाती है। स्वर टूटा-फूटा, भद्दा, कानों में सायँ-सायँ आवाज़ होना। स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाना। मानसिक दुर्बलता इतनी हो जाती है कि बहुधा दुष्ट कामनाओं से छुटकारा पाकर आत्म-घात कर लेता है।

कान में नित्य कड़ुआ तेल डालना चाहिए, और स्नान के समय सावधानी से [illegible] कानों को साफ़ करना चाहिए। यदि गहने पहने भी जायँ, तो बहुत हलके एकाध।

कानों का बींधा जाना वैज्ञानिक आधार पर है, पर वैज्ञानिक रीति से [illegible] को धिने का ज्ञान बहुत कम लोगों को होता है। अधिक छिद्र करने तो सर्वथा निकृष्ट और न्दनीय है।

ओठ

ओठों का सबसे बड़ा सौन्दर्य उनकी मधुर मुस्कान है। [illegible] ओठ [illegible] लगते हैं। जिनके ओठों में [illegible] होता है, वे [illegible] प्रतीत होते हैं। [illegible] ओठों पर निर्भर है। [illegible] हँसना कभी-कभी तो बहुत सुन्दर प्रतीत होता है, और कभी बहुत बुरा। क स्त्री-पुरुष को उचित है कि वह एकान्त में शीशे के सम्मुख बैठकर भिन्न-भिन्न रीतियों से ने का अभ्यास करे, और देखे कि किस भाँति हँसने से उसका मुख और [illegible] सुन्दर होता है। चिड़चिड़े मिज़ाज के स्त्री-पुरुष तथा दुराचारी एवं [illegible] ठों के स्नायु तथा गाल का मांस सख्त और मोटा हो जाता है कि वे सरलता से हँस नहीं ते। जब वे हँसते हैं, कुटिल हास्य हँसते हैं। इससे वे हँसते हुए भी [illegible] ते।

दया और करुणा के भाव ओठों को मधुर और [illegible] बना देते हैं। प्रेम के आवेश में ओठ कुछ फूल जाते हैं। शोक से ओठ सिकुड़ जाते हैं, तथा क्रोध से वे [illegible] और [illegible] ते हैं। गायन-कला का अच्छी तरह अभ्यास होने पर [illegible] ओठों एक मोहक [illegible] उत्पन्न हो जाता है।

[illegible] पतले ओठ [illegible] के चिह्न हैं, और [illegible] नीचे के ओठ से ऊपर का भारी और [illegible] होना चाहिए।

चूसने से ओठ कुछ मोटे हो जाते हैं। मोटे ओठों को [illegible] करने के लिए [illegible] रात्रि के समय [illegible] में [illegible] जा सकता है। [illegible] ओठ कुछ पतले हो जाते हैं।

ओठ का फटना [illegible] और [illegible] है। [illegible] बहुत-सी विधियाँ हैं। बाज़ार में [illegible] मक्खन लगाकर भी ओठों को फटने से बचाया जाता है। [illegible] ओठों में कोमलता आती है। [illegible] [illegible] ओठ [illegible] [illegible] सकते हैं। [illegible] [illegible] दाँतों को [illegible] के लिये हो, तो [illegible] [illegible] रहे। [illegible] [illegible] के [illegible] रहें।

थी। स्वतंत्रता के कारण वह दो वर्ष तक खूब अप्राकृत क्रिया करती रही, इससे उसकी कामवासना बहुत प्रबल हो गई। ज़रा से कारण से भी उसकी वासना प्रचंड हो जाती और वह विवश हो जाती थी। उसका अर्धांग छाती और सिर बहुत निर्बल हो गए थे। अंत में यहाँ तक नौबत पहुँची कि पुरुष को देखने-मात्र से वह स्खलित हो जाती। वह अस्पताल लाई गई, पर अब उसके लिये कुछ नहीं हो सकता था। वह फिर घर भेज दी गई और वहाँ जाकर मर गई।

कुछ व्यभिचारी इतने दुर्बल हो जाते हैं कि एक ही बार के भोग करने से वे मर जाते हैं। डॉक्टर एंदराल ने एक ऐसे ही मनुष्य का वर्णन किया है, जिसे एक वेश्या के घर में भोग करने के पीछे तुरत मूर्च्छा आ गई थी, और वह उसी दशा में अस्पताल पहुँचाया गया था। एक और डॉक्टर ने एक भयंकर व्यभिचारी का वर्णन किया कि जो दिन-रात इसी काम में रहता था। एक दिन वह वेश्या के घर में सारे दिन रहा, इससे वह मूर्च्छित हो गया, और अस्पताल में आकर तीसरे दिन मर गया।

फ्रांस का प्रसिद्ध बादशाह पंद्रहवाँ लुई, जो बड़ा बारी लंपट, व्यभिचारी था और जिसने अपने शरीर को नष्ट कर डाला था, एक १५ वर्ष की सुंदर कन्या के ऊपर इतना आतुर हुआ कि छल-बल से उसे पकड़वा मँगाया। उसके चेचक निकली थी, पर उसने उसी अवस्था में उससे संभोग किया, इस कारण उसके भी चेचक निकल आई, और उसकी जो दुर्दशा हुई, वह लेखनी से बाहर है। अंतकाल में उसके शरीर से इतनी दुर्गंध फैली कि जिस कमरे में वह रहता था, उसके आस-पास की कोठरियों में रहनेवाले उसके नौकर वहाँ से निकल भागे। सब लोगों को नाक दबाकर भागते देख उसे बहुत दुःख और अपने पाप पर बहुत पछतावा हुआ। और कुछ दिन में सड़-गलकर मर गया!

हमारे पास एक ऐसा रोगी आया था, जिसकी आधी से अधिक मूत्रेंद्रिय गल गई थी, और उसमें आर-पार छेद हो गए थे। जब वह पेशाब करता था, उन छिद्रों में फुआरे की तरह निकलता था, और निरंतर पीब-मवाद निकलता रहता था। पेशाब करती बार वह कष्ट से बेहोश हो जाता था। अंडकोश की जड़ें गल गई थीं, और उसमें कीड़े पड़ गए थे। किसी डॉक्टर ने उसका इलाज किया था, जो पक जाने पर उसकी यह दशा हुई थी। यह रोग उसने लड़कों से व्यभिचार करके प्राप्त किया था।

हस्त-मैथुन करनेवाले के लक्षण ये हैं—रंग पीला और निस्तेज, दुबला और निर्बल, कायर, डरपोकपन इसका आवश्यक लक्षण है। यह दूसरे पुरुष के साथ आँख नहीं मिला सकता। लजीला और एकांत-प्रिय हो जाता है। कोई बालक यदि अच्छी स्मरण-शक्ति रखता हो, और फिर उसकी स्मरण-शक्ति कम हो जाय, तो जान लो, वह हस्त-मैथुन करने लगा है।

एक रोगी के मूत्र की परीक्षा की गई, मालूम हुआ कि वह प्रमेह-रोग से पीड़ित है।

जो निरंतर ५० वर्षों तक फ्रांस में ऐसे थर्रा देनेवाले रूप में हुई थी कि जैसी कहीं संसार में न थी, तब लोग समझ जायँगे कि व्यभिचार का समाज-संगठन और राष्ट्र पर कैसा बेढब प्रभाव पड़ता है। इतिहासकार लिखता है—

"उस समय घूस और व्यभिचार की परा काष्ठा हो गई थी। यदि यह कहें कि फ्रांस देश से पातिव्रत धर्म का देशनिकाला हो गया था, तो कुछ अत्युक्ति न होगी। पंद्रहवाँ लुई अत्यंत स्त्री-लंपट राजा था। बुढ़ापे में तो वह अपनी वेश्या के इतना वशीभूत हो गया था कि उसी के इशारे पर राज्य होता था। उमराव लोगों की विलासिनी स्त्रियाँ पहले मध्यम दर्जे के युवा पुरुषों से संबंध रखती और फिर उनसे खटपट होती, तो उन्हें जन्म-भर की कालकोठरी या मृत्यु-दंड दिलवा देती थीं।"

स्पार्टा का प्रसिद्ध ऋषि लाइकरगस इस व्यभिचार के भयानक प्रभाव को अच्छी तरह समझ गया था। यह वह समय था, जब सारा स्पार्टा और यूनान ऐयाशी में शराबोर था। उद्योग-धंधे कुछ न थे, झूठ, छल, घूस और व्यभिचार सर्वत्र थे। इस पुरुष ने सामाजिक जीवन को उलटने के लिये सबसे अधिक ज़ोर व्यभिचार की प्रवृत्ति रोकने में किया। इसने क़ानून बनाए कि विवाह कोई युवक-युवती स्वतंत्रता-पूर्वक न करने पावेगा, बल्कि गवर्नमेंट इस बात का निर्णय करेगी, और रूप, स्वास्थ्य और बल में जो स्त्री पुरुष समान होंगे, उन्हें ही परस्पर विवाह करने की आज्ञा दी जायगी। उसका मत था कि विवाह करना व्यक्तिगत संबंध नहीं है, सामाजिक संबंध है, और संतान माता-पिता की संपत्ति नहीं है, गवर्नमेंट की संपत्ति है। उसने यह भी नियम बनाया था कि कोई विवाहित स्त्री-पुरुष स्वच्छंदता-पूर्वक एकत्र नहीं सो सकते थे। उसने ऐसा प्रबंध किया था कि सब पुरुष एकत्र होकर बाहरी स्थान में सोवें। और स्त्रियाँ भीतरी स्थान में केवल ऋतु-काल में एकत्र हों। विधवा स्त्रियों के लिये क़ानून बनाए थे कि वे चाहें तो वैध रीति से दूसरे पुरुष के वीर्य-दान की आज्ञा प्राप्त कर सकती हैं। इन सबका यह प्रभाव हुआ कि स्पार्टा में बड़े-बड़े क़द्दावर मनुष्य पैदा हुए, और स्पार्टा के योद्धाओं ने तीन-तीन सौ सिपाहियों के द्वारा दस-दस हज़ार शत्रुओं को विजय किया। एक बार एक स्पार्टा के सिपाही से एक परदेशी ने पूछा—"तुम्हारे स्पार्टा में व्यभिचारी को क्या सज़ा दी जाती है?" उसने जवाब दिया—"मित्र! हमारे देश में व्यभिचारी होते ही नहीं।"

अजनबी ने पूछा—"फिर भी यदि कोई व्यभिचार कर बैठे?" सिपाही ने कहा—"तब उसका वह बैल छीन लिया जाता है, जिसका सिर इस पहाड़ी पर और पूँछ उस पहाड़ी पर हो।"

आगंतुक ने कहा—"भला यह कैसे संभव हो सकता है? इतना बड़ा बैल तो हो ही नहीं सकता।"

सिपाही ने कहा—"तब स्पार्टा में भी व्यभिचारी नहीं हो सकता।

की धूम हुई, और सत्यानाश का बीज बुआ। बाल-विधवाओं की खेप बढ़ी। घर-घर में हाहाकार के नारे बुलंद हुए। ठंडी साँसे हिंदुओं को पाताल में डुबाने ले चली। बहू-बेटियाँ कुल की नाक कटाने लगीं। जवान बेटे निर्लज्ज, कुलकलंकी हुए। जवान लोग मरने-सड़ने लगे। बुढ़ापे की मिट्टी ख़्वार हुई। धर्म-कर्म, जीवन-सुख, लोक-परलोक सब चुल्लू-जल में डूब गया!!!

कहा जाता है, जब रोमनगर धायँ-धायँ जल रहा था, तब नैरो बादशाह बंशी बजा रहा था। मनुष्य में इतनी निष्ठुरता व्यभिचार की प्रवृत्ति ही उत्पन्न कर सकती है। धर्म-समाज और आचार में नित्य के जीवन के साथ-साथ, शिक्षा और उपदेश के प्रेम और रीतियों के साथ जब बचपन से स्त्री-पुरुषों को व्यभिचार से हेल-मेल कराया गया, तब यह संभव न था कि मनुष्य चरित्रवान् बनते, और स्वस्थ तथा दीर्घायु होते। अब से तीन-चार पीढ़ी प्रथम के पुरुषों के शरीर में और आजकल के लोगों के शरीर में जो अंतर है, वह देखने से भविष्य की नस्ल के विषय में मन में भीषण शंका खड़ी होती है। दो पीढ़ी पहले हरएक मनुष्य लंबा, चौड़ा, दीर्घायु, बलिष्ठ, मिताहारी और सशक्त था, हरएक के ४, ६, १२ पुत्र थे। वे सब लकड़ के समान ठोस, बलवान्, पट्ठे और सिंह के समान पराक्रमी थे। ब्राह्मण तेजस्वी, संतोषी, सच्चे और समाज को अपने नैतिक प्रभाव से भयभीत और अधीन करनेवाले थे। क्षत्रिय क्षण-भर में तलवारों की छाया में लाल होली खेलकर जूझ मरनेवाले थे। वैश्यों की पवित्र-श्रद्धा, दानशीलता आदर्श थी, और शूद्र शील और शक्ति के स्तंभ थे। स्त्रियों में पवित्र और अद्भुत शक्ति थी, उनके नेत्रों में बिजली के समान मोहक, किंतु भयंकर चमक थी। वे आन पर, मान पर, समय पर, साहस-पूर्वक सती, सीता, पद्मिनी की तरह उत्सर्ग और दृढ़ता के जीवन का उदाहरण दे सकती थीं। स्त्री और पुरुषों के लिये मृत्यु आज्ञाकारी नौकर के समान थी, मृत्यु उन्हें छूती न थी। छूती थी तो वे उससे डरते न थे। यह निर्भयता, यह शांति प्रत्येक नर-नारी और बच्चों में भी थी। यह समय था, जब मनुष्यों का संगठन राष्ट्र और समाज की, नीति और धर्म की रीढ़ की हड्डी थी। वह सब आज काफ़ूर हो गया। रोग, शोक, भय और हाय, यह हमारा नित्य का धंधा हो गया। जवान अधमरे हो गए। बच्चे तड़पकर मर गए। बूढ़े होना ही बंद हो गया। वीरता को हैज़ा हो गया। सौंदर्य ने संखिया खा लिया। लोग जीते हैं, पर किस तरह? जैसे खटमल जीते हैं। पैदा होते हैं—जैसे बरसात में अनेक जंतु हो जाते हैं। खाते-पीते हैं, मानो रेत और भुस खा रहे हैं। मरते हैं, जैसे कुत्ता मरता है। रोते हैं, जैसे गीदड़ रोता है। व्यर्थ, शून्य, अशुभ! निकृष्ट, लक्ष्यहीन, निराश, अशक्तजीवन, रहन, खान-पान और अस्तित्व है। यह व्यभिचार है, जिसे मनुष्यों के इस पतन के लिये ज़िम्मेवार ठहराया जा सकता है, ठीक उसी तरह, जैसे शैतान को आदम के पतन के लिये।

प्रकरण ३

व्यभिचार-जन्य महारोग

जो मनुष्य व्यभिचार जन्य महारोगों में फँस गए हैं, उनके दुर्भाग्य पर मैं हाय करता हूँ। क्योंकि वे इस जन्म में कभी उससे मुक्त नहीं हो सकते, और उनके वंश में भी इन रोगों का पीढ़ियों तक असर बना रहेगा। संसार के जितने महारोग हैं, लगभग सबकी कुछ-न-कुछ चिकित्सा-विधान है। असाध्य होने पर भी बहुत रोग दूर हो जाते हैं, पर व्यभिचार-जन्य रोगों की यह खूबी है कि वे स्वभाव से ही असाध्य हैं—किसी तरह किसी उपाय से वे रोग नहीं दूर हो सकते।

प्रमेह, आतशक (गर्मी), सुजाक, उन्माद, नपुंसकता और कोढ़ तथा इन रोगों की सबका व्यभिचार-जन्य महारोगों में है। ये रोग समस्त संसार में सब्बता के प्रभाव हो बहुतायत से फैले हुए हैं, और वंश-परंपरा तक चलते रहे हैं। जो स्त्री-पुरुष बाहर से नीरोग दिख पड़ते हैं, उनमें भी गुप्तरूप से ये रोग वर्तमान रहते हैं। मनुष्य को पशु से भी अधिक बुरी स्थिति में लानेवाले, शारीरिक, मानसिक आरोग्यता और शक्तियों का संहार एवं पुरुषत्व का नाश करनेवाले ये रोग पुरुष को सब तरह आधार और भाग्यहीन बना देते हैं।

ये रोग इतने संक्रामक होते हैं कि साथ बैठने, चुंबन करने, मुख चुम्बन करने होने, एक साथ सोने आदि से दूसरे लोगों को भी लग जाते हैं। बहुधा छोटे बच्चों को माता-पिता और नौकरों की साधारण असावधानी से ही ये रोग लग जाते हैं। बहुत ही खेदपूर्ण बात विचार है कि गर्भ या शरीर को यह ज्ञान बिलकुल नहीं है कि वे अपने शरीर की किस तरह सुरक्षित और स्वच्छ रखें, रोगों के घर को जानें, उनके संयोग के अवसर को समझें, दुष्परिणाम के भयंकर परिणामों को पहचानें और उनका विचार न कर बालकों, विद्यार्थी, युवकों और स्त्रियों को समुचित रीति से उनका ज्ञान करा दें।

मैकाले तो यह है कि राज्य का संचालन की तरफ से ऐसे उपाय कर जाने चाहिए कि जिन मनुष्यों को व्यभिचार-जन्य रोगों की छूत है, वे विवाह न करने पावें, और संतान न उत्पन्न करने पावें। जिन पुरुषों ने अनैसर्गिक रीति से अपना वीर्य कारणों से अपना पुरुषत्व को नष्ट कर दिया है, उन्हें चाहिए कि वे स्त्रियों के सामने आकर लज्जित, अपमानित और दुखी होने की अपेक्षा को-धर्मसे अपनी सौजन्यता को ही खोदें। जो लोग अपने बच्चों को सुशिक्षित संतानों से घिरे रहने पर भी केवल नौकरों के भरोसे बच्चाओं का लालन-पालन कर रहे हैं, उन्हें रक्षित

है कि वे संतोष से अपने अनुतापमय जीवन को व्यतीत करें। शोक की बात तो यह है कि मनुष्य-जाति को वीर्य-पात में जितनी स्वतंत्रता है, उतनी किसी दूसरी बात में नहीं है।

१ प्रमेह—यह अधिक व्यभिचार का साधारण, किंतु अवश्यंभावी रोग है। इसमें कष्ट विशेष नहीं होता, किंतु शरीर के भीतरी यंत्रों और जीवन पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। फीसदी ९९ मनुष्य इस रोग से पीड़ित हैं, जिनमें स्त्री भी हैं और पुरुष भी। अब प्रमेह के संक्षेप से प्रकारों का वर्णन करते हैं।

२. मूत्र-ग्रंथि प्रहाद—मूत्रकोष (मसाना) में प्रहाद होने पर ज्वर, वमन करने की इच्छा, अल्प मूत्र, कभी लाल, कभी गँदला, कभी रक्त या मवाद से युक्त होता है। मूत्र-त्याग के समय बहुत जलन और दर्द होता है। मेरुदंड (रीढ़ की हड्डी) और कमर में दर्द होता है, और अंडकोष लाल हो जाते हैं। कभी-कभी पेशाब बिलकुल बंद हो जाता है। मनुष्य का स्वभाव चिड़चिड़ा और बकवादी हो जाता है। रोग बढ़ जाने पर रोगी को बकते-बकते क्रोध में मूर्च्छा भी आ जाती है। कभी-कभी तो रोगी उसी मूर्च्छा में मर भी जाता है।

३. मूत्राघात—मूत्राशय में मूत्र भरा रहने पर भी मूत्र-नली में से नहीं निकलता है। पेट का नीचे का भाग फूल जाता है। मूत्र में कुछ ज़हरीले पदार्थ मिले रहते हैं, वे जब मूत्र नहीं उतरता, तो रक्त में मिल जाते हैं। इससे हाथ-पैरों में सन्नाटा, बेहोशी, तंद्रा आदि लक्षण हो जाते हैं। यह रोग बहुधा मूत्र की हाजत होने पर स्त्री-प्रसंग करने से भी हो जाता है। कभी-कभी गुर्दे जो मूत्र बनाने के यंत्र हैं, उनमें सूजन आने या उनके निर्बल पड़ जाने से भी मूत्र बंद हो जाता है। ऐसी अवस्था में सलाई चढ़ाने पर भी मूत्र नहीं उतरता।

४. मूत्रकृच्छ्र—घोर कष्ट देनेवाला रोग है। बारबार मूत्र त्याग की प्रवृत्ति होती है, किंतु बड़े कष्ट से बूँद बूँद मूत्र निकलता है, और छुरी से काटने के समान उसमें वेदना होती है।

५. बेखबरी में मूत्र त्याग—मूत्र धारण की शक्ति संपूर्ण अथवा अधिकांश में नष्ट हो जाती है। मूत्र-त्याग की इच्छा होते ही मूत्र रोकना कठिन हो जाता है। उसी समय बूँद-बूँद मूत्र टपकने लगता है और दर्द कुछ नहीं होता। पर मूत्राशय में बहुत-सा मूत्र संचित होने पर भी बूँद बूँद ही निकलता रहता है।

६. शुक्रस्राव—इस रोग का मुख्य कारण हस्त-मैथुन है। इस रोग में धारणा-शक्ति बिलकुल ही नहीं रहती। स्त्रियों के दर्शन-स्पर्शन से, मल-मूत्र त्याग के समय ज़रा ज़ोर लगाने से ही वीर्य-स्राव हो जाया करता है। इस रोग के बढ़ जाने पर ये लक्षण हो जाते हैं—मन में बेचैनी, सत्त्वभाव, स्मृति की हानि, निरुत्साह, शारीरिक दुर्बलता, अग्निमांद्य, कोष्ठबद्ध, पेट फूलना, छाती की धड़कन, सिर-दर्द, एकाएक खड़े होने पर अंधकार दिखाई देना, मुख-मंडल की विवर्णता, आँखों का कोटर में घुस जाना, अतिशय मैथुनेच्छा, परंतु उत्तेजक होते ही वीर्य-स्खलन, आँखों के किनारे के काले दाग, स्वप्न

भाविक लिंगोद्रेक और मूत्र करने की इच्छा होती है, इससे नींद टूट जाती है, पर मूत्र साफ उतरता नहीं है। यन्त्रणा से रोगी अस्थिर रहता है। लिंग-मुंड लाल और फूला हुआ अंड कोष और दोनों पट्ठों में दाह, सर्वदा पीब रक्तादि का स्राव, कभी-कभी पीब के सूख जाने पर मूत्र-नली का मुँह बंद हो जाने से मूत्रावरोध, या दो धार से मूत्र निकलना। दो सप्ताह बीत जाने पर रोग पुराना पड जाता और उसकी वेदना कम हो जाती है। इस रोग में मूत्र-नली के निचले सिरे पर (लिंग-मुंड के पास) भीतर की तरफ जख्म होता है। कभी-कभी इस रोग में मूत्र बंद हो जाने पर अनाड़ीपने से सलाई चढ़ाने से मूत्राशय फट जाता और मूत्राशय में ज़ख्म हो जाता है, जिसका कोई इलाज ही नहीं है। बहुधा अंडकोष इस रोग में छिटक जाते हैं, और यह वेदना उपर्युक्त वेदना से अत्यधिक भयंकर और असह्य हो जाती है। रोगी का उठना-बैठना, सोना-लेटना किसी तरह पल-भर को भी चैन से नहीं होता। यह रोग सबसे अधिक सक्रामक है। अँगरेज़ी में इसे गिनोरिया कहते हैं।

११. आतशक (गर्मी, उपदंश, सिफिलिस)—यह रोग भी बहुत सक्रामक है। सहवास के बाद १० दिन के भीतर-भीतर यह रोग प्रकट होता है।

आतशक-रोग-प्रसित स्त्री के साथ रमण करने से पुरुष की जननेंद्रिय के उपचर्म की त्वचा फटकर उसमें योनि के भीतर कोमल त्वचा में से रस का विष प्रवेश करता है। कोई-कोई कहते हैं कि त्वचा के न फटने पर भी पुरुष की जननेंद्रिय में इस विष के लगने और सूक्ष्म शिराओं द्वारा शोषित होने पर यह रोग उत्पन्न हो सकता है। तदनंतर कई दिन के बाद उस स्थान में एक फुंसी निकल आती है। क्रम से यह फुंसी बढ़ती है। इसका मूल-भाग लाल और अग्र भाग अति कोमल होता है। उसमें पतली पीब भरी होती है। फिर जब उसके ऊपर की त्वचा फट जाती है, तब वह क्षत (घाव) हो जाता है। यह क्षत तीन-चार दिन में ही बहुत बढ़ जाता है। क्षत स्थान में त्वचा किंचित् ऊँचा या त्वचा की समान आयतनवाला और चारों तरफ़ लाल चक्र-सा होता है। पश्चात् क्षत का जितना आयतन बढ़ता जाता है, उसका लाल वेष्टन भी उतना ही ऊँचा और दृढ़ होता जाता है। क्षत की वृद्धि के अनुसार ही उसमें नीचे से सूक्ष्म-सूक्ष्म अंकुर उत्पन्न होते हैं और उनमें से रक्तेद निकलता है। इसी को True Syphilis (प्राकृत उपदंश) या Hard

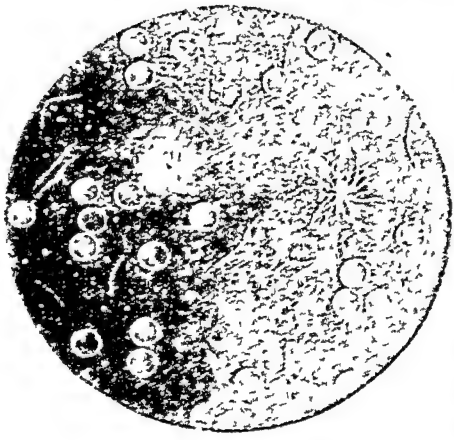

आतशक के कीटाणु

कास्टिक सोडा या सिरका एवं शराब से भी कुछ काल के लिये होठों पर लाली आ जाती है।

यहाँ हम होठ रँगने का एक अँगरेज़ी नुस्ख़ा लिखते हैं—

कोकोबटर १ ड्राम पैराफाइन १ ड्राम वेसलीन (सफ़ेद) ½ आउंस आँडी ऑफ़ रो २ बूँद इओज़ीन ½ ग्रेन सबको मिला ले।

नीचे लिखा नुस्ख़ा होठों को नरम रखता है, तथा फटने से रोकता है—

नारियल का तेल ४ तोला एरंडी का तेल २ तोला सफ़ेद मोम २॥ तोला जैतून का तेल १ तोला टिंचर बिजविन आवश्यकतानुसार मिलाकर शीशी में भरकर रक्खे।

होठों को फटने का एक घरेलू नुस्ख़ा यह है कि चुपड़ी हुई रोटी का घी मला जाय।

दाँत

दाँतों के विषय में पीछे कई स्थलों पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है। यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि दाँतों की चिकित्सा यदि प्रारंभ ही से न की जाय, तो फिर उनका सुंदर और स्वच्छ रहना दुर्लभ है।

जो बालक सदा उँगली मुँह में डाले रहते हैं, उनके नीचे के दाँत बाहर को निकल आते हैं, और जो अपनी जीभ सदा ऊपर के दाँतों पर लगाते रहते हैं, उनके ऊपर के दाँत बाहर को निकल आते हैं।

दाँतों को बचपन ही से स्वच्छ रखने की आदत बच्चों को डाल देनी चाहिए। मांस, मैदा का बस्तुएँ, गुड़, तमाखू, शराब, सोडा, बरफ़ आदि चीज़ें दाँतों को प्रभाव कर देती हैं। फल, दूध और सादा भोजन तथा ताज़ा पानी दाँतों को स्वच्छ चमकीले तथा मज़बूत रखता है।

दाँतों की सफ़ाई सब आयु के स्त्री-पुरुषों को सदैव अति सावधानी से करनी चाहिए। इस काम के लिये बहुत-से ब्रुश और मंजन तथा दन्त-क्रीम बिकते हैं। बंगाल केमिकल की बनाई क्रीम और मंजन सस्ते तथा साधारणतया उत्तम हैं। नीम की दातुन इस काम के लिये बहुत अच्छी है। एक ही ब्रुश या दातुन अनेक आदमियों का नहीं इस्तेमाल करना चाहिए। भोजन के बाद ब्रुश सावधानी से धुला करना चाहिए और अन्न के टुकड़ों को ब्रुश दाँतों से दाँतों में से निकाल डालना चाहिए। ये टुकड़े यदि दाँतों में रह जाते हैं, तो सड़कर एक प्रकार का तेज़ाब बनाते हैं, जिससे दाँत भी सड़ने लगते हैं, और मुख से दुर्गंध आती रहती है।

कीड़ा

यदि दाँत में कीड़ा लग गया हो, तो दाँत के डॉक्टर को उसे अच्छी तरह दिखाकर निकलवा दो, तो उसमें पीड़ा न हो, नहीं तो उसे निकलवा डालो। यदि मालूम हो कि कीड़ा है, तो उस दाँत को भी निकलवा देना चाहिए। [illegible] के बाद [illegible] मंजन से दाँत साफ़ करते रहना चाहिए।

और बलवान् मनुष्यों के बहुत दिनों के बाद अवस्था में परिवर्तन होता है। बलवान् मनुष्य को रोग की वेदना कम मालूम पड़ती है। किंतु दुर्बल मनुष्य को अनेक प्रकार की घोर पीड़ाएँ भोगनी पड़ती हैं। उनमें ज्वर भी एक साधारण पीड़ा है, किंतु यह सबके उत्पन्न नहीं होता। शरीर के अवस्था-भेद से या रोग की प्रबलता के तारतम्य से किसी के ही ज्वर प्रबल रूप धारण करता है, प्राय: मृदु रूप से ही प्रकट होता और कुछ ज़्यादा दिनों तक रहता है। इस समय शरीर में एक प्रकार की फुंसियाँ उत्पन्न होती हैं, इनको अँगरेज़ी में ईरप्सन कहते हैं। इन फुंसियों के उभरने के साथ ही ज्वर कम हो जाता है, किंतु रोगी को सिर-पीड़ा का अत्यंत दुःख भोगना पड़ता है, और यह सिर की पीड़ा फिर नियमित समय पर प्रतिदिन हुआ करती है, और फिरंग रोग के विविध उपद्रव देखने में आते हैं। पीठ में पीड़ा और संधि-स्थानों में सूजन होती है। कहीं-कहीं ज्वरादि लक्षणों के प्रकाशित न होने पर भी फुंसियाँ निकल आती हैं। ये फुंसियाँ भिन्न-भिन्न आकारों में देखी जाती हैं। फिरंग रोग की इस दूसरी अवस्था में शिरोरोग, बालों का गिरना (गंज) और त्वचा में कुष्ठ-रोग के लक्षण प्रकट होते हैं। यहाँ तक कि फिरंग रोग का अंतिम परिणाम—कुष्ठ, मूर्च्छा, आक्षेप और विविध प्रकार की उत्कट वात-व्याधियों का उत्पन्न होना होता है। रोग के अत्यंत प्रबल होने पर स्नायु-शूल, क्षय और हृदय-रोग तक उत्पन्न हो सकता है। फिरंग-रोग के व्रणों को साफ़ न रखने से पीब निकलकर समीपवर्ती स्थानों में लग जाने से वहाँ भी वैसे ही व्रण पैदा हो जाते हैं। स्त्रियों के फिरंग-रोग होने पर लज्जा-वश वे उसको किसी से प्रकट नहीं करतीं, इस कारण योनि के ऊपरी भाग और उसके दोनों ओष्ठ सूज जाते हैं और उनमें से दुर्गंध और एक प्रकार का रस निकलता है। इस प्रकार प्राय: दो वर्ष पर्यंत यह अवस्था रहती है। इसके बाद रोगिणी को विशेष कष्ट का अनुभव नहीं करना पड़ता। कहीं-कहीं दो वर्ष के बाद भी यह अवस्था देखने में आती है। हाथ की हथेली

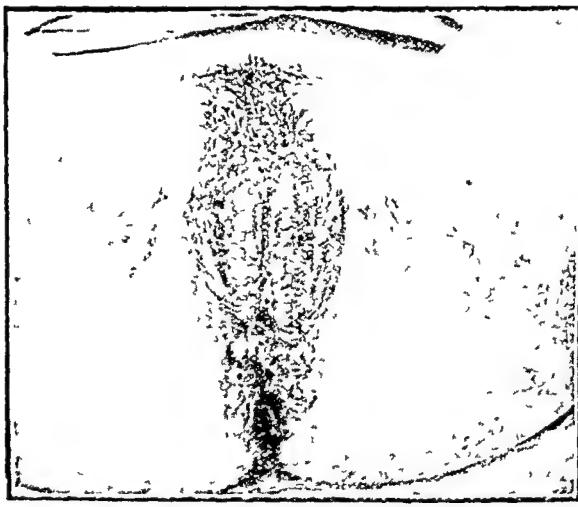

रोग की द्वितीय अवस्था

उपस्थित होने पर रोगी मृगी रोग या पक्षाघात के द्वारा पीडित होता है। अवस्था विशेष में घात के लक्षण प्रकट होते हैं। फुफ्फुस के आक्रांत होने पर पसलियों में पीडा, खाँसी और रोग समय-समय पर प्रकाशित हुआ करते हैं। किंतु यह अवस्था कभी-कभी देखने में आती

इस प्रकार फिरंग रोग की अवस्थाएँ कही है। इसकी प्रथम में उत्तम विधि से चिकित्सा क रोगी सहज में ही आरोग्य हो है। द्वितीय अवस्था में कुछ अधिक तक चिकित्सा करने से रोगी हो सकता है, किंतु तृतीय अवस्था आरोग्य होना ज़रा कठिन है। कभी प्रथम और दूसरी अवस्था सामान्य चिकित्सा के द्वारा रो हुआ जान पड़ता है, किंतु वह में दूर नहीं होता, कुछ दब जा फिर बार-बार पैदा हो जाता है। एव इस रोग की बहुत दिनों तक विधि और यथानियमों द्वारा चि करनी चाहिए।

आतशक रोगी की संतान की गुदा सड़ गई है

पैत्रिक प्रभाव—स्वामी (पति) या स्त्री के उपदंश-रोग से ग्रसित होने पर यदि गर्भ-संचार हो, तो बहुत जगह गर्भिणी का पाँचवें, छठे महीने में या पूर्ण गर्भावस्था में गर्भ पतित हो जाता है अथवा मृत संतान उत्पन्न होती है। यदि जीवित संतान उत्पन्न हुई, तो एक या दो मास में ही उसका

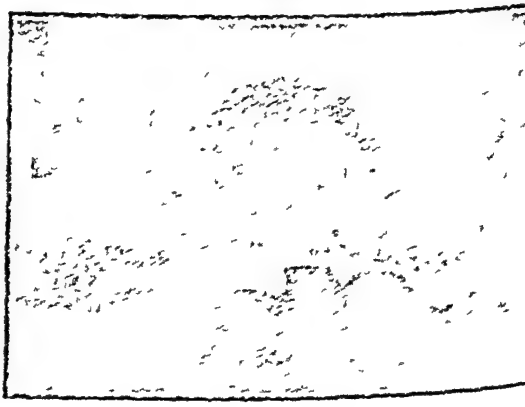

तृतीयावस्था में जीभ सड़ गई है

धियों को भोगा करते है। यह इतना भयंकर और घृणित रोग है कि इसके भयानक परि णाम के स्मरण करते ही शरीर कंपायमान हो जाता है। क्षणिक सुख का परिणाम कितन

पिता के अपराध का दंड पुत्र इस भयानक रीति से भोग रहा है

दुःखमय होता है, भुक्तभोगी लोग इस बात को विशेष रूप से जानते है। इस रोग के प्रभाव से मनुष्य की मनुष्यता नष्ट हो जाती है। मनुष्य पशुत्व या जडत्व को प्राप्त हो जाता और आजीवन अनेक दुःखों का सहचर बन जाता है। प्राय. सभी प्रकार के भयानक रोगों की उत्पत्ति इस फिरंग के द्वारा हो सकती है। प्रथम अवस्था में रोग सामान्य होने पर भी वह क्रमशः अत्यंत कठिन और यंत्रणा जनक हो जाता है। फिरंग-विष एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश होने पर उत्पन्न हो सकता है। फिरंगाक्रांत मनुष्य का रस, विस्फोटकादि से स्रवित हुआ रस अथवा उसके व्रण का रस शरीर मे प्रवेश होने पर भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है; जिसका इसी प्रकार भयंकर परिणाम होता है। उस पाप-कर्म के लिये मनुष्यों की क्यों प्रवृत्ति होती है? क्यों लोग अमृत को छोड़ विष-पान करते है? क्यों पतंगवत बनकर इच्छा-पूर्वक अपने को इस अग्नि मे स्वाहा करते हैं? केवल क्षणिक सुख के लिये कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं और कैसी दुर्दशा भोगनी पड़ती है। इस बात को जान-बूझकर भी उस पर क्यों नहीं ध्यान दिया जाता? क्या वास्तव मे ही विधाता ने इन्द्रिय-जनित क्षणिक सुख और काम-प्रवृत्ति के चरितार्थ करने के लिये ही मनुष्य-जाति और शुक्र-धातु का सृजन किया है? जो लोग लज्जा और गुरुजनों के भय से रोग को छिपाए रखते है, वे धीरे-धीरे उसको और भी भयंकर बना लेते है, और फिर उसका बहुत ही बुरा फल उनको आजीवन भोगना पड़ता है। बहुत लोग रोग को गुरुजनों से छिपाकर सुचिकित्सकों द्वारा उचित चिकित्सा न कराकर, अनाड़ी, मूर्ख और धूर्त लोगों की बताई हुई या दी हुई औषध के द्वारा स्वास्थ्य का और भी अधिक सत्यानाश कर लेते है। बहुतेरे मनुष्य इस रोग के पश

खाने से हड्डियों के जोड़ों में उसका असर बैठ जाता है। शरीर के संधिस्थल या गाँठों में रोग होता है। कभी-कभी दो-चार गाँठें और कभी-कभी सभी गाँठे आक्रांत होती हैं। के आरंभ मे ज्वर आता और गाँठे खूब फूली हुई लाल और दाह-युक्त मालूम होती उपरात हिलने से गाँठों का दर्द बढ़ता है। शरीर गर्म, दुर्गंध-युक्त पसीना, कंप, क सिर-दर्द, प्रलाप, प्यास, हृदय में दर्द, जीभ का रंग पीला, पेशाब कभी लाल कभी सफ़े

दर्द गुर्दा—गुर्दे मूत्र बनाने के यंत्र है। ये पीठ के निचले भाग में दोनो ओर महाशिमी-व के आकार के है। इनमे सुज़ाक के ज़हर के कारण मूत्र मे यूरिक ऐसिड बढ़ जाने से सूजन जाती है, और ये ठीक-ठीक पेशाब नही बना सकते, इस कारण मूत्र बंद हो जाता है, और उ कारण रोगी बहुत कष्ट पाता, मूर्च्छित हो जाता और कभी-कभी ४० घंटों मे मर भी जाता

भगंदर—गुदा से दो अंगुल बाद के स्थान मे नासूर की तरह एक घाव हो जाता है। प वह स्थान सूजा हुआ-सा मालूम देता है, फिर पककर फैल जाता है। उसमे बहुत छो सुई के मुख समान छिद्र होता है, उसमें लाल रंग का फेनदार पीब निकलता है। कभी क घाव बड़ा हो जाता है, तो उसी रास्ते वीर्य-मूत्र-मल भी निकलने लगता है। बहुधा यह उपदंश (आतशक) के कारण उत्पन्न होता है। यह रोग बहुत कम आराम होता है अंतिम अवस्था में उसमें कीडे पड जाते है, और उसमे से अपानवायु भी निकलने लगता है अंत में रोगी की मृत्यु होती है।

कुष्ठ—यह पाप रोग है। इसके अन्य भी कारण हैं, पर व्यभिचार से इसकी उत्पत्ति तीन निकटस्थ संबंध हैं। १—खाया हुआ भोजन न पचने पर स्त्री-संगम करते रहन २—उपदंश या पारद विकृति (उपदंश जल्दी आराम होने के लिये लोग पारा सेवन करते है यह पारा ठीक-ठीक शुद्ध न होने से अनेक उत्कट रोग पैदा करता है), हड्डी में जलन, सं मे दर्द, सर्व शरीर में घाव, हाथ-पैर के तलुवों से चमड़ा उधड़ जाना, मुख-नाक मे घाव, तालु में भीतर ज़ख्म, दाँतों का गिर जाना, नाक बैठ जाना, पक्षाघात, अंडकोशों मे सूजन और कठोरता, पीछे सर्वांग में सड़ाव और गलित्कुष्ठ !! ३—ऐसे रोगी स्त्री-पुरुष का सहवास।

कुष्ठ रोग उत्पन्न ही उस समय होता है, जब रसधातु मे विकार घुस बैठता है। प्रार मे अंग की विवर्णता, रूक्षता, स्पर्श-शक्ति का नाश, रोमांच, अधिक पसीना, उसके बाद फ़ गाढ़ा होकर जम जाता है, इस कारण सर्वांग मे खुजली और जगह-जगह पीब का संचय उसके बाद शरीर का सरसरा होना, मुँह सूजना, फुंसी उत्पन्न होना, शरीर में सर्व सुई गाड़ने के समान दर्द होना। और घावों का फैलना, उसके बाद हाथ की उँगलियां गलकर गिर जाना, चलने की शक्ति का नाश, अंग टेढ़ा हो जाना और घावों का रूप विक जाना। अंत में नासा भंग, नेत्र लाल, स्वर भंग, घावों में कृमि और मृत्यु।

स्त्रियों के विशेष रोग

पीछे लिखे गए महारोगों के सिवा स्त्रियों को खास तौर से ये रोग अधिक होते है—

जरायु अर्बुद—जरायु-गह्वर में तरह-तरह के दाने निकल आते है। इनका आकार या अरहर के दाने से लेकर २० सेर तक होता देखा गया है। यह संख्या में ५० तक हो है। किसी-किसी से पीव-रक्त निकलता और कोई सूखा रहता है। कभी-कभी श्वेतप्रदर रहता है। इस रोग का कारण दूषित पुरुष से संग आदि है। इसका परिणाम वंध्यापन

जरायु की स्थानच्युति—उलट-पुलट आसन से मैथुन करना, उछल-कूद अमर्यादा के कार्य करने से जरायु कभी-कभी अपने स्थान से टल जाता है। इसे 'धरन डि भी कहते हैं। यह दो तरह से टलती है—१—स्थान-भ्रष्ट होकर वस्ति के कोटर के भीत रहे। २—योनि के बाहर निकल आवे। दोनो अवस्थाओं में जरायु या तो सामने गि जाता या उतर जाता है, या पीछे खिसक जाता या उतर जाता है, पेड़ू में दर्द होता पेशाब में दर्द, श्वेतप्रदर, या तो अधिक रक्त-स्राव या बिलकुल मासिक धर्म बंद। इस रो बाधक और वंध्याभाव उत्पन्न हो जाते हैं।

डिंबकोष-प्रदाह—ऋतुकाल में पुरुष-संग करने से रजोरोध होकर यह रोग होता है। वेश्याओं और व्यभिचारिणी स्त्रियों को ही यह रोग अधिक होता है। पुट्ठे के ऊपर और पेट के खूब भीतर वेदना और चमक। दाबने या हिलाने से दर्द बढ़ता है। वमन, संगमेच्छा इस रोग के लक्षण हैं। पुराना होने पर कभी कभी पीव भी आने लगता

योनि-प्रदाह—सुज़ाक के रोगी पुरुष के संगम करने से, अत्यंत मैथुन से, बलात्का प्रसवकाल के बाद तत्काल ही मैथुन से तथा और कारणों से यह रोग होता है। योनि ल गर्म, फूली हुई और वेदना युक्त हो जाती है, और पेशाब करते वक्त योनि में खुजली चलती कभी-कभी पीव भी निकलने लगता है। रोग पुराना होने पर योनि के भीतर श्लेष्मवहा झि में नीली, लाल फुंसियाँ हो जाती हैं। योनि ढीली हो जाती है।

कामोन्माद—निरंतर प्रसंग करते रहने के पीछे पुरुष के मर जाने या अन्य कारण-वश स्त्री को एकाएक पुरुष की प्राप्ति न होने पर उसे कामोन्माद होता है। स्त्री की योनि के भीतर छोटे क्रिमि जैसे कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। उनकी सरसराह स्त्री की जननेंद्रिय में तीव्र और विह्वल करनेवाली उत्तेजना हो जाती है। ऐसी स्त्री अस हास्य, गीत, शृंगार और किसी भी पुरुष को देखकर निर्लज्ज चेष्टा करती है। घर से भागती है। ऋतुकाल के बाद रोग का वेग बढ़ जाता है।

वंध्यात्व—वंध्या होने के तीन कारण हैं—१—उपर्युक्त किन्हीं रोगों के कारण के जरायु, डिंबकोष या योनि में कोई व्याघात उत्पन्न हो जाय। २—अतिशय व्यभि के कारण जननेंद्रिय में बीज ग्रहण करने की शक्ति नष्ट हो जाने से वीर्य वमन हो ज करे। ३—प्रकृति से ही वंध्या हो।

फिर सबको १३ सेर दूध मे मावा पकावे। इसमे २४ तो० घी, २४ तो० शहद, २२ तो० मिश्री मिला देवे, २ तोले की मात्रा दूध के साथ रात्रि को खाय।

यदि शीघ्रपतन की शिकायत हो, तो यह दवा सेवन करनी चाहिए—

कुलीजन, शतावर, तालमखाना, मूसली स्याह, मुसली सफ़ेद, सत गिलोय, असगंध नागौरी, गोंद सहजना, मोचरस, समुद्रसोख, रूमीमस्तगी, बहमन सफेद, शकाकुल, सालम मिश्री, इलायची दाना सफ़ेद, सब एक-एक तो० लेकर चूर्ण करके सबके बराबर सफ़ेद शक्कर मिला कर डेढ़ पाव बढ़िया शहद मिलाकर पाक-जैसा बना ले, मात्रा छः-छः माशा, दोनो समय खाय, गाय का धारोष्ण दूध ऊपर से पीवे। शीघ्रपतन पर सिद्ध प्रयोग है।

धातु-वर्द्धक प्रयोग

इन प्रयोगों से वे लोग लाभ उठा सकते है, जिन्होंने अधिक स्त्री-प्रसंग द्वारा अधिक वीर्य क्षय किया है, और जिनके शरीर और अंग मे कुछ सुस्ती और कमज़ोरी बनी रहती है। ऐसे लोगों को ब्रह्मचर्यव्रत-पूर्वक कुछ दिन इन प्रयोगों में से किसी एक का सेवन करना चाहिए।

१—विदारीकद का चूर्ण करके उसी के रस मे २१ बार भावना (रस मे भिगोकर छाया मे सुखाओ) दो। इस चूर्ण की मात्रा १ तोला है। १ तोला घी और २ तोला शहद मे मिलाकर प्रातःकाल चाटना। ऊपर यथारुचि गर्म दूध पीना।

२—गोखरू, तालमखाने, सतावर, कौंच के बीच, खरेटी, गंगेरन सब बराबर लेकर कपड़छन चूर्ण करे। मात्रा ६ माशे रात्रि को फकी लेकर ऊपर गर्म दूध पीवे, अत्युत्तम है।

३—सोंठ ४ मा०, अकरकरा २ मा०, सेमल का गोंद ४ मा०, लोबान ८ मा०, मैदा लकड़ी २ मा०, तिल काले २॥ तो०, पीपल छोटी २८ मा०, सबके बराबर मिश्री। कपड़छन चूर्णकर १ तो० रात को फाँककर ऊपर से गर्म दूध पीवे।

नपुंसक

ऐसे रोगी केवल नीचे लिखी हालतों में ही अच्छे हो सकते है—

१—जो जन्म से नपुंसक न हो, और जिनके अवयव की बनावट में कुदरती दोष न हो।

२—किसी आपरेशन में कोई नस न कट गई हो।

३—जो कुचेष्टाओं का चिर अभ्यासी हो, और इस कारण जिसके अवयव सर्वथा निस्तेज हो गए हों।

यदि तिर्यग्द्रिय की नसों मे पानी भर आया हो, तो इन पोटलियों का सेक गुणकारी होगा—

हाथीदाँत का चूरा १ तो०, मछली के दाँतों का चूरा १ तो०, लाख ८ मा०, बावची गुजराती २ नग, नरगिस की जड़ १ नग, अफीम १ मा० सबको पीसकर दो पोटली

कर मलकर छानकर पीवे। मूँग की खिचडी खाय, सात दिन यह दवा पीवे, फिर कत्था सफ़ेद, काला दाना, जमालगोटा शुद्ध २ माशे, सबको ख़ूब खरल करे, जमालगोटा जितना खरल होगा, उतने ही दस्त अधिक होंगे और वमन भी न होगी। खरल करके मटर के समान गोलियाँ बनावे, पाँच या सात गोली ठडे पानी के साथ खिलावे, जब एक दस्त हो जाय, गरमी मालूम हो, तो एक कटोरा खाँड का शर्बत पिलावे, जो दस्त कम आवें, तो सील गरम पानी पिलावे, फिर गावज़ुबाँ १ तोला आधा पाव पानी मे रात को भिगो दे, सुबह को १ लुआब निकालकर मिश्री डालकर पिलावे, इसी प्रकार तीन या चार जुलाब दे, फिर खाने-पिलाने की दवा करे।

दवा खाने की—लौंग, रसकपूर, मिर्च स्याह, अजवाइन देसी, अजवाइन ख़ुरासानी सब दो-दो माशे। लौंग और रसकपूर को लोहे की कडाही मे दस तोले बकरी का दूध डालकर घोटे, जब कुछ नरम-सा रहे, तब सब दवा पीस छानकर डाल दे, फिर सबको घोटकर दो माशे की गोली बनावे। प्रात.काल एक गोली गाय के दही मे खिलावे पाँच दिन तक। खाने को दूध-दही, भात दे। जो मुँह आवे, तो राल टपकावे। जब ख़ूब राल निकल जाय, तब कचनार, चमेली, झटवेरी इनकी छाल को पानी मे पकाकर कुल्ले करे, आराम हो।

जिसके बदन पर आतशक के चकत्ते पड गए हों, उसको इसबद ६ तोले सुरमे के समान पीस-छानकर उसमे से तीन तोला अच्छा-अच्छा रख ले, शेष फेंक दे, उसमें शहद मिलाकर तीन गोली बनावे। प्रथम रोगी को तीन दिन खिचडी खिलावे, चौथे दिन एक गोली गरम पानी के साथ दे। वह गोली पच जाय, तो अच्छा है और लौटकर बाहर आवे, तो गरम पानी से धोकर फिर निगला दे, जो दूसरी बार भी न पचे, तो उसी गोली को धोकर ४ टुकड़े करे, और एक टुकड़ा गरम पानी मे निगला दे, और फिर भी थोड़ी-थोड़ी देर मे गरम पानी पिलाता रहे, जब तक गर्म पानी पीवेगा, तब तक दस्त आते रहेंगे। आठ-सात दस्त आने के बाद दोपहर को ठडे पानी मे हाथ-पाँव धोकर खिचड़ी खाय। अगले दिन गोली न खाय, किंतु खिचड़ी ही खाय, फिर तीसरे दिन एक गोली के तीन टुकड़े करके गरम पानी के साथ निगल जाय। इसी प्रकार एक दिन बीच मे छोडकर तीसरी गोली भी खा ले, इस जुलाब से उदर का सब मवाद निकल जायगा। इसके उपरात एक तोला अमलतास एक कोरे मिट्टी के प्याले में शाम को आध पाव पानी मे भिगो दे, सुबह को नितरा पानी पी ले। ऐसे ही ३० दिन में ३० तोले अमलतास का पानी पीवे। खाने को गेहूँ की रोटी, मूँग की दाल, पाव-भर घी नित्य खाय, उपदंश का समूर्ण विकार जाय, शरीर शुद्ध हो।

जिसे आतशक से कुष्ट हो गया हो, पाच भिलावों में पाँच माशे पारा भर दे, फिर तीनों अजवाइन, मिर्च स्याह पाँच-पाँच माशे, गुड़ २० माशे ख़ूब कूटकर वह भिलावे, जिनमे पारा भरा है, अलग-अलग इस गुड मिली दवा में लपेटकर दो शरावों में संपुट कर चूल्हे के नीचे

ख़ून का फ़साद हो गया हो, उसको दूर करेगा। सौंफ हरी, बड़ी हरड, छोटी हरड, सनाय बायविडग शाहतरा, सर्दफौंका, सोंक का जीरा, मकोय, चिरायता, ब्रह्मदंडी, नकछिकनी पाव-पाव-भर। सुपारी पुरानी, आँवला, बकायन के फल, नीम की निबौली, जामन की गुठली कीकड की फली, मुडी, कचनार की छाल आध-आध सेर, अमलतास की छाल, मेंहदी के पत्ते पाव-पाव-भर। लाल चदन पाव भर, झाऊ के पत्ते पाव-भर इन सबको कूटकर दरिया के पानी मे १२ पहर भीगा रक्खे। फिर अर्क़ निकाल ले, नित्य सुबह को पाँच तोले अर्क में एक तोला शहद मिलाकर पीवे ४० दिन पर्यंत, बदन बिगडे तीन साल न हुए हों, तो अच्छा होगा।

जो किसी स्त्री को आतशक होकर जाती रही हो, और उसको तभी गर्भ रह गया हो, और फिर वही रोग ज़ोर पकडे, तो कठिनता से जायगा। उसको यह दवा दे—मुरदासंग १ तोला, गेरुवर्म १ तोला, भुने चने २ तोले, इन तीनो को ख़ूब बारीक पीसकर गुड़ १२ वर्ष का पुराना मिलाकर छोटे बेर के बराबर गोलियाँ बनावे, और एक गोली मलाई में लपेटकर खिलावे। जो १ गोली नित्य खाने से गर्मी मालूम हो, तो आधी गोली खावे। पाँच-सात रोज़ मे कुछ आराम न हो, तो फिर यह दवा हुक्के मे पिलावे—कबी के पत्ते १० तोला, शिंगरफ ३ माशे, फिटकरी सफ़ेद ६ तोले, इनको पीसकर तीन तीन माशे की गोली बनावे, १ गोली चिलम मे रखकर हुक्का ताज़ा करके पिलावे, और फिर नेचा भिगो ले, पानी दूर न करे, इसी तरह सात दिन हुक्का पिलावे। खाना जो चाहे, सो खाय, इस दवा से रोग जाता रहेगा जब बच्चा पैदा हो, तो फिर जुलाब देकर दवा खिलावे। जो बच्चा पेट से रोग-युक्त निकला हो, तो वह भी इस दवा का दूध पीने से अच्छा हो जायगा। जो अच्छा न हो, तो बच्चे को यह दवा दे—कटाई के फूल २ माशे, बायविडग २ माशे, किशमिश ३ माशे तीनो को पीसकर आध सेर पानी मे पकावे। जब दो तोले बाक़ी रहे, तो रखकर १ रत्ती-भर लेकर दूध में पिलावे, और उसकी मा को वही दवा दे, इसको चाहे, तो अच्छा हो जायगा।

स्त्रियों के रोग

केले के पके फल का गूदा, गाय का घी, मिश्री तीनो बराबर एकत्रकर ख़ूब मथे। यह मिला हुआ पदार्थ १ पाव, दारचीनी ।॥ तोला, लोंग १ तोला, धाय के फूल ४ माशा, बड़ी इलायची ४ माशा, सोंठ १ तोला, माजूफल ३ माशा इन सब दवाइयो को कपड़छन करके उसमे मिला ले। मात्रा २ तोला। श्वेतप्रदर का अमीराना और सिद्ध नुस्ख़ा है।

अदूसे के पत्ते का रस २ तोला मिश्री मिलाकर पीने से रक्तप्रदर आराम होता है।

गूलर (कच्चे) का रस १ तोला, लाख का भिगोया पानी १ तोला मिलाकर पीने से रक्तप्रदर और हलीदा से लाभ होता है।

चूहे की मुसेंगन २ रत्ती, पीपल २ रत्ती भेड़ के १ पाव दूध के साथ पीने से यदि रक्त के साथ गाँठें भी आती होंगी, तो बंद होंगी।

जरायु-अर्बुद—शीघ्र किसी अच्छे डॉक्टर से चिकित्सा करानी।

जरायु की स्थानच्युति—रोगिणी को तकिए के सहारे अधलेटी सुलाकर उसकी जाँघें उसकी छाती की ओर उठाकर उँगली द्वारा हल्का दबाव देकर हथेली से जरायु को धीरे-धीरे ऊपर उठावे अथवा दाई से ठीक करावे। ठीक होने पर पसारी लगाना अच्छा है। 'पसारी' एक यंत्र होता है, जो बड़े-बड़े अँगरेज़ी दवाख़ानों में बिकता है।

डिम्बकोष योनिप्रदाह—जरायुदाह के समान चिकित्सा करनी। ठंडे जल से पिचकारी द्वारा योनि-प्रदेश को नित्य धोना।

कामोन्माद—प्रलाप और निर्लज्जता के साथ प्रबल संगमेच्छा में ४ से ६ रत्ती तक कपूर पान में रखकर खिलाना।

ऋतुकाल के बाद ज़ोर होने पर ज़हरमोहरा खताई, कपूर, कहरवा प्रत्येक एक-एक रत्ती शहद में चटाकर ऊपर केले या नारियल का रस पिलाना। हर सूरत में हल्का और पुष्टिकर आहार देना।

वंध्यात्व—अनाचार के कारण जो स्त्री वंध्या हो गई हो, उसकी चिकित्सा हो सकती है।

ऐसी स्त्री को ६ मास या एक वर्ष पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए और उस काल में फल-घृत का सेवन करना चाहिए, जिसके बनाने की विधि इस प्रकार है—

फल-घृत—घी गाय का स्वच्छ ४ सेर, शतावर का रस १६ सेर, मजीठ, मुलहठी, कूठ, त्रिफला, खरेटी, मेदा, असगंध, अजमोद, हल्दी, हींग, कुटकी, नीलोफर, कमल, मुनक्का, चदन लाल, चंदन सफ़ेद, प्रत्येक दो-दो तोला मिलाकर मंदाग्नि से पकावे। जब घी मात्र रह जाय, तब मिश्री मिलाकर प्रातःकाल १ तोला खाय। यह घृत कम-से-कम ६ मास अवश्य सेवन करना चाहिए, इससे सब प्रकार के योनि-दोष दूर हो जाते हैं।

इसके बाद ऋतु-स्नान के अवसर पर निम्न-लिखित व्यवस्था करे—

१ तोला घुड़बच टुकड़े करके कर्क के सूर्य में सायंकाल को थोड़े पानी में भिगो दे। प्रातःकाल उसकी तीन गोलियाँ बनावे, और मक्खन में लपेट ले। चौथे दिन स्त्री ऋतु-स्नान कर चुके, तब वहाँ से उठे नहीं। बालों से पानी टपक रहा हो, ऐसे समय में स्थिर चित्त हो तीनों गोलियों को उदय होते हुए सूर्य को नमस्कार करके निगल जाय। दिन-भर वमन होगी। इससे गर्भाशय की स्थिति और शुद्धि होगी। केवल दूध-भात—थोड़ा घी डालकर खाय और स्नान से ३,८,१०,१२,१४,१६ रात्रि में गमन करे। अवश्य गर्भ रहेगा, और पुत्र होगा। ऋतुकाल में तीन दिन तक यह उपचार और करना चाहिए—एक तोला बिजौरा और दो तोला पीपल (पारस पीपल) की डाढ़ी काढ़ा करके पीवे।

फुटकर उपचार

१. भगंदर—पकने से प्रथम ही इसकी चिकित्सा करना चाहिए। नहीं तो नितांत कष्ट-साध्य हो जाता है। अपक्वावस्था में रक्त निकालना ही इसकी सबसे बड़ी चिकित्सा है। पुंसी

के लिये यह का पत्ता या पानी के भीतर की ईंट का चूरा, मोठ, गिलोय और विषखपरा) पीसकर लेप करे। जौ, गेहूँ और मूँग एकत्र पकाकर बाँधे। चन्दन की या नमक पीस और गर्म करके बाँधे। पीड़ने का जब आशा न रहे, तो तत्काल किसी डॉक्टर से चिरवा दे, अथवा पकाकर पाव निकालने का प्रयत्न करे। पकाने के लिये बिनौले, तिल, सरसों, अलसी इनकी पुलटिस बनाकर बाँधना। पकने पर यदि फूटे नहीं, तो करंज, भिलावा, दंती की जड़, कनेर की जड़ और कबूतर या कौवे का बीट पीसकर लेप करना। व्रणप्रम होने के लिये परवल का पत्ता, नीम का पत्ता या वट का पत्ता का काढ़ा काम में लाना चाहिए। पाछे उपदंश-प्रकरण में लिखा काढ़ा मरहम बनाकर घाव पर लगावे।

यदि नासूर हो जाय, तो सुपारी पुराना, मैनफल, बावर महुँद या आक के दूध में पीसकर बत्ती बनाकर नासूर में प्रवेश करना। नासूर का मुँह पतला न हो, तो चिरवाकर चौड़ा करा लेना। अथवा भेद की जड़ उखाड़कर प्रयोग में लाना।

सब तरह का कफ-जनक और भारी पदार्थ, सब तरह का मिठाई, दिन में सोना, रात में जागना, स्नान, व्यायाम, मैथुन का त्याग करना।

२. वद्—वद को काटकर पीप निकालना ही उत्तम है। तीर पकाने और काटने के बाद प्रयोग लिखे हैं, यहाँ भी काम में लाने चाहिए। उशीरादि, कुटज त्वक् आदि चौगुने बराबर लेकर घी में घोटकर मरहम बनावे। यह मरहम वद में तीर का वेग देता या अत्यंत शीघ्र उसे पका देता है।

वद में जोंक लगवाना बहुत ही उत्तम है। बोमाइर और शारा आदि-आदि कपड़े-आदि एक बर्तन पानी में घोले, उसमें कपड़ा भिगाकर रखने से वद जल्दी बैठ जाता है। वद में दर्द ज्यादा होने पर भेद के रूप में गेहूँ पीसकर लेप करना चाहिए।

३. संपिधान (गठिया)— संधिका १ तोला, अजवायन गुलाबी १ तोला, जौंस १ तोला, पान बंगला १००, सबको खूब पीसकर खाल बराबर लोहा बनावे। वात-व्याधि के लिये यही बाहरूक दवा है, दुरुस्त उपाय है। मूँग का दाल नहीं खाना चाहिए, चन्दन खूब लगाना। एक-एक गोली सुबह-शाम पानी के साथ खाना।

वेग मालिश करना मुकर्रर हो, तो यह तेल बनावे- चमेली के पत्ते का तोला, कुचला १ तोला, मालकंगनी १ तोला, मोम सफेद ही तोला, मोम जर्द १० तोला। अलग रखने, जब इकट्ठाही जब आवें, तब अलग-अलग काम में लावे। काढ़कर दुई आना है। जब यह तेल थोड़े पुराना हो गया हो, तो उत्तम यह है कि किसी अच्छे चिकित्सक से उपयोग मालूम करे।

४. वारद-विकृति— [illegible] विकृति को [illegible] [illegible] करना है। [illegible] १ तोला [illegible] का [illegible] के साथ [illegible] [illegible] के [illegible] और [illegible] का [illegible]।

५. कुष्ठ—प्रख्यात भयंकर रोग है, पर ईश्वर की कृपा से इस दुष्ट रोग की महासिद्ध औषध मिल गई है, और ससार के विद्वानों का कहना है कि अब यह रोग संसार में बहुत कम हो जायगा। यह अपूर्व औषध चौलमोगरा का तेल है, जो किसी भी अँगरेज़ी दवा बेचनेवाले के यहाँ सस्ता ही मिल जाता है। इसकी १० से ३० बूँद तक दिन में तीन-चार बार दूध या मिश्री के साथ खानी चाहिए।

६ दर्द गुर्दा – गुर्दे पर जोक लगवाकर ख़ून निकलवा देना चाहिए। खाने का एक उम्दा नुस्ख़ा नीचे लिखा जाता है –जवाखार, भद्दी नमक, सुहागा, नौसादर, मिर्च स्याह, नमक सेंधा, नमक सफेद, हीरा हींग, शोरा कलमी बराबर कूट-छानकर सिर्का तुंद विलायती में लऊक बना ले। ख़ुराक ३ माशे तक।

शीतकाल मे सेवन-योग्य पाक

भारतवर्ष में बहुत प्राचीन काल से शीतकाल में विविध पुष्टिकारी पाकों के सेवन करने का रिवाज है। ये पाक सभी सद्गृहस्थ—बूढ़े, जवान और अमीर-गरीब—सेवन करते हैं। अमीर लोग हज़ारों रुपए के अंबर, मोती, कस्तूरी, चंद्रोदय डालते हैं। गरीब बेचारे मूँग, गुड़ के लड्डुओं पर ही औक़ात बसर करते हैं। हमारे मत से प्रत्येक पुरुष को शीतकाल में बल-वीर्य की वृद्धि और शरीर की पुष्टि के लिये ऐसे पाक और अन्य पुष्टिकारी वस्तुओं का सेवन करना चाहिए।

भारतवर्ष चारों तरफ समुद्र से घिरा है। जहाँ समुद्र नहीं है, वहाँ पर्वत-माला है। भूमध्य रेखा से २३ अंश ऊपर जो कर्क रेखा है, वह झाँसी-विन्ध्याचल के लगभग है। विन्ध्याचल के नीचे का भाग उष्ण कटिबंध में है, ऊपर का समशीतोष्ण कटिबंध में। अरब के बादेसमूम को इधर अरब-समुद्र की प्रशांत लहरें रोक रही हैं, उधर चीन और सायबेरिया के बर्फ़ीले तूफान को ५ मील ऊँचा हिमालय पर्वत रोक रहा है।

आषाढ़ से आश्विन तक प्रायः पूर्वी वायु बंगाल की खाड़ी के मानसून को लाता है, और कार्तिक से आषाढ़ तक पश्चिम-दक्षिण वायु चलता है, जो अत्यंत नैराश्य, ज़ख़्मों को भरनेवाला और फलों को पकानेवाला है।

ज्योतिष-शास्त्र के मत से उत्तरायण और दक्षिणायन ये दो अयन होते हैं। दक्षिणायन में चंद्रमा पृथ्वी को अमृत दान देता है, और उत्तरायण में सूर्य पृथ्वी के मनुष्यों और वनस्पतियों के रस का शोषण करता है। भारतवर्ष गर्म देश है, जैसा कि ऊपर बताया गया है। इसलिये ग्रीष्म-ऋतु में उस पर सूर्य की सीधी किरणें पड़ती हैं, और यही कारण है कि ग्रीष्म ऋतु में मनुष्यों का बल क्षीण हो जाता है, और वे ठीक-ठीक भोजन भी नहीं कर सकते। परिपाक-क्रिया भी कमज़ोर पड़ जाती है। इसलिये ग्रीष्म के बाद जब शरद-ऋतु आती है, और चंद्रमा अमृत वर्षा करता है, तब वनस्पतियों में नया रस आता है, और मनुष्यों में नवीन पराक्रम की वृद्धि होती है। पाचन-शक्ति भी बढ़

ठोड़ी

सुंदर ठोड़ी वह है, जो नाक और नीचे के ओष्ठ के निचले भाग के बराबर चौड़ी हो, अर्थात् ठोड़ी की लंबाई मुख की लंबाई की ⅓ होनी चाहिए। ठोड़ी के नीचे चर्बी बढ़ जाने से वह स्थान फूल जाता है, इससे ठोड़ी बुरी मालूम देती है। इसके वास्ते एक फ़ीता पहना जाता है, जो विलायती दवा बेचनेवालों के यहाँ मिलता है। ठोड़ी में इसी रीति से सुंदर गड्ढा भी किया जा सकता है।

गाल

शरीर-भर में गाल का रंग सबसे अधिक साफ़, गहरा और चमकदार होना चाहिए। यदि ऐसा न हो, तो समझिए स्वास्थ्य में अंतर है। गालों पर ऐसा रंग लाने के लिये विलायत में स्त्रियाँ मुख पर पहले सफ़ेद और फिर गुलाबी रंग का पाउडर लगाती हैं।

सम्पूर्ण मुख पर जो लाली दी जाती है, वह सौंदर्य का चिह्न नहीं, रोग का चिह्न है। यदि आप चाहते हैं कि आपके गाल सदैव भरे हुए, कोमल, चमकदार और गुलाबी बने रहें, तो आपको तीन बातों का ध्यान रखना चाहिए। एक सदाचार, दूसरे सुपाच्य और सादा भोजन करना, तीसरे सदैव ताज़ा वायु में रहना।

प्रतिदिन ख़ूब ठंडे पानी से गालों को धोकर तौलिए से ख़ूब रगड़ना चाहिए। फोड़े, फुंसी, ख़ुर्री, दाग़, चेचक आदि गालों के सौंदर्य को नष्ट कर देते हैं।

अब हम मुख का सुंदरता बढ़ाने के कुछ प्रयोग और उपाय लिखते हैं—

१—साधारण दूध की मलाई ठंडी करके रात को सोने के समय मुख पर ख़ूब मलनी चाहिए। प्रातःकाल न धोकर दूध में डूबकर आने पर मलाई मल लेने से चेहरे पर झाईं और ख़ुश्की नहीं आती।

मलाई को गर्दन और मुख पर उँगली के पोरुओं के सहारे धीरे-धीरे गोल गोल दायरे बनाते हुए मलना चाहिए। और कुछ देर ठहरकर गुनगुने पानी से मुख को धोना चाहिए।

२—बहुत-से फल और तरकारियाँ भी ऐसी हैं, जो चेहरे पर ताज़ा काटकर लगाने से चेहरे को तरोताज़ा, चमकीला, गोरा और साफ़ बनाती तथा हम लोगों वाला नवीन हैं। [illegible] छोटे-छोटे टुकड़े कर लीजिए, और ½ सेर पानी में उबाल लीजिए। उसमें एक [illegible] बारीक पिसा आटा डालकर उससे मुख को पोंछिए, मुख का रंग साफ़ और चमकदार हो जायगा। झाईं और मुहासों को भी इससे बहुत लाभ होता है।

[illegible] को [illegible] कर निचोड़िए, उसके बराबर ही उसमें [illegible] मिलाइए और [illegible] मिलाइए। यह पूरा मलाई के समान बन जायगा। [illegible] है।

[illegible] मुख धोने के बाद [illegible] का रस और [illegible] मिलाकर मुख पर लगाइए, और

रह जाय, तब छान ले। इस घृत को स्वच्छ कड़ाही में चढ़ाकर १ सेर खोवा और १ सेर सूजी को डालकर मंदाग्नि से भूने, फिर अनारदानों का रस २ सेर निकाले, उसमें २ सेर खाँड डालकर चासनी करे। जब सिद्ध हो जाय, तो ठंडी करके उसमें उपर्युक्त खोवा और सूजी को डाल दे, और खूब घोटे। जब एकाकार हो जाय, तब यह चूर्ण मिलावे—जायफल, जावित्री, त्रिकुटा, लौंग, दालचीनी, पत्रज एक-एक तोला, सालममिश्री, मुसली, शतावर दो-दो तोला, इलायची गुजराती ३ तोला, केशर ४ माशा, कस्तूरी १ माशा, अंबर १ माशा, भीमसेनी कपूर १ माशा, बादाम, गोला, पिस्ता चार-चार तोला, बंगभस्म, प्रवालभस्म, स्वर्णभस्म, अभ्रकभस्म तीन-तीन माशे सबको मिलाकर चाँदी के कलई किए थाल में बर्फी जमा दे। ऊपर से सोने के वर्क लगावे, मात्रा २ से ४ तोला तक।

५ गाजर-पाक—गाजर १० सेर लेकर पानी में ढाक की राख मिलाकर उबाले। फिर छीलकर डंठल निकालकर लंबे-लंबे टुकडे कर ले, फिर १ सेर घृत में मंदी-मंदी आग से भूने, जब तक गीलापन रहे, भूननी चाहिए। पीछे ३ सेर खाँड की चासनी में डुबो दे। इलायची ४ तोला, बादाम १० तोला, पिस्ते १० तोला पीसकर डाल दे। चासनी में केशर भी दूध में घोलकर डाल दे। यह गाजर का पाक राजाओं के योग्य अत्यंत स्वप्न-दोष, दाह, प्रमेह, रक्त-पित्त, प्यास, प्रदर आदि रोगों को नाश करनेवाला है।

हो रहे हैं, पातिव्रत धर्म का गौरव कम हो रहा है। सतीत्व गौरव नष्ट हो गया है, बुजदिली, भीरुपन, नीचता, अपवित्रता और व्यभिचार बडी ही तेज़ी से बढ़ रहे है।

इनके कारण नीचे लिखे हैं—

१—बाल-विवाह।

२—उत्तम भोजन का न मिलना। इसी के अंतर्गत महँगी और दरिद्रता।

३—पतियों, घरवालों और समाज का दुर्व्यवहार।

४—वर्तमान सभ्यता और वर्तमान शिक्षा। तथा उत्तम शिक्षा का अभाव।

५—कुसंग।

६—सामाजिक कुरीतियाँ।

७—धन की बाहुल्यता, विलास-वासना, बड़प्पन की ठसक।

अब हम प्रत्येक कारण को विस्तार-पूर्वक वर्णन करेंगे—

१ बाल-विवाह—हिंदू-परिवार में कन्या पैदा होना और मनहूसियत का घर में घुसना एक ही बात समझी जाती है। कन्याएँ पराए घर का दरिद्र समझी जाती हैं, और जितना शीघ्र हो, उससे अपने ऊपर का भार उतारने को हिंदू पिता बडा ही उत्सुक रहता है। मध्यकालीन के हिंदू-धर्मशास्त्रों, रूढ़ियों और प्रचलित रीतियों तथा उनकी परिस्थितियों ने हिंदू-समाज में स्त्रियों का स्थान बहुत ही निकृष्ट बना दिया है, और वे सर्वत्र ही नीच, अपवित्र, मूर्ख और नगण्य समझी जाती हैं। घर-भर की सेवा करना और जीवन-भर आधीन बनी रहना, उनका प्रशंसनीय शील समझा जाता है। यही कारण है, बाल-विवाह हिंदू-समाज में घर पकड गया है और फल-स्वरूप ३ करोड विधवाएँ देश में भरी पड़ी है।

२ उत्तम भोजन का न मिलना—उपर्युक्त कारण ही इससे बहुत कुछ हैं, विशेष यह है कि लडकियाँ बचपन में माता-पिता के घर भाइयों और पिता की जूठन खाने को अभ्यस्त रहती है, ससुराल में उन्हें पति की जूठन मिलती है, पुरुषों की अनियमित भोजन-पद्धति से प्रायः उन्हें सदैव ही ठंडा, बासी और अरुचिकर भोजन मिलता है, वे यह समझती भी हैं कि उत्तम भोजन खाने का अधिकार तो पुरुषों को ही है।

३ पतियों, घरवालों और समाज का दुर्व्यवहार—बहू को गाली देना या पीट बैठना प्रत्येक घर में सास और पति के लिये प्रायः आश्चर्य का विषय नहीं। थोडे कसूर या भूल पर ही वे पिट जाती हैं। पुरुषों की शेखी ही इस बात की है कि हम ठोक-पीटकर स्त्री को ठीक रखते हैं। तुलसीदास भी उन्हें ताड़न के अधिकारी बना गए हैं।

४. वर्तमान सभ्यता और शिक्षा—जो स्त्रियाँ भाग्य-वश पूर्वोक्त श्रेणी से अलग हैं, अर्थात् उच्चवंश और धनवानों की हैं, उनके स्वास्थ्य का नाश किया है वर्तमान सभ्यता और शिक्षा ने। अस्वाभाविक रीति से अनावश्यक विषयों को पढ़ने, उनके विषयों से जीवन का सम्मिश्रण करने से उनके मानसिक और शारीरिक विकास का रूप ही बदल जाता है। वे

चिड़चिड़ी, घमंडी और नज़ाकत की पुतली बन जाती हैं। चमड़ा और पर
उन्हें न तो पूरी स्वाधीनता ही है कि स्वास्थ्य की रक्षा कर सकें और न इतना
घर के सब काम करके स्वस्थ रहें। फलत. वे अस्वस्थ रहती हैं।

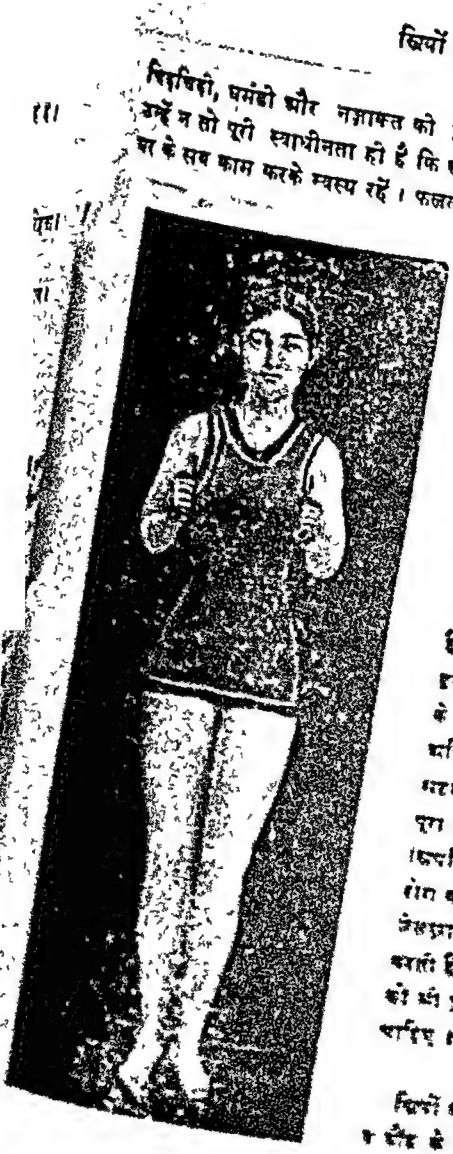

४ कुसंग—सहेलियां और कुछ
दूसरे पुरुषों का कुसंग हो उनके लि
है। और उन्हें विविध अनावश्यक
पर ले जाता है।

५ सामाजिक कुरीतियां—जैसे
१ वर्ष तक खाना खाना, बैठना,
खाओ, यह करो यह करो आदि-आदि

६ घर की वातावरण—जिसमें
और आलस्य उत्पन्न होकर अपने आपको
के रोगों का घर बन जाता है।

स्त्रियां देश की भावी संतानों की जननी
है, और भावी संतान ही देश की आशा है।
इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि स्त्रियों
के स्वास्थ्य-रक्षा की ओर पुरुषों की अपेक्षा
अधिक ध्यान दिया जाय। बालक, बालिका
सहज और आधार सबकी स्वास्थ्य का पूरा
पूरा ध्यान रखना चाहिए। आज बड़े घरों में
स्त्रियां कुछ भी काम नहीं करतीं और अनेक
रोग का मूल कारण यही है, ऐसा के बड़े
जेलखानों में तो पुरुषों को नीरोग रखने
करती हैं। अब समय आ गया है कि स्त्रियों
को भी पुरुषों की भांति व्यायाम करना
चाहिए।

ईश्वर की कारीगरी

स्त्रियों को ईश्वर की कारीगरी करने के लिये
न दौड़ के लिये बल्कि अच्छे चाहिए।
अन्यान्य हम अपना काम चाहिए—

बाल से लगाओ। डंबल्स को खड़े पकड़कर कुहनियाँ सीध में सामने की ओर रख दो। और डंबल को डमरू की भाँति हिलाओ। ध्यान रहे कि सिर्फ़ कलाई ही हिलने पावे। प्रारंभ में कम-से-कम दस बार हरकत दो।

२—अब दोनो हाथ सीध में फैला दो। बदन सीधा रहे। डंबल्स खड़े पकड़े रहो। आड़े न हो, अब उन्हें १० बार डमरू की भाँति हिलाओ। धीरे-धीरे और बल-पूर्वक।

४—अब तने हुए हाथों को धीरे-धीरे धरती पर झुकाओ। जितना झुक सको, उतना झुको। पर घुटने न मुडने पावें।

४

६—अब अपने दाहने हाथ को कंधे की सीध में फैलाओ। कंधों पर पूरा ज़ोर दो। फिर उसे कंधे पर लाकर दूसरे हाथ से वही क्रिया करो।

इन कसरतों से कंधे, भुजदंड, छाती, गर्दन और कलाइयाँ पुष्ट और सुडौल बनेंगी।

८—सीधी खड़ी रहो। दाहना पैर दाहनी ओर को सीधा फैलाओ। पर पिछले मुड़े नहीं। अगली कुछ झुका दो।

अब दोनो हाथों को सामने ले जाकर ज़रा उँचाई पर डबल्स को मिला दो।

प्रत्येक क्रिया ८-१० बार करो। इससे कमर, पट्ठे, जाँघ और धड़ सुगठित होगा का प्रवाह ठीक रहेगा।

१०--सीधी खड़ी हो जाओ। शरीर सीधा है। अब इस भाँति झुको कि सीना सीधा है। घुटने भी न मुड़े। सारा भार उदर और ीढ़ की हड्डी पर पड़े। धीरे-धीरे हाथ पैरो के ास ज़मीन पर टेक दो। सिर दोनो हाथों के बीच में रहे, और नाक घुटनो से छू जाय। धीरे-धीरे अभ्यास से ऐसा हो जायगा। इस क्रिया मे प्राणायाम करना आवश्यक है।

१०

११—अब बायाँ पाँव पीछे की ओर जितना सभव हो, फैलाओ और उसका केवल पजा ही धरती पर टेके रक्खो।

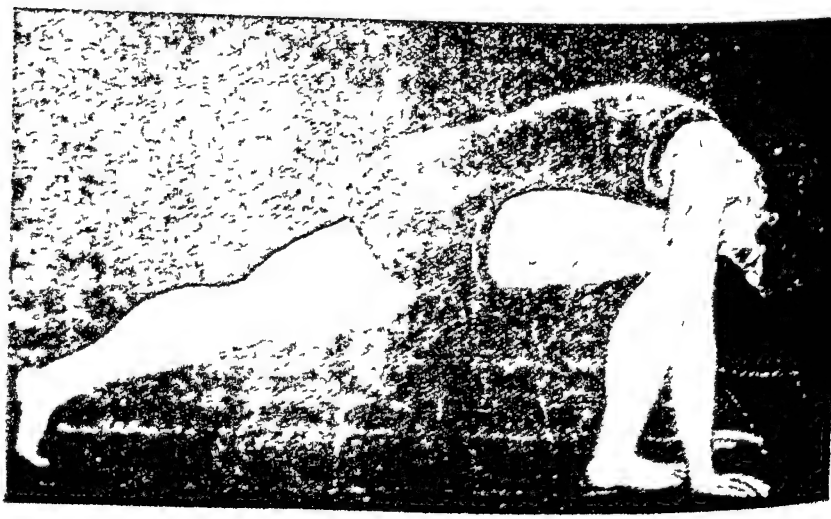

१४—अब धीरे-धीरे ऊपर को हाथों के बल पर उठो, और सिर को यथासंभव ऊ
ठा दो। यह क्रिया गर्भवती स्त्री न करे। इससे सीना और पेट बनेगा। इस क्रिया
रू से अंत तक एक ही श्वास लेना चाहिए। प्रारंभ में दुर्बल स्त्रियाँ बीच में इच्छानुस
ाँस ले सकती हैं।

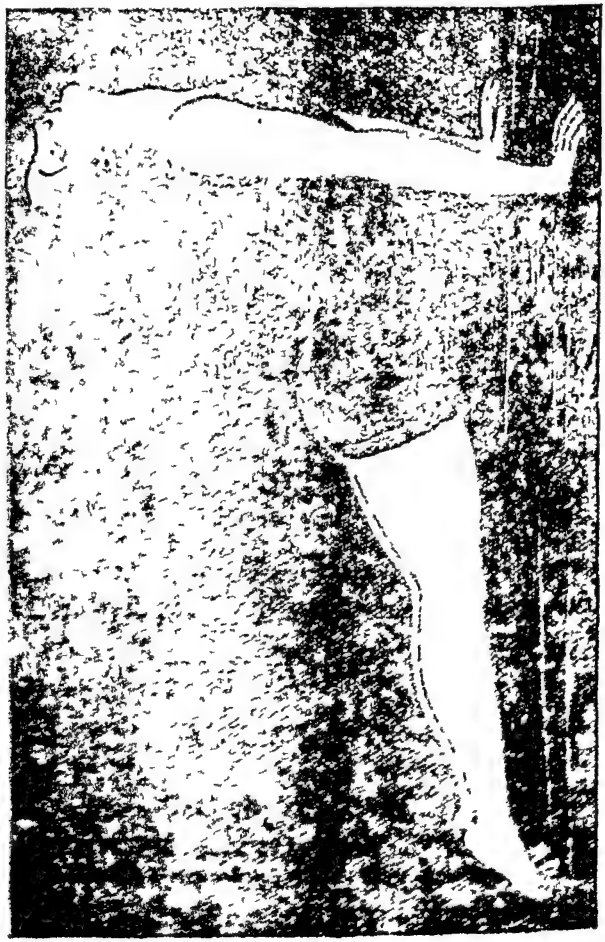

१४

१७ –इस प्रकार बैठकर पैर के अँगूठों को ज़ोर से खींचो और ख़ूब गहरा श्वास लें सीना ख़ूब तान लो, गर्दन सीधी रक्खो, फिर एकाएक ज़ोर से श्वास फेंक दो। यह अभ्य सूर्य के सम्मुख बैठकर करना चाहिए इससे उदर, छाती की दुर्बलता तथा बवासीर का रो दूर होता है।

१७

पुरुष भी इसी भांति व्यायाम कर सकते हैं। उन्हें व्यायामों के लाभों पर ध्यान देना चाहिए।

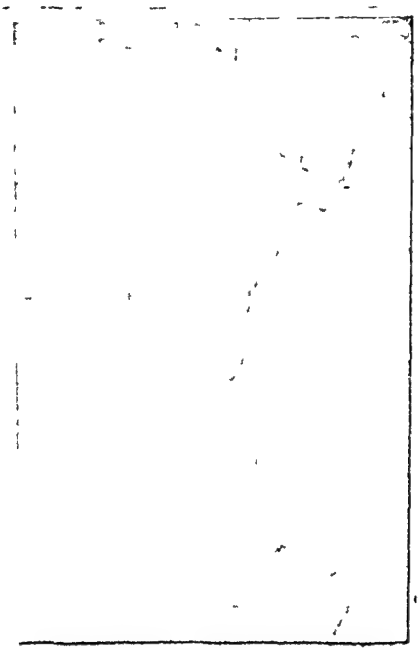

व्यायाम-से सुगठित पुरुष-शरीर

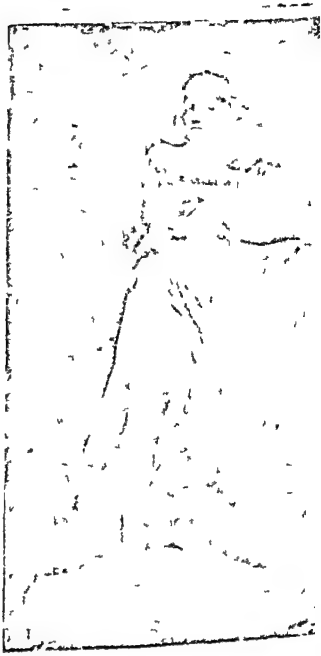

व्यायाम से सुगठित स्त्री-शरी

घृत, मीठा आदि तर माल उड़ानेवाले अमीर मोटे और मेदस्वी होकर बेडौल हो
दिमागी मेहनत करनेवाले वकील, बैरिस्टर, जज, ग्रंथ-निर्माता, अखबारों के संपादक
मदाग्नि, भय और निद्रा-नाश में फँसकर दुनिया से जल्दी ही चल बसते हैं। व्य
मन की चंचलता नष्ट होकर और शरीर थककर व्यभिचार की फालतू इच्छा नष्ट हो
और व्यायाम के अभ्यासी मनुष्य के अंग-प्रत्यंग इतने दृढ़ हो जाते हैं कि उसे एक ओ
विषय-भोग से इतनी तृप्ति हो जाती है कि फिर उसे बहुत समय तक उस प्र
अभिलाषा नहीं होती।

व्यायाम की मात्रा—आधा बल रखकर व्यायाम करना चाहिए। जब श्वास
से आने लगे, शरीर थक जाय, और मस्तक पर पसीना आ जाय, तभी व्यायाम
देना उचित है।

अधिक व्यायाम से हानि—अत्यधिक व्यायाम करने से श्वास, कास, ज्व
अरुचि, मन्दाग्नि, व्रण, ज्वरादि रोग पैदा हो जाते हैं, और शरीर सूख जाता है।
बुखार में अपने व्यायाम आदि नहीं करना।

पर चूर्णकर गुलाब-जल में रात को लेप किया जाय। प्रातःकाल भैंस के ताज़े दूध से धोया जाय। पंद्रह-बीस दिन में मुँहासे तथा एक या दो मास में चेचक के दाग़ दूर हो जायँगे। यदि चेचक के दाग़ अधिक हों, तो उपर्युक्त औषध में एक माशा जुंदबेदस्तर और मिला लिया जाय, तथा शहद में लेप किया जाय। प्रातःकाल ठंडे जल से धोया जाय। १ मास में चेचक के दाग़ दूर हो जायँगे।

१०—झुर्रियाँ पड़ जाने का भी एक नुस्ख़ा यहाँ लिखते हैं—

तरमस, तुख़्म मूली, नरकचूर, हनुलबान, क़िश्त शीरीं, तुख़्म कलमलौ, मजीठ, मस्तगी, नक़ीफ़ी प्रत्येक १-२ तोला कपड़छन कर ३ छटाक मगरमच्छ की चर्बी में पिघला कर मलिए और चेहरे पर लेप करिए। १ घंटे बाद चने के बेसन से ख़ूब ज़ोर से उबटन करिए, रात को रोग़न बादाम लगाइए। १ महीने में झुर्रियाँ दूर हो जायँगी।

११—नाज़ा दूध से यदि मुख, गर्दन और हाथ नित्य धोए जायँ, तो ये अंग पुष्ट मालूम और अति सुंदर एवं कोमल बन जाते हैं। मक्खन निकाला हुआ दूध भी यदि इसी या मुरग़ी के ख़ून में लाया जाय, तो उससे भी बहुत लाभ होता है।

मुख का ख़ुरदरापन—यदि मुख ख़ुरदरा है, तो उस दोष को दूर करने के लिये एक करना चाहिए कि पहले गर्म पानी और साबुन से धोना चाहिए। फिर क़ीमा लगाना और तब साबर के टुकड़े से रगड़ना चाहिए। इसके बाद साबुन का इस्तेमाल फिर नहीं करना चाहिए।

मुहासे—यह दाग़ नीला या लाल जन्म ही से होता और बहुत भद्दा प्रतीत होता है। कभी तो यह त्वचा से उभरा हुआ होता है और कभी मिला हुआ। इसका इलाज बिजली

व्यायाम-निषेध—ऊपर कहे हुए रोगों में और भोजन करने के पीछे एवं रात्रि में व्यायाम नहीं करना चाहिए।

धीरे-धीरे पैर उठाओ।

व्यायाम का प्रारंभ—व्यायाम का प्रारंभ धीरे-धीरे करना चाहिए। पहले दो-चार हफ़्ते वे थकेंगे, हर वक़्त हाथ-पैरों और पसलियों में दर्द रहेगा, परंतु दो या एक सप्ताह बराबर अभ्यास करने से फिर न थकान होगा, न पसलियां या हाथ पैर दुखेंगे। व्यायाम करने के पाँच-सात मिनिट बाद ही शरीर ऐसा हो जायगा, मानो कोई परिश्रम का काम ही नहीं किया है। फिर कोई बड़े परिश्रम का काम करने पर कभी भारी थकान भी न चढ़ेगी।

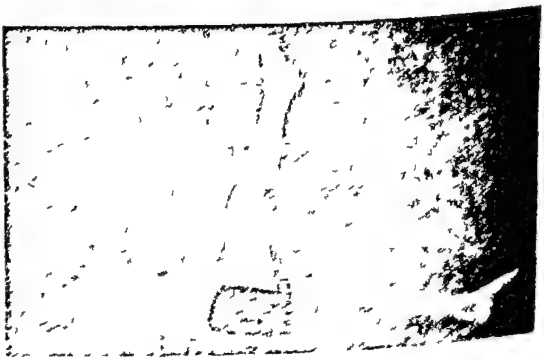

एक पैर सीधा उठा दो

विख्यात प्रोफ़ेसर राममूर्ति ने व्यायाम-संबंधी कुछ महत्त्व-पूर्ण उपदेश लिखे हैं, जो इस प्रकार हैं—

१—व्यायाम का अभ्यास धीरे-धीरे करना, एकदम बहुत अभ्यास नहीं करना चाहिए।

२—जो व्यायाम किया जाय, वह बहुत धीरे-धीरे अंगों पर पूरा-पूरा ज़ोर डालकर करना चाहिए। जल्दी और झटके के साथ व्यायाम करने से कोई लाभ नहीं होता।

३—व्यायाम को प्राणायाम के साथ मिलाकर करना चाहिए। इस प्रकार से श्वास को बाहर निकालो (श्वास नाक से ही छोड़ना और भरना चाहिए) और थोड़ा रोको, फिर धीरे-धीरे खूब श्वास रोको। छाती-पेट में श्वास भरकर तब व्यायाम करो। धीरे-धीरे एक क्रिया करो, और उसको एक ही श्वास में पूरी करने की कोशिश करो। यदि श्वास टूट जाय, तो कोई हर्ज नहीं। फिर भर लेना चाहिए, और धीरे-धीरे क्रिया करो

अध्याय छब्बीसवाँ

सौंदर्य-विज्ञान

प्रकरण १

सौंदर्य की उपाकल्पना

अंग-प्रत्यंग का पूर्ण विकास सुंदरता का एक व्यापक लक्षण माना जा सकता है। जो अंग जितना पुष्ट, सुगठित, लंबा, गोल, पतला, भारी, हल्का, सपाट या सुडौल होना चाहिए, उसमें वैसा ही हो तो वह अधिक, उससे अधिक सुंदर कहलाएगा। यह सौंदर्य के विषय में भारतीय धारणा इस प्रकार है

१ गात्र काले, चमकीले, सुगंधित, लंबे और पुष्ट हों।

२ गात्र स्निग्ध, लंबे, मांसल और सुगठित हों।

३ [illegible] हुआ और [illegible] हो।

४ [illegible] हो।

५ [illegible] हो।

६ [illegible] हो।

७ [illegible] हो।

८ [illegible] हो।

यह हुई बाह्य आकृति

१ [illegible] हो।

२ [illegible] हो।

३— [illegible] हो।

४ [illegible] हो।

५ [illegible] हो।

सर्वांग सुंदरी स्त्री

[illegible] के [illegible] में [illegible]।

चाहिए। क्रिया समाप्त होने पर श्वास छोड़ देना चाहिए, और फिर [illegible] चाहिए और फिर क्रिया करनी चाहिए। इस प्रकार व्यायाम करने से [illegible] पीड़ा [illegible] है। [illegible], पेशियाँ [illegible] होती हैं [illegible] बढ़ता है। [illegible] नहीं [illegible], और [illegible] बढ़ता है। व्यायाम से [illegible] बढ़ते हैं। [illegible] करने से [illegible] बढ़ते हैं। [illegible] व्यायाम [illegible] पीड़ा [illegible] बढ़ते हैं।

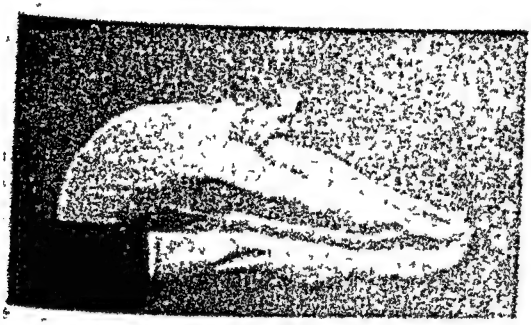

कमर झुकाओ और पैरों का [illegible]

[illegible] मन सब ओर से हटाकर व्यायाम में ही लगाना चाहिए और [illegible] चाहिए कि हम इस क्रिया से बराबर बलवान् हो रहे हैं और [illegible] बलवान् हो जायँगे। इन दुखों के लिए [illegible]

६—व्यायाम करने के पीछे थोड़ा-थोड़ा थककर पाँच-सात मिनट सुस्ताना चाहिए। [illegible] चाहिए। [illegible]—आहार [illegible], [illegible] मिस्र [illegible] दाने, [illegible] दो। [illegible] को थोड़े [illegible] में मिलाकर [illegible] देनी चाहिए। व्यायाम के

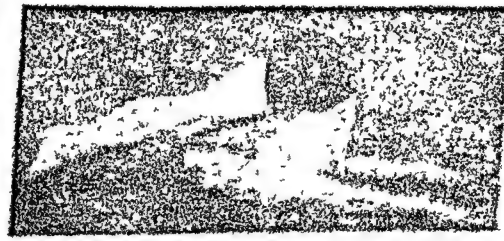

[illegible] के [illegible] और [illegible]

[illegible] बनानी चाहिए। व्यायाम के [illegible] और [illegible] एक [illegible] [illegible] चाहिए। [illegible] चाहिए। फिर [illegible] चाहिए। इस [illegible] [illegible] चाहिए। [illegible] चाहिए। [illegible] चाहिए। [illegible] चाहिए। [illegible] चाहिए। [illegible] चाहिए।

चोली इस प्रकार गठकर स्तनों पर बैठ जाय कि जिससे सीना तो न कसे, पर स्तनों का सर्वांग एक-सी रीति से कस जाय। न तो स्तन भिचें न भीतर तनिक भी लटके रहें। साथ ही साँस में ज़रा भी कष्ट न हो।

चोलियाँ नित्य दो बार बदली जानी चाहिए। और रात को बिल्कुल निकालकर कोई ढीला कुरता-जैसा वस्त्र पहनना चाहिए। चोली खोलकर धरती पर चित लेटकर १०-१५ मिनट ज़ोर-ज़ोर से साँस लेनी चाहिए। इसी प्रकार प्रातःकाल चोली पहनने से प्रथम भी करना चाहिए। चोली पहनने से प्रथम और पश्चात् गुनगुने पानी से स्तनों को धीरे-धीरे सेंकना और फिर उन्हें भली भाँति सुखा लेना चाहिए।

परिपूर्ण शरीर

अधिक दुबले, मोटे और भद्दे स्तन सुंदर नहीं कहे जा सकते। अमीर स्त्रियों के स्तन शीघ्र ढलक जाते हैं। इसका कारण यह है कि उन्हें न खुली वायु मिलती है और न व्यायाम। यह बात ख़ास तौर से ध्यान में रखने योग्य है कि छातियों पर स्वास्थ्य का सबसे प्रथम प्रभाव पड़ता है।

खेद है कि बाल-विवाह द्वारा हज़ारों युवक-युवतियों के जीवन का विकास ही नष्ट कर दिया जाता है। ऐसे लोगों को कभी जवानी आती ही नहीं। बचपन के बाद बुढ़ापा ही उन्हें आ दबाता है। उन नारियों पर यह शेर चरितार्थ होता है—

> जिक्र की गई, अज़ीमत-शीनी अयाँ हुई,
> दम मुसीबत का रह गए, ग़ईरे-ग़ायब है।

बहुत लोगों का ख़याल है कि बच्चा हो जाने पर, बच्चे के दूध पीने से स्तन अवश्य ही लटक जाते हैं, पर यह ख़याल बिल्कुल ग़लत है। यदि ठीक रीति से बालक को दूध पिलाया जाय, पिलाने के बाद स्तन को ठीक सम्हाल रखा जाय और उन्हें स्वच्छ वस्त्र से आच्छादित रखा जाय तो पूर्ण नीरोग रह सकते हैं, क्योंकि बच्चा होने या उसे दूध पिलाने के कारण स्तन कभी नहीं ढलकते। बच्चा को लगातार दूध न पिलाना चाहिए। और न स्तन को बच्चे के मुँह में ठूँस देना चाहिए। बल्कि बालक को बच्चे को लेकर और दूसरी से आराम से दूध पिलाने और उसके बाद तीसरे दूध पीने तक दूसरे स्तन को ढककर और उसे ही मलते हैं।

कमर और पेट

पतली, लचीली और मजबूत कमर स्त्री और पुरुषों की प्रशंसा के योग्य है। कविगणों की युक्ति-पूर्ण पतली कमर को हमें व्याख्या नहीं करनी, परंतु स्त्री का कटि-सौंदर्य वक्ष और नितंब के बीच में एक प्रभावशाली प्रभाव रखता है। विलायत में १२॥ और १२ इंच तक के व्यास वाली कमर रखने वाली युवतियाँ सुनी गई हैं, पर इतनी पतली कमर होना न आदर्श का चिह्न है, और न स्वास्थ्य का।

जो स्त्रियाँ अस्वाभाविक रीति से कमर को तंग करने की चेष्टाएँ करती हैं, वे अपनी आयु, स्वास्थ्य और जनन शक्ति तक को नष्ट कर देती हैं। विलायत में पहले कमर पतली करने की दुःखदायक प्रणालियाँ प्रचलित थीं, जो अब नष्ट हो गई हैं, और व्यायाम और आरोग्य-विषयक व्यवस्थाएँ ही अधिक पसंद की जाती हैं। फिर भी इस प्रकार के कार्सेट अब भी वहाँ बहुत प्रचलित हैं, जो कमर को पतला तथा छाती को उभरा हुआ दिखाते हैं। अकेले अमेरिका में १९०९ में ३ करोड़ के लगभग कार्सेट का बिक्री हो जाती है। इन कार्सेटों को अल्प वय की युवतियाँ पहनने लगती हैं, तो तब पेट की गहराई से उनका साँस लेना कठिन हो जाता और रक्त-वाहिनियाँ बंद हो जाती हैं। इसका उनके स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता क्योंकि आमाशय और यकृत के कार्यों में अंतर आ जाता है। अँतड़ियाँ नीचे की ओर आ जाती हैं, और गुर्दे तथा मूत्राशयों पर दबाव पड़ता तथा गर्भाशय भिच जाता है। सन्तान भी ठीक ठीक जन्म नहीं ले सकते।

जैसे बहुत पतली कमर और नुकीला हुआ पेट अच्छा नहीं होता, वैसे ही मोटी, थलथल और बड़ी तोंदवाला पेट भी बेहूदा चीज है। बड़े-बड़े सेठ लोग और सेठानियों का आप देखें, आपको उनपर तरस आयेगा कि मानो चर्बी बेचारों की कमर और पेट पर चढ़ी है।

बैठे-बैठे, निद्रा और बिछौने पड़ाव खाने तथा परिश्रम न करने से चर्बी बढ़ जाती है। जो बढ़ पेट के आस-पास जम जाती है और कमर तथा पेट बेतरह फूल जाता है। [illegible] को [illegible] का सूचक और सौभाग्य एवं अमीरी का चिह्न समझती हैं। परंतु [illegible] बढ़ने के कारण वही स्त्रियाँ सचमुच जान देती हैं — इस बात का बड़ा प्रयत्न करना है कि चर्बी का कोई भी अंश वृद्धि से अधिक बढ़कर बेडौल न होने पावे।

सर्व रमणीय शरीर

[illegible] के [illegible] को [illegible] बातों [illegible] मनोरंजन करते हैं, पर यह बहुत कम [illegible] है कि [illegible] सुंदरियों को सुंदर बनने के लिये अपनी जान गँवानी [illegible] है। [illegible] के [illegible] दिखाया जाता है। [illegible] जिस [illegible] है कि कुछ समय हुआ, एक [illegible] [illegible] कुछ [illegible] था। मृत्यु के समय उसकी आयु [illegible] वर्ष की

उसका भोजन भी न्यून कर दिया गया। पर फिर भी वह नापास रही। तब उसे दुबारा कई दिन उपवास और रात्रि-जागरण करना पड़ा। यह दो वर्ष पूर्व की बात है, आज वह म चुकी और दुःखी एक्ट्रेसों की श्रेणी में एक नंबर और बढ़ा दिया। जो भूखी रहकर अपने जीवन मशीनों की भेंट करती है।

यही महाशया फिर लिखती है कि एक बार मैं एक बनती हुई फिल्म को देख रही थी जो लड़की नायिका का काम कर रही थी, देखा, वह बड़ी नाजुक-बदन है। एक पार्ट में उसे दुहराया गया। नवीं बार मिस अथेर ज़मीन पर गिरकर बेहोश हो गई। जब उसे होश आकर बात की गई, तो कहा, मैं कई मास से कम खाती हूँ और मुझमें शक्ति नहीं रही है।

वियना की एक प्रसिद्ध एक्ट्रेस मैरेटिया की मृत्यु भी हाल में इसी तरह हुई कि वह भोजन खाते-खाते उसकी हालत इतनी गिर गई कि वह साधारण रोग से जीवन्मुक्त न हो सकी। एक और एक्ट्रेस २४ वर्ष की आयु में क्षय से मर गई, क्योंकि वह नाजुक-बदन बना चाहती थी।

वास्तव में मोटापा शरीर के लिये जेलखाना है। चलने-फिरने, श्वास लेने में भी उसे कष्ट होता है। ऐसे लोगों की रस-रक्त-वाहिनी तथा अन्य नाड़ियाँ ऐसी तेज हो जाती हैं कि जीवन-शक्ति का ठीक प्रवाह नहीं रहता। जठराग्नि मंद हो जाती है। वायु शुद्ध रीति से शरीर में पहुँच नहीं पाता। बहुधा फोड़े नस फट जाती और इतना रक्त निकल जाता है कि वे मर जाते हैं। साधारणतया मोटे आदमी अल्पजीवी होते हैं। ऐसे लोगों को अर्धांगघात, लकवा, बवासीर का बढ़ना, अतिसार, श्वास, मूर्छा आदि रोग हो जाते हैं। क्षुधा और तृषा पर इनका अधिकार नहीं होता। पुरुषों की मैथुन-शक्ति नष्ट हो जाती है और स्त्रियों को मैथुन का आनन्द ही नहीं आता। वे गर्भ भी धारण नहीं कर सकतीं।

ऐसे व्यक्तियों को इस प्रकार के उपाय काम में लाने चाहिए—

१—स्नान के अध्याय में जिन वाष्प-स्नानों का जिक्र है, उन्हें काम में लावें।

२—[illegible] और मिट्टी की चिकित्सा करें।

३—[illegible] दाल, कच्चे आटे और अधपकी रोटी, उबली हुई तरकारियाँ [illegible], दूध, दही, नवनीत, [illegible], मांस आदि न खायें।

४—[illegible] तेज, [illegible] चलें, या [illegible] करें, या और कोई व्यायाम करें, जो [illegible]।

५—[illegible] न करें, जैसा कि व्यायाम के अध्याय में बताया गया है। [illegible] करें। दूध पिलाना, [illegible] सोचना, [illegible] सूखे से [illegible] है।

६—[illegible] कि [illegible] आहार का [illegible] है। इसलिये भोजन को [illegible]।

७—[illegible] कम [illegible]।

खींचकर दिन में दो बार भोजन के बाद काम में लाना। मोटा करने और पुरुषार्थ उत्पन्न करने के लिये अनोखी चीज़ है।

३—बादाम रोगन की शरीर पर नित्य मालिश करना भी अत्युत्तम है।

गर्दन और कंधे

गर्दन और कंधों के जोड़ की प्रधानता यह है कि यह निगाह में न जँचे कि गर्दन कहाँ से समाप्त होती है, और कंधे कहाँ प्रारंभ होते हैं। यदि गर्दन बीच में ज़्यादा, ऊपरी तनिक मोटी हो, तो उसमें गहना पहनना उसकी सुंदरता को छिपाना है। पर गर्दन लंबी और कुछ अधिक पतली हो, तो मोतियों का एक लड़ पहनने से उसका यह दोष छिप जाता है। यदि गर्दन का ढंग ठीक न हो, तो गुलूबंद पहनना चाहिए। पर ध्यान में रखने की बात तो यह है कि गर्दन को भावों के आधार पर संचालन भी ग्रीवा के सौंदर्य को बहुत कुछ बढ़ा देता है। मुख और हाथों की भाव-भंगी के साथ गर्दन की भाव-भंगी एक जीवित सौंदर्य की सृष्टि करती है। यदि ईसाइयों की हड्डियाँ उभरी-सी हों, तो तनिक लटकता हुआ जड़ाऊ हार उस दोष को छिपा लेता है।

मुखों की कंधे पूरी हैं।

चाहिए। घरू कार्यों में पापड़ बेलना, मूसल का काम तथा दूध चलाना बाहुओं को सुघड़ बनाता है। हाथ का हारमोनियम भुजाओं में यथेष्ट सौंदर्य पैदा करता है।

मुट्ठी भराने और चपी कराने से भी भुजाएँ बहुत सुघड़ हो जाती हैं।

हाथों का सौंदर्य उनके नख और उँगलियों की सुकुमारता पर निर्भर है। जो पुरुष बुद्धिमान् होते हैं, उनके हाथ सदैव सुंदर होते हैं। सुंदर हाथ वह है, जो गुदगुदा और पतला हो। उँगलियाँ नाखून की ओर गावदुम होनी चाहिए।

बहुधा स्त्रियाँ उँगलियों में भारी-भारी बहुत-से छल्ले-अँगूठियाँ पहने रहती हैं। तथा काम-काज भी ऐसी लापरवाही से करती हैं, और सफाई का इतना कम ध्यान रखती हैं कि बहुधा उनके हाथ घृणास्पद, मैले, फटे हुए, कठोर दीख पड़ते हैं।

यह अत्यावश्यक है कि सदैव हाथों को कम-से-कम दिन में दो बार साबुन और गर्म पानी से अवश्य धोना चाहिए। साबुन हमेशा बढ़िया होना चाहिए। गर्म पानी से हाथ धोकर फिर ठंडे पानी से धोओ, और इसके बाद मलाई या क्रेस-क्रीम मल दो।

यदि हाथ फट गए हों, तो उन पर नीबू का रस और ग्लेसरीन सम भाग मिलाकर मल देना चाहिए।

कौन स्त्री या पुरुष नहीं चाहता कि उसके हाथ कमल से कोमल और सुंदर न हों, कौन स्त्री या पुरुष नहीं चाहता कि उसकी भुजाएँ गोल, सुडौल और आकर्षक न हों। मित्रों से आलिंगन जो हाथ मिलाने का रिवाज है, वह वैज्ञानिक है। यह हाथ ही है कि जो बदन-भर में फुरती पैदा कर देता है। जब वह अपने मित्र या प्रेमी के मुलायम और सुंदर हाथ से मिलता है।

कुछ साधारण क्रियाओं से, जो हम नीचे लिखते हैं, हम अपने हाथों को आश्चर्यजनक स्वास्थ्य और सुंदरता प्रदान कर सकते हैं।

सबसे पहली बात यह है कि हाथों में ब्रुश का संचालन एक तौर से होना चाहिए। इसके लिए सब बातों-बातों से एक हाथ के पृष्ठ को दूसरे हाथ की हथेली से हलका-हलका रगड़ें।

चित्र नं० १

(१) चित्र देखने से ऐसा मालूम होता है कि हाथ उँगलियों से मला जाता है, परंतु गौर से देखने से यह मालूम होता कि ऐसा नहीं है, हाथ का दाहिना भाग मला गया है, और हथेली से ही मलना चाहिए, इससे ब्रुश का हथेली से मलना ठीक होता है, और पहले का भाग चुस्त होते हैं।

(२) दूसरी क्रिया करने के लिए दाहिनी ओर अँगूठे के [illegible] से दूसरे हाथ को [illegible]

(६) दोनो हाथो को मिलाइए, और जैसे पहलवान किया करते हैं, पहले हथेलियों को आपस में मिलाकर हाथ को धीरे-धीरे सरकाते हुए उलटी तरफ ले जाइए, फिर उधर से मलते हुए इधर ले आइए, इस प्रकार दोनो हाथों को आपस में बारी-बारी से ऊपर नीचे से मलिए।

(७) फिर पंजों को एक दूसरे से मिलाकर ज़रा ज़ोर से दबाइए, इससे हाथ सुडौल होंगे।

चित्र नं० ६

(८) अब कलाई की कसरत कीजिए। एक हाथ से दूसरे हाथ की कलाई को बिना मोड़े पीछे को जहाँ तक मोड़ सकते हैं, मोड़िए। फिर उस हाथ को जिससे मोड़ रहे हैं, दूसरे हाथ से नीचे की तरफ मोड़िए। इससे कलाई दृढ़, स्वस्थ व सुंदर होगी।

(९) कलाई की एक और कसरत है। दोनों हाथों को पसलियों के पास लगाकर हाथों को सामने को सीधा मोड़ लीजिए। फिर मुट्ठियों को ज़ोर से बंद करके कलाइयों को अंदर और बाहर को जितना मोड़ सकते हैं मोड़िए।

चित्र नं० ७

चित्र नं० ८

(१०) हाथ में जो कलम पकड़ने से कंपन होता है, उसको हटाने का एक उत्तम उपाय यह है कि मुट्ठी बंद करके कलाई को अंदर को मोड़कर और फिर बाहर को फेंककर एकदम हाथ को पूरा खोल दिया जाय।

(११) [illegible] कलाई के अतिरिक्त भुजाओं की कई कसरतें हैं। मुगदर से भुजाओं की कई कसरतें होती हैं, [illegible] हाथ भी हो सकता है। हाथों को [illegible] फैलाना और धीरे-धीरे सिकोड़ना, कोनी के [illegible] से [illegible] को [illegible] करना व मोड़ना।

(१२) [illegible] हाथ से भुजाओं व कलाई का [illegible] तरफ फेंकने का [illegible] भुजाओं को सुंदर, [illegible] व सुदृढ़ बनाता है।

[illegible] यदि [illegible] मिनट की जाय, तो हमारे [illegible] भुजाओं को [illegible], सुंदर, सुदृढ़ व सुडौल बनाये, जिससे भुजा में सौंदर्य व [illegible] [illegible] हो। [illegible] में [illegible] भुजाओं में [illegible], और इस [illegible]

प्रकरण ७

पैर

साधारणतया पुरुष का पैर ९ से ११ इंच तक और स्त्री का ८ से ९ इंच तक लंबा होता है। सुंदर पैर वह है जिसकी उँगलियाँ सुडौल, कोमल और मिली हुई सीधी हों, तथा समूचा पैर मांसल और गठीला हो।

यद्यपि छोटे पैर पसंद किए जाते हैं, परंतु चीन की भाँति छोटे बनाने की धुन में पैरों का बनावट ही न बदल जानी चाहिए। ऊँची एड़ी और तंग पंजों के जूते भी पैरों की बनावट बिगाड़ते हैं। पैर पर समूचे शरीर का वजन रहता है, और उसकी बनावट कुछ धनुषाकार है। बीच का कोमल तलुआ ऊपर उठा रहता है, तथा सारा भार पंजों और एड़ी पर पड़ता है। जो जूते ठीक इसी सिद्धांत पर बनाए जाते हैं, वे ही पैर को आराम देते हैं, और पैरों के सौंदर्य को भी नहीं प्रभावित करते।

सुंदर कूल्हे, पिंडलियाँ और जाँघें।

गहने

गहने हमेशा ही सुंदरता के लिये पहने जाते हैं। पर पैरों में गहने पहनने से क्या लाभ होता है, हम यह नहीं समझ सके, बल्कि गहनों से पैर गंदे, छोटे, सख्त और कुरूप हो जाते हैं।

पैरों को सुंदर करना

[illegible]

पैर में पसीना

जिन लोगों के पैर में बहुत अधिक पसीना आवे, उन्हें ऐसा करना चाहिए कि पहले पैर को गर्म पानी में फिर एकदम ठंडे पानी में डालो। इसके बाद बाहर निकालकर सुखा लो, और परस्पर खूब रगड़ो, जिससे गर्मी पैदा हो जाय। यदि पैर बहुत ही नाजुक हो गए हों, तो उन पर थोड़ी भुनी फिटकरी मली जा सकती है। ऐसे व्यक्तियों को जूता हलका और ढीला पहनना चाहिए तथा मोज़ों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

कूल्हे और टाँगे

[illegible] टाँग

गर्भी टाँग

[illegible] स्त्रियों के पुरुषों की अपेक्षा बड़े होते हैं। उसका कारण [illegible] है। [illegible] स्त्रियों की [illegible] सुंदर [illegible] होती है। जिन स्त्रियों के कूल्हे भारी होते हैं, वे [illegible] होती हैं। यह भाग का सौंदर्य है।

[illegible] टाँगों का सौंदर्य बहुत अंश में चाल पर निर्भर है। यों तो [illegible] रहता है, [illegible] चलने से टाँगों की आकृति [illegible] हो जाती है। [illegible] स्त्रियों की [illegible] के बहुत [illegible] [illegible] टाँगों का सुंदरता भाग जाती है।

प्रकरण ८

चमड़ी की रंगत

चमड़ी की बनावट के विषय में पिछले अध्याय में बहुत कुछ बताया जा चुका है। यह भी हम बता चुके हैं कि शरीर की रंगत ऊपरी त्वचा पर होती है। चमड़ी उज्ज्वल, स्वच्छ, कोमल, लचीली और चिकनी होनी चाहिए। रंग का अंतर चमड़ी में बहुधा देश-काल के अनुसार पड़ जाता है। गर्मी और धूप से चमड़ी काली और रूखी पड़ जाती है। मैली रखने और तेल-दूषों का शुद्ध न करने से चमड़ी खुरखुरी और फोड़े-फुंसी-युक्त हो जाती है। चमड़ी को ठीक-ठीक रखा रखने से वह सुंदर रहती है। यह आवश्यक नहीं कि सारा चमड़ी ही सुंदर होती है। यदि ठीक-ठीक हिफाजत की जाय, तो श्यामली रंग की चमड़ी भी बहुत सुंदर दिखाई होती है।

बच्चे के जन्म लेने के बाद चमड़ी कोमल, नीरोग और सुंदर होती है। यदि उसी समय से उसकी रक्षा की जाय, तो चमड़ी उज्ज्वल और सुंदर रह सकती है। यह समझना भूल है कि चमड़ी की रंगत को बदलना असंभव है। रंगत तो बचपन में सभी की बहुत सुंदर होती है। आवश्यकता उसकी रक्षा करने की है। यदि आपकी चेष्टा और अभिलाषा सुंदर चमड़ी के सौंदर्य की वृद्धि की ओर रहे, तो आप निश्चय ही अपने वर्ण की चमड़ी की रंगत बदल सकते हैं।

भोजन का रंगत पर प्रभाव

[illegible] आपको यह जानना चाहिए कि भोजन का चमड़ी पर बड़ा सुंदर प्रभाव पड़ता है। [illegible] करने से, उसका रस पीने से, चेहरे का लाली बढ़ती है। प्रायः [illegible] चमकदार और सुंदर लाल रंग प्रदान करते हैं। ये फल [illegible] में बहुत सहायता करते हैं। इस कारण इनका प्रभाव रक्त को [illegible] करता है।

[illegible] में, प्रातःकाल भोजन से कुछ पूर्व पीने से चेहरे को [illegible] करने में बहुत सहायता देता है। इससे भी रक्त और पाचन-यंत्र को बहुत [illegible] है।

[illegible] अंगूर, [illegible] विशेषतः, [illegible] ये सब [illegible] प्रकार का [illegible] करते हैं। [illegible] करते हैं। [illegible] जैसे [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] आदि [illegible] करते हैं। इससे [illegible] का [illegible] होता है।

हम पीछे बता आए हैं कि चमड़ी की बाहरी पर्त के नीचे एक तरल पदार्थ होता है, जहाँ रस और रुधिर-वाहिनी नालियाँ भी होती हैं। उसी का रंगीन रक्त बाहरी चमड़ी से चमकता है। यह बाहरी पर्त गालों, रानों और कोख में सबसे अधिक पतला होता है। उँगली और तलुओं पर सबसे मोटा होता है। जब, चाहे भी जिस कारण से, उस पर्त में गर्द-गुबार, मैल और काई दूषित पदार्थ जम जाता है, तभी उसमें यह दोष आ जाता है, और शरीर अपनी चमक-दमक खो देता है।

पाण्डुरोग में यद्यपि यह पर्त साफ होती है, परन्तु रक्त की कमी के कारण चमड़ी फीकी-सी और निर्जीव-सी हो जाती है।

चेहरे की आकृति चाहे भी कैसी अच्छी क्यों न हो, यदि खाल फीकी, फोड़े-फुंसी युक्त, धब्बे-सहित और झुर्रियों पड़ी हुई है, तो चेहरे का सौंदर्य बहुत कुछ खराब प्रतीत होता है।

ताजा खुली वायु का प्रभाव रक्त के भ्रमण पर काफी पड़ता है। यदि स्त्रियाँ और बच्चे अधिकतर वायु में प्रातःकाल को ताजा वायु में भ्रमण करने का अभ्यास डाल लें, तो उनके चेहरे सुंदर और ताजा हो जायँ। जो स्त्रियाँ बहुधा रात को बंद कमरों में मुँह ढाँपकर सोती हैं, उनके रंग फीके पड़ जाते हैं, और उनकी चमड़ी पर झुर्रियाँ हो जाती हैं। खुली हवादार जगह में सोना और दिन-में-कम घंटों को सोने के समय काम में लाना चाहिए। यदि संभव हो, तो नदियों में तैरने और गर्मियों में खुली छत पर बिलकुल नंगा कुछ समय चुपचाप पड़ा रहना चाहिए।

प्रतिदिन स्वच्छ, ताजा पानी में स्नान करना भी चमड़ी को अत्यंत शुद्ध रखता है। स्वच्छ और निर्मल शुद्ध रंग का रहस्य यह है कि रोम-छिद्रों का कार्य होता रहे। साधारण तया यदि शरीर में से आधा पसीना निकालने दिया जाय, तो लगभग ½ सेर पसीना निकलता है, जो कि बहुत से हानिकारक जन्तुओं और विषों को शरीर से बाहर ले जाता है। इस पसीने के निकलने के लाभ का उत्तम साधन है—स्नान, वायु-सेवन और व्यायाम।

चबाए खाना निगलने, पहला भोजन बिना पचे फिर भोजन करने आदि से पैदा होती है।

२ यकृत (जिगर) का काम सुस्त होने से, जो मिर्च-मसाले, अचार, चटनी, सिरका, शराब, चरस आदि के सेवन से होता है।

३—फेफड़ों की तंगी और कमज़ोरी से, जो तंग मकान में सोने, ख़राब हवा में साँस लेने आदि से होता है।

४—स्नान न करने, पसीने की कमी और चमड़ी को अशुद्ध रखने से। क्रोध, शोक, भय, रंज करने, दिन में सोने, चिंता करने आदि मानसिक विकारों से तथा बहुत मैथुन या विषम आहार करने से।

अब हम यहाँ रंगत उज्ज्वल करने तथा चमड़ी को सुंदर करने के उपाय लिखते हैं—

१—यदि रक्त की कमी के कारण चमड़ी की रंगत फीकी हो, तो किसी वैद्य से उत्तम लौह भस्म लेकर उसी की सम्मति से इस्तेमाल करनी चाहिए। ऐसी अवस्था में हम ये प्रयोग लिखते हैं—

नवायस मधुर ४ रत्ती दिन में दो बार गिलोय के स्वरस के साथ साथ प्रातः शहद में मिलाकर खाएँ। केवल दूध-फल अधिक खाय।

एक विलायती दवा पशुओं के रक्त के लाल कणों को सुखाकर बनाई जाती है। जिसे हैमोग्लोबिन (Hemoeglobin) कहते हैं। यह रक्त को बहुत शीघ्र लाल बनाती है।

२—यदि रक्त में किसी प्रकार का विकार हो गया है, तो शुद्ध आँवलासार गंधक भी किसी भी वैद्य के यहाँ मिल सकता है, २ रत्ती १ मासा गुड़ में लपेटकर खाना चाहिए। १ सप्ताह खाकर फिर १ सप्ताह छोड़ देना और तब फिर एक सप्ताह सेवन करना चाहिए। इससे चाहे जैसा रक्त-विकार हो, दूर हो जायगा।

३—यदि स्वप्न अधिक हों, तो २ तोला चना दूध में भिगोकर नित्य प्रातःकाल खाना चाहिए। अंगूर दूध खाना चाहिए। व्यायाम, हास्य, विनोद, गाना आदि करना चाहिए।

४—[illegible] ([illegible]) १ आउंस, [illegible] १ आउंस अर्क गुलाब १ छटाक मिलाकर मुँह [illegible] से चेहरे पर [illegible] और लाली आयेगी।

[illegible] ३ [illegible], [illegible] १ भाग, सोडा बाइकार्बोनेट दो भाग [illegible] पाउडर १ भाग। [illegible] मुँह पर [illegible]। फिर [illegible] पानी से धो दें।

५—यदि मुँह में [illegible] हो गया हो, तो उसकी स्याही को दूर करने के लिए [illegible], [illegible] [illegible] मुँह, गर्दन, हाथ आदि पर मलें।

६—[illegible] एक [illegible] प्रातः [illegible] उत्तम स्नान के [illegible]

[illegible] दूध [illegible] से चमड़ी को नरम बनाता है।

परीक्षा करके इनका स्वास्थ्य बड़ा अच्छा बतलाया था, और इनके १०-२० वर्ष और भी जी सकने की आशा दिलाई थी। यह महाशय जीवन-भर अत्यंत सादगी से रहे, किंतु दुर्भाग्य-वश इन्हें एक वर्ष-भर के लिये राजमहल में रहना पड़ा; और जीवन-भर शाकाहारी रहते हुए भी वहाँ जाकर इन्हें मद्य-मांस का सेवन करना पड़ा। अंत में इसी राजसी खाद ने उनका अंत भी कर दिया। हेनरी फोर्ड के मतानुसार दीर्घायु होने के लिये चाय, चुरुट, काफी, तमाकू, मद्य-मांस का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिए। प्रसिद्ध वैज्ञानिक एडिसन के पितामह इसी सादगी की बदौलत १०२ वर्ष जिए, और उनके पुत्र अर्थात् एडिसन के दादा १०५ वर्ष। एडिसन के पिता सात भाई थे। इनमें से चार अस्सी-अस्सी वर्ष की उम्र में मरे, और तीन ने सौ-सौ वर्ष की अवस्था पाई। अब स्वतः एडिसन भी इसी सादगी की बदौलत ८७ वर्ष की अवस्था में मरे हैं। हेनरी फोर्ड एवं एडिसन की ही तरह प्रसिद्ध वनस्पति-शास्त्रज्ञ बर्बंक भी दीर्घायु के लिये चाय, काफी और धूम्रपान के कट्टर शत्रु हो रहे हैं। इनके मतानुसार मनुष्य सादगी से १२५ वर्ष अच्छी तरह जी सकता है।

लंदन की प्रसिद्ध लाल इंस्टीट्यूट के उत्पादक सर रेनाल्ड राम का कहना है कि आज से अस्सी वर्ष पूर्व लंदन में मनुष्य की आयु-मर्यादा ३७ वर्ष सात महीने थी, और स्त्रियों की ३८ वर्ष ७ महीने। किंतु अब वहाँ की आयु का औसत ५३ वर्ष ६ महीने है और स्त्रियों का ५९ वर्ष। अर्थात् इन अस्सी वर्षों में मनुष्य की आयु विविध आविष्कारों के कारण साल वर्ष बढ़ गई है। इस पर पास्टर इंस्टीट्यूट के एक शास्त्रज्ञ कहते हैं कि विविध रोग-नाशक उपायों की योजना से सौ वर्ष बाद हम अच्छी तरह डेढ़ सौ वर्ष आयु पा सकेंगे। एक अमेरिकन डाक्टर तो प्रसन्न होने की आशा बाँध रहे हैं, क्योंकि जब दाँतों से सौ वर्ष जी सकता है, तो आँतों को उतने वर्ष से ही क्यों मर जाना है? इस प्रश्न के हल हो जाने पर मनुष्य की १५० वर्ष आयु हो सकती है। क्योंकि जहाँ आजकल स्वास्थ्य के लिये सरकार को प्रति १२०००० तोड़ आयु प्रति मनुष्य एक पेनी के हिसाब खर्च करना पड़ता है, वहाँ यदि वह अस्सी-अस्सी हजार पौंड खर्च करने लगे, जो कि कोई बहुत बड़ी रकम नहीं है, तो अवश्य जनता की आयु-मर्यादा बढ़ सकती है।

[illegible] ने एक [illegible] ने अपना १२२ वर्ष का जन्मदिन मनाया है। [illegible] और [illegible] है। [illegible] ने [illegible] है, और [illegible] गुरुकुल का [illegible]

उपयुक्त भोजनों का ही अभाव नहीं है, जिससे अविवाहितों की अधिक मृत्यु होती है, बल्कि उन्हें एक प्रकार से जीवन की इच्छा नहीं रहती, इसलिये वे बहुत साधारण दुःख पड़ने पर ही मर जाते हैं।

पिता होने के आवश्यक भाव को बिना दिमाग में हलचल पहुँचाए कोई भी व्यक्ति नहीं रख सकता, क्योंकि दिमाग को स्वस्थ रखने के लिये कुछ प्रतिबंध और दायित्व की आवश्यकता है। जिन लोगों पर कुछ भी दायित्व नहीं होता, उनका मस्तिष्क उदासीन अथवा उत्साह-रहित हो जाता है और कभी-कभी वे इसी कारण पर मर मिटते हैं कि उन्हें जीवन में कोई आनंद नहीं मिलता।

पुरुषों के बाद स्त्रियों के संबंध में डॉक्टर फिस्क कहते हैं कि अविवाहिता स्त्रियाँ ४५ वर्ष की अवस्था तक विवाहित स्त्रियों की अपेक्षा अधिक जीवित रहती हैं, परंतु इसके बाद विवाहित स्त्रियों की मृत्यु-संख्या कम हो जाती है। परंतु यह कभी भी अधिक नहीं है।

इंग्लैंड में एक बड़े भारी साहित्य-सेवी हैं। उनका नाम है मि० फ्रेडरिक हैरीसन। उनकी ३०वीं वर्ष पूर्ण हुआ है। वह अभी तक पूर्ण हृष्ट-पुष्ट एवं स्वस्थ हैं। उन्होंने दीर्घ जीवन के महत्त्व-पूर्ण ५ नियम बनाए हैं। वे इस प्रकार हैं—

१—सब प्रकार के नशे का सर्वथा त्याग। २—सदा थोड़ी भूख रखकर भोजन करना। ३—प्रतिदिन कम-से-कम २ घंटे भ्रमण। ४—प्रतिदिन ८ घंटे अवश्य सोना। ५—जो कुछ प्राप्त हो, उसी में संतुष्ट रहना।

उपर्युक्त नियम प्रत्येक सरल और हर किसी से बन सकने योग्य हैं।

इंग्लैंड के प्रसिद्ध डा० ऐडम M. D., L. R. C. P., M. R. C. S., L. M. लिखते हैं—

"यह बात लोग नहीं जानते कि पेशों का आयु पर भारी प्रभाव पड़ता है। दीर्घायु के लिये सादा रहन, नियमित व्यायाम और निश्चिंतता की बहुत आवश्यकता है। जिन व्यक्तियों को यह पता है कि उन्हें खूब खुली हवा और प्रकाश में रहना पड़ता है, और जो शारीरिक परिश्रम को खूब कर सकते हैं, जहाँ सोचने-विचारने का दिमागी काम बिल्कुल नहीं होता, वे दीर्घायु होते हैं। हमने नीचे लिखे परीक्षण किए हैं—

१००	खानसामे	में	४२	ने	७०	वर्ष की	आयु पाई।
,,	किसानों	,,	४०	,,	,,	,,	,,
,,	थानेदारों	,,	३८	,,	,,	,,	,,
,,	वैद्यों	,,	३३	,,	,,	,,	,,
,,	[illegible]	,,	३१	,,	,,	,,	,,
,,	चित्रकारों	,,	३८	,,	,,	,,	,,
,,	अध्यापकों	,,	२३	,,	,,	,,	,,
,,	लिखनेवालों	,,	२४	,,	,,	,,	,,

प्रकरण २

दीर्घायु होने की रीतियाँ

दीर्घायु होने के लिये प्राचीन ऋषियों ने रसायन-विधान का वर्णन किया है। रसायन-विधान दो प्रकार का है—एक कुटी प्रावेशिक और दूसरा वातातपिक। एक निर्जन स्थान में बैठकर सब प्रकार के आहार-विहार को संयमित करके औषधि का सेवन करे। और दूसरी रीति यह है कि दूध, घृत, दूध और आहार-विहारों का विशेष परहेज रक्खे। बिना काम-धंधा, रोजगार करते रहते हुए भी साधारण औषधियों के समान रसायन का सेवन करे।

एकान्त रहकर औषधि-सेवन करने की रीति को "कुटी प्रावेशिक विधि" कहते हैं। और इसे अनुसार फल की प्राप्ति होती है। इसलिये इसे मुख्य विधि कहते हैं। अर्थात् रात्रि में जिस औषधि का सेवन करना है, वह जहाँ सामने से हवा न आता हो, ऐसे मकान पर वायु-रहित मकान में रहकर औषधि का सेवन करे। जब तक औषधि का सेवन करता रहे, तब तक कभी भूलकर भी मकान से बाहर न निकले, जब तक उस मकान में रहता हो, उसके भोजन के लिये पहले से ही सब सामग्री इकट्ठी करके रख लेना चाहिए। मकान उस दिशा का और दरवाजे वाला, और जिसके अंदर चारों ओर किले का तरह दिखाई दे, वह बहुत उत्तम है। उसमें धूप-धुआँ भी न आवे, ऐसा प्रबंध होना चाहिए। मकान में प्रवेश करने के बाद उसमें हवा आदि न आवे, न उसमें दूसरे पुरुषों का [illegible] हो, इसका उसके दरवाजे, खिड़की आदि बंद रखने चाहिए। परन्तु मकान का [illegible] में उसका हवा न लगता हो, इसलिये प्रयुक्त हवा बाहर निकलने [illegible] प्रबंध, ऐसा करना चाहिए। मकान में प्रवेश करने से पहले उसे [illegible] कर लेना चाहिए। और अपनी सहायता के लिये अच्छे अनुभवी वैद्य [illegible] औषधि का प्रयोग करना हो, रखना चाहिए।

[illegible] हो, तो अपनी इन्द्रियों को वश में रख सकता हो। अन्यथा

से बहुत दूर रहना चाहिए। कोई यह कहते हैं कि पौष्टिक खूराक खाने से दीर्घायु होती है। और कोई यह कहते हैं कि साधुवृत्ति रखने से, जो वनस्पति का आहार करते हैं, और सदा धर्म में रहकर ईश्वर का ध्यान किया करते हैं, वही अधिक-से-अधिक जीवित रह सकते हैं। भारत के ऋषि-मुनि और योरप के प्लेटो-सोलन, सोक्रेटीस आदि तत्त्वदर्शी उसी प्रकार का जीवन व्यतीत करते थे, और इसी से वे दीर्घायु हुए।

आजकल शताब्दी में सादगी का बात करना अपराध है। लोग हर तरह कष्ट सहकर भी कोट, टाई, पतलून और कपड़ों पर कपड़े पहनते हैं। नाना प्रकार के असाधारण भोजन करना और तकलीफ में सराबोर रहना अपनी शान समझते हैं। परंतु एक समय था कि मनुष्य ने अत्यंत सादगी का जीवन व्यतीत करते हुए सैकड़ों, हजारों वर्ष तक अपनी आयु बढ़ा ली थी। उनके पर्वत के समान शरीर, प्रखरबुद्धि और सिंह के पराक्रम थे। महान विषयों पर उन्होंने अमर विवेचनाएँ प्रकट की हैं।

अब हम आयुर्वेद के प्रामाणिक और सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ सुश्रुत के कुछ प्रयोग स्नेहन-विधि पर पाठकों के लाभार्थ यहाँ लिखते हैं—

"कुछ जल, दूध, शहद, घी इन चारों के पृथक्-पृथक् एक-एक करके चार प्रयोग हैं। दो मिलाकर छः हैं। तीन-तीन मिलाकर चार हैं। चारों को मिलाकर एक है। इस तरह सब मिलाकर १५ प्रयोग हैं। एकवाले जैसे (१) जल, (२) दूध, (३) शहद, (४) घी। दोवाले (१) जल-दूध, (२) जल-शहद, (३) जल-घी, (४) दूध-घी, (५) दूध-शहद, (६) शहद-घी। तीनवाले (१) जल, दूध, शहद, (२) जल, दूध, घी, (३) जल, शहद, घी, (४) दूध, शहद, घी। चारवाला (१) जल, दूध, घी, शहद। इन १५ प्रयोगों में से किसी एक को अपने शरीर के मान प्रकृति के और दोषों के अनुकूल [illegible]

और औषधि के पच जाने पर शीतल जल से स्नान करे, और शाली चावल अथवा साठी चावल का भात दूध के साथ मिश्री मिलाकर खाय। इस तरह ६ महीने के प्रयोग से वर्ण, बल, कांति, मेधा उदय होती है। सुनी हुई बात कभी नहीं भूलती। १०० वर्ष की आयु हो जाती है।" (सु० अ० २८)

"कुष्ठ, पांडु तथा उदर-रोग में यही दवा २-२ तोला श्यामा गाय के मूत्र में मिलाकर सूर्योदय के समय पीना चाहिए। तीसरे पहर अलोने आँवले के यूष के साथ घी डालकर भात का पथ्य दे। १ मास के सेवन से रोगी की स्मृति और आयु की पूर्ण वृद्धि होती है।"

(सु० अ० २८)

"आमला का रस २ सेर, घी १ सेर, वायविडंग की मींगी १६ तोला, निशोत और बच ८-८ तोला, त्रिफला ५० तोला, सब का लुगदी पीसकर पकावे। सिद्ध होने पर शरीर शुद्ध करके सेवन करे। पचने पर दूध, घी और भात का पथ्य ले। इससे वमन, विरेचन और पसीना द्वारा कोई विकार पड़ते हैं। और आयु, बुद्धि, यौवन सबकी वृद्धि होती है। इस औषध से कोढ़, विषमज्वर, सूजा उन्माद, विष, भूत-ग्रह आदि रोग दूर होते हैं।"

(सु० अ० २०)

"घी को कूटकर इलिया बनावे और पीपल तथा शहद मिलाकर खाय, तो बुद्धि का विकास हो। शहद, आँवला और स्वर्ण-भस्म का सेवन करने से जीर्ण रोगी भी युवा हो।"

(सु० अ० २१)

ऊपर हम यहाँ नुस्खे का सानप्रयोग लिखते हैं, जो बहुत प्रसिद्ध है और जिसकी सत्य बातें बची हैं तथा जो अद्भुत और आश्चर्यजनक है।

मासी तक पूरे पन्द्रह पत्ते हो जाते हैं। फिर कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से चंद्रमा की कला के साथ एक-एक पत्ता क्षीण होने लगता है। और अमावस्या को केवल लता ही रह जाती है। इसीलिये इसका नाम सोमलता पड़ा है, क्योंकि सोम चन्द्रमा को कहते हैं।

सोम कई जाति का होता है। अंशुमान-नामक सोम में घी के समान सुगंध आती है। रजतप्रभ कंद की आकृति का होता है। मुंजवान में केले के आकार का कंद और लहसुन के समान पत्ते होते हैं। चन्द्रमा-नामक सोम स्वर्ण के समान चमकीला और जल में उत्पन्न होता है। गरुड़ और श्येनाह्व ये दोनों पीत वर्ण होते हैं। और साँप की केंचुली की भाँति वृक्ष के अग्र भाग पर लटके रहते हैं। और उसमें रंग-बिरंगे मंडल भी होते हैं। सब्बी प्रकार के सोम में पन्द्रह पत्ते होते हैं। इनमें दूध, कंद और लता होती है। परंतु पत्ता की आकृति अलग-अलग होती है।"

"यह सोम हिमालय, आबू, महादि महेंद्राचल, मलयागिरि, श्रीपर्वत, देवगिरि, देवसह, पारियात्र, विन्ध्याचल, सुह्य तालाब में, व्यास नदी के उत्तर के पर्वतों में तथा इस स्थान पर जहाँ पंजाब की पाँचों नदी सिंधु में गिरती है, वहाँ चन्द्रमा-नामक सोम उत्पन्न होता है। और उन्हीं के पास अंशुमान और मुंजवान सोम भी होता है। कश्मीर के उत्तर में मानसरोवर झील है, वहाँ गायत्री, त्रिष्टुभ, पंक्ति, जगती और गाकर तथा अन्य प्रकार के सोम भी उत्पन्न होते हैं।"

(सु० अ० ३०)

सुश्रुत वर्ग सोम के सिवा और भी वनस्पतियों का वर्णन करते हैं, जिनसे जरा-मृत्यु को दूर करने की शक्ति है। ये औषध इस प्रकार हैं—

१ – [illegible] जो पीले (कपिल) रंग के चित्र-विचित्र चकत्तों से युक्त साँप की आँख के समान [illegible] होता है, और पाँच दाल वाली होती है।

२ – [illegible] – बिना पत्ते वाली, [illegible] के समान पीली, जड़ में दो अंगुल मोटी, [illegible] आकार की [illegible] होता है। [illegible] की भी आकृति [illegible] है।

३ – [illegible] – इसमें दो पत्ते होते हैं, जो [illegible] में दो होते हैं। इसमें [illegible] होते हैं। [illegible] की आकृति [illegible] के समान होती है।

४ – [illegible] – [illegible] से दूध निकलता है। उस पर [illegible] होते हैं। [illegible] होता है।

५ – [illegible] – इसमें [illegible] होता है जिसकी आकृति [illegible] के समान होता है [illegible] के समान [illegible] होती है।

६ – [illegible] – [illegible] होती [illegible] होते हैं। [illegible] निकलता है।

"ये औषध जिनमें दूध हो, ८ तोले दूध पीये। जिनमें दूध न हो, जड़ हो, उनकी जड़ के उँगली बराबर तीन टुकड़े करके खाय। श्वेत कापोती को जड़-पत्तों सहित खाय। गोनसी, अजगंधी, कृष्ण कापोती इनके मुट्ठी-भर टुकड़े दूध में पकाकर छान ले, तब खाय। ब्रह्म-सुवर्चला का सेवन ७ दिन तक करे।"

"जो कोई इन औषधों का सेवन करेगा, वह महामेधावी, तरुण, सिंह के समान बली और अति सुंदर हो जायगा। उसकी आयु भी सैकड़ों वर्ष बढ़ जायगी, और उसे आकाश-गमन विद्या भी सिद्ध होगी।" (सु० अ० ३०)

"ये औषध जिनमें दूध हो, ८ तोले दूध पीने। जिनमें दूध न हो, जड़ हो, उनकी जड़ के उँगली बराबर तीन टुकड़े करके खाय। श्वेतकापोती को जड़-पत्तों सहित खाय। गोनसी, अनागसी, कृष्णकापोती इनके मुट्ठी-भर टुकड़े दूध में पकाकर छान ले, तब खाय। महा-सुवर्चला का सेवन ७ दिन तक करे।"

"जो कोई इन औषधों का सेवन करेगा, वह महामेधावी, तरुण, सिंह के समान बली और अति सुंदर हो जायगा। उसकी आयु भी सैकड़ों वर्ष बढ़ जायगी, और उसे आकाश-गमन विद्या भी सिद्ध होगी।" (सु० अ० ३०)

और पोस्ट के चपरासी, जिन्हें दिन-भर में ८-१० बार ६-६, ७-७ ऊँची मंज़िलों में ऐसी मुस्तैदी से तार-चिट्ठी बाँटनी पड़ती है कि यदि कुछ मिनटों की देरी हो जाय, तो भी रिपोर्ट होने का भय रहता है। लाचार वे अपनी तुच्छ तनख़्वाह के अनुसार ही अमीरों के महलों के पास नीचे सड़े-गले स्थानों में गुज़ार करते हैं। सड़ी-गली तरकारी और सड़े अन्न खाते हैं। बंबई में हमने आँखों से देखा है कि पूर्वी ज़िलों के कहार आदि जो वहाँ २०), २५) की नौकरी की लालसा में बर्तन माँजने आदि का काम करते हैं, २०-२५ आदमी मिलकर १०)-१५) की एक कोठरी किराए को ले लेते हैं। यह कोठरी इतनी छोटी होती है कि उसमें १० आदमी बराबर-बराबर भी नहीं सो सकते। निदान कुछ आदमी सोते रहते हैं, कुछ प्रतीक्षा में बाहर बैठे हुक्का पीते रहते हैं। आधा समय होने पर वे उन्हें जगाकर स्वयं सो जाते हैं।

स्त्रियाँ ग़रीब और ग़रीब, जो पर्दे में रहती हैं, सब भारी दुर्दशा में हैं। उन्हें धूप और स्वच्छ वायु स्वप्न में भी नहीं मिलती। बेचारी दुर्गंधित, अँधेरी कोठरी में सड़ती-मरती रहती हैं। स्त्रियों का यह निराश जन्म क़ैदी जीवन अत्यंत करुण और त्रासदायक है।

पुराने घिचपिच शहरों की तरह इस नवीन सुंदर शहर की बस्ती भी बहुत घिचपिच और अस्वास्थ्यकर है। स्वच्छ वायु और प्रकाश वहाँ के मकानों में प्रायः नहीं पहुँचता। इस नगर की बहुत-सी गलियाँ २ से ४ फ़ुट तक चौड़ी हैं। जिनके दोनों तरफ़ ४-५ मंज़िल मकान खड़े हैं, जिस पर भी इन गलियों में दोनों तरफ़ के मकानवाले कूड़ा-करकट फेंकते रहते हैं। नाली तक का पानी भी वहाँ फेंका जाता है। फिर कैसे इन नारकीय घरों में वह बहुत रह सकते हैं?

लोक अन्य सभी बड़े-बड़े नगरों की दशा भी लगभग के समान है। तमाम भारत में जो लोगों की अकाल मृत्यु होती है, उनका मुख्य कारण ग़रीबी, अज्ञानता, अंधविश्वास, हानिकर, अनैसर्गिक भोजन, उनमें सहानुभूति का अभाव तथा [illegible] है।

[illegible] है। इनके सिवा जो बच्चे ज़िंदा बच जाते हैं, उनमें बहुत-से बचपन ही से अंधे, लँगड़े, लूले, दुबले-पतले होते हैं। जिनके जीवन-सुख-प्राप्ति के योग्य एकाध अंग प्रायः भग्न होते हैं। ऐसे हज़ारों अपाहिजों की भीड़ बड़े-बड़े नगरों की सड़कों और पटरियों पर देखने को मिलती है। ऐसे मनुष्यों से क्या हम एक मज़बूत, स्वतंत्र, स्वावलंबी, सुखी और संपन्न प्रजा के उत्पन्न होने की आशा कर सकते हैं? वास्तव में सुख और उन्नति का मुख्य साधन आरोग्यता है।

बम्बई-जैसे दर्शनीय नगर में बच्चों की इतनी अधिक मृत्यु होने का कारण क्या है? सबसे बड़ा कारण मकानों का कमी है। जिन घरों में ये बच्चे जन्म लेते हैं, वे तंग अँधेरे, [illegible], शुद्ध वायु से हीन। उनमें कुछ तो ऐसे हैं, जहाँ कोई अपने पशु भी बाँधना न चाहे।

बम्बई नगर में सन् १९१३ में जीवित जन्मे हुए कुल बच्चों की संख्या २१७३३ थी, जिनमें १४४४२ बच्चे उन लोगों के थे, जिनका खाना-पीना, सोना सब एक ही कोठरी में होता है। अर्थात् जो मिलकर एक ही कोठरी में सदा गुज़ार करते हैं। इनमें से ११०८१ बच्चों की प्रथम वर्ष में मृत्यु हो गई। हिसाब से ज्ञात हुआ कि एक कोठरी में निवास करनेवालों के बच्चों की मृत्यु-संख्या का सैकड़ा ७३.७२, दो कोठरियों में रहनेवालों की ७३.१ और ३ कमरों वाले मकानवालों के बच्चों की मृत्यु-संख्या २३.८ है।

बच्चों की मृत्यु के मूल-कारण

(१) माता-पिता। (२) कुल-विवाह। (३) दरिद्रता। (४) [illegible]। (५) [illegible]। (६) स्वास्थ्य-संबंधी रहन-सहन का उल्लंघन। (७) [illegible]। (८) [illegible]। (९) [illegible]। (१०) [illegible]। (११) संतान-निग्रह का अभाव। (१२) [illegible]। (१३) शुद्ध दूध का न मिलना। (१४) [illegible] की कमी। (१५) [illegible] आदि।

नव-जात बच्चों की मृत्यु का कारण

भोजन के संबंध में और भी बेढ़ंगे बातें हैं। एक तो वे समय पर उत्तम ताजा भोजन करने के अभ्यासी नहीं। दूसरे, प्रायः मिठाइयों के बड़े शौकीन होते हैं, जो बहुधा गंदी, बासी और [illegible]-युक्त होती हैं। वे बहुधा अधिक खा ली जाती हैं। दावतों आदि में तो अस्वाभाविक भोजनों का पूरा भरमार रहती है।

पीने के पानी का मटकी मंडानी नहीं बदली जाती, और पानी छानना गृहस्थी की महा सनकी माना। छानने का कपड़ा न बदला जाता है, न धोया जाता है।

यह हुई रसोई की दशा। अब घर के बाहर की गली कूचों को देखिए। जहाँ एक [illegible] के लिए निकलना भी असह्य हो जाता है। गाँवों के गंदे मकान, बेहूदी गलियाँ, द्वार पर पूरे और [illegible] क्या ये साधारण बातें हैं? यही कारण है कि भारतवर्ष में मृत्यु [illegible] साथ रहती है।

पाखाने

[illegible] और [illegible] न पाखाना का [illegible] बहुत ही [illegible] होती है। [illegible] न [illegible] पाखाने होते हैं। वे अत्यन्त गंदे और अँधेरे होते हैं। सफाई का [illegible] बड़ा [illegible] होता। बाहर में [illegible] पर अत्यन्त गंदे और बदबूदार पाखाने हैं। [illegible] होते हैं, और उनका मोरिया में [illegible] चलते फिरते [illegible] पाखाने के साथ [illegible] होते हैं, जहाँ गंदा पानी [illegible] है। [illegible] साफ करता है। प्रायः मल-मूत्र और [illegible] मैला नालियों में बहा [illegible] है। [illegible] नालियाँ बड़ी गंदी, टूटी और [illegible] होती हैं। [illegible]

[illegible] रहता है। [illegible] कीचड़ के लिए [illegible] समय तक [illegible]। [illegible] नहीं होता। [illegible] बहुत दुःख [illegible]। नालियों का बहुत कम [illegible] है। [illegible] बनी [illegible] के [illegible] होते हैं, [illegible] प्रायः [illegible] बनाते हैं और [illegible] [illegible] करिया

खाद्य पदार्थ

चाहे भी किसी कस्बे या शहर में जाइए, खाद्य पदार्थों की कमी और उनका दूषित होना एक-सा पाया जायगा। लोग दुनियाँ के कारण सस्ती चीजें लेते हैं। दूकानदार खराब चीजें मिलाकर इन सस्ता करके वस्तु को बेचते हैं। सड़े-गले अन्नों की बिक्री की कोई भी रोक नहीं होता। न सड़ी-गली मिठाइयाँ और फलों की बिक्री का जुर्म समझा जाता है। इन्हाई स्वच्छता का प्रायः बिल्कुल ख्याल नहीं करते वे तंग और अँधेरी जगहों में मिठाइयाँ बनाते हैं, और खुले भद्दे ढंग से उन्हें दिन-भर खुली रखकर बेचते हैं, जिन पर हजारों मक्खियाँ भिनभिनाती और गंदगी तथा मल त्याग करती रहती है। दूध, खोआ, घी उत्तम और शुद्ध हो, इसकी जरा भी परवा नहीं की जाती, बल्कि वे गंदा, सड़ा और सस्ता घी, गुड़ मिली खराब खाँड़ और दही, आटा तथा मैदा काम में लाते हैं।

तरकारियाँ प्रायः रात की बासी और सड़ी-गली ली जाती हैं। वे सड़ी मिठाइयों को भी फेंकते नहीं, सस्ती करके बेच देते हैं। दूध, दही, घी तो शुद्ध मिलना संभव ही नहीं है। दूध में सड़ा पानी मिलाकर बेचना तो मानो साधारण-सी बात है। ये चीजें प्रायः ताजी भी नहीं होतीं। इनमें मरसी-मच्छर, जाल-कृमि पड़कर सड़ जाते हैं।

जब से वनस्पति घी का प्रचार हुआ है, तब से घी एक घृणास्पद वस्तु बन गया है। नीच लोग इसमें चर्बी दूध में मिलाकर जालसाजी करते हैं। बाजार में प्रायः चाय-पान बड़ा ही बेचा जाता है। इसका कहना का कोकोजम भी घरों के घर में घर कर गया है।

मिठाई और फलों की बढ़ी हुई बिक्री भी बहुत बढ़ गया है। पर इसके लिये यह गंदे और सड़े फल खाने में आए जाते हैं। और प्रायः बड़े खाने से हैजा होने का भय रहता है। [illegible] बहुत बड़ा है, दूध के रोगों की भरमार हो रही है। [illegible] ध्यान दिया ही है या नहीं।

बुखार

[illegible] और [illegible] भी [illegible] होते हैं। [illegible] नहीं है। [illegible] प्रायः [illegible] जाते हैं। [illegible] में बहुत ही [illegible] प्रभाव उत्पन्न करता है।

पदार्थ बेचनेवालों को लाइसेंस दिया जाय। उसकी फीस कुछ न हो, पर उनका नाम रजिस्टर्ड हो, और उन पर कमेटी का कंट्रोल हो।

होटल, ढाबे, रेस्टोरेंट और जल-पान के घर एवं खोंचेवालों में छूत, सफाई आदि के नियमों का पालन कड़ाई से कराया जाय। घटिया रोटी आदि का दूकानों पर भी देखा जाय कि शरीर लोगों को सस्ते मूल्य में खराब, रोग-पूर्ण वस्तु तो नहीं दी जा रही है।

२. जल का प्रबंध—यद्यपि जो जल म्युनिसिपैलिटियाँ नलों के द्वारा सप्लाई करती हैं, शुद्ध किया जाता है, तथापि विशेषज्ञों द्वारा उसकी जाँच होते रहना बहुत आवश्यक है कि वह पीने के ठीक योग्य है भी या नहीं। साथ ही नलों की मरम्मत और नवीनता भी उचित समय पर होना आवश्यक है।

नगर के बाजार और कुएँ भी जिनके जल का जनता उपयोग करती है, साफ पानी से साफ कराए जाया करें। नदियों से नगर के निकट पानी कुओं में खुदकर आया करे। रँगरेजों, धोबी, मछलियों का नहाना, बाजार और कुओं पर मोटरों से कपड़े धोने आदि का प्रतिबंध किया जाना चाहिए। तथा ऐसे स्थानों का गंदा करनेवालों को दंड दिया जाना चाहिए। जल का छना नगर में पर्याप्त समय मिल सकना चाहिए। और उस पर मीटर लगा रहना चाहिए।

३. सफाई की उन्नति—सफाई के कार्य आधुनिक वैज्ञानिक ढंग पर किए जाने चाहिए। और इसके लिए नगरवासियों का अधिकतम-अधिक सहयोग देना चाहिए। यदि मालियों की सफाई आदि, तो वे सहीज हों, कालू हों। पाखाना में फ्लेश सिस्टम होना चाहिए। मालियों और भंगियों के लिए ठीक तौर पर साफ रखने की व्यवस्था हो। चर्बी भंगी हटा दिए जायँ और मलमूत्र निर्दिष्ट स्थानों तक ले जाए जायँ। इनका मासिक वेतनों को वृद्धि देना चाहिए।

[illegible] सफाई का प्रबंध [illegible] होना चाहिए। सड़क पर [illegible]

बंबई	२७०००००)
बंगाल	२०००००००)
पंजाब	१४५००००)
बर्मा	१०५००००)
मध्यप्रदेश	१०५००००)
बिहार और उड़ीसा	१०००००००)
आसाम	३००००००)
सीमाप्रांत	२००००००)
दिल्लीप्रांत	५००००००)
मैसूर (बंगलौर के लिये)	४००००००)
(इंदौर रेजीडेंसी बाजार)	२०१०००)
बिलूचिस्तान (क्वेटा के लिये)	५००००)
कुर्ग (मडीरा के लिये)	२५०००)

कुल योग १३१०५०००)

१—इसके अतिरिक्त ४५ लाख रु० वार्षिक की रकम इस मद में खर्च करना सोचा गया है, जिसमें ३ लाख रु० की रकम संयुक्तप्रांत को दी गई है।

इसमें से ८ लाख रु० तथा खास तौर पर १० लाख रु० और अन्वेषण के कार्य में लगाए जायेंगे।

१९३१ में स्वास्थ्य-रक्षा का नवीन विभाग बना है, जिसमें सरकार ५ करोड़ के लगभग रकम खर्च कर चुकी है। इस विभाग में डिप्टी सेनीटरी कमिश्नर २१, प्रथम श्रेणी के ६५ और द्वितीय श्रेणी के देवल आफिसर ३२ हैं।

यह [illegible] सन् १९३२ से अमल में आई जा रही है।

सरकार को क्या करना चाहिए

से, दूसरे वर्षा का जल भली भाँति न बहने से। जो स्थान पथरीले और ऊँचे होते हैं, वहाँ दोनों ही सुभीते होते हैं पृथ्वी का जल भी नीचा होता और वर्षा का जल तुरंत ही बह जाता है। रेतीले स्थान भी नम नहीं होते। रेत पर से वर्षा का जल भली भाँति बह जाता है। सूर्य की किरणें रेत पर शीघ्र समाती हैं। चिकनी मिट्टी में जल बहुत प्रवेश करता है, इसलिये ऐसे स्थान प्रायः नम ही रहते हैं।

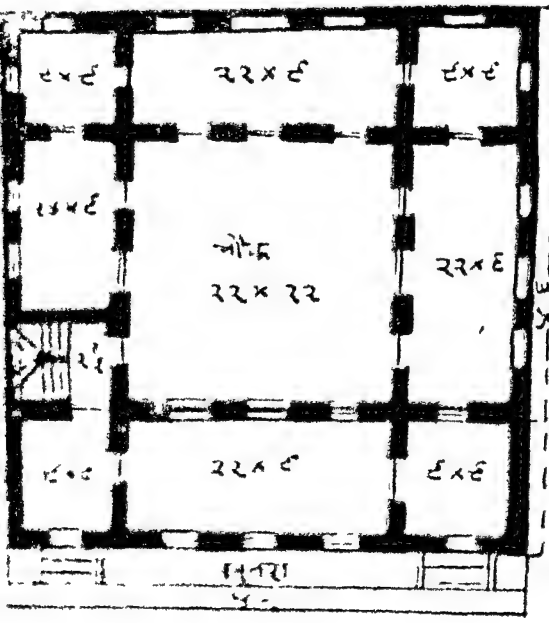

[illegible] की नीचे [illegible]

नीच स्थान सदैव ही नम होते हैं, क्योंकि वहाँ वर्षा का जल भरता ही रहता है, वह पानी ऊँचा भी होता है, इसलिये ऐसे स्थानों पर मकान नहीं बनाना चाहिए।

बहुधा शहरों में मकान बनाने के लिये स्वास्थ्य की अपेक्षा अन्य बातों का बहुत ध्यान रक्खा जाता है। कोई तो पड़ोस देखते हैं, और कोई रिसदहा और व्यापार के सुभीते देखते हैं। [illegible]

[illegible] मकान बनाने के बाद [illegible] जाता है। इससे पृथ्वी और वर्षा का [illegible] रहते हैं। यदि इस स्थान [illegible] इन स्थानों का नाश [illegible] और [illegible] बनी रहती [illegible] बाबू, [illegible] विचार [illegible] चाहिए।

[illegible] दूसरे के बाद [illegible] मकान [illegible]

चाहिए, जिससे प्रातःकाल से सूर्य [illegible]
धोने और कपड़े धोने-सुखाने के कमरे [illegible]
काफी धूप मिल सके। रोगियों के लिए [illegible]
सुखाने कमरे सदा गर्म रहने चाहिए।

कच्ची दीवारें नमी को [illegible]

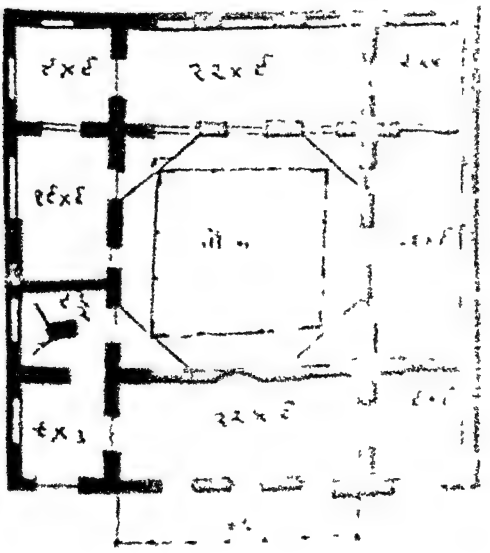

[illegible]

[illegible]

बम्बई के एक कारखाने ने हिन्दोस्तानी ढंग की एक टट्टी बनाई है, यह बहुत अच्छी बात है। एक [illegible] से सारा मैला बहकर नाली तक पहुँच जाता और पाखाने का [illegible] बहुत साफ रहता है।

यदि यह [illegible] कि टट्टियाँ तत्काल न साफ की जा सकें, तो फिर मैले पर राख

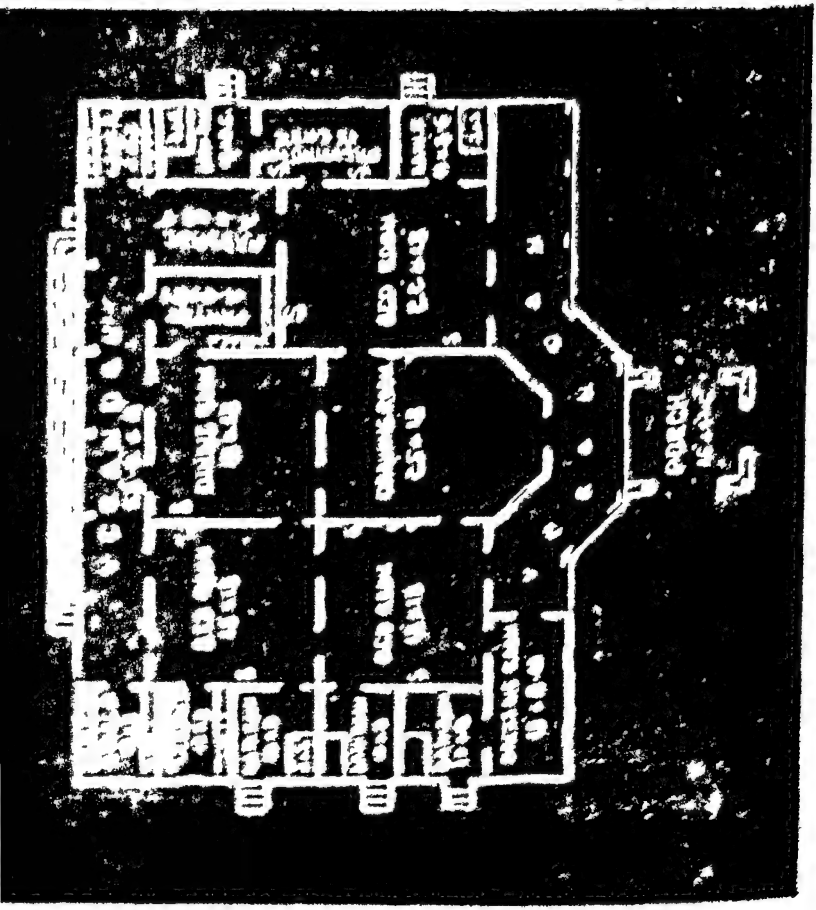

[illegible]

[illegible] के संबंध में लोगों की भिन्न-भिन्न रुचि है। पर यह बात आवश्यक है कि [illegible] कुर्सी, पर्दे, फर्नीचर आदि हों, वह यथासंभव कम और अत्यंत उत्तम होना

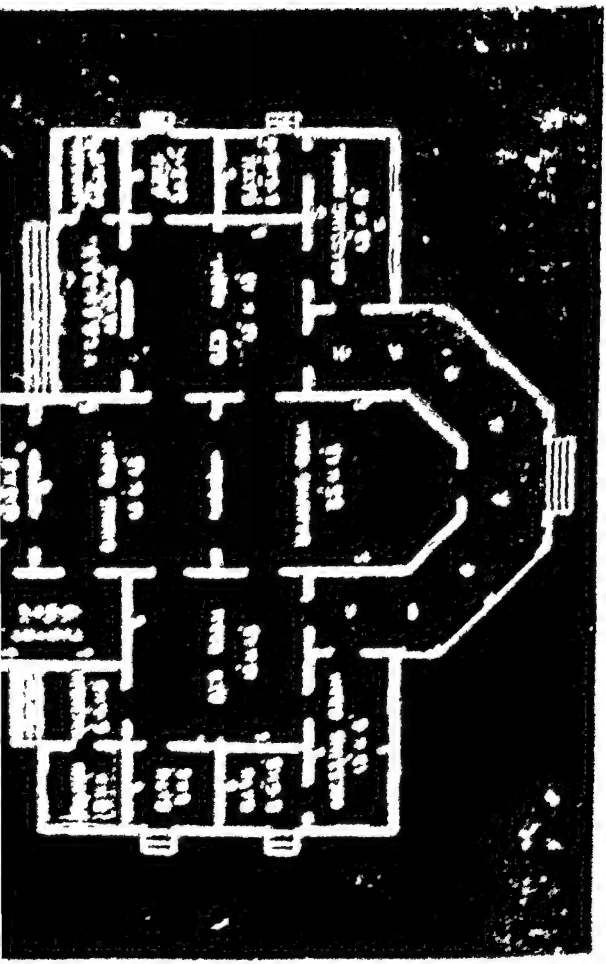

[illegible] की मानचित्र

फ़र्नीचर चमकदार पालिश किया हुआ हो। उसे साल में दो बार पालिश कराना चाहिए। वह गंदा और मैला न हो। टूटा-फूटा भी न हो। बरांडे में बेत की कुर्सियाँ, मूँढ़े आदि बहुत अच्छे होते हैं। सरकंडों के मूँढ़े भी बुरे नहीं। सीतलपाटी बहुत उपयो

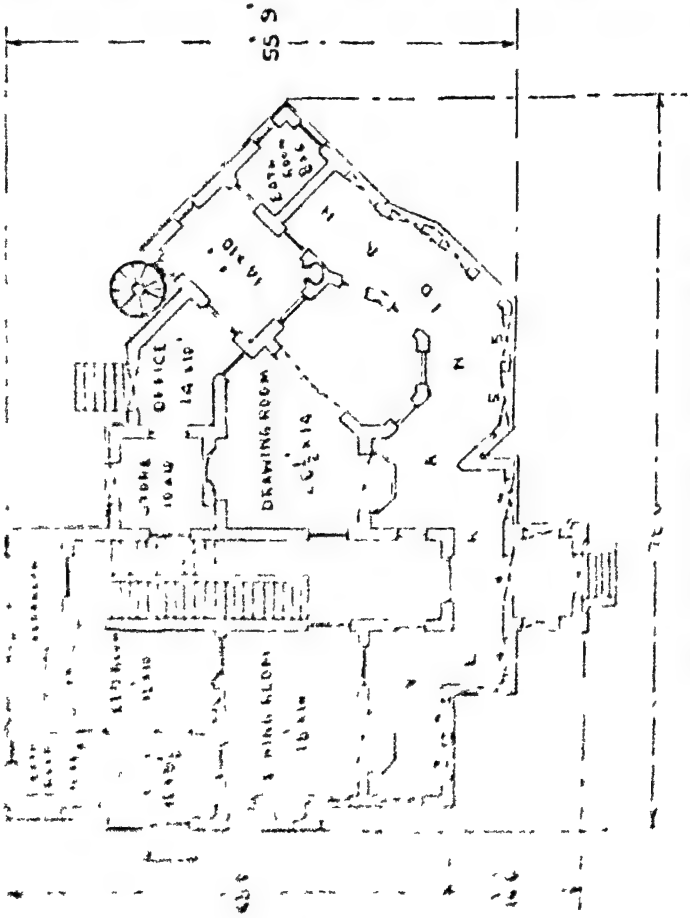

शहर के किनारे खुलासा जगह में बनाने योग्य कोठी का मानचित्र

[illegible] है। [illegible] चाहिए, जहाँ का [illegible] हो। [illegible] है। [illegible] नहीं सकता।

[illegible] है। [illegible] चाहिए। [illegible] हो, तो

लगाना आवश्यक है। यह सबसे उत्तम बात है। रात्रि को बारहो महीने स्नान कर सोया जाय। हमारी सम्मति है कि ग्रीष्म और वर्षा में प्रातःकाल और रात्रि को और शीत

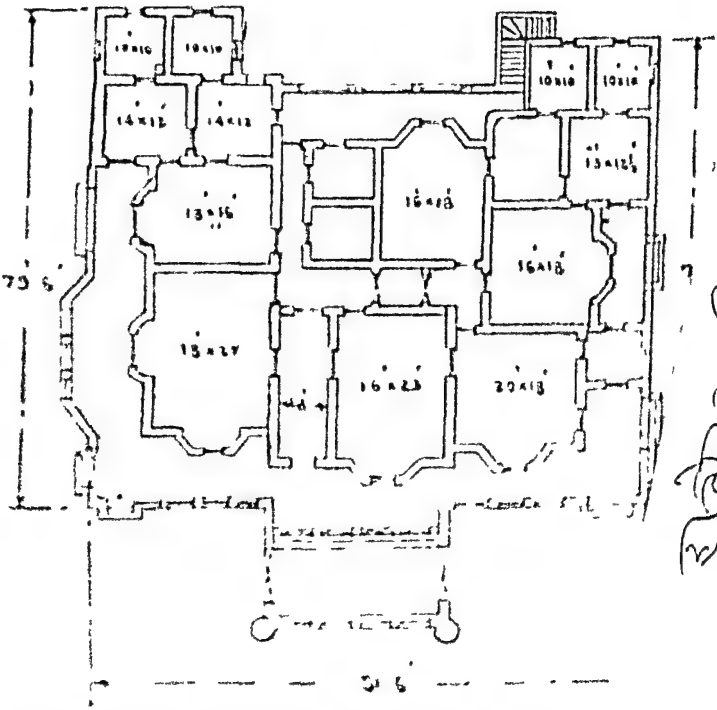

हिन्दुस्तानियों के लिये अनुकूल अंगरेजी ढंग की कोठी का

[illegible] में [illegible] रात्रि को [illegible] के समय स्नान किया जाना चाहिए। और [illegible] [illegible] और [illegible] होने चाहिए।

व्यायाम-निषेध—ऊपर कहे हुए रोगों में और भोजन करने के पीछे एवं रात्रि में व्याय नहीं करना चाहिए।

धीरे धीरे पैर उठाओ

व्यायाम का प्रारंभ—व्यायाम का प्रारंभ धी धीरे करना चाहिए। पह दो-चार हफ़्ते वे थकेंगे, वक्त हाथ-पैरों और पसलि में दर्द रहेगा, परन्तु दो एक सप्ताह बराबर अभ्या करने से फिर न थक होगा, न पसलियाँ या हा पैर दुखेंगे। व्यायाम का के अभ्यास निश्चित बाद ही शरीर ऐसा हो जायगा, मानो कोई परिश्रम का काम ही नह किया है। फिर कोई बड़े परिश्रम का काम करने पर उतना भारी थकान भी न रहेगा।

एक पैर सीधा उठाओ

विख्यात प्रोफ़ेसर राम-मूर्ति ने व्यायाम-सम्बन्धी कुछ महत्त्व-पूर्ण उपदेश दिये हैं, जो इस प्रकार हैं—

१—व्यायाम का अभ्यास धीरे-धीरे करना, एकदम बहुत अभ्यास नहीं करना चाहिए।

२—जो व्यायाम किया जाय, वह बहुत धीरे-धीरे ध्यान का पूरा-पूरा [illegible] करना चाहिए। जल्दी और झटके के साथ व्यायाम करने से कोई लाभ नहीं होता।

३—व्यायाम को साँस के साथ मिलाकर करना चाहिए। इस प्रकार से साँस को अन्दर खींचो (साँस नाक से ही खींचना और छोड़ना चाहिए) और थोड़ा रुको, फिर धीरे-धीरे छोड़ दो। आरम्भ में साँस धीरे-धीरे खींचो। धीरे-धीरे कुछ दिन करो, और उसका [illegible] साँस में [illegible] करने की कोशिश करो। [illegible]

६—व्यायाम करनेवालों को मांस नहीं खाना चाहिए। इससे सुस्ती, क्रूरता तथा अनेक अवगुणों की वृद्धि होती है।

तेल-मालिश—बहुधा पहलवानों को कहते सुना है कि "सौ लड़ंत और एक मलंत"। तेल-मालिश करने से शरीर की कांति, पुष्टि और दृढ़ता बढ़ती और बल-वीर्य की अत्यधिक वृद्धि होती है। रोम-कूप खुल जाते हैं। उनके रास्ते तैल भीतर घुस जाता है। सुश्रुत में लिखा है—

जलसिक्तस्यावर्द्धन्ते यथा मूलेंऽकुरास्तरोः ; तथा धातुविवृद्धिस्तु स्नेहसिक्तस्य जायते।

"जैसे वृक्ष की जड़ में जल देने से डाली, पत्ते और अंकुर बढ़ते हैं, उसी प्रकार तैल मर्दन करने से शरीर के धातु बढ़ते हैं।"

तैल मालिश सारे शरीर में अच्छी तरह करनी चाहिए। विशेषकर सिर में, हाथों में, छाती, पसली, रीढ़ की हड्डी और त्रिकस्थान में। पैरों में और पैर के तलुओं में खूब मालिश की जाय। सिर में तैल मालिश करने से दिमाग़ पुष्ट होता है। और पैरों में तेल मालिश करने से नेत्रों में ज्योति बढ़ती है। छाती और पसलियों में मालिश करने से सीना, फेफड़ा और दिल मज़बूत होते हैं। पृष्ठ-वंश और त्रिक में मालिश करने से बुढ़ापा जल्दी नहीं आता।

मालिश करने को तिल या सरसों का तेल ही अच्छा है। तिल का तेल सर्वोत्तम है। परंतु शतावरी का तैल मालिश करने से बहुत पुष्टि और कांति की वृद्धि होती है। शतावरी तैल का नुसख़ा यह है—

शतावर, खरेंटी की जड़, गंभेरन, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, एरंड की जड़, असगंध, गोखरू, बेल की जड़, काश की जड़, पियावासा ये ११ औषध ६-३ तोला लेकर इन्हें २ सेर पानी में पकावें। जब तीन पाव पानी रहे, तब उतारकर छान लें। इसमें १ सेर तिल का तैल, १ सेर गाय का दूध, १ सेर शतावर का रस, १ सेर पानी सब मिलाकर एक कड़ाहे में भरें। इसमें नीचे लिखी औषधों की लुगदी पानी में पीसकर मिला दें।

शतावर, देवदारु, बड़ासामा, तगर, सफ़ेद चंदन, मौलश्री, खरेंटी की जड़, कूट, इलायची छोटी, बनज, गाजरी बीज, मुलहठी, असगंध प्रत्येक एक-एक तोला। इन सबको महीन पीसकर पकावें। जब तेज-मात्र रह रहे, उतारकर छान लें। यही शतावर तैल है। बहुत ही उत्तम है।

सुंदरी, किंतु उदर बहु और छोटे हाथ पैर

१—चौड़ा माथा, घुँघराले काले बाल, घनी मूछें।
२—खूब चौड़ा, ठोस लोम-युक्त वक्षस्थल।
३—लंबी सुदृढ़ भुजाएँ।
४—पेट और कमर पतली और चुस्त।
५—जाँघें और पिंडलियाँ गठीली।

इसके साथ ही—

१—गहरी स्निग्ध दृष्टि।
२—गंभीर स्वर-घोष।
३—उज्ज्वल गौर वर्ण।
४—चुस्त पोशाक।

स्वास्थ्य का सौंदर्य पर प्रभाव

यह बात भी हम ग्रंथ के प्रारंभ ही में बता चुके हैं कि सौंदर्य और स्वास्थ्य में परस्पर कितनी समता है। जब तक ठीक-ठीक स्वास्थ्य नहीं है, तब तक आपके शरीर का प्रत्येक अंग ठीक-ठीक समतोल नहीं हो सकता, न रक्त का प्रवाह ही ठीक हो सकता है। एक बड़े विद्वान् का कथन है कि सौंदर्य वास्तव में स्वस्थ शरीर, स्वस्थ मन और उत्तम स्वभाव का परिणाम है। वास्तव में कुरूपता रोग ही है। और सुंदरता स्वास्थ्य ही है। जो आहार हम खाते और जिसे हमारी जठराग्नि ठीक-ठीक पचाती है, उससे स्वास्थ्य का बहुत गहरा संबंध है। स्वास्थ्य और सौंदर्य में प्राकृतिक समता है, सौंदर्य को स्थिर रखना संयम के अधीन है।

भारतवर्ष में स्त्रियों का सौंदर्य भयंकर रीति से नष्ट हो गया है, इसका कारण उनका स्वास्थ्य नाश है। वे बहुत छोटी आयु में ब्याह दी जाती हैं, और पर्दे में छुपाई से रखी जाती हैं। वे अवैज्ञानिक रीति से [illegible] [illegible] और उनका [illegible] भोजन पाती हैं। उन्हें न उत्तम भोजन, न स्वच्छ वायु, न [illegible] प्राप्त होता है, और इसका फल यह होता है कि २० वर्ष होते ही वे [illegible] हो जाती हैं।

[illegible] अवस्था, ये दो शरीर के [illegible] हैं, जिनका सौंदर्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है। [illegible] आहार [illegible] के [illegible] में इन दोनों पंथों को देखा और उनका

शुद्ध रक्त बनना संभव है। चेहरे और नाक के अग्र भाग पर जो बहुधा काले-काले धब्बे पड़ जाते हैं, यह यकृत का दोष है।

स्वभाव और मानसिक भावों का सौंदर्य पर प्रभाव

कदाचित् आप यह जानते होंगे कि कभी-कभी कोई स्त्री या पुरुष विशेष सुंदर प्रतीत होने लगता है। उसके चेहरे पर कभी-कभी ऐसा माधुर्य और तेज झलकने लगता है कि देखनेवाला मोहित हो जाता है। हृदय में जब प्रेम की निर्दोष भावनाएँ उठती हैं, तब नेत्रों और चेहरे पर एक ख़ास चमक पैदा हो जाती है। वासना के उदय होने पर, लज्जा अनुभव करने पर, त्याग या उदारता के ख़ास-ख़ास अवसरों पर मुख पर जो भाव लक्षित होते हैं, उन्हें देखकर अनायास ही यह जाना जा सकता है कि मानसिक भावों का सौंदर्य पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है।

इसके विरुद्ध क्रोध में अस्वाभाविक रूप से चेहरा लाल हो जाता है, तथा सैकड़ों झुर्रियाँ दृष्टान्त पड़कर मुखाकृति भयानक और कुरूप हो जाती है। भय से भी चेहरा पीला पड़ जाता है, तथा आँख निर्जीव काँच के समान चमकने लगती है। शोक, उद्वेग और चिंता से भी विविध प्रकार की लकीरें मस्तक और मुख के भिन्न-भिन्न अवयवों पर पड़ जाती हैं।

यदि ये सब अच्छे या बुरे भाव निरंतर चेहरे पर रहें, तो मुखाकृति पर उनकी स्थायी छाया पड़ जाती है। बहुत से लोगों का मुख जो बचपन में सुंदर था, अति भयानक और घिनौना हो जाता है। आपने सुना होगा कि बहुत से महात्मा लोगों के तेज और दृष्टि के बल से दीन-दयालु मोहित हो जाते थे, हिंसक जन्तु भी उनके पैर चाटते थे। यह सब उनके इस मोहक दृष्टि का फल है, तो उनके चेहरे

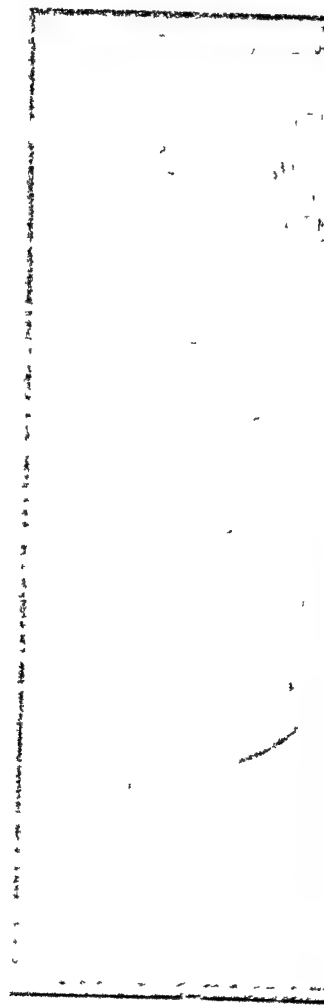

[illegible]

और रोग को दूर भी कर सकता है। यदि मन में दुःख या चिंता हो, तो स्वास्थ्य और सौंदर्य दोनों ही नष्ट हो जायँगे। आप हजारों विधवाओं को देखिए, जो पवित्र ब्रह्मचारिणी रहने पर भी अल्पायु, निस्तेज और कुरूप हो जाती हैं। परंतु सधवा स्त्रियाँ असंयम करने पर भी उनकी अपेक्षा सुंदर बनी रहती हैं, यह सब मानसिक भावना का प्रभाव है।

ग्रीष्म के बाद ही भय का भाव उनके मन में उदय होता है। आज इसका यह परिणाम है कि भारतीय स्त्रियों के नेत्रों का प्रसिद्ध कटाक्ष जो यहाँ के जल-वायु के सर्वदा अनुकूल है,

स्वस्थ शरीर और मस्तिष्क का चित्रण

[illegible] चित्रों में चित्र पर [illegible] दी है, नष्ट हो गया है। [illegible] चित्र [illegible] सुन्दर और [illegible] होती है:

[illegible] हो जाते हैं, [illegible]

कर इनके शत्रुओं अर्थात् निराशा, दुश्चिंता और विकलता को हृदय में रक्खे, तो वह पुरुष महासमर्थ है। वह जान-बूझकर ही आत्महनन करता है।

[illegible]